Special Issue: October 2026

Cultural Relations between India and Bhutan

ISSN : 3048-4537 (Online)
3049-2327 (Print)
IIFS Impact Factor - 6.125

ज्ञानवानेन सुखवान् ज्ञानवानेव जीवति।
ज्ञानवानेव बलवान् तस्मात् ज्ञानमयो भव।।

INTERNATIONAL CONFERENCE ON

CULTURAL RELATIONS BETWEEN INDIA AND BHUTAN

Venue: Royal Thimpu College, Thimpu , Bhutan

EDUCATION • LITERATURE • CULTURE & SUSTAINABILITY

Organized by: Sahitya Sanchay Shodh Samvad Foundation, Delhi, India
In Collaboration with:

ज्ञानविविधा
(GYANVIVIDHA)

सहकर्मी–समीक्षित, मूल्यांकित, बहुविषयक (कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान), बहुभाषिक (सभी भाषा) और त्रैमासिक शोध पत्रिका

A Peer Reviewed, Refereed, Multidisciplinary (Arts, Humanities & Social Science), Multilingual (All Languages) & Quarterly Research Journal



Special Issue Editors
Dr. Kumari Manisha
Dr. Pramod Kumar
Editor in Chief
Dr. Divakar Chaudhary

कठौर, सीतामढ़ी, बिहार से प्रकाशित
पता–ग्राम+पो०–कठौर, वार्ड नं.–13, थाना–परसौनी, जिला–सीतामढ़ी, बिहार, पिन–843325
Website- https://journal.gyanvividha.com

Gyanvividha

Special Issue : October, 2026

हिंदी कल्चर सेंटर, जापान

INTERNATIONAL CONFERENCE ON

CULTURAL RELATIONS BETWEEN INDIA AND BHUTAN

Venue: Royal Thimpu College, Thimpu , Bhutan

EDUCATION • LITERATURE • CULTURE & SUSTAINABILITY

Organized by: Sahitya Sanchay Shodh Samvad Foundation, Delhi, India
In Collaboration with:

Date : 24-25, October, 2026 Venue : Royal Thimphu College , Thimphu, Bhutan

ISSN : 3048-4537 (Online)
3049-2327 (Print)
IIFS Impact Factor - 6.125

Special Issue : October, 2026

ज्ञानविविधा
साहित्य संस्कृति और ज्ञान

ज्ञानवानेन सुखवान् ज्ञानवानेव जीवति।
ज्ञानवानेव बलवान् तस्मात् ज्ञानमयो भव।।

प्रधान संपादक
डॉ० दिवाकर चौधरी

Special Issue Editor's
Dr. Kumari Manisha
Dr. Pramod Kumar

Website- https://journal.gyanvividha.com

Special Issue Editorial Board

Editor's :

Dr. Kumari Manisha

Dr. Pramod Kumar

Co-Editor's :

Dr. Heerendra Gautam

Prof. Manju Rani

Dr. Pratibha Chauhan

पत्रिका संपादक मंडल

1. **प्रधान संपादकः-**
   डॉ. दिवाकर चौधरी
   सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, लंगट सिंह महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार.
2. **संयुक्त संपादकः-**
   डॉ. आरले श्रीकांत लक्ष्मणराव
   सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, ओड़िशा केंद्रीय विश्वविद्यालय, कोरापुट.
3. **संयुक्त संपादकः-**
   डॉ. उमेश कुमार शर्मा
   सहा. प्राध्यापक सह अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, श्री राधा कृष्ण गोयनका महाविद्यालय, सीतामढ़ी, बिहार.
4. **डॉ. गुलाब सिंह**
   सहायक प्राध्यापक सह अध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, राम सकल सिंह साइंस महाविद्यालय, सीतामढ़ी, बिहार.
5. **डॉ. कृष्ण कुमार झा**
   वरिष्ठ व्याख्याता, महात्मा गांधी संस्थान, मोका, मॉरीशस/ अध्यक्ष, भाषा संसाधान केंद्र, महात्मा गांधी संस्थान, मोका, मॉरीशस.
6. **डॉ. विवेक मणि त्रिपाठी**
   असोसिएट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग क्वाङ्गतोंग विदेशी भाषा विश्वविद्यालय, चीन.
7. **डॉ. लुभवानी त्रिपाठी**
   एसो. प्रोफेसर,शिक्षा विभाग, कलिंगा विवि, इंदौर
8. **डॉ. अजित सिंह तोमर**
   सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, गुरुकुल काँगड़ी (समविश्वविद्यालय), हरिद्वार, उत्तराखंड.
9. **श्रीमती कंचन कुमारी**
   सहा. प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, श्री राधा कृष्ण गोयनका महाविद्यालय, सीतामढ़ी, बिहार.
10. **डॉ. रामचन्द्र रजक**
    सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, भारतीय भाषा विभाग, दक्षिण बिहार केन्द्रीय विश्वविद्यालय, गयाजी, बिहार.
11. **डॉ. अजीता प्रियदर्शनी**
    सहा. प्राध्यापक, हिन्दी विभाग रमेश झा महिला कॉलेज, सहरसा.
12. **डॉ. ऋषिका वर्मा**
    सहायक आचार्य, दर्शनशास्त्र विभाग, हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय, एक केंद्रीय विश्वविद्यालय,श्रीनगर, गढ़वाल, उत्तराखंड.
13. **डॉ. चन्दीर पासवान**
    सहा. प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह महा., मधुबनी, बिहार.
14. **डॉ. कृष्ण कुमार शर्मा**
    सहायक आचार्य, भाषा विभाग, क्राइस्ट विश्वविद्यालय, बेंगलोर, कर्नाटक.
15. **डॉ. सुरेंदर**
    सहा. प्राध्यापक, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, महेंद्रगढ़.
16. **डॉ. सुरेन्द्र शर्मा**
    सहा. प्राध्यापक, पत्रकारिता एवं जनसंचार, राजकीय महाविद्यालय, गुड़गांव.
17. **डॉ. सरिता कुमारी**
    सहा. प्राध्यापक, गृह विज्ञान विभाग, एमडीडीएम कॉलेज, मुजफ्फरपुर, बिहार.
18. **डॉ. अभय कुमार**
    सहा. प्राध्यापक, मैथिली विभाग रमेश झा महिला कॉलेज, सहरसा.
19. **डॉ. अर्पणा कुमारी**
    सहा. प्राध्यापक सह अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग, राम सकल सिंह महिला महाविद्यालय, सीतामढ़ी, बिहार.
20. **डॉ. शशिकांत पांडेय**
    सहा. प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग लंगट सिंह महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार.
21. **डॉ. राजेश्वर कुमार**
    सह प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, नालंदा केन्द्रीय विश्वविद्यालय, राजगीर, बिहार.
22. **डॉ. राधा कुमारी**
    सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, लंगट सिंह महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार.
23. **डॉ. मिहिर डे**
    सहा. प्राध्या., राजनीति विज्ञान विभाग, सुशील कर कॉलेज, चंपाहाटी, दक्षिण 24 पीजीएस, प. बंगाल.
24. **डॉ. राकेश कुमार**
    सहा. प्रा. सह अध्यक्ष, इतिहास विभाग, श्री राधा कृष्ण गोयनका महाविद्यालय, सीतामढ़ी, बिहार.
25. **डॉ. आभा रानी**
    सहा. प्राध्यापक, गृह विज्ञान विभाग, एल.एन.टी कॉलेज, मुजफ्फरपुर, बिहार.

26. डॉ. अनुपमा वर्मा
सहा. प्राध्यापक, शिक्षा विभाग,
श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय, केशव विद्यापीठ, जामडोली, जयपुर, राजस्थान.

27. डॉ. रणबीर कुमार
सहा. प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, एम. एल. एस. एम. महाविद्यालय, दरभंगा, बिहार.

28. डॉ. रानी कुमारी
सहा. प्रा. सह अध्यक्ष, मनोविज्ञान विभाग, श्री राधा कृष्ण गोयनका महाविद्यालय, सीतामढ़ी, बिहार.

29. डॉ. ज्योति सुल्तानिया
सहा. प्रा. सह अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, श्री राधा कृष्ण गोयनका महाविद्यालय, सीतामढ़ी, बिहार.

30. डॉ. रमण कुमार ठाकुर
सहा. प्राध्यापक -अर्थशास्त्र विभाग, श्री राधा कृष्ण गोयनका महाविद्यालय, सीतामढ़ी, बिहार.

31. डॉ. मिथिलेश कुमार मांझी
सहा. प्रा., अंग्रेजी विभाग, श्री राधा कृष्ण गोयनका महाविद्यालय, सीतामढ़ी, बिहार.

32. डॉ. कैलास डी. सलाडे
सहा. प्रा., मराठी विभाग, एमवीपी समाज केआरटी कला, वाणिज्य और विज्ञान महाविद्यालय, महाराष्ट्र

33. डॉ. माला कुमारी
सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, रास नारायण कॉलेज, पंडौल, मधुबनी, बिहार.

34. डॉ. चन्दा कुमारी
सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग,
एम. आर. एम. कॉलेज, दरभंगा.

35. Dr. Annapurna Gupta
Senior Asst. Prof., Department of Psychology, Sardar Vallabhbhai Patel College, Bhabua, Kaimur. A constituent unit of Veer Kunwar Singh Uni., Ara, Bihar.

36. तुलसी कुमारी
सहा. प्रा. (अतिथि), इतिहास विभाग, श्री राधाकृष्ण गोयनका महाविद्यालय सीतामढ़ी, बिहार.

37. फतेहचन्द चौहान
सहायक आचार्य-संस्कृत, राजकीय महाविद्यालय, खाजूवाला, बीकानेर.

38. डॉ. पुष्पा कुमारी
वरीय सहायक प्राध्यापक, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग, सुंदरवती महिला महाविद्यालय, भागलपुर, (तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर) बिहार.

39. Md. Ruhul Amin
Professor, Dept. of Public Administration
Comilla University, Cumilla, Bangladesh.

40. DR. E.G. WAJIRA GUNASENA
SENIOR LECTURER (I) IN HINDI,
Department of Languages, Cultural Studies and Performing Arts, University of Sri Jayawardenepura, Nugegoda, Sri Lanka

41. Dr. Samanthika Lokugamage
Senior Lecturer, Department of Languages, Cultural Studies & Performing Arts, Uni. of Sri Jayewardenepura Sri Lanka.

42. डॉ. श्वेता दीप्ति
अध्यक्ष, हिन्दी केन्द्रीय विभाग,
त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमांडू, नेपाल.

परामर्श और शोध पत्र पर्यवेक्षक मंडल :

1. डॉ. सतीश कुमार राय
प्राध्यापक, विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग,
पूर्व संकायाध्यक्ष- मानविकी, बी.आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार.

2. डॉ. श्याम राव राठौड़
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, अंग्रेजी और विदेशी भाषा विश्वविद्यालय, हैदराबाद.

3. डॉ. एस. आर. जयश्री
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष-हिन्दी विभाग,
केरल विश्वविद्यालय, तिरुअनन्तपुरम.

4. डॉ. कल्याण कुमार झा
प्राध्यापक, विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग, बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार

5. डॉ. दशरथ प्रजापति
प्राध्यापक एवं परीक्षा नियंत्रक, मौलाना मजहरूल हक अरबी फारसी विश्वविद्यालय, पटना, बिहार.

6. डॉ. निभा शर्मा
प्राध्यापक, विवि स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग, बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार.

7. प्रो. डॉ. सूर्यभान प्रसाद
प्राध्यापक एवं पूर्व अध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी.

नोट :- पत्रिका से संबंधित सभी पद अवैतनिक और परिवर्तनीय हैं।

विशेषांक अस्वीकरण :

1. 'ज्ञानविविधा' शोधपत्रिका के इस विशेषांक में प्रकाशित शोधपत्र में प्रस्तुत दृष्टिकोण, सिद्धांत एवं विचारों से संपादक एवं प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। सम्बंधित किसी भी विवाद के लिए प्रकाशक/ संपादक जिम्मेवार नहीं होंगे। ये शोधार्थी द्वारा प्रदत्त/अभिव्यक्त हैं, अतः इस हेतु शोधार्थी स्वयं जिम्मेवार होंगे।
2. इस विशेषांक में प्रकाशित शोधपत्र से संबंधित या अन्य किसी विवाद की स्थिति में शिकायत हेतु इस विशेषांक के संपादक/ संपादक/संपादक मंडल से संपर्क किया जा सकता है।
3. इस विशेषांक में प्रकाशित शोधपत्र के चयन, प्रकाशन, समीक्षा या किसी भी शोधपत्र में निहित 'साहित्यिक चोरी' **(Plagiarism)** हेतु प्राथमिक जिम्मेवारी इस विशेषांक के संपादक/ संपादक/संपादक मंडल की है।
4. इस विशेषांक से संबंधित किसी आयोजन, समिति, संस्थान या किसी अन्य गतिविधि से इस पत्रिका या इसके प्रकाशक/प्रधान संपादक/संपादक मंडल का कोई सरोकार नहीं है। इस पत्रिका और इससे संबद्ध व्यक्तियों की भूमिका इस विशेषांक के संपादक/ संपादक/संपादक मंडल द्वारा प्रदत्त शोधपत्रों के प्रकाशन तक सिमित है।
5. इस विशेषांक में प्रकाशित शोधपत्र में या अन्य संबंधित/आवश्यक संशोधन सिर्फ इस विशेषांक के संपादक/ संपादक/संपादक मंडल द्वारा लिखित अनुरोध के आलोक में ही किया जा सकता है।

सामान्य अस्वीकरण :

1. 'ज्ञानविविधा' शोधपत्रिका में प्रकाशित शोधपत्र में प्रस्तुत दृष्टिकोण, सिद्धांत एवं विचारों से संपादक एवं प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। सम्बंधित किसी भी विवाद के लिए प्रकाशक/ संपादक जिम्मेवार नहीं होंगे। ये शोधार्थी द्वारा प्रदत्त/अभिव्यक्त हैं, अतः इस हेतु शोधार्थी स्वयं जिम्मेवार होंगे।
2. 'ज्ञानविविधा' शोधपत्रिका से संबंधित सभी पद अवैतनिक हैं। संपादक की सहमति से किसी भी नाम या पद को बदला जा सकता है।
3. 'ज्ञानविविधा' शोधपत्रिका में प्रकाशित किसी भी शोधपत्र हेतु किसी विश्वविद्यालय/ संस्थान की स्वीकृति/अस्वीकृति के सम्बन्ध में संपादक/ प्रकाशक की कोई जिम्मेवारी नहीं होगी।
4. 'ज्ञानविविधा' शोधपत्रिका में प्रकाशन हेतु प्राप्त किसी शोधपत्र के प्रकाशित/अप्रकाशित करने का सारा अधिकार संपादक के पास सुरक्षित है।
5. किसी भी शोधपत्र में निहित 'साहित्यिक चोरी' **(Plagiarism)** के लिए रचनाकार स्वयं जिम्मेदार होंगे। इसलिए प्रकाशन हेतु आलेख भेजने से पूर्व 'साहित्यिक चोरी' **(Plagiarism)** की जाँच कर लें।
6. 'ज्ञानविविधा' शोधपत्रिका के प्रकाशन का उद्देश्य विशुद्ध शैक्षिक और अव्यावसायिक है, इसलिए सामान्यतः शोधपत्रिका से संबंधित किसी विवाद की स्थिति उत्पन्न नहीं होनी चाहिए। किसी भी तरह की शिकायत हेतु संपादक से संपर्क किया जा सकता है, फिर भी क़ानूनी विवाद की स्थिति में न्यायालय क्षेत्र सीतामढ़ी, बिहार होगा।
7. 'ज्ञानविविधा' शोधपत्रिका शोधार्थियों और संकाय सदस्यों को न्यूनतम लागत मूल्य पर आलेख प्रकाशित करने की सुविधा प्रदान करने हेतु प्रतिबद्ध है, अतः इस शोधपत्रिका में प्रकाशित सभी आलेख मुद्रित नहीं किये जाते हैं। सिर्फ लेखकों के अनुरोध और आवश्यकतानुसार क्रम संख्या-1 से वहीँ तक के आलेख मुद्रित (Print) कर भेजे जाते हैं, जिस क्रम संख्या तक के लेखक मुद्रित प्रति लेने का अनुरोध करते हैं।
8. 'ज्ञानविविधा' शोधपत्रिका को ऑनलाइन (Online) और प्रिंट (Print) दोनों ही ISSN प्राप्त हैं। ISSN के नियमानुसार ऑनलाइन ISSN प्राप्त शोधपत्रिका में सिर्फ ऑनलाइन माध्यम से प्रकाशित आलेख भी मान्य होते हैं।

संपादन संपर्क/पत्राचार का पता :-

VILL+POST-KATHAUR,PS-PARSAUNI,DIST-SITAMARHI, BIHAR, PIN-843325.

Email : gyanvividhajournal@gmail.com

Website : www.journal.gyanvividha.com

Mobile/ Whatsapp : 9835407563

©श्रीमती अनुभा चौधरी

संपादकीय

भारत एवं भूटान : संस्कृति, मैत्री और साझा विरासत

भारत और भूटान के संबंध केवल दो पड़ोसी देशों के संबंध नहीं हैं, बल्कि ये सदियों से विकसित विश्वास, आत्मीयता, सांस्कृतिक निकटता और आध्यात्मिक चेतना के संबंध हैं। हिमालय की पर्वत-श्रृंखलाओं से जुड़ी दोनों देशों की भौगोलिक निकटता ने उनके सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन को भी एक-दूसरे के करीब लाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। समय के साथ इन संबंधों ने राजनीतिक, आर्थिक और कूटनीतिक सहयोग के साथ-साथ जनमानस के स्तर पर भी अपनी गहरी पहचान बनाई है। वहीं बौद्ध दर्शन दोनों देशों की साझा सांस्कृतिक विरासत का एक महत्त्वपूर्ण आधार है। भगवान बुद्ध के शांति, करुणा, अहिंसा, सद्भाव, संयम, मानसिक शुद्धि आदि के संदेश ने दोनों देशों के जीवन-मूल्यों को समृद्ध किया है। गुरु पद्मसंभव की परंपरा, धार्मिक आस्थाएँ, लोकजीवन और प्रकृति के प्रति सम्मान इस सांस्कृतिक निकटता को और गहरा बनाते हैं। भूटान की प्रकृति-केंद्रित जीवन-दृष्टि और भारत की विविधतापूर्ण सांस्कृतिक परंपरा में मानवीय संवेदना तथा संतुलित जीवन की साझा आकांक्षा दिखाई देती है। इसलिए भारत-भूटान मैत्री को केवल कूटनीतिक संबंधों तक सीमित करके नहीं देखा जा सकता, बल्कि इसकी वास्तविक शक्ति दोनों देशों के लोगों के आत्मीयता संबंधों में निहित है।

साहित्य और शिक्षा किसी भी समाज की चेतना को समझने तथा संस्कृतियों के बीच संवाद स्थापित करने के प्रभावी माध्यम हैं। बौद्ध साहित्य, रामकथा, लोककथाएँ, संगीत, नृत्य और पारंपरिक कलाएँ भारत एवं भूटान की सांस्कृतिक निकटता को अभिव्यक्त करती हैं। अनुवाद, शोध, शैक्षणिक आदान-प्रदान और साहित्यिक संवाद के माध्यम से दोनों देशों की भाषाओं, परंपराओं और जीवन-दृष्टियों को एक-दूसरे के और निकट लाया जा सकता है। इससे न केवल सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण होगा, बल्कि नई पीढ़ी भी अपने साझा मूल्यों और पड़ोसी देश की विशिष्टताओं से परिचित हो सकेगी।

इन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए साहित्य संचय शोध संवाद फाउंडेशन, दिल्ली द्वारा रॉयल थिम्पू कॉलेज, भूटान में आयोजित सम्मेलन के संदर्भ में प्रस्तुत यह विशेषांक विशेष महत्त्व रखता है। इसमें भारत एवं भूटान के सांस्कृतिक संबंधों के विविध पक्षों पर विचार करने के साथ-साथ इतिहास, समाज, साहित्य, शिक्षा और समकालीन चुनौतियों से जुड़े प्रश्नों को भी स्थान दिया गया है। विशेषांक के आलेख दोनों देशों की ऐतिहासिक मैत्री, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, बौद्ध परंपरा, लोकजीवन और पारंपरिक ज्ञान की पड़ताल करते हैं। इनके माध्यम से यह समझने का अवसर मिलता है कि सांस्कृतिक संबंध किस प्रकार समाजों को जोड़ते हैं और पारस्परिक समझ को मजबूत बनाते हैं।

इस विशेषांक की एक महत्वपूर्ण विशेषता इसकी विषयगत विविधता है। भारत-भूटान संबंधों के मुख्य विषय के साथ साहित्य में गांधीवादी मूल्यों, दलित एवं आदिवासी विमर्श, स्त्री-अस्तित्व, लोकसाहित्य, भारतीय ज्ञान-परंपरा और बदलते सामाजिक जीवन जैसे विषयों पर भी आलेख शामिल हैं। शिक्षा के क्षेत्र में राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 और उच्च शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता की भूमिका पर विचार किया गया है। इसी प्रकार संगीत, नृत्य, चित्रकला, लोककलाओं, प्रकृति-चेतना, पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास से संबंधित आलेख इस अंक की व्यापक दृष्टि को सामने लाते हैं। ये विविध विषय परस्पर अलग दिखाई देने पर भी मानवीय जीवन, सांस्कृतिक स्मृति और समाज के भविष्य से जुड़े हुए हैं।

आज जब वैश्वीकरण, तकनीकी परिवर्तन और पर्यावरणीय संकट पूरी दुनिया के सामने नई चुनौतियाँ प्रस्तुत कर रहे हैं, तब भारत और भूटान के बीच सांस्कृतिक सहयोग का महत्त्व और बढ़ जाता है। दोनों देशों को शैक्षणिक संस्थानों के बीच सहयोग, संयुक्त शोध, साहित्यिक अनुवाद, युवा संवाद तथा प्रकृति और सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण जैसे क्षेत्रों में मिलकर कार्य करना चाहिए। ऐसे प्रयासों से भारत-भूटान के मैत्रीपूर्ण संबंध औपचारिक दायरे से आगे बढ़कर जनमानस में और गहरे और आत्मीय बन सकते हैं।

फलस्वरूप इस विशेषांक के प्रकाशन में अपना ज्ञान, अनुभव, चिंतन और रचनात्मक योगदान देने वाले सभी विद्वानों, लेखकों एवं शोधकर्ताओं के प्रति मैं हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ। उनके विविध आलेखों ने इस अंक को विचारों की व्यापकता और विषयों की समृद्धि प्रदान की है। सम्मेलन के आयोजन से जुड़े सभी सहयोगियों तथा इस प्रयास को सफल बनाने में योगदान देने वाले प्रत्येक व्यक्ति के प्रति भी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। साथ ही आशा है कि यह विशेषांक भारत और भूटान के सांस्कृतिक संबंधों को समझने, साझा विरासत के प्रति सम्मान बढ़ाने तथा दोनों देशों के बीच साहित्यिक, शैक्षणिक और मानवीय संवाद को नई दिशा देने में उपयोगी सिद्ध होगा। हमारी साझा संस्कृति का दायित्व है कि वह विविधताओं का सम्मान करते हुए आपसी सद्भाव और आत्मीयता को जीवंत बनाए रखे। अतः यह विशेषांक भारत-भूटान के सौहार्दपूर्ण संबंधों, साझा सांस्कृतिक विरासत और सुनहरे भविष्य की आकांक्षा को समर्पित है।

डॉ. प्रमोद कुमार
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
सरिया कॉलेज, सरिया, गिरीडीह (झारखण्ड)

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान विषयों की अंतर्राष्ट्रीय सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध-पत्रिका

अनुक्रमणिका

1.	हिंदी साहित्य एवं भूटान में रामकथा की परंपरा : एक तुलनात्मक अध्ययन	प्रो. ललित कुमार सिंह	01-05
2.	भूटान में भारतीय संस्कृति के विविध आयाम और उनका प्रभाव	फ्लोरेंस पुर्ती	06-09
3.	डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और धम्म क्रांति	प्रा. डॉ. गौतम वाघमारे	10-14
4.	भूटानी समाज का जीवन-दर्शन और सांस्कृतिक मूल्य : एक अध्ययन	डॉ. अमित कुमार	15-20
5.	हिमालयी मैत्री और सांस्कृतिक कूटनीति : बदलते भू-राजनीतिक परिदृश्य में भारत–भूटान संबंध	डॉ. गौतम कुमार	21-27
6.	शिक्षा और मानव संसाधन विकास में सहयोग वैश्विक प्रगति का आधार	श्रीमती बी यदु	28-32
7.	भारत की सांस्कृतिक एवं वैज्ञानिक विरासत : संस्कृत	डॉ. मोना शर्मा	33-37
8.	21वीं सदी की हिन्दी कविता में पर्यावरण चेतना	डॉ. प्रतिभा चौहान	38-45
9.	समान नागरिक संहिता : एक संवैधानिक परिकल्पना एवं समकालीन राजनैतिक सामाजिक प्रभाव	डॉ. (श्रीमती) सरोज बिल्लोरे	46-49
10.	भारत और भूटान - बौद्ध धर्म समागम	प्रोफेसर (डॉ) मंजू रानी	50-52
11.	विश्व पटल पर भारत-भूटान के सांस्कृतिक संबंध	डॉ. प्रमोद कुमार	53-57
12.	साहित्य और समाज का अंत:संबंध	डॉ. मीरा देवी	58-64
13.	महाभारत काल में स्त्री जीवन	रमेश कुमारी	65-68
14.	भूटान - प्रकृति, संस्कृति और भारत से संबंध	डॉ. सलमा जमाल	69-73
15.	भारत-भूटान संबंधों का सांस्कृतिक समालोचन	डॉ. मुदनर दत्ता सर्जेराव	74-78
16.	भूटानी संस्कृति एवं लोक साहित्य की अस्मिता का अध्ययन	कोमल चुघ	79-83
17.	"सांस्कृतिक सौहार्द का दस्तावेज : डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' का यात्रा-वृत्तांत 'खुशियों का देश भूटान"	डॉ. गजानन हरिभाऊ सर्वज्ञ	84-87
18.	उच्च शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) की भूमिका : शिक्षण-अधिगम की बदलती प्रकृति एवं सतत शिक्षा की संभावनाएँ	सार्जेंट अभिमन्यु पाण्डेय 'मन्नू'	88-92
19.	यूनानी दार्शनिक प्लेटो के दर्शन में प्रतिवाद : एक दार्शनिक विवेचन	प्रिय हिमांशु	93-96
20.	समकालीन भारत - भूटान संबंध : चुनौतियाँ एवं संभावनाएं	डॉ. श्रवण कुमार	97-103
21.	भारत-भूटान संबंधों में चीन का बढ़ता प्रभाव : भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के संदर्भ में एक अध्ययन	डॉ. जितेन्द्र कुमार	104-108
22.	भारत एवं भूटान की पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियाँ एवं उपचारात्मक आहार : एक तुलनात्मक अध्ययन	डॉ. सविता राठौर	109-114
23.	बौद्ध धर्म का समाज पर प्रभाव-एक परिचर्चा	डॉ. सन्ध्या पाण्डेय	115-117
24.	वैश्विक पटल में हिन्दी	डॉ. जेकब लकड़ा	118-120

25.	भारत एवं भूटान की पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियाँ : ज्ञान-परंपरा, सांस्कृतिक विरासत एवं समकालीन प्रासंगिकता का तुलनात्मक अध्ययन	लिच्छा राम	121-126
26.	भारत-भूटान संबंध : ऐतिहासिक, राजनीतिक, आर्थिक और रणनीतिक साझेदारी	डॉ. रमेश राम	127-131
27.	वैश्विक पटल में हिन्दी	प्रोफेसर (डॉ.) कृष्ण चंद रल्हाण	132-135
28.	द्विवेदी युगीन भारत और भूटान : सांस्कृतिक अस्मिता एवं आध्यात्मिक चेतना	भाषा मिश्रा	136-140
29.	भारत और भूटान की शिक्षा व्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन	डॉ. तुषार रंजन	141-144
30.	भारत-भूटान संबंध : ऐतिहासिक, राजनीतिक, आर्थिक और रणनीतिक साझेदारी	गिरीश सिंह कार्की	145-148
31.	दक्षिण एशियाई क्षेत्र में भूटान की भूमिका : एक अवलोकन	डॉ. मल्लिका मंजरी	149-152
32.	भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों के संदर्भ में प्रकृति, पर्यावरण और हिंदी साहित्य की पारिस्थितिक चेतना	डॉ. प्रीति कुमारी	153-157
33.	बड़ौदा की शहनाई और भूटान के ग्यालिंग वाद्य का संक्षिप्त परिचय– एक अध्ययन	जय शिंदे	158-162
34.	भारत-भूटान संबंध : सांस्कृतिक आयाम और विदेश नीति	कु. सरिता	163-167
35.	भारत और भूटान के योग साहित्य में अवधारणाओं एवं साधना-पद्धतियों का तुलनात्मक विश्लेषण	डॉ. संदीप कुमार चौरसिया	168-171
36.	भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों के संदर्भ में प्रकृति, पर्यावरण और हिंदी साहित्य की पारिस्थितिक चेतना	डॉ. प्रीति कुमारी	172-176
37.	The Green Classroom : Integrating Nature-Based Learning into Modern Education	Dr. Babita Solanki	177-181
38.	Beyond the Alphabet : How Literature Shapes the Conscious Mind and Educates Society	Dr. Hitkaran Singh Ranawat	182-189
39.	रामगढ़िया खोरठा लोकगीतों में राम-तत्त्व : लोकजीवन, संस्कृति और आस्था के संदर्भ में एक अध्ययन	डॉ. ओहदार अनाम	190-194
40.	Education, Literature, Culture and Sustainability : *Reimagining Knowledge for a Sustainable Future*	Dr. Shailza Singh	195-198
41.	भारत एवं भूटान के आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत की संवाहिका नारी	डॉ. सोनी कुमारी	199-203
42.	राधाकृष्ण की कहानियों में सांस्कृतिक चेतना	संगीता जायसवाल	204-209
43.	**भारतीय संस्कृति में नवधा भक्ति**	**नीतेश कुमार**	210-213
44.	**भारत–भूटान संबंधों में शिक्षा–सहयोग और सांस्कृतिक अस्मिता एक ऐतिहासिक अध्ययन (1947–2007)**	**शम्भु कुमार**	214-216

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान विषयों की अंतर्राष्ट्रीय सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध-पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 01-05
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

प्रो. ललित कुमार सिंह
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय,
चित्रकूट, सतना, म0प्र0, 485334

Corresponding Author :

प्रो. ललित कुमार सिंह
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय,
चित्रकूट, सतना, म0प्र0, 485334

हिंदी साहित्य एवं भूटान में रामकथा की परंपरा : एक तुलनात्मक अध्ययन

सारांश : भारतीय साहित्य और संस्कृति में रामकथा एक ऐसी जीवंत परंपरा है, जिसने साहित्य, धर्म, दर्शन, लोकजीवन, कला, रंगमंच तथा सामाजिक चेतना के विविध क्षेत्रों को प्रभावित किया है। रामकथा का मूल स्रोत वाल्मीकि रामायण माना जाता है, किंतु कालांतर में यह कथा विभिन्न भाषाओं, प्रदेशों और संस्कृतियों में अपने–अपने सामाजिक एवं धार्मिक संदर्भों के अनुरूप पुनर्सृजित होती रही। हिंदी साहित्य में रामकथा को विशेष प्रतिष्ठा तुलसीदास के रामचरितमानस से प्राप्त हुई। अवधी भाषा में रचित इस ग्रंथ ने राम को केवल एक पौराणिक नायक के रूप में प्रस्तुत नहीं किया, बल्कि उन्हें लोकमंगल, मर्यादा, करुणा, धर्म और आदर्श जीवन–मूल्यों के केंद्र के रूप में प्रतिष्ठित किया। रामचरितमानस के अतिरिक्त हिंदी में कवितावली, गीतावली, जानकीमंगल, रामललानहछू आदि रचनाओं में भी रामकथा के विविध रूप दिखाई देते हैं। आधुनिक हिंदी साहित्य में भी रामकथा का पुनर्पाठ जारी रहा है। दूसरी ओर, भूटान की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि मुख्यतः बौद्ध धर्म और तिब्बती–बौद्ध परंपराओं से निर्मित हुई है। इसलिए वहाँ रामकथा की स्थिति भारतीय हिंदी साहित्य से भिन्न है। भूटान में रामकथा की उपस्थिति को एक स्वतंत्र और विशाल लिखित महाकाव्य–परंपरा के रूप में देखने के बजाय बौद्ध आख्यानों, मौखिक परंपराओं, लोक–स्मृतियों तथा रंगमंचीय प्रस्तुतियों के संदर्भ में देखना अधिक समीचीन है। 2016 में भूटानी कलाकारों द्वारा रामायण के एक बौद्ध संस्करण का मंचन इस सांस्कृतिक रूपांतरण की ओर संकेत करता है। इस संदर्भ में रामकथा केवल धार्मिक आख्यान न रहकर सांस्कृतिक संवाद का माध्यम बन जाती है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि रामकथा का मूल आख्यान विभिन्न सांस्कृतिक परिवेशों में प्रवेश करते हुए नए अर्थ ग्रहण करता है। हिंदी परंपरा में जहाँ रामकथा भक्ति, मर्यादा और लोकमंगल से गहरे रूप में जुड़ती है, वहीं भूटानी संदर्भ में इसके बौद्ध सांस्कृतिक पुनर्पाठ और प्रदर्शनात्मक स्वरूप विशेष महत्व रखते हैं।

प्रमुख शब्द : रामकथा, हिन्दी साहित्य, रामचरितमानस, भूटान, बौद्ध परंपरा, सांस्कृतिक रूपांतरण, तुलनात्मक अध्ययन।

1. भूमिका : रामकथा भारतीय उपमहाद्वीप की सबसे प्रभावशाली आख्यान–परंपराओं में से एक है। राम और सीता की कथा ने भारत के साथ–साथ दक्षिण तथा दक्षिण–पूर्व एशिया के अनेक समाजों में अलग–अलग रूप धारण किए हैं। विद्वानों के अनुसार रामायण की कथा अनेक भाषाओं और संस्कृतियों में कही गई है और विभिन्न क्षेत्रों में उसमें स्थानीय सांस्कृतिक तत्वों का समावेश हुआ है।

रामकथा का सबसे प्राचीन एवं प्रभावशाली साहित्यिक रूप वाल्मीकि रामायण में मिलता है। इसके बाद संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश तथा भारतीय आधुनिक भाषाओं में रामकथा के अनेक रूप सामने आए। इस दृष्टि से रामकथा को किसी एक ग्रंथ या एक धार्मिक समुदाय की स्थिर कथा मानना

उचित नहीं है। यह एक गतिशील आख्यान–परंपरा है, जो प्रत्येक समाज में नए अर्थों और प्रतीकों के साथ पुनर्निर्मित होती रही है।

हिन्दी साहित्य में रामकथा की परंपरा विशेष रूप से समृद्ध है। मध्यकाल में भक्ति आंदोलन के प्रभाव से राम का चरित्र भक्त और भगवान दोनों रूपों में विकसित हुआ। तुलसीदास ने रामचरितमानस के माध्यम से रामकथा को लोकभाषा में प्रस्तुत करके उसे व्यापक जनसमुदाय तक पहुँचाया। तुलसी की रामकथा केवल धार्मिक आख्यान नहीं है, बल्कि सामाजिक, नैतिक और सांस्कृतिक जीवन का व्यापक आदर्श प्रस्तुत करती है। आधुनिक विद्वानों ने भी रामचरितमानस को उत्तर भारतीय समाज के सांस्कृतिक मानस और जीवन–मूल्यों से गहराई से जुड़ा हुआ माना है।

भूटान का सांस्कृतिक परिवेश इससे भिन्न है। भूटान में वज्रयान बौद्ध धर्म का प्रभाव अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। इस कारण वहाँ भारतीय हिंदू धार्मिक आख्यानों का स्वरूप भारत के समान नहीं रहा। फिर भी हिमालयी सांस्कृतिक संपर्क, भारत–भूटान संबंध, लोक–संस्कृति और आधुनिक सांस्कृतिक आदान–प्रदान के कारण रामकथा की उपस्थिति को पूरी तरह नकारा नहीं जा सकता। विशेष रूप से 2016 में भूटानी कलाकारों द्वारा रामायण के बौद्ध संस्करण का मंचन इस बात का प्रमाण है कि रामकथा ने भूटानी सांस्कृतिक परिवेश में भी अपना एक विशिष्ट रूप ग्रहण किया है। अतः हिंदी साहित्य और भूटान की रामकथा परंपरा का तुलनात्मक अध्ययन भारतीय साहित्य की अंतरराष्ट्रीय सांस्कृतिक यात्रा को समझने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

2. शोध के उद्देश्य : प्रस्तुत शोध के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

1. हिंदी साहित्य में रामकथा की विकास–परंपरा का अध्ययन करना।
2. तुलसीदास के रामचरितमानस में रामकथा के स्वरूप का विश्लेषण करना।
3. भूटानी सांस्कृतिक संदर्भ में रामकथा की उपस्थिति और स्वरूप का अध्ययन करना।
4. हिंदी और भूटानी रामकथा परंपराओं के बीच समानताओं और भिन्नताओं को रेखांकित करना।
5. दोनों परंपराओं में राम, सीता, धर्म, नैतिकता और लोकमंगल की अवधारणाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।
6. यह देखना कि एक ही मूल कथा अलग–अलग सांस्कृतिक परिवेशों में किस प्रकार नए अर्थ ग्रहण करती है।
7. रामकथा को भारत और भूटान के सांस्कृतिक संवाद के एक माध्यम के रूप में समझना।

3. शोध विधि : इस शोध में तुलनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है। हिंदी साहित्य से संबंधित अध्ययन के लिए रामचरितमानस, तुलसीदास की अन्य रामकाव्य संबंधी रचनाओं तथा रामकथा संबंधी आलोचनात्मक अध्ययनों को आधार बनाया गया है। भूटान के संदर्भ में उपलब्ध साहित्यिक, सांस्कृतिक और प्रदर्शन संबंधी स्रोतों का अध्ययन किया गया है।

4. रामकथा की भारतीय पृष्ठभूमि : रामकथा की भारतीय परंपरा अत्यंत प्राचीन है। वाल्मीकि रामायण में राम को आदर्श मानव, आदर्श पुत्र, आदर्श पति और आदर्श राजा के रूप में प्रस्तुत किया गया है। रामायण की कथा का मूल ढाँचा बाद के अनेक संस्करणों में कायम रहा, किन्तु प्रत्येक लेखक और समाज ने अपनी सांस्कृतिक आवश्यकताओं के अनुसार उसमें परिवर्तन किए।

रामायण के प्रसार का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष उसका बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक स्वरूप है। विद्वानों ने संकेत किया है कि रामकथा भारत से बाहर भी अनेक रूपों में विकसित हुई और तिब्बत तथा दक्षिण–पूर्व एशिया के क्षेत्रों में भी स्थानीय सांस्कृतिक तत्वों के साथ उसका रूपांतरण हुआ।

इस दृष्टि से रामकथा को एक 'बहुरूपी आख्यान' कहा जा सकता है। प्रत्येक संस्करण अपने समय और समाज की आवश्यकताओं को व्यक्त करता है।

5. हिंदी साहित्य में रामकथा की परंपरा : हिंदी साहित्य में रामकथा का सबसे प्रभावशाली रूप तुलसीदास के साहित्य में मिलता है। रामचरितमानस की रचना अवधी में हुई और इसे हिंदी क्षेत्र की सर्वाधिक प्रभावशाली रामकथा परंपराओं में गिना जाता है।

तुलसीदास ने राम को मर्यादा, धर्म और लोकमंगल के आदर्श के रूप में स्थापित किया। उनके राम एक ओर परमब्रह्म हैं, तो दूसरी ओर मानवीय संवेदनाओं से युक्त आदर्श चरित्र भी हैं। यही द्वैत रामचरितमानस की लोकप्रियता का एक प्रमुख कारण है। तुलसी की रामकथा केवल राजवंश की कथा नहीं है। इसमें परिवार, समाज, राज्य, गुरु–शिष्य संबंध, भाईचारा, मित्रता, सेवा, त्याग और कर्तव्य जैसे अनेक जीवन–मूल्यों का समावेश है।

तुलसीदास ने रामकथा को संस्कृत की सीमित विद्वत–परंपरा से निकालकर लोकभाषा में प्रतिष्ठित किया। इस प्रकार रामचरितमानस ने भाषा और साहित्य दोनों के स्तर पर एक व्यापक सांस्कृतिक भूमिका निभाई। शोधकर्ताओं ने यह भी रेखांकित किया है कि इसकी लोकप्रियता केवल पाठ तक सीमित नहीं रही, बल्कि रामलीला, कथा, गायन और मौखिक व्याख्या जैसी प्रदर्शनात्मक परंपराओं के माध्यम से भी इसका विस्तार हुआ।

6. तुलसीदास और रामकथा का लोकाभिमुख स्वरूप : तुलसीदास की विशेषता यह है कि उन्होंने रामकथा को लोकजीवन से जोड़ दिया। उनकी भाषा सहज, भावपूर्ण और संप्रेषणीय है। रामचरितमानस की कथा–रचना में भक्ति और काव्य दोनों का सुंदर समन्वय मिलता है।

तुलसी के राम– आदर्श पुत्र हैं। आदर्श भाई हैं। आदर्श पति हैं। आदर्श राजा हैं। भक्तवत्सल ईश्वर हैं और लोकमंगल के प्रतीक हैं।

इसलिए राम का चरित्र केवल धार्मिक विश्वास का विषय न रहकर सामाजिक आचार और नैतिक आदर्श का भी माध्यम बन जाता है। तुलसीदास की अन्य रचनाओं में भी रामकथा के विभिन्न रूप मिलते हैं। उनके कवितावली, गीतावली, जानकीमंगल, रामललानहछू, रामाज्ञाप्रश्न आदि ग्रंथ रामकथा के अलग–अलग प्रसंगों और भावभूमियों को सामने लाते हैं। विद्वानों ने इस तथ्य की ओर संकेत किया है कि स्वयं तुलसीदास ने विभिन्न रचनाओं में रामकथा को अलग–अलग ढंग से प्रस्तुत किया।

इससे यह स्पष्ट होता है कि रामकथा एक स्थिर कथा नहीं, बल्कि रचनाकार की दृष्टि के अनुसार निरंतर पुनर्सृजित होने वाली परंपरा है।

7. हिंदी रामकथा में भक्ति और लोकमंगल : हिंदी रामकाव्य परंपरा में भक्ति का विशेष महत्त्व है। तुलसीदास के समय में भक्ति आंदोलन व्यापक सामाजिक प्रभाव उत्पन्न कर रहा था। रामभक्ति ने व्यक्ति और ईश्वर के बीच संबंध को सरल और भावात्मक बनाया। रामचरितमानस की लोकप्रियता का एक प्रमुख कारण इसका लोकभाषा में होना है। भाषा ने कथा को सामान्य जनता तक पहुँचाया और कथा ने भाषा को सांस्कृतिक प्रतिष्ठा प्रदान की। इस प्रकार रामकथा और लोकभाषा का संबंध परस्पर सृजनात्मक रहा।

रामचरितमानस की परंपरा पाठ, गायन, कथा और रामलीला के माध्यम से आज तक जीवित है। यह तथ्य इसे केवल साहित्यिक ग्रंथ न मानकर एक जीवंत सांस्कृतिक परंपरा के रूप में देखने की प्रेरणा देता है।

8. भूटान का सांस्कृतिक परिवेश : भूटान की सांस्कृतिक पहचान पर बौद्ध धर्म का गहरा प्रभाव है। विशेष रूप से तिब्बती बौद्ध परंपरा ने वहाँ के धार्मिक जीवन, कला, साहित्य और सामाजिक संरचना को प्रभावित किया है।

ऐसे परिवेश में भारतीय हिंदू आख्यानों की स्वीकृति भारत की तुलना में अलग रूप ग्रहण करती है। रामकथा भी इसी सांस्कृतिक प्रक्रिया का हिस्सा है। भूटान में रामकथा के संबंध में उपलब्ध सामग्री हिंदी साहित्य की तरह व्यापक और व्यवस्थित नहीं है। इसलिए भूटानी रामकथा की चर्चा करते समय लिखित महाकाव्य की अपेक्षा लोक–स्मृति, सांस्कृतिक संपर्क और रंगमंचीय प्रस्तुति जैसे स्रोत अधिक उपयोगी हैं।

2016 में भूटानी कलाकारों ने भोपाल में रामायण के एक बौद्ध संस्करण का मंचन किया था। यह घटना विशेष महत्त्व रखती है क्योंकि इससे यह संकेत मिलता है कि रामकथा भूटानी कलाकारों और सांस्कृतिक परंपरा में बौद्ध दृष्टिकोण के साथ पुनर्परिभाषित हो सकती है।

9. भूटान में रामकथा का बौद्ध संदर्भ : भूटान में रामकथा का अध्ययन करते समय सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि एक हिंदू धार्मिक आख्यान बौद्ध बहुल समाज में किस प्रकार अर्थ ग्रहण करता है। इसका उत्तर 'पुनर्पाठ' की अवधारणा में खोजा जा सकता है। भारतीय परंपरा में राम को विष्णु के अवतार तथा धर्म की स्थापना करने वाले आदर्श पुरुष के रूप में देखा जाता है। इसके विपरीत बौद्ध सांस्कृतिक परिवेश में कथा के नैतिक और शिक्षात्मक पक्ष को अधिक महत्त्व मिल सकता है। इस संदर्भ में रामकथा–

नैतिक आचरण
त्याग
कर्तव्य
करुणा
आत्मसंयम

बुराई पर अच्छाई की विजय जैसे मूल्यों की कथा के रूप में ग्रहण की जा सकती है। इस प्रकार कथा का धार्मिक संदर्भ बदलने पर भी उसके नैतिक मूल्यों का सांस्कृतिक जीवन बना रह सकता है।

10. हिंदी और भूटानी रामकथा : तुलनात्मक दृष्टि : हिंदी साहित्य और भूटान में रामकथा की तुलना करते हुए दोनों परंपराओं में कुछ महत्वपूर्ण समानताएँ और भिन्नताएँ दिखाई देती हैं।

10.1 समानताएँ :

दोनों परंपराओं में रामकथा नैतिक मूल्यों को अभिव्यक्त करने का माध्यम बनती है।

राम का संघर्ष केवल व्यक्तिगत संघर्ष नहीं है, बल्कि न्याय और अन्याय, सत्य और असत्य तथा नैतिकता और अनैतिकता के संघर्ष का प्रतीक बन जाता है।

रामकथा के माध्यम से त्याग, कर्तव्य, संयम और नैतिक जीवन जैसे मूल्यों को महत्त्व मिलता है।

10.2 भिन्नताएँ :

हिंदी साहित्य में रामकथा का एक विशाल लिखित साहित्यिक बवतचने विकसित हुआ। रामचरितमानस इसका सबसे प्रमुख उदाहरण है।

भूटान में उपलब्ध प्रमाण इस प्रकार की व्यापक हिंदी–सदृश साहित्यिक परंपरा का संकेत नहीं देते। वहाँ रामकथा

की उपस्थिति का स्वरूप अधिक सीमित, सांस्कृतिक और प्रदर्शनात्मक दिखाई देता है।

हिंदी परंपरा में रामभक्ति एक प्रमुख धार्मिक भावभूमि है। भूटानी संदर्भ में बौद्ध सांस्कृतिक दृष्टि कथा के अर्थों को प्रभावित करती है।

10. राम के चरित्र का तुलनात्मक अध्ययन : हिंदी साहित्य में राम का चरित्र बहुआयामी है। वे ईश्वर भी हैं और आदर्श मनुष्य भी। तुलसीदास ने राम को 'मर्यादा' और 'लोकमंगल' के आदर्श के रूप में स्थापित किया।

रामचरितमानस में राम के चरित्र की केंद्रीय विशेषता मर्यादा है। वे व्यक्तिगत सुख की अपेक्षा सामाजिक और पारिवारिक कर्तव्य को प्राथमिकता देते हैं।

भूटानी संदर्भ में राम का अध्ययन करते हुए धार्मिक अवतार की अपेक्षा उनके नैतिक चरित्र को केंद्र में रखने की संभावना अधिक दिखाई देती है। बौद्ध सांस्कृतिक संदर्भ में कथा का नैतिक एवं शिक्षात्मक पक्ष प्रमुख हो सकता है। इस प्रकार–

हिंदी परंपरा : राम = ईश्वर. आदर्श मानव. मर्यादा पुरुषोत्तम
भूटानी बौद्ध संदर्भ : राम = नैतिक आदर्श. कथात्मकध्सांस्कृतिक पात्र
यह विभाजन पूर्णतः कठोर नहीं है, बल्कि तुलनात्मक अध्ययन की एक उपयोगी विश्लेषणात्मक रूपरेखा है।

11. सीता के चरित्र का तुलनात्मक अध्ययन : रामकथा के प्रत्येक संस्करण में सीता की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। हिंदी साहित्य में सीता पतिव्रता, त्याग, धैर्य और नारी–गरिमा का प्रतीक हैं। तुलसीदास की कथा में सीता राम के साथ आदर्श दांपत्य की प्रतिनिधि हैं।

आधुनिक साहित्यिक आलोचना ने सीता के चरित्र को नए दृष्टिकोणों से भी देखा है। समकालीन रामकथा–लेखन में सीता को केवल त्यागमयी नारी के रूप में नहीं, बल्कि निर्णय लेने वाली, संघर्ष करने वाली और अपनी स्वतंत्र चेतना रखने वाली स्त्री के रूप में भी पुनर्परिभाषित किया गया है।

भूटानी संदर्भ में सीता की भूमिका पर विस्तृत स्वतंत्र साहित्यिक सामग्री अपेक्षाकृत कम उपलब्ध है। इसलिए यहाँ निश्चित निष्कर्ष देने के बजाय यह कहा जा सकता है कि भूटानी पुनर्पाठ में सीता का चरित्र मूल कथा से प्राप्त नैतिक और मानवीय मूल्यों के साथ नए सांस्कृतिक अर्थ ग्रहण कर सकता है।

12. लोक और प्रदर्शन परंपरा : रामकथा की शक्ति केवल लिखित साहित्य में नहीं है। इसका वास्तविक प्रभाव लोक और प्रदर्शन परंपराओं में भी दिखाई देता है।

हिंदी क्षेत्र में रामलीला, रामकथा, मानस–पाठ, भजन और लोकगीत रामकथा को पीढ़ी–दर–पीढ़ी आगे बढ़ाते रहे हैं। रामचरितमानस के पाठ और प्रदर्शन ने इसे एक जीवित सांस्कृतिक परंपरा बना दिया।

भूटान में भी रामकथा की आधुनिक मंचीय प्रस्तुति इस बात को रेखांकित करती है कि कथा केवल पुस्तक में सीमित नहीं है। 2016 का भूटानी कलाकारों का रामायण मंचन इसका उल्लेखनीय उदाहरण है।

इस प्रकार दोनों संस्कृतियों में प्रदर्शन रामकथा के संप्रेषण का महत्त्वपूर्ण माध्यम बनता है, यद्यपि उसके धार्मिक और सांस्कृतिक संदर्भ अलग हैं।

13. रामकथा और सांस्कृतिक संवाद : रामकथा भारत और भूटान के बीच सांस्कृतिक संवाद की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। दोनों देशों के बीच ऐतिहासिक, धार्मिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संबंध रहे हैं।

रामकथा का भूटानी सांस्कृतिक क्षेत्र में प्रवेश केवल धार्मिक प्रभाव के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। इसे सांस्कृतिक आदान–प्रदान, सीमा–पार लोकस्मृति और कलात्मक संवाद की प्रक्रिया के रूप में भी समझना चाहिए।

जब कोई कथा दूसरे समाज में प्रवेश करती है तो वह अपने मूल रूप में जस की तस नहीं रहती। स्थानीय समाज उसे अपनी भाषा, धर्म, सौंदर्यबोध और सामाजिक अनुभवों के अनुसार पुनर्गठित करता है।

यही प्रक्रिया रामकथा को विश्व–साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण बहुसांस्कृतिक परंपरा बनाती है।

14. तुलनात्मक सारणी

आधार	हिंदी साहित्य	भूटानी संदर्भ
प्रमुख सांस्कृतिक आधार	हिंदू/भक्ति परंपरा	बौद्ध सांस्कृतिक परिवेश
प्रमुख स्वरूप	लिखित, मौखिक एवं प्रदर्शनात्मक	लोक, सांस्कृतिक एवं प्रदर्शनात्मक
प्रमुख पाठ	रामचरितमानस आदि	बौद्ध पुनर्पाठ/प्रस्तुतियाँ
राम का स्वरूप	ईश्वर एवं आदर्श मानव	नैतिक/आख्यानात्मक आदर्श
प्रमुख मूल्य	भक्ति, मर्यादा, धर्म, लोकमंगल	नैतिकता, करुणा, संयम, सांस्कृतिक पुनर्पाठ
भाषा	अवधी, ब्रज एवं आधुनिक हिंदी	स्थानीय भाषाएँ एवं प्रदर्शन परंपराएँ
प्रमुख माध्यम	मानस–पाठ, रामलीला, कथा, साहित्य	रंगमंच और सांस्कृतिक प्रस्तुति
परंपरा का स्वरूप	अत्यंत विस्तृत एवं सतत	तुलनात्मक रूप से सीमित एवं विविध
धार्मिक संदर्भ	वैष्णव/रामभक्ति	बौद्ध सांस्कृतिक परिवेश में पुनर्व्याख्या

15. रामकथा का अंतरसांस्कृतिक स्वरूप : रामकथा की सबसे बड़ी विशेषता उसकी सांस्कृतिक अनुकूलनशीलता है। एक ही कथा अलग–अलग समाजों में अलग–अलग अर्थ ग्रहण करती है।

तुलसीदास के यहाँ रामकथा भक्ति और मर्यादा का आख्यान बनती है। उत्तर भारतीय समाज में यह जीवन–मूल्यों का सांस्कृतिक कोड भी बन गई। शोध में रामचरितमानस को उत्तर भारतीय सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन के आदर्श से जोड़कर देखा गया है। दूसरी ओर, बौद्ध सांस्कृतिक परिवेश में रामकथा का धार्मिक अर्थ बदल सकता है और कथा का नैतिक पक्ष अधिक प्रमुख हो सकता है।

इस प्रकार रामकथा हमें यह समझने में सहायता करती है कि साहित्य किसी एक संस्कृति की संपत्ति न होकर विभिन्न संस्कृतियों के बीच संवाद का माध्यम भी बन सकता है।

16. आधुनिक संदर्भ में रामकथा : आधुनिक समय में रामकथा का स्वरूप और भी व्यापक हुआ है। साहित्य, रंगमंच, सिनेमा, टेलीविजन, डिजिटल माध्यम और लोकप्रिय संस्कृति में रामकथा निरंतर पुनर्सृजित हो रही है। विद्वानों ने इस बात पर ध्यान दिलाया है कि रामकथा की प्रत्येक प्रस्तुति अपने समय के सामाजिक प्रश्नों को भी प्रतिबिंबित करती है। इस दृष्टि से हिंदी और भूटानी रामकथा का अध्ययन केवल अतीत की साहित्यिक परंपरा का अध्ययन नहीं है, बल्कि यह आधुनिक दक्षिण एशियाई सांस्कृतिक संपर्क को समझने का भी माध्यम है।

17. निष्कर्ष : हिंदी साहित्य और भूटान में रामकथा की परंपरा का तुलनात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि रामकथा एक बहुआयामी और गतिशील सांस्कृतिक आख्यान है।

हिंदी साहित्य में रामकथा ने अत्यंत व्यापक साहित्यिक विकास प्राप्त किया। वाल्मीकि की रामायण से लेकर तुलसीदास के रामचरितमानस और आधुनिक हिंदी साहित्य तक रामकथा निरंतर नए अर्थ ग्रहण करती रही है। तुलसीदास ने राम को भक्ति, मर्यादा, धर्म और लोकमंगल के आदर्श के रूप में स्थापित करके रामकथा को हिंदी समाज के सांस्कृतिक जीवन का अभिन्न अंग बना दिया। रामचरितमानस का प्रभाव साहित्य से आगे बढ़कर लोकपाठ, गायन, कथा और रामलीला जैसी परंपराओं में दिखाई देता है।

भूटान में स्थिति अलग है। वहाँ बौद्ध संस्कृति के प्रभाव के कारण रामकथा को हिंदी क्षेत्र की तरह एक विशाल स्वतंत्र रामभक्ति साहित्यिक परंपरा के रूप में नहीं देखा जा सकता। फिर भी रामकथा की सांस्कृतिक उपस्थिति और उसका बौद्ध पुनर्पाठ महत्त्वपूर्ण है। भूटानी कलाकारों द्वारा बौद्ध रामायण का मंचन इस बात को प्रमाणित करता है कि रामकथा भिन्न धार्मिक–सांस्कृतिक वातावरण में प्रवेश करके नए अर्थ ग्रहण कर सकती है।

इस तुलनात्मक अध्ययन का सबसे महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष यह है कि रामकथा की शक्ति उसके स्थिर कथानक में नहीं, बल्कि उसके निरंतर पुनर्सृजन में निहित है। राम, सीता, लक्ष्मण, हनुमान और रावण जैसे पात्र अलग–अलग संस्कृतियों में अलग–अलग अर्थ प्राप्त करते हैं। कथा का मूल ढाँचा समान रहते हुए उसके मूल्य, प्रतीक और व्याख्याएँ परिवर्तित हो सकती हैं।

हिंदी साहित्य में रामकथा जहाँ भक्ति और मर्यादा की व्यापक सांस्कृतिक परंपरा का निर्माण करती है, वहीं भूटानी संदर्भ यह दिखाता है कि यही कथा बौद्ध नैतिकता और स्थानीय सांस्कृतिक दृष्टि के साथ संवाद कर सकती है।

अतः रामकथा को केवल धार्मिक आख्यान के रूप में नहीं, बल्कि अंतरसांस्कृतिक संवाद, नैतिक चिंतन और साहित्यिक पुनर्सृजन की जीवंत परंपरा के रूप में देखना अधिक उपयुक्त होगा।

18. संदर्भ सूची :

1. तुलसीदास (2018), श्रीरामचरितमानस, गीता प्रेस।
2. तुलसीदास (2019), कवितावली, गीता प्रेस।
3. तुलसीदास (2017), गीतावली, गीता प्रेस।
4. तुलसीदास (2016), जानकीमंगल, गीता प्रेस।
5. वाल्मीकि (2018), श्रीमदवाल्मीकीय रामायण, गीता प्रेस।
6. द्विवेदी, हजारी प्रसाद (2016), हिंदी साहित्य, उद्‌भव और विकास, राजकमल प्रकाशन।
7. शुक्ल, रामचंद्र (2017) हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा।
8. मिश्र, विश्वनाथ प्रसाद (2015), तुलसीदास, लोकभारती प्रकाशन।
9. वर्मा, रामकुमार (2014), हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, लोकभारती प्रकाशन।
10. नगेन्द्र (2015), हिंदी साहित्य का इतिहास, नेशनल पब्लिशिंग हाउस।
11. नामवर सिंह (2018), इतिहास और आलोचना, राजकमल प्रकाशन।
12. तिवारी, हीरामन (2010), रामचरितमानस और भारतीय लोक–संस्कृति, भारतीय ज्ञानपीठ।
13. त्रिपाठी, रामनरेश (2015), रामकथा और भारतीय संस्कृति, लोकभारती प्रकाशन।
14. वर्मा, धीरेन्द्र (2016), हिंदी साहित्य और सांस्कृतिक चेतना, राजकमल प्रकाशन।
15. सिंह, बच्चन (2014), हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन।
16. शर्मा, रामविलास (2002) परंपरा का मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन।

ज्ञानविविधा
कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 06-09
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :
फ्लोरेंस पुर्ती
सहायक प्राध्यापक, शिक्षा विभाग,
संत जेवियर्स कॉलेज, रॉची

Corresponding Author :
फ्लोरेंस पुर्ती
सहायक प्राध्यापक, शिक्षा विभाग,
संत जेवियर्स कॉलेज, रॉची

भूटान में भारतीय संस्कृति के विविध आयाम और उनका प्रभाव

शोध–सार : भूटान भारत का पड़ोसी देश है और दोनों देशों के बीच काफी गहरे सम्बन्ध हैं। सांस्कृतिक रूप से भी दोनों देशों के बीच काफी समानताएँ हैं। प्रस्तुत शोध–आलेख में भारतीय संस्कृति के विभिन्न पहलूओं तथा उनके प्रभाव को दर्शाने का प्रयास किया गया है। हिमालय की गोद में बसे इस देश के साथ विभिन्न क्षेत्रों में भारत के साथ सहयोग है जो आपसी सम्बन्धों को और भी गहरा बनाते है। भूटान का राजकीय धर्म बौद्ध धर्म है जिसकी शुरूआत भारत में हुई और बाद में इसका प्रसार यहॉ हुआ। यहॉ के हिन्दु धर्मावलम्बी काफी करीब से भारत से जुड़े हुए है। भौगोलिक निकटता के कारण भाषा, नृत्य, संगीत और विभिन्न कलाओं का आदान–प्रदान इन दो देशों के बीच आम है। सांस्कृतिक समानता के कारण कुछ रीति–रिवाज और परम्पराएँ भी मिलती जुलतीं है। आज के इस सूचना क्रांति, मीडिया क्रांति और इंटरनेट, के युग में सांस्कृतिक आदान प्रदान और भी सहजता के साथ हो रहा है। मीडिया चैनल में चलने वाले कार्यक्रम भूटान में काफी लोकप्रिय हैं इससे भारतीय, साहित्य, विचार, विभिन्न प्रकार के ज्ञान और परम्परा को जानने में मदद मिलती है। सीमावर्ती क्षेत्रों मे तो लोगों का जीवन इतना घुल मिल गया है कि लोग दोनों देशों की साझा संस्कृति को सहजता के साथ जीते है। दोनों देशों के बीच की सामाजिक समरसता निश्चय ही प्रशंसनीय है। यह आपसी सम्बन्धों को और अधिक गहरा और मजबूत करती है।

मुख्य शब्द : संस्कृति, दर्शन, आयुर्वेद, कला, मीडिया, भाषा, नृत्य, चिकित्सा पद्धति।

परिचय : भारतीय संस्कृति एक प्राचीन संस्कृति है। प्राचीन काल से ही भारतीयों के विभिन्न कारणों से एक जगह से दूसरे जगह पर प्रवास के दौरान इस संस्कृति का विस्तार विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में हुआ। जो देश भौगोलिक रूप से निकट थे तथा सीमावर्ती क्षेत्रों में थे वहॉ लोगों के आने जाने और अन्तर्सम्बन्धों के कारण भी भारतीय संस्कृति का प्रसार हुआ। विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक का अभ्युदय भारत देश की माटी में हुआ। कालांतर में व्यापारिक गतिविधियों, बेहतर जीवन की तालाश एवं अन्य कारणों से लोग एक देश से दूसरे देश में गए और उन्होंने वहॉ एक दूसरे की संस्कृति को जाना और अपनाया। आज भी संसार के विभिन्न देशों में भारतीय संस्कृति की झलक दिखाई पड़ती है। आपसी सम्पर्क से न सिर्फ व्यापारिक रिश्ते मजबूत हुए वरन संस्कृतियों, भाषाओं, परम्पराओं का भी आदान प्रदान हुआं। भारत शुरू से ही "वसुधैव कुटुम्बकम" के सिद्धान्त को मानता रहा है। इन अन्तर्सम्बन्धों से विश्व के विभिन्न देशों में भारतीयता का प्रभाव झलकता है। भारत और भूटान के संदर्भ में देखें तो इनका पारस्परिक सम्बन्ध काफी पुराना है। भारत और भूटान के व्यापारिक,सांस्कृतिक, धार्मिक और शैक्षणिक सम्बन्ध आरंभ से ही काफी प्रागाढ़ रहे हैं। भारत और भूटान के बीच में कभी भी सम्बन्ध कटु नहीं रहे। इन देशों के बीच सम्बन्ध सामान्यतः मित्रतापूर्ण ही रहे हैं। दोनों देशों के निवासियों का इन दोनों ही देशों में आना जाना लगा रहता है। यहॉ कुछ जरूरी प्रशासनिक प्रक्रियाओं को पूरा

करने के पश्चात् कोई भी किसी भी देश में आ जा सकता है। करीब 600 किलोमीटर की सीमा रेखा इन दोनों देशों को अलग करती है लेकिन सीमा पर कोई संघर्ष नहीं है। आपसी समझदारी और मित्रवत व्यवहार दोनों देशों के बीच उनके सहअस्तितव एवं समझदारी को दिखाता है।

भूटान एक शांतिप्रिय देश है और यह दोनों देशों के बीच शांतिपूर्ण सम्बन्धों का हिमायती है। यहॉ के लोग ज्यादातर बौद्ध धर्म को मानते हैं जो करीब 80 प्रतिशत है। हिन्दुओं की जनसंख्या करीब 15 प्रतिशत एवं अन्य धर्मावलम्बियों की जनसंख्या करीब 5 प्रतिशत के करीब है। यहॉ के पहाड़ों में शांति है, लोग भोले भाले तथा प्रकृतिप्रेमी हैं। सांस्कृतिक रूप से यह काफी सम्पन्न राष्ट्र है जो अपने आप में खास है लेकिन धार्मिक क्षेत्र में भारत के साथ इसकी काफी समानताऍ हैं। यहॉ का जो बौद्ध धर्म है वह वज्रयान या तांत्रिक बौद्ध धर्म है जिसकी जड़ें तिब्बती बौद्ध परम्परा में निहित हैं जो यहॉ का औपचारिक राजकीय धर्म है। दूसरी बड़ी आबादी हिन्दुओं की है जो करीब से भारत से जुड़े है क्योंकि हिन्दू धर्म की जड़े भारत में ही है।

दोनों देशों के बीच का आपसी सम्बन्ध 1968 ई. में औपचारिक रूप से शुरू होने के बाद से निरंतर मजबूत होता गया है इसके पूर्व 1949 ई. में दोनो देशों के बीच मैत्री संधि हुई जिसे पुनः 2007 में और मजबूती प्रदान की गई। इसमें दोनों देशों के बीच संप्रभुता, स्वतंत्रता और परस्पर सम्बन्धों पर बल दिया गया। समय–समय पर दोनों देशों के बीच नेताओं और प्रशासनिक अधिकारियों के बीच दौरे होते रहे हैं इससे दोनों देशों के बीच समझदारी बढ़ी है तथा आपसी संवाद गहरा हुआ है। दोनों देशों के बीच सुरक्षा, जलविद्युत, सीमा और क्षेत्रीय मुद्दों पर सहयोग के बारे में चर्चाऍ की जाती रही हैं तथा आपसी सहयोग को और मजबूत किया रहा है। विशेषकर पर्यटन के क्षेत्र में दोनों देशों के बीच सहयोग किया जा रहा है। काफी संख्या में भारतीय पर्यटक भूटान जाते हैं तथा भूटान से भी लोग विभिन्न आवश्यकताओं के लिए भारत आते रहते हैं। उनको भारत आने में कोई परेशानी नहीं है।

भूटान में भारतीय सांस्कृति के विभिन्न पहलू : भारत और भूटान के बीच का सम्बन्ध सिर्फ राजनैतिक एवं आर्थिक नहीं है अपितु यह सम्बन्ध गहरे सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक सम्बन्धों पर आधारित हैं। भारतीय संस्कृति बहुआयामी रही है इसमें योग, आध्यात्मिकता, ज्ञान–दर्शन, नृत्य–संगीत, साहित्य इत्यादि प्रमुख हैं। भूटान की संस्कृति में भी इसका प्रभाव देखा जा सकता है।

इनके विभिन्न पहलू इस प्रकार हैः

1.**भारतीय धर्म और दर्शन :** भूटान में बौद्ध धर्म का प्रचार भारत से ही हुआ। गौतम बुद्ध का जन्म निश्चय ही नेपाल में हुआ लेकिन उनकी कर्मभूमि भारत रही तथा इनके अनुयायी आरंभ में मुख्यतः भारत से ही रहे। परन्तु समयान्तराल में बौद्ध धर्म के अनुयायियों की संख्या निरंतर बढ़ती गई। उन्होंने इस धर्म का प्रचार अन्य देशों में भी किया उनमें भारत के पड़ोसी देश तिब्बत, नेपाल, भूटान, म्यांमार, थाइलैंड आदि प्रमुख थे। इनमें भौगोलिक निकटता के कारण स्वाभाविक रूप से धर्म का प्रसार हुआ। लोगों मे सांस्कृतिक समानता भी थी इसलिए लोगों को इसे स्वीकार करने में कोई समस्या नहीं हुई। भारतीय बौद्ध परम्परा से ही भूटान में कर्म और पुर्नजन्म की अवधारणा विकसित हुई। इसी से करूणा एवं अहिंसा की भावना, ध्यान एवं साधना की भावना, गुरू एवं शिष्य सम्बन्ध, मंत्र एवं तांत्रिक साधना, बोधिसत्त्व, मठवासी जीवन इत्यादि का प्रसार हुआ। इतना ही नहीं भूटान के गुरू रिनपोछे जिनको वहॉ विशेष सम्मान प्राप्त है वे भारतीय बौद्ध परंपरा के महान आचार्य माने जाते हैं। उन्हीं के प्रभाव से हिमालयी क्षेत्र में बौद्ध धर्म का प्रसार हुआ। गुरू रिनपोछे भारत एवं भूटान के बीच एक धार्मिक सेतु का कार्य करते हैं। भूटान में बौद्ध धर्म से सम्बन्धित अनेक धार्मिक स्थल, गुफाऍ, मंदिर एवं लोक कथाऍ मिलतीं हैं। यह भी भारतीय संस्कृति के ही प्रभाव को दर्शाता है।

भारत की संस्कृति मूलतः हिन्दु संस्कृति है यह उनके रहन–सहन, खान–पान, नाच–गान, जीवन दर्शन, और विभिन्न परम्पराओं में दृष्टिगोचर होता हैं। भूटान के हिन्दू धार्मिक एवं सांस्कृतिक रूप से भारत से जुड़े हुए हैं। वे भारतीय पूजन–पद्धति, परम्पराओं एवं रीति रिवाजों का पालन आंशिक रूप से ही सही लेकिन करते हैं। वे तीर्थयात्रा के लिए भारत आते हैं तथा यहॉ के धर्मगुरूओं से आशीर्वाद लेते हैं। सीमावर्ती इलाकों के हिन्दुओं के बीच सम्बन्ध न सिर्फ धार्मिक हैं लेकिन सांस्कृतिक एवं सामाजिक भी है।

2.योग एवं आयुर्वेद : भारतीय परम्परा में स्वस्थ जीवन का अहम स्थान है। यहॉ स्वस्थ रहने के लिए संयम एवं नियंत्रण को महत्वपूर्ण माना गया है। इसमें शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य तीनों महत्वपूर्ण हैं। इसमें शरीर,मन और आत्मा के संतुलन पर जोर दिया जाता है। योग एक जीवन पद्धति है जिसमें शारीरिक व्यायाम के साथ–साथ उचित विचार एवं व्यवहार पर भी ध्यान दिया जाता है। संतुलित आहार, नियमित व्यायाम तथा आदर्श व्यवहार व्यक्ति को स्वस्थ रखते हैं। साथ ही भारतीय परम्परा में जो चिकित्सा पद्धति है वह आयुर्वेद के नाम से जानी जाती है। प्राचीन ज्ञान पर आधारित यह चिकित्सा पद्धति न सिर्फ वैज्ञानिक है अपितु यह दवाओं के कुप्रभावों से भी रहित है। साथ ही यह कुछ बीमारियों में अत्यन्त कारगर है। आज भी आधुनिक चिकित्सा पद्धति के वावजूद आयुर्वेद की साख कम नहीं हुई है और इस चिकित्सा पद्धति से लाखों लोग लाभान्वित हो रहे हैं। भूटान के सीमावर्ती क्षेत्रों में आयुर्वेद का प्रयोग एवं प्रभाव देखा जा सकता है। दोनों देशों के बीच सांस्कृतिक आदान प्रदान ने दोनों देशों के नागरिकों के बीच स्वास्थ्य चेतना को भी काफी हद तक प्रभावित किया है। हालांकि भूटान की पारंपरिक चिकित्सा पद्धति सोवा–रिग्पा है जो तिब्बती परम्परा से विकसित हुई है। बौद्ध विचारों का प्रभाव यहॉ की प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति, औषधीय पौधों, आहार–विहार एवं शरीर और मन के संतुलन पर पड़ा है इसके साथ ही भारतीय विचारों का भी इस पर प्रभाव पड़ा है। भारतीय आयुर्वेद और सोवा–रिग्पा के बीच कुछ समानताऍ दिखाई

पड़तीं हैं वे इस प्रकार हैं

- दोनों ही चिकित्सा पद्धति प्राकृतिक जड़ी–बूटियों से निर्मित औषधियों का उपयोग करतीं हैं।
- नियंत्रित भोजन एवं संयमित जीवन शैली को स्वास्थ्य का आधार माना गया है
- दोनो ही पद्धतियॉ शरीर के संतुलन एवं बीमारी की जड़ को समाप्त करने पर बल देतीं हैं।
- दोनों चिकित्सा परम्परा में वनस्पतियों के ज्ञान को महत्त्व दिया गया है।

भूटान जैव विविधता की दृष्टि से एक समृद्ध देश है। सीमावर्ती इलाके एवं भौगोलिक समानता के कारण दोनों देशों के बीच औषधियों के उपयोग एवं उनके पारंपरिक ज्ञान के प्रयोग में कुछ समानताएॅ दिखलाई पड़ती हैं। भारतीय आयुर्वेद ज्ञान ने भूटान में औषधीय पौधों के प्रति वैज्ञानिक सोच एवं उसपर आधारित औषधी निर्माण को प्रोत्साहन दिया है। भारत और भूटान के बीच योग और आयुष से संबंधित गतिविधियों के माध्यम से स्वास्थ्य के क्षेत्र में सहयोग देखने को मिलता है। भारत और भूटान के बीच स्वास्थ्य के क्षेत्र में सहयोग बढ़ा है। इससे भारतीय चिकित्सा पद्धति, प्रशिक्षण एवं स्वास्थ्य ज्ञान के आदान–प्रदान के अवसर बढ़े हैं तथा इससे भूटान में योग और आयुर्वेद को नई पहचान मिली है। बौद्ध धर्म और आयुर्वेद में शरीर और मन के संतुलन पर बल दिया गया है इस दृष्टि से ध्यान,मानसिक शांति, संयमित जीवन एवं संतुलित आहार दोनों देशों के बीच संवाद का नया अध्याय शुरू कर सकती है।

3. भाषा और साहित्य : भूटान में भारतीय भाषा एवं साहित्य का प्रभाव मुख्यतः हिन्दी, नेपाली, संस्कृत एवं बौद्ध साहित्य के रूप में दिखाई पड़ता है। भूटान में हिन्दी बोलने वालों की संख्या भारतीय फिल्मों, गीतों, टेलीविजन तथा भारत के साथ व्यापारिक एवं सामाजिक सम्पर्क के कारण बढ़ी है। हिन्दी साहित्य की लोकप्रिय रचनाएॅ सांस्कृतिक गतिविधियों के माध्यम से भूटान तक पहुॅचतीं हैं। भूटान के बौद्ध धार्मिक और दार्शनिक साहित्य पर संस्कृत बौद्ध ग्रंथों की छाप है। अनेक बौद्ध अवधारणाएॅ भारतीय संस्कृत परंपरा से ही भूटान पहुॅचीं हैं। भारतीय बौद्ध साहित्य का भूटानी धार्मिक एवं साहित्यिक परंपरा में गहरा प्रभाव है। बोधगया जो कि बौद्धों का महान तीर्थस्थल है उसका भूटानी बौद्ध समाज में विशेष महत्त्व है। भारत में काफी संख्या में भूटानी विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने के लिए आते हैं इससे वे यहॉ के भाषा एवं साहित्य से अवगत होते हैं। दोनों देशों के बीच सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आदान प्रदान से भी भूटान के युवाओं के बीच भारतीय भाषा एवं संस्कृति का प्रसार हुआ है। आज के इंटरनेट एवं सोशल मीडिया के दौर में भूटानी लोगों में हिन्दी भाषा का रूझान बढ़ा है। वे इस माध्यम से भी भारतीय भाषा एवं साहित्य को जान रहे हैं।

4. भारतीय कला एवं संगीत : भारतीय कला प्राचीन काल से ही काफी समृद्ध रही है। यहॉ की मूर्तिकला, चित्रकला, वास्तुकला तथा नृत्य संगीत काफी उन्नत थे। इसकी झलक आज भी देखी जा सकती है। आरंभ में भारतीयों के प्रवास के दौरान प्राचीन काल में इन कलाओं का भी प्रचार हुआ। भारतीय नृत्य कलाएॅ जिसमें भरतनाटयम, कत्थक, तथा अन्य नृत्य विधाएॅ विभिन्न कार्यक्रमों में भूटान में देखने को मिल जाते हैं। पड़ोसी राष्ट्र भूटान और भारत में पारस्परिक आवागमन तथा विभिन्न क्षेत्रों मे सहयोग के कारण लोगों के बीच में सांस्कृतिक आदान प्रदान हुआ है। बौद्ध धर्म का प्रभाव यहॉ की कला और संस्कृति पर गहरा प्रभाव पड़ा है। भूटान की बौद्ध चित्रकला, थांका, मूर्तियों और धार्मिक प्रतीकों में भारतीय बौद्ध कला की छाप दिखलाई पड़ती है। भारतीय शास्त्रीय संगीत का प्रभाव भी यहॉ के संगीत पर दिखाई पड़ता है। यहॉ के हिन्दु इनका बखूबी उपयोग विभिन्न अवसरों पर करते है। भारतीय फिल्मों का संगीत तो भूटान मे लोकप्रिय है ही। यहॉ हिन्दी फिल्मों को काफी पसंद किया जाता है। सीमावर्ती क्षेत्रों विशेषकर असम, बंगाल सिक्किम और अरूणाचल प्रदेश में भूटान के साथ करीबी सम्पर्क से लोकसंगीत एवं परम्पराओं में समानताएॅ विकसित हुईं है। इससे भारतीय प्रदेशों की कलाओं का प्रसार भूटान में हुआ है।

5. भारतीय सिनेमा और मीडिया : आज भी भारतीय सिनेमा विदेशों में काफी लोकप्रिय है। भारतीय फिल्मों का व्यवसाय न सिर्फ भारत में है अपितु विदेशों में भी इनके काफी दर्शक हैं। भारतीय फिल्में देश की संस्कृति एवं संगीत के वाहक हैं। इसमें भारतीय जीवन दर्शन को दिखाया जाता है। इसके द्वारा भी भारतीय संस्कृति का प्रचार प्रसार हो रहा है साथ ही लोग इसके माध्यम से भारतीय संस्कृति से जुड़ रहे हैं। आज की जो भारतीय मीडिया है उसका प्रसारण विश्वव्यापी है इसके माध्यम से लोग हर जगह की खबरें हासिल कर लेते हैं। मीडिया विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों के माध्यम से भारतीय कला और संस्कृति को निरंतर प्रसारित करती है। अन्य देशों के लोग इससे जुड़ते हैं और इसका आनंद लेते हैं। इससे भी भारतीयता के विभिन्न आयामों से लोग अवगत होते हैं। भूटान में भी भारतीय सिनेमा और चैनल काफी लोकप्रिय हैं। यहॉ के ज्यादातर लोग हिन्दी भाषा जानते हैं विशेषकर सीमावर्ती इलाकों में हिन्दी में संवाद एक आम बात है। भारतीय नायक नायिकाएॅ एवं उनके द्वारा बोले गए फिल्मी डायलॉग वहॉ भी काफी प्रचलन में हैं। फिल्मी गाने तो लोगों की जुबान पर होते है। इस तरह से भारतीय सिनेमा और मीडिया का यहॉ व्यापक प्रभाव है।

6. भारतीय त्योहार : बहुत से भारतीय त्योहारों को विदेशों में बड़े ही उल्लास के साथ मनाया जाता है। होली, दिवाली, दशहरा, रामनवमी, जन्माष्टमी इत्यादि कुछ त्योहार है जो भूटान में बड़े हर्ष और उल्लास के साथ मनाए जाते हैं । यहॉ हिन्दु धर्मावलम्बियों के साथ–साथ अन्य लोग भी इसमें शामिल होते है। यह लोगों के बीच में आपसी भाईचारा और सौहार्द्र तो बढ़ाता ही है साथ ही साथ इससे भारतीय पूजा–पाठ एवं परम्परा का प्रसार भी होता है।

निष्कर्ष : भारतीय संस्कृति अब भारतीय सीमा में सीमित नहीं है अपितु यह अब विदेशों में भी फैल गया है। भूटान से भारत के सांस्कृतिक सम्बन्ध तो सदियों से हैं। दोनों देशों की संस्कृति में कुछ भिन्नताएॅ तो हैं परन्तु कुछ समानताएॅ भी है। ये समानताएॅ इन दोनों देशों के बीच की साझा संस्कृति को दिखाते हैं। इससे आपस में समझदारी बढ़ी है तथा आपसी सम्बन्ध

और भी प्रागाढ़ हुए हैं। दोनों देशों के बीच में सांस्कृतिक आदान–प्रदान अब शिक्षा, व्यापार, आधारभूत संरचनाओं के विकास जैसे क्षेत्रों में विकास को और भी आगे बढ़ा रहा है। भविष्य में दोनों देशों के बीच में सहयोग और बढ़ने की संभावना है। इससे दोनों देश लाभान्वित होंगे। यह दोनों देशों के बीच में समृद्धि एवं विकास के लिए आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. Sarkar Tuhina (2012), **"India- Bhutan Relations",** The Indian Journal of Political Science, Vol. 73, No.2 pp. 347-352.
2. Rajput Madhu (2014), **Indo-Bhutan Relations: A Critical Analysis,** The Indian Journal of Political Science, Vol. 75., No.1 pp. 149-156.
3. Shrivastava Juhi (2015), **"Bhutan: A Success Story for India",** The Indian Journal of Political Science, Vol 76, No.3, pp.665-669.
4. Kaul Nitasha (2022), **Beyond India and China: Bhutan as a Small State in International Relations of Asia- Pacific**, International of Asia and Pacific vol. 22, I. 2. Pp 297-337. http://academic. Oup.com/article/22/2/297/6327065 retrieved on 14/09/2026.
5. Lama Uttam (2023), **India and Bhutan: A Relationship Before and after Independence,** Institute for Social and Economic Change, pp 1-17.
6. शुक्ल अरविन्द कुमार,(2024), **भारत–भूटान संबंधः एक विस्तृत अध्ययन,** International Journal of Advanced Research in Multidisciplinary Science ISSN 2581-8996, Vol. 7, I.1. http://journal.ijarms.org/index.php/ijarms/article/view/691 retrieved on 14/09/2026
7. रिंकी(2024), **सिनेमा का भारतीय संस्कृति पर प्रभावः आलोचनात्मक विश्लेषण,** अपनी माटी, साहित्य और समाज का दस्तावेजीकरण , https://www.apinmaati.com/2025/01/blog-post_74.html, retrieved on 14/09/2026.
8. Rawat Ranjana (2025), **"Indo Bhutan: Historical Unique and Special Relationship (A Picturesque Glimpses)",** Journal of Emerging Technologies and Innovative Research, Vol.2 Issue 2, pp. 527,www.jetir.org/papers/JETIR2502264.64.pdf Retrieved on 14/09/2026.

•

ज्ञानविविधा
कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 10-14
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

प्रा. डॉ. गौतम वाघमारे

सहयोगी प्राध्यापक एवं हिंदी विभाग प्रमुख,
संत तुकाराम कला व विज्ञान महाविद्यालय,
परभणी, महाराष्ट्र

Corresponding Author :

प्रा. डॉ. गौतम वाघमारे

सहयोगी प्राध्यापक एवं हिंदी विभाग प्रमुख,
संत तुकाराम कला व विज्ञान महाविद्यालय,
परभणी, महाराष्ट्र

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और धम्म क्रांति

पृष्ठभूमि : डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर का जीवन परिचय एवं सामाजिक परिवेश को देखे बिना धम्म क्रांति के मार्ग का परिचय नहीं होगा। डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर जी का जन्म मध्यप्रदेश के महू में 14 अप्रैल 1891 में हुआ था। पिताजी सुभेदार रामजी सकपाळ और माता भीमाबाई की कोख से 14 वे रत्न पैदा हुए थे। सुभेदार रामजी सपकाळ 25 वर्ष की नौकरी करने के बाद सन् 1894 में सेवानिवृत्त होने के बाद अपने पैतृक गाँव अम्बावडे में आकर रहने लगे थे। पेंशन पर सारा गुजारा चलता रहा। बाद में सुभेदार रामजी सकपाळ सातारा में आकर स्टोर कीपर की नौकरी करते हैं। सातारा में माता भीमाबाई का निधन हो जाता है। तब बालक भीमराव केवल 5 वर्ष के थे। बचपन में ही माता का साया चल बसता है। भीवा उर्फ भीमराव के भाई बहन तथा बुआ मीराबाई भीमराव की देखभाल करते हैं। भीमराव को रामजी सकपाल सातारा के शासकीय हाईस्कूल, जिसे अब 'प्रतापसिंह हाईस्कूल' के नाम से जाना जाता है। उसमें 7 नवम्बर 1900 को पहली की कक्षा में प्रवेश कराते हैं। उसी स्कूल में भीमराव को बचपन से ही जातीयता के दंश झेलने पड़ते हैं। रामजी सकपाल अपने पुत्र भीमराव का स्कूल में नाम दर्ज करते समय उपनाम 'सकपाल' न लिखकर अपने पैतृक गाँव के आधार पर 'अम्बावडेकर' दर्ज कराना चाहते थे। मगर स्कूल के शिक्षक द्वारा 'अम्बावडेकर' नाम उच्चारण में लंबा पड़ता है और बोलने में सरल नहीं लगता, इसलिए 'अम्बेडकर' नाम लगाना ठीक होगा इस सुझाव के साथ स्कूल रजिस्टर में 'भीमराव रामजी अम्बेडकर' नाम दर्ज किया जाता है। तब से भीमराव रामजी अम्बेडकर नाम से उनकी पहचान बन गई।

भीमराव अम्बेडकर जी को स्कूली जीवन से ही छुआछूत, जाति-पाँति का भेदभाव, पानी पीने को दूर से मिलना, कक्षा में न बैठने देना, कक्षा के बाहर बैठना आदि सामाजिक असमानता का व्यवहार स्कूली जीवन से ही भोगना पड़ा था। भीमराव पढ़ाई में बहुत होशियार थे। पाठ्यपुस्तकों के अलावा भी अन्य किताबों को पढ़ने में उनकी गहरी रुचि

थी। स्कूली शिक्षा सातारा से होकर अब मुंबई के एलफिंस्टन हाईस्कूल में प्रवेश कराने हेतु सुभेदार रामजी सकपाल को बड़ा संघर्ष करना पड़ा। सुभेदार रामजी सकपाल भीमराव को पढ़ाना चाहते थे।

उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर भले ही थी, मगर उन्होंने भीमराव की शिक्षा के लिए कोई कमी नहीं की। उनका हौसला बुलंद था, वे भीमराव को एक महान विद्वान बनाना चाहते थे। गाँवों में अशिक्षा के कारण जातिवाद, छुआछूत देखने को मिलती ही थी। परंतु मुंबई जैसे बड़े शहर और एलफिंस्टन हाईस्कूल में भी इस भेदभाव ने भीमराव का पीछा नहीं छोड़ा। एलफिंस्टन हाईस्कूल का एक प्रसंग यहाँ कहना उचित होगा। एक दिन शिक्षक भीमराव को ब्लैकबोर्ड पर लिखने के लिए बोलते हैं, तब अन्य सवर्ण विद्यार्थी शोर मचाते हुए कहते हैं—"ठहर जाओ, हमें रोटी के डिब्बे उठा लेने दो।' जब तक उन विद्यार्थियों ने अपने रोटी के डिब्बे नहीं उठा लिए, भीमराव को बोर्ड के पास नहीं जाने दिया गया।" [1]

भीमराव के साथ विद्यार्थी भी छुआछूत का भेदभाव करते थे और अध्यापक भी पीछे नहीं थे। उसी स्कूल के एक शिक्षक ने भीमराव को अपमानित करते हुए कहा था—"अरे, तू तो महार है, तू पढ़-लिखकर क्या करेगा?"[2] इस प्रकार जाति के नाम पर अपमानित करने वाले शिक्षक को भीमराव जवाब देते हैं: 'सर, पढ़-लिखकर मैं क्या करूँगा, यह पूछना आपका काम नहीं। यदि पुनः आपने कभी मेरी जाति का उल्लेख करके मुझे चिढ़ाया, तो मैं कह देता हूँ कि इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा।"[3]

भीमराव 'संस्कृत' विषय लेकर पढ़ना चाहते थे, मगर स्कूल के ब्राह्मण अध्यापकों ने उन्हें संस्कृत विषय नहीं लेने दिया। मजबूरी में भीमराव को 'फारसी' विषय लेकर पढ़ाई करनी पड़ी। संस्कृत में वेद लिखे गए थे और वेद पढ़ना व सुनना शूद्रों के लिए वर्जित माना गया था। भीमराव भले ही हिंदू समाज के थे, परंतु शूद्र/अस्पृश्य जाति से होने के कारण शिक्षक उन्हें संस्कृत भाषा कैसे पढ़ने देते! इसके बावजूद भीमराव ने बड़े संघर्ष के साथ 1907 में मैट्रिक परीक्षा पास हो गये थे। महार जाति में वे पहले विद्यार्थी थे जिन्होंने मैट्रिक उत्तीर्ण किया था। इस अवसर पर श्री कृष्णाजी अर्जुन केलुसकर जी ने अपनी स्वलिखित पुस्तक 'गौतम बुद्ध का चरित्र' भीमराव को भेंट देकर उनका गौरव किया। इस पुस्तक के माध्यम से भीमराव ने मैट्रिक के दौरान ही बुद्ध के चरित्र और दर्शन को आत्मसात कर लिया था।

भीमराव एलफिंस्टन कॉलेज से बी.ए. पास करने के बाद उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु विदेश जाना चाहते थे। श्री कृष्णाजी अर्जुन केलुसकर के परिचय से बड़ौदा के महाराजा सयाजीराव गायकवाड़ की मदद से वे अमेरिका में पढ़ाई के लिए जाते हैं। मगर महाराज की एक शर्त थी कि पढ़ाई पूरी करने के बाद संस्थान (रियासत) में नौकरी करनी होगी। भीमराव से एक करार भी किया जाता है। सुभेदार रामजी सकपाल का निधन होकर छह माह हो चुके थे। पिता की प्रबल इच्छा थी कि भीमराव पढ़-लिखकर महान बनें। पिता की उसी इच्छा की ऊर्जा लेकर वे अमेरिका निकाल पडते हैं। कोलंबिया विश्वविद्यालय में पढ़ाई करते समय उन्होंने देखा कि वहाँ स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व (भाईचारा) का वातावरण है; वहाँ न कोई छुआछूत थी, न कोई भेदभाव। यह अनुभव करके वे आनंदित होते हैं। कोलंबिया विश्वविद्यालय के बाद उन्होंने 'लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स' में अर्थशास्त्र एवं राजनीति विज्ञान के लिये प्रवेश लिया और साथ-साथ 'ग्रेज इन' में बैरिस्टर की उपाधि हेतु समांतर पढ़ाई जारी रखते है। भीमराव प्रतिभावान विद्यार्थी के रूप में अमेरिका और लंदन में अपना नाम रोशन करते है। विदेश में उच्च अध्ययन पूर्ण होने पर वे बड़ौदा रियासत में 'मिलिट्री सेक्रेटरी' (लश्करी सचिव) के रूप में पदस्थ हुए। परंतु वहाँ पर भी जातीयता और छुआछूत उनका पीछा नहीं छोड़ती। एक उच्च विद्याविभूषित होकर भी कार्यालय का चपरासी फाइलें दूर से फेंकते थे। डॉ. बाबासाहेब स्वाभिमानी और निडर थे; उन्होंने महाराजा को कार्यालय में होने वाली इन गतिविधियों के बारे में बताया था। इतना ही नहीं, बड़ौदा में उन्हें रहने के लिए कमरा मिलना भी अत्यंत कठिन था, क्योंकि महार जाति को अस्पृश्य और नीच माना जाता था। जाति का पता चलते ही भेदभाव और छुआछूत का बर्ताव शुरू हो जाता था।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को उच्च शिक्षित होकर भी जातिवाद का भेदभाव झेलना पड़ा, तब उन्होंने हिंदू धर्म में

व्याप्त भेदभाव और छुआछूत है, उसे मिटाने हेतु अछूतों को मानवीय दर्जा दिलाने हेतु आंदोलन किये। 'पानी से लेकर परमेश्वर तक' बाबासाहेब ने आंदोलन किये। अछूतों को सार्वजनिक तालाबों से पानी भरने नहीं दिया जाता था। वहाँ मवेशियों (गाय-बैलों) को धोया जाता था, मगर एक इंसान होने के बावजूद अछूतों को पीने का पानी पिने के लिये नाही दिया जाता था। अछूतों के तालाब छुने से वह तालाब अपवित्र होगा , ऐसी मानसिकता हिंदुओ की थी।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपने बहिष्कृत समाज के न्याय हक़ के लिए 1927 को 'महाड़ के चवदार तालाब का सत्याग्रह' किया। सदियों से जिन महार, मांग, चमार जातियों को अस्पृश्य और शूद्र कहकर प्रताड़ित किया गया था और उनके मानवीय अधिकार छीने गए थे, उन्हें इन्सानी दर्जा दिलाने हेतु बाबासाहेब ने चवदार तालाब का पानी प्राशन कर उसे सभी के लिए खुला कर देते है। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के इस आंदोलन से चवदार तालाब पवित्र हो गया। जो धर्मग्रंथ ने इंसान होकर भी इन्सानी दर्जा नकारता है। भेदभाव और छुआछूत भरे विचार का ग्रंथ 'मनुस्मृति' को अपने ब्राह्मण मित्रों के साथ सार्वजनिक रूप से जला डालते है।

हिंदू समाज में होते हुए भी अस्पृश्य समझनेवाली जातियों को न तालाबों , न मंदिरों में प्रवेश मिलता था। डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर ने नासिक के 'कालाराम मंदिर प्रवेश' का आंदोलन सन 1930 में चलाया। हिंदू होकार हिंदुओ पर का भेदभाव मिटाने हेतू हिंदू धर्म के सवर्णों से सामाजिक परिवर्तन की अपेक्षा रखते है, उनमे सुधार लाने कि बाते करते है परंतु उनमें कोई परिवर्तन दिखाई नहीं देता तब वे बहुत चिंतन और विमर्श के बाद निर्णय पर उतर आते है कि, जो धर्म हमें छुआछूत, जातिवाद और अमानवीय भेदभाव में जकड़कर नरकीय जीवन जीने के लिए बाध्य करता है, उस धर्म से डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर जी को कोई परिवर्तन की आशा दिखाई नही देती है। तब वे नासिक जिले के येवला में 13 अक्तूबर 1935 को मुंबई इलाका दलित सभा का आयोजन किया जाता था, इस सभा के अध्यक्ष थे। इसी सभा मे डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा था कि, "मैं हिंदु पैदा हुआ हूँ, यह मेरे वश की बात नहीं थी; लेकिन मैं हिंदू रहकर मरूँगा नहीं।"[4]

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने विश्व के तमाम धर्मग्रंथों का अध्ययन किया था। वे एक ऐसे धर्म की खोज में थे जिसमें स्वतंत्रता, समता, बंधुत्व और न्याय हो ; जहाँ अंधविश्वास, रुढ़िवादिता, पाखंड, छुआछूत और सामाजिक असमानता जातीभेद आदी न हो। मानसिक गुलामी से मुक्तिवाला धर्म और वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाला धर्म अपनाने कि मनोकामना डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर की थी। वह धर्म, धम्म भारत भूमि के तथागत गौतम बुद्ध ने बताया हुवा धम्म , सम्राट अशोक द्वारा भारत तथा विदेश में फैलाया हुवा वैज्ञानिक विचार वाला धम्म डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर स्वीकारने हेतु तय कर देते हैं।

डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर अपनी शैक्षणिक संस्थाओं के नाम भी बुद्ध के जीवन से जुडे ही रखे है। मुंबई का 'सिद्धार्थ कॉलेज', छत्रपति संभाजीनगर (औरंगाबाद) का 'मिलिंद कॉलेज' 'राजगृह' आदि से पता चालता है कि डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर बुद्ध के मार्ग पर चल रहे थे।

धम्म क्रांतिभूमि नागपुर (दीक्षाभूमि) : 14 अक्तुबर 1956 को डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने नागपुर में ऐतिहासिक धम्म दीक्षा लेने का संकल्प किया था। नागपुर ही क्यों चुना? बाबासाहेब के मतानुसार नागपुर 'नागभूमि' है, यहाँ नाग नदी है, नागवंशीय लोगों ने ही बुद्ध के धम्म का स्वीकार किया था। इसी लिए नागपुर में ही 14 अक्तुबर 1956 को धम्म दीक्षा लेने का संकल्प किया था। दशहरे के दिन अशोका विजया दशमी के औचित्य पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और माईसाहेब दोनो मिलकर म्यांमार के वरिष्ठ बौद्ध भिक्खू भदन्त चंद्रमणि महास्थवीर के द्वारा बौद्ध धम्म में दीक्षित होते है। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने स्वयं 7 लाख अनुयायियों को बुद्ध धम्म की दीक्षा दी। उन्होंने सभी को त्रिशरण, पंचशील और प्रसिद्ध 'बाईस प्रतिज्ञाएँ' दिलवाईं। स्वयं बाबासाहेब कहते है कि, "मैं पुराने धर्म का त्याग कर आज पुन: नया जन्म ले रहा हूँ। अर्थात हिंदू धर्म का त्याग कर बौद्ध धम्म स्वीकार कर रहा हूँ।"

भारत और विश्व के इतिहास में शांति एवं अहिंसा के मार्ग पर चलकर पहली बार लाखो के तादात मे लोगों का धर्मांतरण डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर कर देते है। विश्व को भी धम्म दीक्षा की दखल लेनी पडी थी।

बौद्ध धर्म (धम्म) पुरे भारत में था। बुद्ध के निर्वाण के बाद भिक्खूओ ने धम्म का प्रचार प्रसार किया। विदेशो में बौद्ध धर्म फैलता गया। श्रीलंका , तिबेट , चीन आदी देशो में बौद्ध धम्म का प्रसार होता रहा। भले ही उसमें अलग-अलग भेद पैदा हो गये- जैसे हीनयान-महायान, वज्रयान आदी। सम्राट अशोक कलिंग युद्ध के उपरांत विभिशिका को देखकर उन्होने युद्ध छोडकर बुद्ध धम्म, धर्म अपना लिया था। अपने पुत्र-पुत्री को धम्म प्रचार हेतू श्रीलंका (सिलोन) को भेज दिया था। बुद्ध की सारी स्मृतियो का जतन किया। आज भी उसके साक्षी है, बोधगया, लुंबिनी, कुशीनगर, सारनाथ साथ ही विहारों और स्तुपो का निर्माण करके पुरा भारत बौद्धमय कर लिया था। सम्राट अशोक के बाद बौद्ध धम्म इस देश में न के बराबर राहा। परंतु 14 अक्तुबर 1956 को दीक्षाभूमि नागपुर में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने उसे पुनःस्थापित कर दिया। यह सम्राट अशोक के बाद यह डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने 'धम्म क्रांति' कर दी थी। भारत यह बुद्ध की भुमी है, यह धम्म चक्र प्रवर्तन करके साबित कर दिया ।

15 अक्तुबर 1956 को डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने बौद्ध दीक्षा लेने वाले बौद्धो को संबोधित करते हुए कहते है- "हमने हिंदु धर्म को नकारने का आंदोलन 1935 में येवला में एक प्रस्ताव पारित करके शुरु किया था। मैंने उस समय प्रतिज्ञा की थी कि मैं हिंदू धर्म में पैदा हुआ हूँ किंतु हिंदू धर्म में मरूँगा नहीं।"[5]

14 अक्तुबर को बौद्ध धम्म अपनाकर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने येवला में ली गई प्रतिज्ञा को पुरा किया।

साथ ही इसी दिन 'कार्ल मार्क्स की विचारधारा और हम', 'स्वयं फटे कपड़ों में पढ़ाई की', 'हिंदू-मुस्लिम और हम , 'चातुर्वर्ण्य ', 'बौद्ध धर्म से उत्थान होगा', 'बुद्ध का समानता का दर्शन', 'कोई आपको महार-बौद्ध न कहे', 'धर्म की जरुरत गरीबों को', 'दुनिया बुद्ध को जानती है' 'धर्म के पतन के कारण' आदि विषयों पर बौद्धजनो को डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने बडी सरलता से समझाया था। बुद्ध, धम्म और संघ को वंदन करते हुवे त्रीशरण पंचशील दे दिया था। हम इस त्रीशरण पंचशील को निम्नवत देख लेते है-

"नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स
नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स
नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स"

बुद्धं सरणं गच्छामि।
धम्मं सरणं गच्छामि।
संघं सरणं गच्छामि॥ 1 ॥
दुतियम्पि बुद्धं सरणं गच्छामि।
दुतियम्पि धम्मं सरणं गच्छामि।
दुतियम्पि संघं सरणं गच्छामि॥ 2 ॥
ततियम्पि बुद्धं सरणं गच्छामि।
ततियम्पि धम्मं सरणं गच्छामि।
ततियम्पि संघं सरणं गच्छामि॥ 3 ॥

पंचशील:

1. पाणातिपाता वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
2. अदिन्नादाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
3. कामेसुमिच्छाचारा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।

4. मुसावादा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
5. सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।

साधु! साधु!! साधु!!!

सारांश : 14 अक्तूबर को बौद्ध धम्म की दीक्षा स्वयं लेकर अपने बहुजन साथिओ को बौद्ध धम्म की दीक्षा दी। 13 अक्तूबर 1935 में येवला में प्रतिज्ञा की थी उसे दीक्षा भूमि नागपूर में पुरा किया। हिंदू धर्म की वर्णव्यवस्था से छूटकारा पाकर बौद्ध धम्म विज्ञानवादी और तार्किक दृष्टिकोण वाला आपना लिया। साथ ही बुद्ध के मार्ग पर चलने का संकल्प किया। एक नए 'प्रबुद्ध भारत' के निर्माण का संकल्प ले लिया। तमाम भारतीयों को बुद्ध के मार्ग पर चलने का आह्वान भी किया, क्योंकि यह मार्ग स्वतंत्रता, समता बंधुत्व और न्याय का सच्चा पक्षधर है।

भारतीय संविधान के शिल्पकार, कृषितज्ञ, दार्शनिक, इतिहासकार, राजनेता, समाजसुधारक, धम्मक्रांति के प्रनेता, पत्रकार, संपादक, लेखक, अध्यापक, कानून के ज्ञाता, शोषित वंचित समाज के उद्धारकर्ता, महामानव, बोधीसत्व, क्रांतिसूर्य, भारतरत्न डॉ बाबासाहब अम्बेडकरजी ने हमें 'भगवान बुध्द और उनका धम्म' ग्रंथ देकर भगवान बुध्द के जीवन और कार्य को हमे परिचय करा दिया है। साथ ही भारतभूमि यह बुद्ध की भूमि है, धम्मक्रांति कर के डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर ने हमें अतित का गौरव पुनः स्थापित करते हुए हमे 'नवयान' दे दिया जिसे कोई भीमयान' या नव-बौद्धधर्मी भी कहने लगे है। धम्म क्रांतिकारी डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर का निर्वाण 6 दिसम्बर 1956 में हुआ। मैं उनके कार्य को कोटि-कोटि वंदन करता हूँ। 13 अक्तुबर 1935 से लेकर 14 अक्तुबर 1956 तक का कार्यकाल 21 वर्षों का रहा है। बाबासाहब ने बौद्ध धम्म के संबध में दिये हुए भाषणो का यहाँ पर अधिक से विस्तार से लिखना चाहता था मगर आयोजक ने शब्दों की मर्यादा भी दी थी। भूटान में होने वाले आंतरराष्ट्रीय सम्मेलन हेतु। मैं यहाँ शब्दों को विराम देता हूँ और डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर के धम्मक्रांति को वंदन करता हूँ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. डॉ. अम्बेडकर जीवन और मिशन - एल. आर. बाली, पृ. 23
2. डॉ. अम्बेडकर जीवन और मिशन - एल. आर. बाली, पृ. 23
3. डॉ. अम्बेडकर जीवन और मिशन - एल. आर. बाली, पृ. 23
4. और बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा (खंड-2) - संपा. एल. जी. मेश्राम 'विमलकीर्ति', पृ. 291-292,
5. और बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा (खंड-5) - संपा. एल. जी. मेश्राम 'विमलकीर्ति', पृ. 313
6. वंदना-सूत्रपाठ - द बुद्धिस्ट सोसायटी ऑफ इंडिया (संस्थापक: डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर), पृ. 3-4
7. भगवान बुद्ध और उनका धम्म - बोधिसत्व डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर (अनु. भदन्त आनंद कौसल्यायन)
8. जग बदलणारा बापमाणूस - जगदीश ओहोळ
9. पालि साहित्य का इतिहास - महापण्डित राहुल सांकृत्यायन (संपा. डॉ. प्रफुल्ल गड़पाल)

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-15-20

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 15-20
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. अमित कुमार

(सहायक प्राध्यापक) स्नातकोतर विभाग, जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा, मारवाड़ी महाविद्यालय, रांची विश्वविद्यालय, रांची

Corresponding Author :

डॉ. अमित कुमार

(सहायक प्राध्यापक) स्नातकोतर विभाग, जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा, मारवाड़ी महाविद्यालय, रांची विश्वविद्यालय, रांची

भूटानी समाज का जीवन-दर्शन और सांस्कृतिक मूल्य : एक अध्ययन

सारांश : भूटानी समाज की जीवन-पद्धति में व्यक्ति, समाज, संस्कृति और प्रकृति के बीच संतुलित संबंध को विशेष महत्व प्राप्त है। यहाँ की सामाजिक एवं सांस्कृतिक व्यवस्था पर वज्रयान बौद्ध परंपरा का गहरा प्रभाव दिखाई देता है, जिसने करुणा, अहिंसा, संतोष, सामुदायिक सहयोग, आध्यात्मिक अनुशासन और प्रकृति के प्रति सम्मान जैसे मूल्यों को सामाजिक जीवन का महत्वपूर्ण आधार बनाया है। पारंपरिक वेशभूषा, वास्तुकला, लोकगीत, लोकनृत्य, धार्मिक अनुष्ठान, पर्व-त्योहार तथा सामुदायिक परंपराएँ भूटान की सांस्कृतिक अस्मिता को निरंतर सुदृढ़ करती "सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता" की अवधारणा आर्थिक विकास के साथ नागरिकों के मानसिक कल्याण, सामाजिक समावेशन, सुशासन, सांस्कृतिक संरक्षण और पर्यावरणीय संरक्षण को विकास के आवश्यक आयामों के रूप में स्वीकार करती है। इसी कारण भूटान का विकास-दर्शन केवल सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि तक सीमित न रहकर मानव कल्याण और जीवन की गुणवत्ता पर केंद्रित दिखाई देता है। भूटानी समाज के जीवन-दर्शन, सांस्कृतिक मूल्यों, धार्मिक विश्वासों, सामाजिक संरचना, परंपरागत जीवन-पद्धति तथा पर्यावरण के साथ उसके संबंध का विश्लेषण किया गया है। साथ ही, वैश्वीकरण, आधुनिकीकरण, पर्यटन, डिजिटल संचार और बदलती जीवन-शैली के कारण भूटान की पारंपरिक संस्कृति के समक्ष उत्पन्न चुनौतियों तथा सांस्कृतिक संरक्षण की समकालीन रणनीतियों पर भी विचार किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भूटान की सांस्कृतिक दृष्टि परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन स्थापित करते हुए सतत, मानवीय और प्रकृति-केंद्रित विकास की महत्वपूर्ण संभावना प्रस्तुत करती है।

मुख्य शब्द : भूटान, जीवन-दर्शन, सांस्कृतिक मूल्य, बौद्ध धर्म, सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता, पर्यावरणीय चेतना, लोकसंस्कृति, सतत विकास।

प्रस्तावना : हिमालय की पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य स्थित भूटान अपनी प्राकृतिक सुंदरता, सांस्कृतिक विरासत और आध्यात्मिक जीवन-पद्धति

के लिए जाना जाता है। वैश्वीकरण और आधुनिकीकरण के इस दौर में जहाँ अधिकांश देश आर्थिक विकास को प्रगति का प्रमुख मापदंड मानते हैं, वहीं भूटान ने मानव सुख, सामाजिक संतुलन और सांस्कृतिक संरक्षण को विकास का आधार बनाया है। यही कारण है कि भूटान विश्व समुदाय के लिए एक विशिष्ट उदाहरण के रूप में उभरा है।

भूटानी समाज की पहचान उसकी धार्मिक आस्था, सांस्कृतिक परंपराओं, सामुदायिक जीवन और प्रकृति के प्रति सम्मान में निहित है। यहाँ का जीवन-दर्शन महायान बौद्ध धर्म की शिक्षाओं से प्रभावित है, जो करुणा, अहिंसा, संतोष और सह-अस्तित्व की भावना को प्रोत्साहित करता है। इन मूल्यों ने भूटानी समाज को एक शांतिपूर्ण और संतुलित सामाजिक व्यवस्था प्रदान की है।

भूटानी समाज का जीवन-दर्शन :

1. बौद्ध धर्म और आध्यात्मिक दृष्टि : भूटान का जीवन-दर्शन मुख्य रूप से महायान बौद्ध धर्म पर आधारित है। बौद्ध शिक्षाएँ यहाँ के लोगों के दैनिक जीवन, सामाजिक व्यवहार और सांस्कृतिक गतिविधियों में स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। भूटानी समाज मानता है कि जीवन का उद्देश्य केवल भौतिक उपलब्धियाँ प्राप्त करना नहीं, बल्कि आत्मिक शांति और नैतिक उन्नति प्राप्त करना है।

बौद्ध धर्म करुणा, प्रेम, दया, सहिष्णुता और अहिंसा की शिक्षा देता है। इसी कारण भूटानी समाज में सामाजिक समरसता और पारस्परिक सम्मान की भावना विकसित हुई है। धार्मिक आस्था केवल पूजा-पाठ तक सीमित नहीं है, बल्कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित करती है।

2. सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता का सिद्धांत : भूटान की सबसे बड़ी विशेषता "सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता" की अवधारणा है। यह सिद्धांत बताता है कि किसी राष्ट्र की उन्नति केवल आर्थिक उत्पादन से नहीं, बल्कि नागरिकों की प्रसन्नता, स्वास्थ्य, शिक्षा, सांस्कृतिक संरक्षण और पर्यावरणीय संतुलन से मापी जानी चाहिए। भूटान के चौथे राजा जिग्मे सिंग्ये वांगचुक ने इस अवधारणा को विकसित किया। आज यह विचार विश्व स्तर पर सतत विकास और मानवीय कल्याण के एक महत्वपूर्ण मॉडल के रूप में स्वीकार किया जा रहा है।

3. प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व : भूटानी समाज प्रकृति को जीवन का अभिन्न अंग मानता है। पर्वत, नदियाँ, झीलें और वन केवल प्राकृतिक संसाधन नहीं, बल्कि धार्मिक और आध्यात्मिक महत्व भी रखते हैं। लोगों का विश्वास है कि प्रकृति में दिव्य शक्तियों का निवास होता है। इसी कारण पर्यावरण संरक्षण भूटानी जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा है। भूटान विश्व के उन देशों में शामिल है जिसने विकास और पर्यावरण के बीच संतुलन स्थापित करने का सफल प्रयास किया है।

4. सामुदायिक जीवन और सामाजिक सहयोग : भूटानी समाज सामूहिकता और सहयोग की भावना पर आधारित है। ग्रामीण क्षेत्रों में लोग कृषि कार्यों, धार्मिक उत्सवों और सामाजिक आयोजनों में मिलकर भाग लेते हैं। सामुदायिक सहभागिता सामाजिक एकता और पारस्परिक विश्वास को सुदृढ़ बनाती है।

भूटानी समाज के सांस्कृतिक मूल्य : भूटान दक्षिण एशिया का एक विशिष्ट हिमालयी देश है, जिसकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहचान उसकी धार्मिक परंपराओं, सामुदायिक जीवन, लोककला, पारंपरिक ज्ञान और प्रकृति के साथ संतुलित संबंध पर आधारित है। भूटानी समाज में संस्कृति केवल अतीत की विरासत नहीं, बल्कि वर्तमान सामाजिक जीवन को दिशा देने वाली जीवंत व्यवस्था है। यहाँ सांस्कृतिक मूल्यों का संबंध परिवार, धर्म, नैतिकता, पर्यावरण, लोककला तथा सामाजिक उत्तरदायित्व से गहराई से जुड़ा हुआ है।

1. सांस्कृतिक संरक्षण की भावना : भूटानी समाज की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में **सांस्कृतिक संरक्षण की भावना** प्रमुख है। भूटान ने अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान को आधुनिकता और वैश्वीकरण के प्रभावों के बीच सुरक्षित रखने का निरंतर प्रयास किया है। यहाँ संस्कृति को केवल ऐतिहासिक विरासत के रूप में नहीं देखा जाता, बल्कि राष्ट्रीय

पहचान और सामाजिक एकता के आधार के रूप में समझा जाता है। पारंपरिक वेशभूषा, वास्तुकला, धार्मिक संस्थाएँ, लोकगीत, लोकनृत्य, हस्तशिल्प और स्थानीय उत्सव आज भी सामाजिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

भूटान की पारंपरिक पोशाक **'घो'** पुरुषों तथा **'किरा'** महिलाओं की सांस्कृतिक पहचान से जुड़ी हुई है। इन परिधानों का प्रयोग औपचारिक अवसरों, धार्मिक आयोजनों तथा अनेक सार्वजनिक गतिविधियों में किया जाता है। इसी प्रकार भूटानी वास्तुकला में पारंपरिक शैली, लकड़ी की नक्काशी, चित्रांकन तथा विशिष्ट भवन-निर्माण पद्धतियाँ दिखाई देती हैं। मठों और दुर्गनुमा धार्मिक भवनों में स्थापत्य और धार्मिक परंपराओं का सुंदर समन्वय देखने को मिलता है। सांस्कृतिक संरक्षण का एक महत्वपूर्ण माध्यम भाषा और मौखिक परंपरा भी है। लोककथाएँ, कहावतें, धार्मिक कथाएँ और लोकगीत एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सामाजिक ज्ञान पहुँचाते हैं। भूटान में सांस्कृतिक संरक्षण का उद्देश्य आधुनिक विकास को पूर्णतः अस्वीकार करना नहीं है, बल्कि विकास और सांस्कृतिक निरंतरता के बीच संतुलन स्थापित करना है। इस प्रकार सांस्कृतिक संरक्षण भूटानी समाज में राष्ट्रीय पहचान, सामाजिक निरंतरता और सामुदायिक एकता को मजबूत करने वाला महत्वपूर्ण मूल्य है।

2. परिवार और सामाजिक संबंध : भूटानी समाज में **परिवार सामाजिक जीवन की आधारभूत इकाई** माना जाता है। परिवार व्यक्ति के सामाजिक, नैतिक और सांस्कृतिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बच्चों को प्रारंभिक अवस्था से ही परिवार के माध्यम से सहयोग, सम्मान, जिम्मेदारी, अनुशासन तथा सामुदायिक जीवन के मूल्यों की शिक्षा प्राप्त होती है। इस दृष्टि से परिवार केवल जैविक या आर्थिक संस्था नहीं, बल्कि सांस्कृतिक मूल्यों के हस्तांतरण का प्रमुख माध्यम भी है।

भूटानी समाज में बुजुर्गों के प्रति सम्मान को विशेष महत्व दिया जाता है। परिवार के वरिष्ठ सदस्य अनुभव और परंपरागत ज्ञान के वाहक माने जाते हैं। वे लोककथाओं, धार्मिक मान्यताओं, पारंपरिक रीति-रिवाजों तथा जीवन से जुड़े व्यावहारिक ज्ञान को अगली पीढ़ी तक पहुँचाते हैं। इस प्रकार पीढ़ियों के बीच संबंध केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक निरंतरता से भी जुड़े होते हैं।

परिवार के भीतर सहयोग और पारस्परिक उत्तरदायित्व की भावना सामाजिक जीवन को स्थिरता प्रदान करती है। विशेष अवसरों, धार्मिक उत्सवों और सामुदायिक गतिविधियों में परिवार तथा पड़ोसी मिलकर भाग लेते हैं। भूटानी सामाजिक व्यवस्था में सामुदायिक सहयोग भी परिवार की अवधारणा को व्यापक रूप देता है। गाँवों और स्थानीय समुदायों में लोग विभिन्न सामाजिक एवं धार्मिक गतिविधियों में एक-दूसरे की सहायता करते हैं। यह सहयोग संकट या कठिन परिस्थितियों में सामाजिक सुरक्षा का आधार बन सकता है। आधुनिक शिक्षा, शहरीकरण और वैश्वीकरण के कारण पारिवारिक संरचनाओं में परिवर्तन दिखाई दे सकते हैं, फिर भी परिवार और सामाजिक संबंधों से जुड़े मूल मूल्य भूटानी संस्कृति में महत्वपूर्ण बने हुए हैं।

3. करुणा और सहिष्णुता **:** भूटानी समाज के सांस्कृतिक मूल्यों में **करुणा, सहानुभूति और सहिष्णुता** का महत्वपूर्ण स्थान है। करुणा का अर्थ केवल दूसरों की कठिनाइयों के प्रति भावनात्मक संवेदना रखना नहीं है, बल्कि आवश्यकता पड़ने पर सहयोग और सहायता की भावना विकसित करना भी है। सामाजिक जीवन में पारस्परिक सहयोग, दूसरों के प्रति सम्मान और सामुदायिक उत्तरदायित्व इस मूल्य को व्यवहारिक रूप प्रदान करते हैं। परिवार और समुदाय में बच्चों को दूसरों की सहायता करने तथा वरिष्ठ व्यक्तियों का सम्मान करने की शिक्षा दी जाती है।

भूटान की बौद्ध सांस्कृतिक परंपरा में अहिंसा, करुणा और सभी जीवों के प्रति संवेदनशीलता जैसे विचार महत्वपूर्ण हैं। धार्मिक शिक्षा और आध्यात्मिक अभ्यास व्यक्ति के व्यवहार को नैतिक दृष्टि से प्रभावित करते हैं। प्रार्थना, ध्यान, धार्मिक अनुष्ठान और मठों से जुड़ी गतिविधियाँ व्यक्ति में आत्म-अनुशासन तथा दूसरों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने में योगदान करती हैं। सहिष्णुता का संबंध सामाजिक विविधता के प्रति

सम्मान से भी है। किसी भी समाज में विभिन्न विचारों, जीवन-शैलियों और सामाजिक समूहों के बीच सामंजस्य बनाए रखने के लिए सहिष्णुता आवश्यक है। भूटानी सामाजिक संदर्भ में सामुदायिक सद्भाव और सामाजिक शांति को महत्व दिया जाता है। करुणा और सहिष्णुता का प्रभाव पर्यावरणीय दृष्टिकोण में भी देखा जा सकता है। प्रकृति और जीव-जंतुओं के प्रति संवेदनशीलता व्यक्ति को प्राकृतिक संसाधनों के जिम्मेदार उपयोग की ओर प्रेरित करती है।

4. धार्मिक और नैतिक मूल्य **:** भूटानी समाज में **धर्म और नैतिकता का संबंध अत्यंत गहरा** है। धार्मिक परंपराएँ सामाजिक जीवन, व्यक्तिगत आचरण और सामुदायिक व्यवहार को प्रभावित करती हैं। विशेष रूप से बौद्ध परंपरा ने भूटान की संस्कृति, कला, स्थापत्य, त्योहारों और नैतिक जीवन को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया है। धार्मिक संस्थाएँ केवल पूजा के स्थान नहीं हैं, बल्कि सांस्कृतिक और नैतिक शिक्षा के केंद्र के रूप में भी कार्य करती हैं।

भूटान में मठ, स्तूप, प्रार्थना-चक्र और धार्मिक स्मारक सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। धार्मिक गतिविधियों में सहभागिता व्यक्ति को आत्म-अनुशासन, करुणा, संयम और नैतिक व्यवहार की ओर प्रेरित करती है। धार्मिक उत्सवों और अनुष्ठानों के माध्यम से समुदाय के लोग सामूहिक रूप से अपनी सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक परंपराओं को अभिव्यक्त करते हैं। भूटानी समाज में नैतिकता का संबंध व्यक्ति के व्यवहार से होने के साथ-साथ सामाजिक उत्तरदायित्व से भी है। दूसरों के प्रति सम्मान, सहयोग, अनुशासन, अहिंसा और जिम्मेदारी जैसे मूल्य सामाजिक संबंधों को मजबूत करते हैं। धार्मिक शिक्षाएँ व्यक्ति को अपने कार्यों के परिणामों के प्रति जागरूक रहने और संतुलित जीवन जीने के लिए प्रेरित करती हैं।

धार्मिक परंपराएँ लोकसंस्कृति को भी प्रभावित करती हैं। धार्मिक त्योहारों में मुखौटा नृत्य या चाम, संगीत, वेशभूषा और धार्मिक कथाओं का प्रदर्शन सांस्कृतिक ज्ञान को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाने का माध्यम बनता है। इस प्रकार धर्म और संस्कृति एक-दूसरे से अलग न होकर परस्पर जुड़े हुए दिखाई देते हैं। हालाँकि आधुनिक शिक्षा, तकनीकी विकास और वैश्वीकरण ने सामाजिक जीवन में परिवर्तन उत्पन्न किए हैं, फिर भी धार्मिक और नैतिक मूल्य भूटानी सांस्कृतिक पहचान के महत्वपूर्ण आधार बने हुए हैं। इन मूल्यों के माध्यम से व्यक्ति और समाज के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया जाता है। इसलिए भूटानी समाज में धर्म केवल व्यक्तिगत ।

5. लोककला और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति **:** भूटान की सांस्कृतिक पहचान को समझने में **लोककला और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति** का विशेष महत्व है। लोककला किसी भी समाज की सामूहिक स्मृति, जीवन-दृष्टि, धार्मिक विश्वास और सामाजिक अनुभवों को अभिव्यक्त करती है। भूटान में लोकगीत, लोककथाएँ, लोकनृत्य, हस्तशिल्प, चित्रकला, पारंपरिक वास्तुकला और मुखौटा नृत्य इसकी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को प्रदर्शित करते हैं। भूटानी सांस्कृतिक जीवन में **चाम नृत्य** विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह पारंपरिक मुखौटा नृत्य धार्मिक और सामुदायिक उत्सवों में प्रस्तुत किया जाता है। इसमें नृत्य, संगीत, वेशभूषा और धार्मिक कथाओं का समन्वय दिखाई देता है। इस प्रकार लोकनृत्य केवल मनोरंजन का साधन न होकर धार्मिक विश्वासों और सांस्कृतिक स्मृतियों को अभिव्यक्त करने का माध्यम बन जाता है।

इसी प्रकार लोककथाएँ और मौखिक परंपराएँ भूटानी समाज में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इनके माध्यम से पूर्वजों की स्मृतियाँ, सामाजिक अनुभव, नैतिक शिक्षाएँ और जीवन के आदर्श अगली पीढ़ी तक पहुँचते हैं। लोककथाओं में अच्छाई, जिम्मेदारी, साहस, करुणा और सामाजिक सहयोग जैसे मूल्यों को कथात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। भूटान का पारंपरिक हस्तशिल्प भी सांस्कृतिक पहचान का महत्वपूर्ण हिस्सा है। बुनाई, कढ़ाई, लकड़ी की नक्काशी और पारंपरिक चित्रांकन में स्थानीय ज्ञान एवं सौंदर्यबोध दिखाई देता है। इन कलाओं के पीछे पीढ़ियों से विकसित तकनीकी ज्ञान और स्थानीय संसाधनों का उपयोग निहित है।आधुनिक संचार माध्यमों और पर्यटन के विकास ने भूटानी लोककलाओं को व्यापक पहचान प्रदान करने के नए अवसर भी दिए हैं। साथ ही, व्यावसायीकरण

और बदलती जीवन-शैली के कारण पारंपरिक कलाओं के संरक्षण की चुनौती भी सामने आती है। इसलिए लोककला का संरक्षण केवल कलात्मक विरासत को बचाना नहीं है, बल्कि भाषा, इतिहास, धार्मिक विश्वास, सामुदायिक स्मृति और नैतिक मूल्यों को सुरक्षित रखना भी है।

6. पर्यावरणीय नैतिकता **:** भूटानी समाज की सांस्कृतिक विशेषताओं में **पर्यावरणीय नैतिकता** अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखती है। भूटान की भौगोलिक परिस्थितियों, हिमालयी पारिस्थितिकी और धार्मिक-सांस्कृतिक परंपराओं ने प्रकृति के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोण को मजबूत किया है। यहाँ वन, नदियाँ, पर्वत और जैव विविधता केवल प्राकृतिक संसाधन नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और आध्यात्मिक महत्व रखने वाले तत्व भी हैं।

भूटानी परंपराओं में प्रकृति के प्रति सम्मान की भावना धार्मिक विचारों से जुड़ी हुई है। अनेक प्राकृतिक स्थलों को आध्यात्मिक महत्व प्राप्त है। इससे मनुष्य और प्रकृति के बीच संबंध को केवल उपयोगिता के आधार पर देखने के बजाय सह-अस्तित्व और संरक्षण की दृष्टि विकसित होती है।

पर्यावरणीय नैतिकता का एक महत्वपूर्ण पक्ष प्राकृतिक संसाधनों के जिम्मेदार उपयोग से जुड़ा है। वन संरक्षण, जल स्रोतों की सुरक्षा तथा जैव विविधता का संरक्षण समाज और राज्य दोनों के लिए महत्वपूर्ण विषय रहे हैं। भूटान ने आर्थिक विकास के साथ पर्यावरणीय संरक्षण को जोड़ने की दिशा में विशिष्ट दृष्टिकोण विकसित किया है। यह दृष्टिकोण भूटान की व्यापक विकास-दृष्टि से भी जुड़ा हुआ है, जिसमें केवल आर्थिक विकास के बजाय समग्र कल्याण और जीवन की गुणवत्ता को महत्व दिया जाता है। पर्यावरण को संरक्षित रखने का उद्देश्य वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ आने वाली पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों को सुरक्षित रखना भी है।

पर्यावरणीय नैतिकता का सामाजिक पक्ष भी महत्वपूर्ण है। जब समुदाय जंगल, जल स्रोत और स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों को साझा संपदा के रुप में देखते हैं, तब संरक्षण सामूहिक जिम्मेदारी बन जाता है। इस प्रकार पर्यावरण संरक्षण व्यक्तिगत व्यवहार से आगे बढ़कर सामाजिक मूल्य का रुप लेता है। हालाँकि जलवायु परिवर्तन, पर्यटन, शहरीकरण और आधुनिक विकास जैसी चुनौतियाँ भूटान के पर्यावरण के सामने नई परिस्थितियाँ उत्पन्न कर रही हैं, फिर भी पारंपरिक पर्यावरणीय ज्ञान संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है। इस प्रकार भूटानी पर्यावरणीय नैतिकता प्रकृति के प्रति सम्मान, संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग, सामुदायिक जिम्मेदारी और भावी पीढ़ियों के प्रति उत्तरदायित्व पर आधारित सांस्कृतिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है

भूटानी समाज में त्योहारों का महत्व : भूटान के धार्मिक एवं सांस्कृतिक त्योहार सामाजिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। 'त्शेचु' जैसे उत्सवों में लोग पारंपरिक वेशभूषा धारण कर नृत्य, संगीत और धार्मिक अनुष्ठानों में भाग लेते हैं। ये उत्सव सांस्कृतिक एकता, धार्मिक आस्था और सामाजिक सहयोग को सुदृढ़ बनाते हैं।

आधुनिकता और सांस्कृतिक चुनौतियाँ : वैश्वीकरण, सूचना प्रौद्योगिकी और आधुनिक उपभोक्तावादी संस्कृति ने भूटान को भी प्रभावित किया है। आधुनिक शिक्षा, इंटरनेट और सोशल मीडिया के विस्तार से युवाओं की जीवन-शैली में परिवर्तन आया है। इससे पारंपरिक मूल्यों और आधुनिक आकांक्षाओं के बीच संतुलन की चुनौती उत्पन्न हुई है।फिर भी भूटान सरकार सांस्कृतिक संरक्षण को राष्ट्रीय प्राथमिकता मानते हुए शिक्षा, सांस्कृतिक कार्यक्रमों और नीतिगत प्रयासों के माध्यम से अपनी सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखने का प्रयास कर रही है।

निष्कर्ष : भूटानी समाज का जीवन-दर्शन आध्यात्मिकता, संतोष, करुणा, सामुदायिक सहयोग और प्रकृति के साथ संतुलित संबंध पर आधारित है। इसके सांस्कृतिक मूल्य सामाजिक सद्भाव, पारिवारिक एकता, धार्मिक आस्था और पर्यावरणीय चेतना को प्रोत्साहित करते हैं। "सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता" की अवधारणा ने यह सिद्ध किया है कि विकास का वास्तविक उद्देश्य केवल आर्थिक वृद्धि नहीं, बल्कि मानव जीवन की गुणवत्ता और प्रसन्नता में वृद्धि करना है।

आज जब विश्व पर्यावरणीय संकट, सामाजिक विघटन और मानसिक तनाव जैसी चुनौतियों का सामना कर

रहा है, तब भूटान का जीवन-दर्शन और सांस्कृतिक मूल्य मानवता को संतुलित, शांतिपूर्ण और सतत विकास का मार्ग दिखाते हैं। इस दृष्टि से भूटानी समाज विश्व समुदाय के लिए प्रेरणा का स्रोत है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. अरिस, माइकल। भूटान : एर्ली हिस्ट्री ऑफ ए हिमालयन किंगडम। एरिस एंड फिलिप्स, 1979।
2. चोडेन, कुंजांग। भूटानी लोककथाएँ और यति की कहानियाँ। व्हाइट लोटस प्रेस, 1997।
3. दोर्जी, किनले। भूटान का इतिहास और संस्कृति। थिम्फू प्रेस, 2008।
4. फुंटशो, कर्मा। भूटान का इतिहास। रैंडम हाउस इंडिया, 2013।
5. पोमारे, फ्रांस्वाज। भूटान : हिमालय का एक साम्राज्य। वज्र पब्लिकेशंस, 2006।
6. रिजाल, डम्बर सिंह। भूटान और उसकी संस्कृति। रिलायंस पब्लिशिंग हाउस, 2001।
7. उरा, कर्मा। सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता का दर्शन। सेंटर फॉर भूटान स्टडीज़, 2004।
8. थिनले, जिग्मे वाई। सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता और विकास। सेंटर फॉर भूटान स्टडीज़, 1998।
9. शुएल्का, मैथ्यू जे. (सं.)। भूटान में सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता और शिक्षा। रूटलेज, 2016।
10. भूटान सरकार। संस्कृति एवं विरासत संबंधी प्रतिवेदन। गृह एवं सांस्कृतिक मामलों का मंत्रालय, 2020।

•

ज्ञानविविधा
कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 21-27
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. गौतम कुमार

सहायक प्राध्यापक, स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग, एम.जे.के. कॉलेज, बेतिया (बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर)

Corresponding Author :

डॉ. गौतम कुमार

सहायक प्राध्यापक, स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग, एम.जे.के. कॉलेज, बेतिया (बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर)

हिमालयी मैत्री और सांस्कृतिक कूटनीति : बदलते भू-राजनीतिक परिदृश्य में भारत–भूटान संबंध

सारांश : भारत और भूटान के संबंध दक्षिण एशिया में द्विपक्षीय मैत्री, राजनीतिक विश्वास और विकासात्मक सहयोग के एक विशिष्ट उदाहरण के रूप में स्थापित हुए हैं। भौगोलिक निकटता और सुरक्षा हितों के अतिरिक्त इन संबंधों की स्थिरता के पीछे साझा बौद्ध-सांस्कृतिक विरासत, ऐतिहासिक संपर्क, आर्थिक सहयोग, शिक्षा तथा जन-से-जन संबंधों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। किंतु इक्कीसवीं सदी में चीन की बढ़ती क्षेत्रीय सक्रियता, भूटान–चीन सीमा वार्ताएँ, डोकलाम की सामरिक संवेदनशीलता, भारत की सुरक्षा चिंताएँ और भूटान की रणनीतिक स्वायत्तता इस संबंध को नए संदर्भ में पुनर्परिभाषित कर रही हैं।

इस लेख का केंद्रीय तर्क है कि भारत–भूटान संबंधों की दीर्घकालिक स्थिरता केवल सुरक्षा सहयोग, आर्थिक परस्पर निर्भरता अथवा विकास सहायता से सुनिश्चित नहीं की जा सकती। इसकी वास्तविक शक्ति उस सामाजिक-सांस्कृतिक विश्वास में निहित है जो साझा बौद्ध विरासत, शिक्षा और जन-संपर्कों से विकसित हुआ है। इसलिए ऐतिहासिक सांस्कृतिक पूंजी को आधुनिक सांस्कृतिक कूटनीति और संस्थागत रणनीतिक विश्वास में रूपांतरित करना आवश्यक है। लेख यह भी प्रतिपादित करता है कि भारत–भूटान संबंधों को Hydropower Partnership से Green and Knowledge Partnership की ओर तथा पारंपरिक मैत्री से Institutional Strategic Trust की दिशा में विकसित किया जाना चाहिए। विशेष रूप से बोधगया, राजगीर और नालंदा की बौद्ध विरासत को भारत–भूटान ज्ञान एवं सांस्कृतिक कूटनीति से जोड़कर बिहार को एक सक्रिय sub-national academic and cultural actor के रूप में विकसित किया जा सकता है। इस दृष्टि से Bodh Gaya–Rajgir–Nalanda Buddhist Knowledge and Cultural Corridor एक

महत्वपूर्ण नीतिगत संभावना प्रस्तुत करता है।

शब्दकुंजी : भारत–भूटान संबंध, सांस्कृतिक कूटनीति, सॉफ्ट पावर, हिमालयी भू-राजनीति, बौद्ध विरासत, डोकलाम, रणनीतिक स्वायत्तता।

प्रस्तावना : अंतरराष्ट्रीय संबंधों में राज्यों के व्यवहार की व्याख्या प्रायः शक्ति, सुरक्षा, राष्ट्रीय हित और आर्थिक परस्पर निर्भरता के आधार पर की जाती है। किंतु भारत–भूटान संबंध इस पारंपरिक दृष्टिकोण से आगे जाने की आवश्यकता उत्पन्न करते हैं। दोनों देशों के आकार, जनसंख्या, सैन्य क्षमता और आर्थिक संसाधनों में व्यापक अंतर होने के बावजूद उनके संबंध लंबे समय से स्थिर, सहयोगपूर्ण और विश्वास-आधारित रहे हैं। यह बताता है कि शक्ति-विषमता हमेशा तनाव का कारण नहीं बनती; यदि उसे पारस्परिक सम्मान और संस्थागत विश्वास के माध्यम से संचालित किया जाए तो वह स्थायी साझेदारी का आधार भी बन सकती है। भारत–भूटान संबंधों की जड़ें आधुनिक कूटनीतिक संरचनाओं से पुरानी हैं। हिमालय ने दोनों देशों को धार्मिक यात्राओं, व्यापारिक संपर्कों और बौद्ध ज्ञान-परंपराओं से जोड़ा। भारत बौद्ध धर्म की जन्मभूमि है, जबकि भूटान की राष्ट्रीय-सांस्कृतिक पहचान पर वज्रयान बौद्ध परंपरा का गहरा प्रभाव है। गुरु पद्मसंभव की स्मृति, बोधगया, राजगीर और नालंदा जैसे स्थल इस सभ्यतागत संपर्क को आज भी जीवित रखते हैं।

आधुनिक संबंधों को 8 अगस्त 1949 की मैत्री संधि ने औपचारिक आधार प्रदान किया, जबकि 2007 की संशोधित संधि ने संबंधों को अधिक समकालीन, संप्रभु और पारस्परिक हितों पर आधारित रूप दिया।[1] भूटान की बढ़ती अंतरराष्ट्रीय पहचान, बदलती क्षेत्रीय परिस्थितियाँ और उसकी स्वतंत्र निर्णय-क्षमता ने इस राजनीतिक परिवर्तन को आवश्यक बनाया। समकालीन दौर में चीन की बढ़ती आर्थिक और सैन्य शक्ति, सीमा क्षेत्रों में आधारभूत संरचना का विस्तार, भूटान–चीन सीमा वार्ताएँ और डोकलाम भारत–भूटान संबंधों के रणनीतिक आयाम को अधिक महत्वपूर्ण बनाते हैं। फिर भी भूटान को केवल भारत और चीन के बीच स्थित buffer state के रूप में देखना उसकी agency को कम करके आँकना होगा। भूटान एक संप्रभु राज्य है जिसकी अपनी आर्थिक, राजनीतिक और सुरक्षा प्राथमिकताएँ हैं।, इसी संदर्भ में इस लेख का केंद्रीय तर्क है कि भारत–भूटान संबंधों की वास्तविक दीर्घकालिक शक्ति strategic convergence से अधिक उस सामाजिक-सांस्कृतिक विश्वास में निहित है, जो दोनों समाजों के बीच विकसित हुआ है। सांस्कृतिक विरासत को केवल अतीत की स्मृति के रूप में नहीं, बल्कि आधुनिक सांस्कृतिक कूटनीति, शिक्षा, युवा संपर्क और ज्ञान साझेदारी के माध्यम से Strategic Trust Infrastructure में परिवर्तित किया जाना चाहिए।

भारत–भूटान संबंधों का ऐतिहासिक आधार : भारत और भूटान के संबंधों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक संपर्कों में निहित है। बौद्ध धर्म ने दोनों समाजों के बीच ऐसी सभ्यतागत पूंजी विकसित की जिसने आधुनिक राजनीतिक संबंधों के लिए अनुकूल सामाजिक आधार तैयार किया। बोधगया, राजगीर और नालंदा जैसी भारतीय बौद्ध परंपराएँ भूटान की आध्यात्मिक स्मृति से गहराई से जुड़ी हैं। स्वतंत्र भारत और भूटान के आधुनिक संबंधों को 1949 की मैत्री संधि ने संस्थागत आधार प्रदान किया। 1961 में भूटान की पहली पंचवर्षीय योजना के साथ भारत उसका प्रमुख विकास सहयोगी बना और 1968 में औपचारिक राजनयिक संबंध स्थापित हुए।[2] इसके बाद सड़क, शिक्षा, स्वास्थ्य, मानव संसाधन, व्यापार और जलविद्युत सहित अनेक क्षेत्रों में सहयोग का विस्तार हुआ। समय के साथ यह संबंध केवल राजनीतिक नेतृत्व तक सीमित नहीं रहा, बल्कि प्रशासनिक संस्थाओं, विकास एजेंसियों और तकनीकी तंत्र तक फैल गया। इसी प्रक्रिया को institutional familiarity कहा जा सकता है। दशकों की निरंतर सहभागिता ने दोनों देशों के बीच संवाद और सहयोग को सामान्य प्रशासनिक व्यवहार का हिस्सा बना दिया।

2007 की संशोधित मैत्री संधि इस ऐतिहासिक विकास का महत्वपूर्ण पड़ाव थी। इसने 1949 की व्यवस्था

को बदलती राजनीतिक परिस्थितियों के अनुरूप पुनर्संरचित किया और संप्रभुता, स्वतंत्रता तथा पारस्परिक राष्ट्रीय हितों को अधिक स्पष्ट रूप से सामने रखा। इसलिए इसे केवल treaty revision नहीं, बल्कि भारत–भूटान संबंधों के अधिक समानतापूर्ण sovereign partnership की दिशा में संक्रमण के रूप में देखा जा सकता है। इस प्रकार भारत–भूटान संबंधों की ऐतिहासिक यात्रा को तीन चरणों में समझा जा सकता है—सभ्यतागत निकटता, संस्थागत राजनीतिक विश्वास और विकासात्मक साझेदारी। यही आधार आज के रणनीतिक सहयोग की वास्तविक ऐतिहासिक भूमि है।

सांस्कृतिक कूटनीति और सॉफ्ट पावर : भारत–भूटान संबंधों में सांस्कृतिक कूटनीति की सबसे बड़ी शक्ति यह है कि उसका आधार कृत्रिम नहीं है। बौद्ध धर्म, धार्मिक यात्राएँ, ऐतिहासिक स्मृतियाँ और ज्ञान-परंपरा सदियों से दोनों समाजों को जोड़ते रहे हैं। यही सांस्कृतिक विरासत भारत को भूटान के संदर्भ में एक विशिष्ट civilizational capital प्रदान करती है। Joseph S. Nye की Soft Power की अवधारणा यहाँ प्रासंगिक है। Soft power का अर्थ सैन्य दबाव या आर्थिक प्रलोभन के बजाय आकर्षण के माध्यम से प्रभाव उत्पन्न करना है।[3] भारत की बौद्ध विरासत, लोकतांत्रिक अनुभव, बहुलतावादी संस्कृति और शिक्षा ऐसे संसाधन हैं जो उसकी soft power को मजबूत कर सकते हैं। किंतु सांस्कृतिक संसाधन तभी प्रभावी शक्ति में बदलते हैं जब उन्हें संस्थागत सहयोग से जोड़ा जाए।

भारत–भूटान संदर्भ में सांस्कृतिक संबंध और सांस्कृतिक कूटनीति में यही अंतर महत्वपूर्ण है। बौद्ध विरासत ऐतिहासिक संबंध है, जबकि Buddhist Studies programmes, student exchange, joint research, cultural festivals और digital heritage projects सांस्कृतिक कूटनीति हैं। इसलिए साझा विरासत को Shared Heritage से Shared Knowledge और आगे Shared Future की दिशा में ले जाना आवश्यक है। सांस्कृतिक कूटनीति की सफलता पारस्परिकता पर भी निर्भर करती है। भारत को केवल अपनी सांस्कृतिक विरासत का प्रस्तोता नहीं, बल्कि भूटानी समाज, संस्कृति, GNH, बौद्ध परंपरा और पर्यावरणीय दर्शन से सीखने वाला साझेदार भी होना चाहिए। इसी कारण इसका स्वरूप one-way projection के बजाय two-way cultural dialogue होना चाहिए। इस प्रक्रिया को Strategic Trust Infrastructure के रूप में समझा जा सकता है। जैसे भौतिक infrastructure आर्थिक संबंधों को टिकाऊ बनाती है, वैसे ही शिक्षा, संस्कृति, साझा स्मृतियाँ और लोगों के बीच संपर्क राजनीतिक विश्वास को दीर्घकालिक सामाजिक आधार प्रदान करते हैं। इसलिए सांस्कृतिक कूटनीति भारत–भूटान संबंधों की परिधि का soft आयाम नहीं, बल्कि उनकी स्थिरता का केंद्रीय सामाजिक आधार है।

राजनीतिक एवं आर्थिक संबंध : भारत–भूटान राजनीतिक संबंधों की प्रमुख विशेषता उच्चस्तरीय संपर्क, नीति-स्तरीय निरंतरता और पारस्परिक विश्वास है। 2008 में भूटान के संवैधानिक राजतंत्र और संसदीय लोकतंत्र की दिशा में संक्रमण ने द्विपक्षीय संबंधों के संस्थागत आधार को और विस्तृत किया।[4] इसके बाद संसद, प्रशासन, विश्वविद्यालय, मीडिया और नागरिक समाज की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण हुई। आर्थिक संबंधों में भारत लंबे समय से भूटान का प्रमुख विकास और व्यापार साझेदार रहा है। व्यापार, पारगमन, सड़क संपर्क और ऊर्जा सहयोग ने परस्पर निर्भरता को मजबूत किया है। जलविद्युत विशेष रूप से केंद्रीय क्षेत्र रहा है। Chukha, Tala और Mangdechhu जैसी परियोजनाएँ इस सहयोग की दीर्घकालिक प्रकृति को दर्शाती हैं।[5]इसके बावजूद भविष्य में आर्थिक संबंधों को केवल hydropower तक सीमित रखना पर्याप्त नहीं होगा। भूटान की युवा आबादी के लिए रोजगार, कौशल, entrepreneurship और digital economy का महत्व बढ़ रहा है। भारत के लिए यह अवसर है कि वह fintech, startups, education, AI, renewable energy, health technology और sustainable tourism जैसे क्षेत्रों में सहयोग का विस्तार करे।

भारत–भूटान digital cooperation भी तेजी से उभरा है। RuPay, BHIM-UPI तथा National

Knowledge Network और DrukREN के बीच connectivity ने द्विपक्षीय संबंधों को physical infrastructure से digital and knowledge connectivity की ओर बढ़ाया है।[6] इसलिए आर्थिक साझेदारी को धीरे-धीरे Hydropower Partnership से Green and Knowledge Partnership की दिशा में विस्तारित किया जाना चाहिए। यह परिवर्तन भारत की भूमिका को development assistance provider से knowledge, technology and innovation partner में रूपांतरित कर सकता है।

चीन, डोकलाम और हिमालयी भू-राजनीति : चीन की बढ़ती क्षेत्रीय सक्रियता ने भारत–भूटान संबंधों के रणनीतिक आयाम को अधिक संवेदनशील बना दिया है। भूटान और चीन के बीच सीमा वार्ता 1984 से चल रही है और 1988 तथा 1998 की व्यवस्थाओं ने सीमा क्षेत्रों में शांति और यथास्थिति बनाए रखने का आधार प्रदान किया।[7] 2017 का डोकलाम गतिरोध इस त्रिकोणीय भू-राजनीति की जटिलता का प्रमुख उदाहरण था। डोकलाम भारत, भूटान और चीन से जुड़े त्रि-जंक्शन के निकट स्थित है और सिलीगुड़ी कॉरिडोर की सामरिक निकटता के कारण भारत के लिए अत्यंत संवेदनशील है।[8] फिर भी डोकलाम को केवल भारत–चीन प्रतिद्वंद्विता के संदर्भ में पढ़ना अधूरा होगा। भूटान स्वयं एक प्रत्यक्ष और संप्रभु पक्ष है। चीन के साथ उसकी सीमा वार्ता को भारत-विरोधी व्यवहार मानना उचित नहीं है। 2021 के Three-Step Roadmap और 2023 में सीमा वार्ता की प्रगति को भूटान की स्वतंत्र कूटनीतिक agency के संदर्भ में देखना अधिक उचित है।[9]

भारत के लिए दीर्घकालिक चुनौती यह है कि वह strategic sensitivity के साथ sovereign sensitivity भी बनाए रखे। उसकी नीति competitive containment के बजाय positive engagement पर आधारित होनी चाहिए। यदि भारत शिक्षा, व्यापार, technology, culture और youth partnership के माध्यम से अपने संबंधों को अधिक उपयोगी बनाता है, तो उसका प्रभाव अधिक टिकाऊ होगा।

भूटान की रणनीतिक स्वायत्तता : भूटान को केवल buffer state मानना छोटे राज्यों की आधुनिक कूटनीति को कम करके आँकना है। छोटे राज्य सीमित संसाधनों के बावजूद अपनी संप्रभुता, पहचान और कूटनीतिक विकल्पों की रक्षा के लिए सक्रिय रणनीतियाँ विकसित करते हैं। भूटान इस दृष्टि से अपनी agency का स्पष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है।[10]

उसकी विदेश नीति में संप्रभुता, सांस्कृतिक पहचान, पर्यावरणीय संरक्षण और Gross National Happiness महत्वपूर्ण तत्व हैं। चीन के साथ सीमा वार्ता, अंतरराष्ट्रीय संपर्कों का क्रमिक विस्तार और नियंत्रित आर्थिक आधुनिकीकरण इसी रणनीतिक स्वायत्तता से जुड़े हैं। भारत के लिए भूटान की agency का सम्मान अपने प्रभाव को कम करना नहीं, बल्कि संबंधों को अधिक परिपक्व बनाना है। इसलिए भारत–भूटान संबंधों का भविष्य protector–dependent की पुरानी भाषा से आगे बढ़कर Sovereign Partnership और Strategic Trust पर आधारित होना चाहिए।

शिक्षा एवं जन-संपर्क : भारत–भूटान संबंधों के सामाजिक आधार में शिक्षा की विशेष भूमिका रही है। भूटानी विद्यार्थी लंबे समय से भारत में उच्च शिक्षा, तकनीकी प्रशिक्षण और professional courses के लिए आते रहे हैं। भारत ने Nehru-Wangchuck Scholarship, ICCR तथा अन्य programmes के माध्यम से इस शैक्षणिक संपर्क को संस्थागत आधार दिया है।[11] अब शिक्षा सहयोग को केवल scholarship diplomacy तक सीमित नहीं रखा जाना चाहिए। इसे Academic Partnership और Knowledge Diplomacy की दिशा में विकसित करना होगा। joint research, faculty exchange, doctoral fellowship, joint conferences और collaborative publications इस दिशा में उपयोगी हो सकते हैं। Youth diplomacy भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। India–Bhutan Youth Dialogue, sports exchange, cultural immersion, innovation programmes और startup

networks नई पीढ़ी को इस संबंध से प्रत्यक्ष रूप से जोड़ सकते हैं। इससे historical friendship inter-generational partnership में बदल सकती है।

बिहार और बौद्ध कूटनीति : भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों के संदर्भ में बिहार एक महत्वपूर्ण लेकिन अभी तक अपेक्षाकृत कम विकसित कूटनीतिक संभावना प्रस्तुत करता है। बोधगया, राजगीर और नालंदा केवल ऐतिहासिक स्थल नहीं, बल्कि वैश्विक बौद्ध चेतना के प्रमुख केंद्र हैं। इनका भूटान की धार्मिक-सांस्कृतिक पहचान से स्वाभाविक संबंध है। बोधगया बुद्धत्व की प्राप्ति से, राजगीर प्रारंभिक बौद्ध परंपरा से और नालंदा प्राचीन बौद्ध ज्ञान-व्यवस्था से जुड़ा है। UNESCO द्वारा भी बोधगया और नालंदा को विश्व विरासत के रूप में मान्यता दी गई है।[12] इस विरासत को केवल तीर्थयात्रा तक सीमित रखने के बजाय Buddhist Knowledge Diplomacy में बदला जा सकता है। इसी आधार पर Bodh Gaya–Rajgir–Nalanda Buddhist Knowledge and Cultural Corridor विकसित किया जा सकता है। इसके अंतर्गत Bhutanese fellowships, Buddhist Studies programmes, faculty exchange, student exchange, joint research और वार्षिक India–Bhutan Academic Dialogue आयोजित किए जा सकते हैं।

राजनीति विज्ञान और अंतरराष्ट्रीय संबंधों में Bihar और Bhutan के विश्वविद्यालय Himalayan Politics, Small-State Diplomacy, Buddhist Diplomacy, Environment और India–Bhutan Relations पर संयुक्त शोध प्रारंभ कर सकते हैं। इससे बिहार केवल धार्मिक पर्यटन का क्षेत्र न रहकर academic diplomacy का भी सक्रिय केंद्र बन सकता है। इस पहल को sub-national diplomacy के रूप में भी देखा जा सकता है। बिहार सरकार, विश्वविद्यालय, ICCR, विदेश मंत्रालय और बौद्ध संस्थान मिलकर Bihar–Bhutan Buddhist Academic Fellowship, Nalanda Himalayan Studies Programme और Rajgir Peace and Buddhist Diplomacy Dialogue जैसे संस्थागत कार्यक्रम विकसित कर सकते हैं। इस प्रकार बिहार भारत की सांस्कृतिक कूटनीति में एक विशिष्ट sub-national cultural and academic actor की भूमिका निभा सकता है। यही इस लेख का सबसे महत्वपूर्ण नीतिगत प्रस्ताव है।

चुनौतियाँ और संभावनाएँ : भारत–भूटान संबंधों की ऐतिहासिक सफलता के बावजूद भविष्य में कई चुनौतियाँ मौजूद हैं। पहली चुनौती भारत–चीन सामरिक प्रतिस्पर्धा और डोकलाम से जुड़ी सुरक्षा चिंताओं की है। दूसरी आर्थिक है, क्योंकि जलविद्युत के साथ भूटान को विविधीकृत और रोजगार-सक्षम अर्थव्यवस्था की आवश्यकता है। तीसरी चुनौती नई पीढ़ी की बदलती आकांक्षाओं की है, जबकि चौथी जलवायु परिवर्तन और हिमालयी पारिस्थितिकी से जुड़ी है।

इन चुनौतियों का समाधान केवल पारंपरिक सुरक्षा सहयोग से संभव नहीं होगा। भारत और भूटान को digital economy, skills, innovation, green technology, education और climate cooperation के नए क्षेत्रों में साझेदारी बढ़ानी होगी। भविष्य की सबसे बड़ी संभावना youth and knowledge partnership में है। यदि भारत–भूटान संबंध नई पीढ़ी को शिक्षा, रोजगार, technology और professional opportunities से जोड़ते हैं, तो ऐतिहासिक मित्रता सामाजिक रूप से अधिक प्रासंगिक बनी रहेगी।

पर्यावरणीय सहयोग भी महत्वपूर्ण संभावना है। दोनों देश Himalayan Climate Research Network, biodiversity cooperation, disaster management और sustainable tourism पर संयुक्त पहल विकसित कर सकते हैं। इस संदर्भ में भारत के लिए सबसे महत्वपूर्ण नीतिगत परिवर्तन दृष्टिकोण का है। भूटान को केवल security partner या aid recipient के रूप में नहीं, बल्कि development, knowledge, technology and climate action के समान भागीदार के रूप में स्वीकार करना होगा।

इसीलिए भविष्य की दिशा को इस रूप में समझा जा सकता है:

Security Partnership → Strategic Trust Partnership

Development Assistance → Co-development

Hydropower Cooperation → Green and Knowledge Partnership

Cultural Heritage → Institutional Cultural Diplomacy

Scholarship Exchange → Knowledge Diplomacy

Traditional Friendship → Inter-generational Partnership

निष्कर्ष : भारत–भूटान संबंध दक्षिण एशिया में यह प्रदर्शित करते हैं कि असमान क्षमताओं वाले दो पड़ोसी राज्य भी दीर्घकालिक विश्वास और सहयोग पर आधारित साझेदारी विकसित कर सकते हैं। इन संबंधों की शक्ति केवल सुरक्षा हितों या आर्थिक सहयोग में नहीं, बल्कि उस सामाजिक-सांस्कृतिक विश्वास में निहित है जिसने दोनों देशों को दशकों तक जोड़े रखा है। चीन का उदय, भूटान–चीन सीमा वार्ताएँ और डोकलाम भारत की सुरक्षा चिंताओं को महत्वपूर्ण बनाते हैं, किंतु भारत की भूटान नीति को केवल China-centric नहीं होना चाहिए। भूटान की strategic autonomy और sovereign agency का सम्मान भारत के दीर्घकालिक हितों के अनुकूल है। आर्थिक क्षेत्र में hydropower भविष्य में भी महत्वपूर्ण रहेगा, लेकिन द्विपक्षीय साझेदारी को green energy, digital economy, skills, innovation और knowledge sectors की दिशा में विस्तृत करना होगा। इसी प्रकार शिक्षा और youth diplomacy को संबंधों की दीर्घकालिक सामाजिक स्थिरता का प्रमुख आधार बनाया जाना चाहिए। सांस्कृतिक कूटनीति इस पूरे संबंध की विशिष्ट शक्ति है। Shared Buddhist Heritage को यदि शिक्षा, विश्वविद्यालय सहयोग और जन-संपर्क से जोड़ा जाए तो वह Strategic Trust Infrastructure में परिवर्तित हो सकती है। इसी संदर्भ में Bodh Gaya–Rajgir–Nalanda Buddhist Knowledge and Cultural Corridor एक विशिष्ट नीतिगत मॉडल प्रस्तुत करता है।

अंततः भारत–भूटान मैत्री का भविष्य तीन परस्पर संबद्ध आधारों पर निर्भर करेगा—संप्रभुता का पारस्परिक सम्मान, रणनीतिक विश्वास और सामाजिक-सांस्कृतिक निकटता। यदि इन्हें नई पीढ़ी की आर्थिक, शैक्षणिक, तकनीकी और पर्यावरणीय आकांक्षाओं से जोड़ा जाता है, तो भारत–भूटान संबंध हिमालयी क्षेत्र में विश्वास-आधारित पड़ोसी कूटनीति का एक प्रभावी और टिकाऊ उदाहरण बने रह सकते हैं।

संदर्भ सूची :

1. Government of India and Royal Government of Bhutan, India–Bhutan Friendship Treaty, 8 February 2007.
2. Royal Government of Bhutan, Ministry of Foreign Affairs and External Trade, official materials on Bhutan–India relations; Government of India, Ministry of External Affairs, India–Bhutan Relations.
3. Joseph S. Nye Jr., Soft Power: The Means to Success in World Politics, New York: PublicAffairs, 2004.
4. Constitution of the Kingdom of Bhutan, 2008.
5. Cecilia Tortajada and U. Saklani, "Hydropower-based Collaboration in South Asia: The Case of India and Bhutan," Energy Policy, Vol. 117, 2018, pp. 316–325.

6. Ministry of External Affairs, Government of India, official documents on RuPay, BHIM-UPI, National Knowledge Network and DrukREN cooperation.
7. Royal Government of Bhutan, Ministry of Foreign Affairs and External Trade, official documents on Bhutan–China boundary negotiations.
8. Royal Government of Bhutan, Ministry of Foreign Affairs, press statements on Doklam, June–August 2017; see also academic discussion in International Affairs, Vol. 98, No. 5, 2022.
9. Royal Government of Bhutan, Ministry of Foreign Affairs and External Trade, documents on the Three-Step Roadmap, 2021, and the 25th Round of Bhutan–China Boundary Talks, 2023.
10. "Beyond India and China: Bhutan as a Small State in International Relations," International Relations of the Asia-Pacific, Vol. 22, No. 2, 2022.
11. Ministry of External Affairs, Government of India, official materials on educational cooperation and scholarship programmes for Bhutanese students.
12. UNESCO World Heritage Centre, Mahabodhi Temple Complex at Bodh Gaya; Archaeological Site of Nalanda Mahavihara at Nalanda, Bihar.

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-28-32

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 81-85
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

श्रीमती बी यदु

प्रधान पाठक, प्रेम नगर, सिहावा (नगरी), धमतरी, छत्तीसगढ़

Corresponding Author :

श्रीमती बी यदु

प्रधान पाठक, प्रेम नगर, सिहावा (नगरी), धमतरी, छत्तीसगढ़

शिक्षा और मानव संसाधन विकास में सहयोग वैश्विक प्रगति का आधार

प्रस्तावना : शिक्षा और मानव संसाधन विकास किसी भी समाज, राष्ट्र और सभ्यता की प्रगति के मूलाधार हैं। कोई भी देश केवल भौतिक संसाधनों, प्राकृतिक संपदा या सैन्य शक्ति के बल पर दीर्घकालिक विकास नहीं कर सकता, जब तक कि उसके पास शिक्षित, कुशल, नैतिक और नवाचारी मानव संसाधन न हो।

मानव संसाधन विकास का तात्पर्य केवल साक्षरता दर बढ़ाना या डिग्री प्रदान करना नहीं है, बल्कि यह एक बहुआयामी प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य व्यक्ति की अंतर्निहित शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, भावनात्मक और नैतिक क्षमताओं का पूर्ण विकास करना है, ताकि वह न केवल अपने जीवन को बेहतर बना सके, बल्कि समाज के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक उत्थान में सक्रिय योगदान दे सके।

जब दो देश, दो विश्वविद्यालय, दो संस्थाएँ या दो समुदाय इस पवित्र कार्य में परस्पर सहयोग करते हैं, तो यह सहयोग केवल ज्ञान के आदान-प्रदान तक सीमित नहीं रहता। यह सहयोग वास्तव में भावी पीढ़ियों के दृष्टिकोण को व्यापक बनाता है, पूर्वाग्रहों को तोड़ता है, और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को साकार करता है।

1. शिक्षा और मानव संसाधन विकास का अंतर्संबंध : शिक्षा, मानव संसाधन विकास का सबसे शक्तिशाली साधन है, जबकि मानव संसाधन विकास, शिक्षा का अंतिम लक्ष्य है। इन दोनों के बीच एक जैविक संबंध है।

शिक्षा के बिना मानव संसाधन अधूरा है। एक अशिक्षित व्यक्ति में भले ही शारीरिक क्षमता हो, परन्तु उसमें विवेक, विश्लेषण क्षमता और नवाचार की भावना का अभाव रहेगा।

क. साहित्यिक शिक्षा एवं आध्यात्मिक ज्ञान का आदान-प्रदान : साहित्य किसी समाज का दर्पण होता है और अध्यात्म उसकी आत्मा। भारत और विश्व के बीच, विशेषकर पूर्वी एशिया के देशों के साथ यह

आदान-प्रदान हजारों साल पुराना है।

आज की दुनिया में जहाँ हर तरफ तनाव, युद्ध और प्रतिस्पर्धा है, वहाँ साहित्यिक और आध्यात्मिक आदान-प्रदान ही वह सेतु है जो मनुष्य को मनुष्य से जोड़ता है। रवींद्रनाथ टैगोर ने कहा था - "मैं भारत को एक विचार के रूप में देखता हूँ जो वसुधैव कुटुंबकम में विश्वास रखता है।" यही विचार हमारे साहित्यिक और आध्यात्मिक सहयोग की नींव हैं।

ख. साहित्यिक शिक्षा का आदान-प्रदान : एक ऐतिहासिक यात्रा : भारत का साहित्य दुनिया के सबसे प्राचीन और समृद्ध साहित्यों में से एक है। रामायण और महाभारत केवल भारत की ही नहीं, बल्कि पूरे एशिया की साझा धरोहर हैं।

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि रामायण का प्रभाव कितना व्यापक है। थाईलैंड में इसे 'रामकियेन' कहा जाता है, इंडोनेशिया में 'ककविन रामायण', जापान में 'रामाएन्ना' और तिब्बत में 'राम-कथा'। इंडोनेशिया के बाली द्वीप में आज भी रामलीला का मंचन होता है, वहाँ के लोग खुद को राम के वंशज मानते हैं।

आधुनिक काल में यह आदान-प्रदान और भी तेज हुआ। 1913 में जब रवींद्रनाथ टैगोर को उनकी किताब 'गीतांजलि' के लिए नोबेल पुरस्कार मिला, तो पूरा विश्व भारतीय साहित्य की ओर देखने लगा। टैगोर ने जापान की यात्रा की और अपनी किताब *'जापान-यात्री'* लिखी। इस किताब में उन्होंने लिखा कि जापान के लोगों में जो अनुशासन, सफाई और प्रकृति के प्रति प्रेम है, वह भारत के प्राचीन आश्रम जीवन जैसा ही है।

दूसरी तरफ, जापानी साहित्य ने भी भारत को बहुत प्रभावित किया है। जापान की तीन पंक्तियों की कविता 'हाइकु' आज भारत के हर हिंदी और अंग्रेजी साहित्य के पाठ्यक्रम में पढ़ाई जाती है। मात्सुओ बाशो जैसे हाइकु कवियों की रचनाओं में जो क्षणभंगुरता और प्रकृति प्रेम है, वह हमें कबीर और बिहारी की कविताओं की याद दिलाता है।

प्रेमचंद, जो भारत के सबसे बड़े कथाकार माने जाते हैं, उनकी कहानियों का जापानी भाषा में अनुवाद हुआ है। वहीं जापानी लेखक हारुकी मुराकामी आज भारतीय युवाओं में सबसे ज्यादा पढ़े जाने वाले लेखक हैं। उनकी किताब *'नॉर्वेजियन वुड'* में जो अकेलापन और अस्तित्व की खोज है, वह आज के भारतीय युवाओं को भी अपनी लगती है। यह दिखाता है कि साहित्यिक भावनाएं देश की सीमाओं को नहीं मानतीं।

ग. आध्यात्मिक शिक्षा का आदान-प्रदान : भारत से विश्व तक : अगर साहित्य मन का भोजन है, तो अध्यात्म आत्मा का भोजन है। भारत को विश्वगुरु इसलिए कहा जाता है क्योंकि भारत ने दुनिया को अध्यात्म का मार्ग दिखाया है।

कहा जाता है कि दक्षिण भारत के एक राजकुमार बोधिधर्म भारत से चीन गए और उन्होंने ही जेन, बौद्ध धर्म और कुंग फू की नींव रखी। यह कहानी कितनी रोमांचक है कि एक भारतीय राजकुमार ने चीन और जापान की संस्कृति को हमेशा के लिए बदल दिया। जापानी विद्वान *डी.टी. सुजुकी* ने अपनी प्रसिद्ध किताब *'जेन एंड जापानीज कल्चर'* में लिखा है कि जेन का मूल भारत की ध्यान परंपरा में है।

स्वामी विवेकानंद इस आध्यात्मिक आदान-प्रदान के आधुनिक नायक हैं। 1893 में जब उन्होंने शिकागो में विश्व धर्म संसद में भाषण दिया - "मेरे अमेरिकी भाइयों और बहनों" - तो उन्होंने भारतीय अध्यात्म को विश्व मंच पर स्थापित कर दिया। उनकी किताबों *राज योग' और 'कर्म योग'* का जापानी सहित कई भाषाओं में अनुवाद हुआ है।

घ. शिक्षा के 2 अलग अलग स्वरूप : साहित्य और अध्यात्म का संगम : साहित्य और अध्यात्म अलग-अलग नहीं हैं। तुलसीदास की रामचरितमानस, कबीर के दोहे, मीरा के पद - ये साहित्य भी हैं और अध्यात्म भी।

जापान में भी यही है। वहाँ के महान कवि मात्सुओ बाशो की कविताएं जेन दर्शन से भरी हैं। उनका एक प्रसिद्ध हाइकु है:

"पुराने तालाब में,
मेंढक कूदा,
छपाक की आवाज।"

यह छोटी सी कविता हमें सिखाती है कि कैसे एक छोटी सी घटना भी इस ब्रह्मांड की शांति को भंग कर सकती है और फिर शांति वापस आ जाती है।

चुनौतियां और भविष्य : इस आदान-प्रदान में कुछ चुनौतियां भी हैं। अंग्रेजी भाषा के प्रभुत्व के कारण कई बार हमारी अपनी भाषाओं का साहित्य पीछे छूट जाता है। जापानी साहित्य का सीधा हिंदी में अनुवाद बहुत कम हुआ है, ज्यादातर अंग्रेजी के माध्यम से होता है।

दूसरी चुनौती है इसे केवल सरकारी कार्यक्रम तक सीमित रखना। साहित्यिक और आध्यात्मिक आदान-प्रदान तब तक सफल नहीं होगा जब तक यह लोगों के दिलों तक नहीं पहुंचेगा। जैसे जापान में एनीमे (कार्टून) बहुत लोकप्रिय है, अगर हम रामायण और महाभारत को एनीमे के रूप में जापानी युवाओं तक पहुंचाएं, तो इसका बहुत बड़ा प्रभाव पड़ेगा।

2. सहयोग की आवश्यकता क्यों? : आज विश्व जिन चुनौतियों का सामना कर रहा है - जलवायु परिवर्तन, महामारी, गरीबी, बेरोजगारी, आतंकवाद, कृत्रिम बुद्धिमत्ता का नैतिक उपयोग - वे किसी एक देश की सीमाओं में बंधी नहीं हैं। इनका समाधान भी किसी एक देश के पास नहीं है।

क. ज्ञान के असमान वितरण को संतुलित करना : विकसित देशों के पास तकनीक और शोध है, जबकि विकासशील देशों के पास युवा जनसंख्या और विविध सांस्कृतिक अनुभव है। सहयोग से यह अंतर पाटा जा सकता है।

ख. वैश्विक नागरिकता का निर्माण : सहयोग से छात्र केवल अपने देश के नहीं, बल्कि वैश्विक नागरिक बनते हैं। प्रत्येक देश अपनी एक अलग पहचान रखता है, हर देश की शिक्षा का अपना एक महत्व और एक तरीका है।

मुख्य बिंदु: सहयोग के विविध आयाम

1. अंतर्राष्ट्रीय ज्ञान और सर्वोत्तम प्रथाओं का विनिमय : जब भारत और फिनलैंड शिक्षक प्रशिक्षण में सहयोग करते हैं, या भारत और जर्मनी आईटीआई को अपग्रेड करने में मिलकर काम करते हैं, तो दोनों देशों के शैक्षणिक ढांचे सुदृढ़ होते हैं। यूनेस्को, यूनिसेफ, विश्व बैंक जैसे अंतर्राष्ट्रीय संगठन इसी ज्ञान के विनिमय के लिए मंच प्रदान करते हैं। इससे पाठ्यक्रम अधिक प्रासंगिक, शिक्षण पद्धति अधिक छात्र-केंद्रित और मूल्यांकन प्रणाली अधिक वैज्ञानिक बनती है।

2. छात्र एवं शिक्षक विनिमय कार्यक्रम : यह सहयोग का सबसे जीवंत और मानवीय रूप है। इरास्मस कार्यक्रम (यूरोप), फुलब्राइट स्कॉलरशिप (अमेरिका), और भारत का 'स्टडी इन इंडिया' कार्यक्रम इसके उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

छात्र विनिमय के लाभ :

- वैश्विक प्रदर्शन : छात्र दूसरे देश की कक्षाओं, प्रयोगशालाओं और समाज को प्रत्यक्ष अनुभव करता है।
- सांस्कृतिक सहिष्णुता: वह सीखता है कि विविधता में ही सुंदरता है। इससे नस्लवाद और संकीर्णता कम होती है।
- भाषा और संचार कौशल: नई भाषा और लोगों के साथ संवाद करने की क्षमता बढ़ती है।
- शोध दृष्टिकोण: अलग-अलग शैक्षणिक परिवेश में सोचने का नया तरीका विकसित होता है।

शिक्षक विनिमय भी उतना ही महत्वपूर्ण है। जब एक भारतीय प्रोफेसर जापान में पढ़ाता है और एक जापानी प्रोफेसर भारत में, तो दोनों ही नई शिक्षण विधियां, केस स्टडी और दृष्टिकोण लेकर आते हैं, जो हजारों छात्रों को लाभान्वित करता है।

3. संयुक्त अनुसंधान और नवाचार : यह सहयोग का सबसे उन्नत रूप है। आज की सबसे बड़ी समस्याएं - जैसे कैंसर

का इलाज, जलवायु परिवर्तन को रोकना, सस्ती ग्रीन एनर्जी बनाना, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस को मानवीय बनाना - इन पर कोई एक विश्वविद्यालय अकेले काम नहीं कर सकता।

उदाहरण के लिए, भारत के IISc और अमेरिका के MIT का जलवायु मॉडलिंग पर संयुक्त शोध, या भारत-ब्रिटेन का गंगा के जल-शोधन पर प्रोजेक्ट। ऐसे शोध में संसाधनों का साझा उपयोग होता है - एक देश की सुपरकंप्यूटर लैब, दूसरे देश के वैज्ञानिकों की विशेषज्ञता। इससे शोध की लागत कम होती है, गति तेज होती है और परिणाम अधिक विश्वसनीय होते हैं। भारत में स्थापित 'ग्लोबल इनिशिएटिव ऑफ एकेडमिक नेटवर्क्स (GIAN)' इसी दिशा में एक सराहनीय कदम है।

4. कौशल विकास और वोकेशनल ट्रेनिंग : मानव संसाधन के वास्तविक विकास के लिए केवल सैद्धांतिक ज्ञान पर्याप्त नहीं है। भारत जैसे युवा देश में, जहाँ 65% आबादी 35 वर्ष से कम है, कौशल विकास जीवन-मरण का प्रश्न है।

सहयोग यहां महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत सरकार का स्किल इंडिया मिशन, जर्मनी, ऑस्ट्रेलिया, सिंगापुर और ब्रिटेन के साथ मिलकर काम कर रहा है। जर्मनी की डुअल वोकेशनल सिस्टम में छात्र आधा समय कक्षा में और आधा समय फैक्ट्री में बिताता है। इस मॉडल को भारत के ITIs में अपनाया जा रहा है।

5. डिजिटल शिक्षा और प्रौद्योगिकी का एकीकरण : कोविड-19 महामारी ने सिद्ध कर दिया कि डिजिटल शिक्षा भविष्य है। ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म (जैसे: SWAYAM), ओपन एजुकेशनल रिसोर्सेज (OER), वर्चुअल लैब और स्मार्ट क्लासरूम ने शिक्षा की पहुँच को सुदूर क्षेत्रों तक संभव बनाया है।

सहयोग के माध्यम से तकनीक-संचालित शिक्षण की लागत कम होती है। उदाहरण के लिए, भारत का 'वन नेशन, वन डिजिटल प्लेटफॉर्म' - DIKSHA, अफ्रीकी देशों के साथ साझा किया जा रहा है। वहीं, भारत भी अमेरिका के वर्चुअल लैब मॉडल से सीख रहा है, जहाँ छात्र घर बैठे MIT की प्रयोगशाला में प्रयोग कर सकता है।

6. स्कॉलरशिप और वित्तीय सहायता : प्रतिभा किसी देश, जाति या आर्थिक स्थिति की मोहताज नहीं होती। लेकिन अवसर की कमी के कारण लाखों प्रतिभाशाली छात्र उच्च शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। अंतर्राष्ट्रीय छात्रवृत्तियाँ इस असमानता को दूर करने का सबसे सशक्त माध्यम हैं।

इरास्मस मुंडस, कॉमनवेल्थ स्कॉलरशिप, DAAD (जर्मनी), MEXT (जापान) और भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद (ICCR) की छात्रवृत्तियाँ हर साल हजारों मेधावी लेकिन आर्थिक रूप से कमजोर छात्रों को विश्वस्तरीय शिक्षा का अवसर देती हैं। जब एक छात्र विदेश में पढ़कर वापस अपने देश आता है, तो वह केवल डिग्री नहीं, बल्कि एक नया दृष्टिकोण, नेटवर्क और विचार लेकर आता है, जो अंततः वैश्विक बौद्धिक पूंजी का निर्माण करता है।

7. नीति निर्माण और संस्थागत क्षमता निर्माण : अंतर्राष्ट्रीय सहयोग का एक अप्रत्यक्ष लेकिन अत्यंत महत्वपूर्ण लाभ है - नीति निर्माण में मदद। जब भारत NAAC (राष्ट्रीय मूल्यांकन और प्रत्यायन परिषद) जैसी गुणवत्ता आश्वासन प्रणाली बनाता है, तो वह अमेरिका, ब्रिटेन और ऑस्ट्रेलिया की ऐसी ही एजेंसियों के अनुभवों से सीखता है।

सहयोग से शिक्षा नीतियों, मूल्यांकन प्रणालियों, क्रेडिट ट्रांसफर सिस्टम और गुणवत्ता मानकों को वैश्विक स्तर पर समकक्ष बनाया जा सकता है। इससे छात्रों की डिग्री की मान्यता बढ़ती है और विश्वविद्यालयों का प्रशासनिक ढांचा अधिक पारदर्शी और मजबूत होता है। नई शिक्षा नीति 2020 में विदेशी विश्वविद्यालयों को भारत में कैंपस खोलने की अनुमति इसी दिशा में एक ऐतिहासिक कदम है।

8. चुनौतियाँ और समाधान : सहयोग के मार्ग में कुछ चुनौतियाँ भी हैं:

- ब्रेन ड्रेन: प्रतिभाशाली छात्र विदेश में ही बस जाते हैं।
- सांस्कृतिक संघर्ष और भाषा की बाधा।
- विकसित और विकासशील देशों के बीच संसाधनों का असंतुलन।

- डिग्री की मान्यता और गुणवत्ता में अंतर।

इनके समाधान के लिए द्विपक्षीय समझौतों में 'ब्रेन सर्कुलेशन' की अवधारणा को बढ़ावा देना होगा, जहाँ छात्र वापस आकर अपने देश में योगदान दे।

निष्कर्ष / सारांश : अंततः, शिक्षा और मानव संसाधन विकास में सहयोग केवल ज्ञान हस्तांतरण, डिग्री या नौकरी का जरिया नहीं है। यह इससे कहीं अधिक है। यह आर्थिक समृद्धि, वैज्ञानिक नवाचार और अंतर्राष्ट्रीय सौहार्द का आधार स्तंभ है।

जब संस्थाएँ और राष्ट्र अपने शैक्षणिक संसाधनों, अनुभवों और प्राथमिकताओं को खुले मन से साझा करते हैं, तो इससे एक ऐसा कुशल, संवेदनशील, नैतिक और विचारशील वैश्विक नागरिक समाज निर्मित होता है।

हम कह सकते हैं कि साहित्यिक एवं आध्यात्मिक आदान-प्रदान दो देशों के बीच सबसे स्थायी और गहरा संबंध बनाता है। भारत और जापान का संबंध इसका सबसे अच्छा उदाहरण है। यह संबंध बोधिधर्म से शुरू होकर, टैगोर और ओकाकुरा होते हुए, आज मुराकामी और योग त

एक सच्चे अर्थों में विकसित मानव संसाधन वही है जो न केवल अपने लिए, बल्कि संपूर्ण मानवता के लिए सोच सके। और यह सोच केवल सहयोग से ही विकसित हो सकती है। यही सहयोग हमें 'ज्ञान के द्वीप' से निकालकर 'ज्ञान के महासागर' की ओर ले जाता है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. स्वामी विवेकानंद - राज योग और कर्म योग, प्रकाशक: अद्वैत आश्रम कोलकाता, राज योग: अध्याय - `द्वितीय अध्याय - प्रथम सोपान` और `चतुर्थ अध्यायप्राण`, पृष्ठ क्रमांक: 35-43 प्राण और प्राणायाम की व्याख्या, कर्म योग:`प्रथम अध्याय - कर्म का रहस्य`, पृष्ठ क्रमांक: 12-21 निष्काम कर्म की व्याख्या - `कर्मण्येवाधिकारस्ते`
2. भगवद् गीता, प्रकाशक: गीता प्रेस गोरखपुर- साधक संजीवनी या सरल हिंदी, अध्याय 2, श्लोक 47 `कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन`, पृष्ठ क्रमांक: 54, अध्याय 6, श्लोक 5-6: `उद्धरेदात्मनात्मानं` - ध्यान योग, पृष्ठ क्रमांक: 138-139
3. राहुल सांकृत्यायन - वोल्गा से गंगा, प्रकाशक: इलाहाबाद, अध्याय 1 - निशा (6000 ईसा पूर्व) - वोल्गा से आर्य संस्कृति की शुरुआत, पृष्ठ क्रमांक: 11-18, अध्याय 14 - सुपर्ण यौधेय (400 ईस्वी) - गुप्त काल में भारत और मध्य एशिया में संपर्क, पृष्ठ क्रमांक: 147-155

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-33-37

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 33-37
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. मोना शर्मा

वरीय सहायक आचार्य, विश्वविद्यालय संस्कृत विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, कामेश्वरनगर, दरभंगा (बिहार) भारत

Corresponding Author :

डॉ. मोना शर्मा

वरीय सहायक आचार्य, विश्वविद्यालय संस्कृत विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, कामेश्वरनगर, दरभंगा (बिहार) भारत

भारत की सांस्कृतिक एवं वैज्ञानिक विरासत : संस्कृत

शोधसार : संस्कृत भारत की एक शास्त्रीय भाषा है, जिसे देववाणी अथवा सुरभारती भी कहा जाता है। देश की सांस्कृतिक विरासत की रक्षा के लिए संस्कृत का पठन-पाठन जरूरी है। यह सर्वविदित है कि संस्कृत भाषा एक वैज्ञानिक भाषा है जिसमें भारत की सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित रखा गया है। इस कारण से भी इसका अध्ययन करना अत्यावश्यक है। भारत के अनमोल एवं अमूल्य सांस्कृतिक संपदा के रूप में ये वेद, पुराण, उपनिषद्, आरण्यक, रामायण, महाभारत, व्याकरण, गणितीय ग्रंथ, दार्शनिक ग्रंथ, आयुर्वेद ग्रंथ आदि हमारे देश की अनमोल धरोहर है।

ये सारे ग्रंथ संस्कृत भाषा की वैज्ञानिकता तथा तार्किकता के द्योतक हैं, क्योंकि किसी भी विषय को कम-से-कम शब्दों में शुद्ध रूप में कहना उस भाषा की वैज्ञानिकता को बताता है। संस्कृत भाषा इतनी सक्षम है कि इसमें तकनीकी विचारों को पूरे विशुद्धता, तार्किकता एवं सुस्पष्टता के साथ व्यक्त किया जा सकता है। संस्कृत के अतिरिक्त विश्व की किसी और भाषा के वर्णों को इस तरह से तार्किक एवं वैज्ञानिक रूप से नहीं रखा गया है। आज मानव इन त्रिविध प्रकार के दुखों से पीड़ित है। उन आत्यंतिक दुखों से मुक्ति प्राप्ति का मार्ग भी संस्कृत साहित्य के ग्रंथों में प्रचुरता से उपलब्ध है। संस्कृत केवल भाषा नहीं अपितु संस्कृति, विज्ञान, तार्किक क्षमता और अन्य भाषाओं की प्राण भी है। यह न केवल भारत की ही महत्वपूर्ण भाषा है अपितु विचारक इसे विश्व की प्राचीनतम, श्रेष्ठतम एवं अद्भुत भाषा मानते हैं।

आज संस्कृत के क्षेत्र में शोध की भी बड़ी आवश्यकता है। संस्कृत में कई ऐसे शोधग्रंथों का विशाल भंडार है। इसलिए संस्कृत का अध्ययन करना परम आवश्यक है, जो मानवता की आधारशिला है। हमारी आत्मा, हमारी अस्मिता, भारत की भारतीयता उसकी संस्कृति में है, जिसका प्राण संस्कृत भाषा है। इसलिए यह भाषा पूरी तरह लुप्त ना हो सके इसके लिए हमें संस्कृत का अध्ययन करना चाहिए, ताकि हम अपनी इस प्राचीन भाषा को संजोकर रख सके और अपनी आने वाली

पीढ़ी के लिए एक गौरवशाली परंपरा देकर जाएं।

कूटशब्द : शोध, संस्कृति, प्राचीन, विरासत, धरोहर, भाषा, विज्ञान।

प्रस्तावना :

"गणानां त्वां गणपतिं हवामहे, कविं कवीनामुपश्रवस्तमम् ।
ज्येष्ठराजं ब्रह्मां ब्रह्मणस्पत, आ न: श्रृण्वन्नूतिभि: सीद सादनम्।।"[1]

संस्कृत भारत की एक शास्त्रीय भाषा है। इसे देववाणी अथवा सुरभारती भी कहा जाता है। देश की सांस्कृतिक विरासत की रक्षा के लिए संस्कृत का पठन-पाठन जरूरी है। यह सर्वविदित है कि संस्कृत भाषा में भारत की सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित रखा गया है, इसलिए भी इसका अध्ययन करना आवश्यक है। देश और दुनिया की तरक्की और सभ्यता में संस्कृत भाषा का महत्त्वपूर्ण योगदान है। यह ना केवल भारत की ही महत्त्वपूर्ण भाषा है अपितु विचारक इसे विश्व की प्राचीनतम, श्रेष्ठतम एवं अद्भुत भाषा मानते हैं। संस्कृत सिर्फ भाषा नहीं अपितु संस्कृति, विज्ञान, तार्किक क्षमता और अन्य भाषाओं की प्राण भी है। संस्कृत की उपेक्षा हमें उस विरासत से विलग कर देती है।[2]

शाब्दिक रूप से संस्कृत> सम्+ सुट्+ क्री करणे+क्त प्रत्यय से निष्पन्न होता है जिसका अर्थ है विभूषित, समलंकृत, शुद्ध, परिष्कृत या संस्कारयुक्त। अज्ञानतावश कई लोग इसे केवल पूजा-पाठ, कर्मकांड से जुड़ा मान बैठते हैं और इसके कारण इस भाषा को 'अवैज्ञानिक' तथा 'परलोकवादी' तक कह देते हैं। संस्कृत वाङ्मय हजारों वर्षों पुरानी भारतीय सभ्यता का एक सजीव और मूर्त रूप है। साहित्य जो कि समाज का दर्पण होता है। संस्कृति के उचित प्रसार तथा प्रचार का सर्वश्रेष्ठ साधन साहित्य ही है। साहित्य संस्कृति का प्रधान वाहन होता है। संस्कृति की आत्मा साहित्य के भीतर से अपनी मधुर झाँकी सदैव दिखलाती है।[3]

जिस साहित्य में उसकी संस्कृति के भीतर आध्यात्मिकता की भव्य भावनाएँ हिलोरें मारती हैं तो जनसामान्य भी उस आध्यात्मिकता से अनुप्राणित हुए बिना नहीं रह सकता। ठीक ऐसा ही संस्कृत साहित्य है जो भारतीय समाज के भव्य विचारों का रुचिर दर्पण है। वास्तव में भारतवर्ष में सांसारिक जीवन के उपकरणों की सुलभता होने के कारण भारतीय समाज जीवन- संग्राम के विकट संघर्ष से स्वयं को पृथक् रखकर केवल वास्तविक शाश्वत आनंद की उपलब्धि को ही अपना लक्ष्य मानता है। इसलिए संस्कृत साहित्य जीवन की विषम परिस्थितियों के भीतर से आनंद की खोज में सदा संलग्न रहा है।[4]

दूसरी ओर एक बड़ी सच्चाई यह है कि इसके अंतर्गत सुरक्षित षड् दर्शनों को जाने बिना हम उस चिंतन की गहराई तक नहीं पहुँच सकते हैं जो भारत देश की संस्कृति का मूल आधार बना हुआ है। मानव जीवन सदैव त्रिविध प्रकार के दु:खों (आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक) से पीड़ित रहता है। उन आत्यंतिक दु:खों से त्राण प्राप्ति के लिए भी संस्कृत साहित्य में ग्रंथ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। उस तत्त्वज्ञान की वटवृक्ष सदृश शीतल छाया में मानवों को दु:खों से मुक्ति का मार्ग प्राप्त होता है। उनका जीवन नैराश्य के भीतर से आशा का, विपत्ति के भीतर से संपत्ति का तथा दु:ख के भीतर से सुख का उद्गम प्राप्त कर आनंद की पयोधि में अवगाहन करने लगता है।

वास्तव में हमारी संस्कृत भाषा संसार भर की भाषाओं में श्रेष्ठ है। हमारा संस्कृत साहित्य समग्र सभ्य साहित्यों से प्राचीनता, वैज्ञानिकता, व्यापकता तथा अभिरामता में बढकर है। इसी देववाणी में पूर्वजों ने ईश्वर की विभूतियों की पूजा में रहस्यमयी ऋचाओं का उच्चारण और साम गायन करके आध्यात्मिक जगत् की समस्याओं को सुलझाकर अपने उन्नत मस्तिष्क का परिचय दिया है ।अध्यात्म की गुत्थियों को सुलझानेवाले तथा मानव- मस्तिष्क के चरम विकास को प्रकट करने वाले उपनिषद् भी इसी भाषा में अभिव्यक्त किए गए हैं।[5] तात्पर्य यही है कि लौकिक अभ्युदय तथा पारलौकिक नि:श्रेयस की सिद्धि के साधक जितने ज्ञान, विज्ञान, कर्मकांड, ज्ञानकांड, शास्त्र और पुराण हैं। उन सब को अवगत करने का उपाय यही संस्कृत भाषा है। एक वाक्य में यह कहा जा सकता है कि संस्कृत

साहित्य 'परा' तथा 'अपरा' विद्याओं का मनोरम भाण्डागार है, जिसके रहस्यों का पता संस्कृतभाषा के ज्ञान से ही किया जा सकता है। इस भाषा की व्यवस्था और वैज्ञानिकता इतनी सुदृढ़ है कि आज भी भाषा वैज्ञानिकों के लिए चुनौती बनी हुई है।

यह भाषा एक व्यापक विचार पद्धति और जीवन शैली की व्यवस्था भी प्रस्तुत करती है। संस्कृत की विशाल और वैविध्यपूर्ण ज्ञान-राशि में वेद, पुराण, उपनिषद्, आरण्यक आदि में निहित गूढ़ तथ्य[6] जानने योग्य तो हैं ही साथ ही रामायण[7], महाभारत[8] ही नहीं बल्कि शंकर, रामानुज, माध्व गौतम, कपिल, जैमिनी जैसे महान् दार्शनिकों के गूढ़ दार्शनिक तथ्य भी भरे पड़े हैं। पाणिनि, कात्यायन, भर्तृहरि जैसे वैयाकरणों के प्रकाण्ड पाण्डित्य से भरे गूढ़तम तथ्य, पतंजलि जैसे योगगुरु, आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त और भास्कर जैसे महान गणितज्ञ जिनके गणितीय सिद्धांतों ने सबको आश्चर्यचकित किया है। चरक और सुश्रुत जैसे महान् आयुर्वेदज्ञ जिनकी समृद्ध विरासत से आज प्रत्येक मानव लाभान्वित है। भरत जैसे नाट्यविद् और वाल्मीकि, कालिदास[9], भवभूति[10], भास[11], व्यास जैसे काव्यकार एवं साहित्य मर्मज्ञ, बाणभट्ट जैसे गद्यकार[12] और दंडी जैसे अनेकानेक सर्जकों के अनेक विशिष्ट और उल्लेखनीय अवदान भी हैं। इनमें से बहुतों की वैज्ञानिकता, तर्ककुशलता, जीवन में उपयोगिता और अकादमिक मूल्यवत्ता देश-विदेश के अध्येताओं को सदियों से आकर्षित करती रही है।

इन सभी ग्रंथों ने पूरे विश्व भर में विस्तृत व्यवस्था को प्रतिपादित किया है। ये सब ग्रंथ संस्कृत भाषा की वैज्ञानिकता तथा तार्किकता के द्योतक हैं क्योंकि किसी भी विषय को कम से कम शब्दों में सूत्र रुप में कहना उस भाषा की वैज्ञानिकता को बताता है। संस्कृत भाषा इतनी सक्षम है कि इसमें तकनीकी विचारों को पूरे विशुद्धता, तार्किकता एवं सुस्पष्टता के साथ व्यक्त किया जा सकता है। विज्ञान में परिशुद्धता की आवश्यकता होती है साथ ही विज्ञान को एक लिखित भाषा की जरूरत होती है, जिसमें विचारों को पूरे स्पष्टता और तार्किकता के साथ व्यक्त किया जा सके। संस्कृत के अतिरिक्त विश्व की किसी और भाषा के वर्णों को इस तरह से तार्किक व वैज्ञानिक रुप से नहीं रखा गया है। संस्कृत भाषा में जब छोटे-छोटे विषयों को भी गंभीरता से लिया गया है तो बड़े-बड़े विषयों पर न जाने कितनी गहराई से चिंतन-मनन किया गया होगा यह स्पष्ट परिलक्षित होता है।

प्राच्य विद्या के रुप में संस्कृत के विविध पक्षों पर विदेशों में अनेक विश्वविद्यालयों में शोध और अध्ययन का कार्य हो रहा है। जर्मनी, इंग्लैंड, अमेरिका एवं रूस आदि देश ऐसे ही विलक्षण खूबियों के कारण संस्कृत भाषा की ओर आकर्षित हुए हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार जर्मनी, अमेरिका और रूस के विद्वान पुरातन भारतीय ग्रंथों पर बड़ी सक्रियता से शोध कर रहे हैं। अमेरिका में तो एक विश्वविद्यालय मात्र संस्कृत भाषा का अध्ययन करने हेतु ही स्थापित किया गया है। जर्मनी में लगभग 14 विश्वविद्यालयों में संस्कृत का शिक्षण कराया जा रहा है।वहाँ शिक्षकों की माँग इतनी है कि सही ढंग से पूर्ति तक नहीं हो पा रही। वहीं इंग्लैंड देश में संत जेम्स स्कूल इस संस्था के तत्त्वावधान में भी कई विद्यालय चलते हैं ।यहाँ 6 वर्ष तक संस्कृत भाषा अनिवार्य रूप से पढ़ाई जाती है। पढ़ने और पढ़ाने वाले दोनों गोरे लोग हैं। जब उनसे पूछा गया कि वह क्यों संस्कृत पढ़ाते हैं तो कहते हैं - "Sanskrit stands at the root of very many eastern and western languages, including English and most other European languages, classical or modern. Its study illuminates their grammar and etymology. Innumerable English words can be shown to desire from forms still extant in Sanskrit. Sanskrit literature embodies a comprehensive map of the human makeup, spiritual, emotional, mental and physical. It presents a new way of understanding our relation to the rest of creation and lays out the laws productive of a happy life. The word 'Sanskrit' means perfectly constructed, study of its grammer brings order to the mind and clarifies the

thinking."

नासा के वैज्ञानिकों द्वारा जारी एक रिपोर्ट में भी स्पष्ट किया गया है कि उनके द्वारा संस्कृत भाषा पर आधारित छठी और सातवीं जेनरेशन के सुपर कंप्यूटर बनाए जा रहे हैं। छठी जनरेशन के कंप्यूटर 2025 तक और सातवीं जेनरेशन के कंप्यूटर 2034 तक बनकर तैयार हो जाएँगे। नि:संदेह, इसके पश्चात् तो पूरे विश्व में संस्कृत भाषा को सीखने की क्रांति आ जाएगी। किंतु भारत में इस तरह के शोधकार्यों का व्यापक रूप से न होना एवं संस्कृत भाषा की उपेक्षा करना अत्यधिक चिंता का विषय है। इसे केवल पूजा-पाठ, कर्मकांड का विषय समझकर इसकी उपेक्षा करना विवेकपूर्ण नहीं कहा जा सकता। इसे केवल संग्रहालय की वस्तु मानना और इतिहास की वस्तु समझकर आँखों की ओट कर देना भी औचित्य पूर्ण नहीं है।

संस्कृत को खोने का मतलब है भारत का अतीत खोना, अपनी अस्मिता खोना और अकूत ज्ञान राशि से हाथ धो बैठना। संस्कृत की ज्ञान-राशि की यह विशेषता है कि उसमें अद्भुत किस्म की बहुलता है और विचारों का प्रजातंत्र है। इन्हीं विशिष्टताओं से प्रभावित होकर भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित नेहरू ने अपनी पुस्तक 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' में लिखा है कि "अगर कोई मुझसे पूछे कि भारत के पास बहुमूल्य खजाना क्या है और इसके पास सबसे बड़ी धरोहर क्या है, तो मैं बेहिचक कह सकता हूँ कि वह खजाना संस्कृत भाषा और उसमें निहित समस्त वाङ्मय है। यह एक महत्त्वपूर्ण विरासत है।" यह जब तक सक्रिय रहेगी और हमारे सामाजिक जीवन को प्रभावित करेगी, तब तक भारत की आधारभूत बुद्धिमत्ता बनी रहेगी। संक्षेप में कहें तो, आज विश्व संस्कृत भाषा की महत्ता को समझने लगा है और खुली बाँहों से उसका आलिंगन कर रहा है। अतः वह दिन दूर नहीं जब भारत के ऋषियों की भाषा संस्कृत समग्र संसार के मुखों से मुखरित होगी और विश्व की प्रगति का आधार बनेगी। संस्कृत में विश्व का कल्याण है, शांति है, सहयोग है, वसुधैव कुटुंबकम् की भावना है।कहा भी है कि —

"अयं निज: परो वेत्ति गणनां लघुचेतसां।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।
सर्वे भवन्तु सुखिन:, सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दु:खभाग्भवेत्।।"[13]

शोध से यह निष्कर्ष निकला है कि संस्कृत पढ़ने से स्मरण शक्ति (याददाश्त) बढ़ती है।रक्त संचार ठीक रहता है। हाथों की उंगलियों और जीभ में लचीलापन आता है बहुत सी बीमारियाँ दूर होती हैं।अल्जाइमर, पार्किंसन जैसी बौद्धिक बीमारियों से भी निजात मिलती है। हिंदू यूनिवर्सिटी के अनुसार संस्कृत में बात करने वाला मनुष्य बीपी, मधुमेह, कोलेस्ट्रोल आदि रोग से मुक्त हो जाता है। मंत्रध्वनियों पर भी शोधकार्य हो रहें हैं जिसके जरिए कैंसर जैसे लाइलाज बीमारी को भी मात देने की कोशिश की जा रही है। संस्कृत में बात करने से मानव शरीर का तंत्रिका तंत्र सक्रिय हो जाता है।

संस्कृत में मंत्रोच्चार करने पर स्वास्थ्य पर काफी गहरा प्रभाव पड़ता है क्योंकि उन अक्षरों के वाइब्रेशन यानी कंपन से आपके चक्र जागृत होते हैं और आप ऊर्जावान महसूस करते हैं। नासा भी संस्कृत को परफेक्ट साइंटिफिक लैंग्वेज मानती है। आज भी लोगों के मन में यही धारणा है कि संस्कृत का प्रयोग मात्र मंत्रोच्चारण के लिए ही किया जाता है, यही वजह है कि इससे परे वे लोग कुछ सोचते ही नहीं और ना ही जानने का प्रयास करते हैं। प्राचीन भारत में संस्कृत बोलचाल की भाषा हुआ करती थी इसलिए लोग अधिक स्वस्थ और मानसिक रूप से अधिक संतुलित होते थे।

आजकल योग का अत्यधिक प्रचलन हो गया है तो योग करने वाले जानते हैं कि कपालभाति और भ्रामरी प्राणायाम का स्वास्थ्य पर कितना अनुकूल प्रभाव पड़ता है। संस्कृत भाषा की ये एक वैज्ञानिकता ही है जो अनायास

ही घटित हो जाती है, जिसका पता किसी को भी नहीं चलता यानी कि जब संस्कृत भाषा बोलते हैं तो अधिक बार 'अ:' इस स्वर का उपयोग करना पड़ता है। अ: का उच्चारण करते ही पेट की हवा बाहर छोड़नी पड़ती है और बिना किसी प्रयास के कपालभाति प्राणायाम हो जाता है। अं इस स्वर के उच्चारण में 'मकार' का उच्चारण सम्मिलित है। भ्रामरी प्राणायाम में मकार का ही उच्चारण होता है। अतः विद्यालयं, जीवनं, क्षेत्रं, फलं, पुष्पं, गृहं इत्यादि शब्दों के सतत उच्चारण से अनायास ही भ्रामरी प्राणायाम होता रहता है। इस तरह ये नि:संकोच कहा जा सकता है कि संस्कृत भाषा वैज्ञानिक भाषा है जिसमें अत्यधिक गूढ़ से गूढ़ तथ्य छिपे पड़े हैं जिनको ढूंढकर लोककल्याणकारी एवं उपयोगी बनाने की आवश्यकता है।

"संस्कृतं नाम दैवी वागन्वाख्याता महर्षिभि:।"[14]

इस तरह स्पष्ट है कि संस्कृत भाषा का अध्ययन इसलिए करना चाहिए क्योंकि संस्कृत हमारी सांस्कृतिक एवं प्राचीन भाषा है। यह एक देवभाषा और पूर्ण वैज्ञानिक भाषा भी है। संस्कृत में अनेक शोधग्रंथ हैं जिन पर शोध हो रहे हैं और भारत में भी शोध कार्यों की परम आवश्यकता है। संस्कृत हमारे भारत का गौरव है। संस्कृत भाषा के महत्त्व पर शंका करना यानी अपने अस्तित्त्व पर शंका करने के बराबर है क्योंकि जब तक मानव है, संस्कृत का महत्त्व तब तक असीम है। यह केवल वर्तमान भारत भूभाग की आधारशिला नहीं अपितु मानवता की आधारशिला है।

संस्कृत केवल स्वविकसित भाषा नहीं बल्कि संस्कारित भाषा है। संस्कृति का अर्थ है परिमार्जित संस्कारों से युक्त मनुष्यों की सभ्यता। हमारी आत्मा, हमारी अस्मिता, भारत की भारतीयता उसकी संस्कृति में है जिसका प्राण संस्कृत भाषा है। इसलिए यह भाषा पूरी तरह लुप्त ना हो सके इसके लिए हमें संस्कृत का अध्ययन करना चाहिए, ताकि हम अपनी इस प्राचीन भाषा को संजोकर रख सके और अपनी आने वाली पीढ़ी के लिए एक गौरवशाली परंपरा देकर जाएँ। इन्हीं सब कारणों से हमारी संस्कृत भाषा परम महनीया, विद्वज्जनमाननीया तथा सौभाग्यशोभनीया है। ऐसी ज्ञान, विज्ञान, कला जैसे समस्त शास्त्रों को अभिव्यक्त करने वाली इस वैश्विक, संस्कारदायिनी और सटीक भाषा को क्या हमें भुला देना चाहिए? या उस संस्कृत माता के अमृत रूपी दूध को प्राशन कर सुसंस्कारित, संपन्न, सफल, विश्वकल्याणकारी समाज का निर्माण करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. ऋग्वेद-2/23/1
2. उपाध्याय, बलदेव (2001) संस्कृत साहित्य का इतिहास वाराणसी, शारदा निकेतन प्रकाशन।
3. वही, पृष्ठ संख्या-3.
4. वही।
5. शर्मा, डॉ. सत्य प्रकाश प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता (1975, 1984, 1995) मेरठ, साहित्य भंडार।
6. उपाध्याय, बलदेव (1989, 1993, 1998, 2006) वैदिक साहित्य और संस्कृति, वाराणसी, शारदा संस्थान।
7. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण (संवत 2071) गोरखपुर, गीताप्रेस।
8. महाभारत, पांडेय, रामनारायणदत्त शास्त्री (संपादक) गीताप्रेस, गोरखपुर, संस्करण (संवत् 2070).
9. अग्निहोत्री, प्रभुदयालु (1997) महाकवि कालिदास, दिल्ली ईस्टर्न बुक लिंकर्स।
10. त्रिपाठी, रमाकांत (1990) उत्तररामचरितम्, वाराणसी, चौखंबा सुरभारती प्रकाशन।
11. उपाध्याय, बलदेव (2009) भासनाटकचक्रम्, वाराणसी, चौखंबा विद्याभवन प्रकाशन।
12. रेग्मी, शेषराज शर्मा (2014) कादंबरी, वाराणसी, चौखंबा सुरभारती प्रकाशन।
13. वृहदारण्यकोपनिषद्।
14. काव्यादर्श- (1/33).

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-38-45

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 38-45
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. प्रतिभा चौहान

एसोसिएट प्रोफेसर, पी.जी राजकीय नेहरु महाविद्यालय, फरीदाबाद

Corresponding Author :

डॉ. प्रतिभा चौहान

एसोसिएट प्रोफेसर, पी.जी राजकीय नेहरु महाविद्यालय, फरीदाबाद

21वीं सदी की हिन्दी कविता में पर्यावरण चेतना

21वीं सदी में संपूर्ण विश्व में पर्यावरण संकट एक अत्यंत गंभीर और चिंताजनक विषय बनकर खडा हुआ है। जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, वनों की कटाई, जल-संकट तथा जैव-विविधता का ह्रास आज मानव-सभ्यता के अस्तित्व से जुड़े प्रश्न बन चुके हैं। आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक हिंदी साहित्य और विशेष रूप से कविता समाज के विविध पहलुओं, संवेदनाओं और समस्याओं को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम रही है। प्रस्तुत शोध-आलेख 21वीं सदी की हिन्दी कविता में व्याप्त पर्यावरण चेतना का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। इसमें यह देखने का प्रयास किया गया है कि समकालीन हिन्दी कवियों ने प्रकृति और मनुष्य के बदलते सम्बन्धों, पारिस्थितिक असंतुलन, उपभोक्तावादी संस्कृति और औद्योगीकरण से उत्पन्न पर्यावरणीय समस्याओं को किस प्रकार अपनी कविताओं में अभिव्यक्त किया है। हिन्दी कविता केवल प्रकृति-चित्रण तक सीमित न रहकर पर्यावरणीय प्रतिरोध और सामाजिक दायित्व-बोध की दिशा में भी अग्रसर हुई है। शोध-पद्धति के रूप में इस शोध पत्र में विश्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक पद्धति का प्रयोग करते हुए 21 वीं सदी के कवियों की प्रतिनिधि कविताओं का विषयवस्तु एवं भाषा-शिल्प की दृष्टि से अध्ययन किया गया है। 21वीं सदी की हिन्दी कविता पर्यावरण संरक्षण के प्रति सजग एवं उत्तरदायी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करती है और यह पाठकों में पारिस्थितिक चेतना जागृत करने का सशक्त माध्यम बनी

भारतीय साहित्य में वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक हिन्दी साहित्य तक प्रकृति का चित्रण अनेक रूपों में दिखाईं देता है— कहीं प्रकृति पूज्य है, कहीं सहचरी, कहीं पथ प्रदर्शक, कहीं सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति तो कहीं सौन्दर्य का आधार । किंतु आधुनिक काल में, विशेषतः 20वीं सदी के उत्तरार्ध और 21वीं सदी के आरंभ में, प्रकृति के प्रति यह दृष्टिकोण मौलिक रूप से बदलता दिखाई देता है। औद्योगीकरण, नगरीकरण, बाज़ारवाद और उपभोक्तावादी संस्कृति के विस्तार ने मनुष्य और प्रकृति के बीच के सहज सम्बन्ध को छिन्न-भिन्न

कर दिया है। ऐसे में हिन्दी कविता ने प्रकृति को केवल सौन्दर्य-बोध की वस्तु के रूप में नहीं, अपितु एक संकटग्रस्त, शोषित और चिंताजनक यथार्थ के रूप में चित्रित करना आरम्भ किया । यह परिवर्तन ही 'पर्यावरण चेतना' के रूप में हिन्दी कविता में प्रतिष्ठित हुआ है।

पर्यावरण चेतना से आशय उस बोध से है जिसमें मनुष्य प्रकृति के साथ अपने अंतर्सम्बन्ध, उस पर निर्भरता, तथा उसके प्रति अपने नैतिक उत्तरदायित्व को समझता है। यह चेतना केवल प्रकृति-प्रेम तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने की चिंता, प्राकृतिक संसाधनों के दुरुपयोग के प्रति सजगता तथा भावी पीढ़ियों के प्रति उत्तरदायित्व का बोध भी सम्मिलित है। साहित्यिक दृष्टि से पर्यावरण चेतना का अर्थ है कि रचनाकार अपनी रचनाओं में प्रकृति को केवल पृष्ठभूमि के रूप में नहीं बल्कि एक सक्रिय, संवेदनशील और संकटग्रस्त सहभागी के रूप में प्रस्तुत करे। 21वीं सदी वैश्विक स्तर पर पर्यावरणीय संकटों की सदी के रूप में जानी जा रही है। जलवायु परिवर्तन, वैश्विक तापन, अनियंत्रित औद्योगीकरण, वनों की कटाई, जल-स्रोतों का प्रदूषण, तथा जैव-विविधता का निरंतर ह्रास जैसी समस्याएँ मानव-अस्तित्व के लिए गम्भीर चुनौती प्रस्तुत कर रही हैं। भारत जैसे विकासशील देश में यह संकट ओर भी जटिल रुप धारण कर लेता है, जहाँ विकास की आकांक्षाएँ और पारिस्थितिक संतुलन दोनों परस्पर विरोधी दिखाई देते हैं। इसी सन्दर्भ में साहित्यकारों, विशेषकर कवियों ने, समाज को इस पारिस्थितिक असंतुलन, पर्यावरण प्रदूषण, वैश्विक तापन जैसे संकटों के प्रति सचेत करने का दायित्व उठाया है।

हिन्दी कविता में पर्यावरण विमर्श की प्रासंगिकता इसलिए भी बढ़ जाती है क्योंकि कविता समाज की सामूहिक चेतना और संवेदना का दर्पण होती है। जब पर्यावरणीय वैज्ञानिक रिपोर्टें और नीतिगत दस्तावेज़ पर्यावरणीय संकट को आँकड़ों में प्रस्तुत करते हैं, तब कविता उसी संकट को मानवीय अनुभव, पीड़ा और संवेदना के स्तर पर व्यक्त करती है। यही कारण है कि समकालीन हिन्दी कविता में पर्यावरण-विमर्श न केवल साहित्यिक बल्कि सामाजिक और नैतिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण बन गया है। इसलिए इस शोध में 21 वीं सदी की पर्यावरण चेतना के स्वरुप का विश्लेषण करते हुए, समकालीन कवियों के पर्यावरणीय दृष्टिकोण में प्रकृति और मनुष्य के बदलते संबंधों, जल, जंगल, जमीन, जैव विविधता के पहलुओं पर विचार- विमर्श किया है। 21वीं सदी की हिन्दी कविता से सम्बंधित प्राथमिक स्रोतों—अर्थात् चयनित कवियों के मूल काव्य-संग्रहों—तथा द्वितीयक स्रोतों, जैसे आलोचनात्मक ग्रंथों, शोध-पत्रों एवं पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों का अध्ययन किया गया है। कविताओं के विश्लेषण में विषयवस्तु, बिम्ब-विधान, प्रतीक योजना तथा भाषा-शिल्प को आधार बनाया गया है और पारिस्थितिक आलोचना (Ecocriticism) के सैद्धांतिक ढाँचे को भी अध्ययन में सन्दर्भ के रूप में प्रयुक्त किया गया है, जिससे कविताओं का विश्लेषण अधिक व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक हो सके।

21वीं सदी की हिन्दी कविता अपने पूर्ववर्ती काव्य-आन्दोलनों—छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद तथा नई कविता—की परम्परा को आगे बढ़ाते हुए नए यथार्थों से जूझती है। इस दौर की कविता में विषय-वैविध्य स्पष्ट रूप से दिखाई देता है—वैश्वीकरण, बाज़ारवाद, स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श, आदिवासी जीवन, प्रवासी अनुभव तथा पर्यावरणीय संकट जैसे विषय समकालीन कविता के केन्द्र में आ गए हैं। भाषा की दृष्टि से यह कविता सरल, सहज तथा बोलचाल के निकट है, किंतु इसमें प्रतीकात्मकता और बिम्ब-विधान की सूक्ष्मता भी विद्यमान है। कवि ज्ञानेन्द्रपति ने अपनी कविताओं में पर्यावरण असंतुलन को लेकर साहित्यिक आंदोलन चलाया और अपनी कविताओं के माध्यम से जन - मानस को संदेश दिया कि नदियों, पहाड़ों, जंगलों के निर्मम दोहन से वो प्रकृति को बीमार बना रहे हैं और नदियां, पहाड़ दूषित होकर अपनी स्वाभाविकता खोते जा रहे हैं ——-----

"गंगा मे स्नान कर रही
वह बूढी मैया

अपने प्राणों तक को प्रक्षालित कर रही है,
पवित्र कर रही है
महाप्रस्थान-प्रस्तुत,
डगमग पांवों वाली वह बूढी मैया
तुम क्या जानों,
क्योंकि तुम्हारे लिए नहीं बची है कोई पवित्र नदी
तुम्हारी सारी नदियाँ अपवित्र हो गई हैं-विषाक्त
तुम्हारे हत्पिंड की गंगोत्री सूख ही गई है
पीछे और पीछे खिसकती, आख़िरकार"[1]

समकालीन हिन्दी कविता केवल सौन्दर्यबोधी काव्य न होकर गहरे सामाजिक सरोकारों से जुड़ी हुई है। यह कविता हाशिए के समाज, वंचित वर्गों, स्त्री-अस्मिता तथा पारिस्थितिक न्याय जैसे विषयों को अपने केन्द्र में रखती है। पर्यावरणीय संकट को भी कवियों ने सामाजिक न्याय के प्रश्न से जोड़कर देखा है—विशेषतः यह तथ्य कि पर्यावरणीय विनाश का सर्वाधिक प्रभाव समाज के सबसे कमज़ोर तबकों, आदिवासी समुदायों तथा ग्रामीण जनता पर पड़ता है। रामदरश मिश्र लिखते हैं-

तेजाब सा खलबला रहा है
नदियों का पानी
जल गए मौसमों के रंग
और एक दूसरे में समा गए
आदमी एक प्यासा शोर बन के रह गया।[2]

पारम्परिक हिन्दी काव्य में प्रकृति मनुष्य की सहचरी, प्रेरणा-स्रोत तथा आध्यात्मिक अनुभूति का माध्यम रही है। किंतु 21वीं सदी की कविता में यह सम्बन्ध बदल जाता है। अब प्रकृति एक असहाय, शोषित तथा संकटग्रस्त उपस्थिति के रूप में सामने आती है। कवि प्रकृति के प्रति करुणा और चिंता व्यक्त करते हुए मनुष्य की विनाशकारी प्रवृत्तियों पर प्रश्न उठाते हैं। यह बदलाव दर्शाता है कि कविता का प्रकृति-बोध अब रोमानी न रहकर यथार्थवादी और आलोचनात्मक हो गया है। हिंदी साहित्य के कवि मंगलेश डबराल, अशोक बाजपेयी, निर्मला पुतुल, अनामिका, लीलाधर जगुडी, धर्मवीर शर्मा, वीरेंद्र मिश्र, रामदरश मिश्र, भरत दीप, कविता भाटिया, डाॅ. अंजना संधीर, डाॅ. नरेश सक्सेना ने अपनी कविताओं में उपनिवेशवादी, उपभोक्तावादी प्रवृति के कारण जल संकट, वायु प्रदूषण, पर्यावरण असंतुलन को महत्त्वपूर्ण विषय के रूप में उकेरा है। कवि वीरेंद्र मिश्र लिखते हैं–

"वो अपने अश्रु में आकाश को भिगोएगी
नदी के अंग कटेंगे तो नदी रोएगी
नदी को हंसने दो
नदी को बहने दो।"[3]

साहित्यिक सन्दर्भ में अगर हम बात करें तो पर्यावरण चेतना का तात्पर्य उस दृष्टिकोण से है जो मनुष्य को प्रकृति का स्वामी नहीं, बल्कि उसका एक अभिन्न अंग मानता है। यह चेतना मनुष्य केन्द्रित (Anthropocentric) दृष्टिकोण से हटकर पारिस्थितिकी-केन्द्रित (Ecocentric) दृष्टिकोण की ओर उन्मुख होती है। हिन्दी कविता में यह चेतना क्रमशः विकसित हुई है, आरम्भ में यह प्रकृति-सौन्दर्य के प्रति सजगता के रूप में थी, किंतु धीरे-धीरे यह पारिस्थितिक संकट, संसाधनों के दोहन तथा पर्यावरणीय अन्याय के प्रति गहरी चिंता में परिवर्तित हो गई। कवयित्री

अनीता वर्मा लिखती हैं कि इस निजीकरण, पूंजीवाद के युग में प्रेम, संवेदना, भावना सब कुछ बिक्री उत्पाद के रूप में है-

"कुछ दिनों बाद शायद
बनाएं जाएं विज्ञापन
खरीदिए एक पूरा आदमी
भाव प्रेम और संवेदना ।"[4]

प्रकृति-केंद्रित दृष्टिकोण में कवि प्रकृति को स्वतंत्र अस्तित्व और मूल्य प्रदान करता है और प्रकृति को केवल मानव-उपयोग की वस्तु के रूप में ना देखकर, उसे स्वतंत्र सत्ता के रूप में देखता है। समकालीन हिन्दी कविता में यह दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है, जहाँ नदी, वृक्ष, पहाड़ और पशु-पक्षी केवल उपमान न रहकर स्वयं में जीवंत पात्र बन जाते हैं, जिनकी पीड़ा और अस्तित्व-संकट कविता का मूल विषय बनता है। केदारनाथ सिंह अपनी कविता "नदियाँ" में लिखते हैं–

"पृथ्वी के सारे के सारे पुल
एक गहरा षड्यंत्र हैं
नदियों के ख़िलाफ़
और नदियाँ उन्हें इस तरह बर्दाश्त करती हैं
जैसे कैदी जंजीरों को"[5]

पारिस्थितिकी और साहित्य के अंतर्सम्बन्ध को समझने के लिए 'इकोक्रिटिसिज़्म' अथवा पारिस्थितिक आलोचना की अवधारणा सहायक सिद्ध होती है। यह आलोचनात्मक दृष्टिकोण साहित्य और भौतिक पर्यावरण के बीच के सम्बन्धों का अध्ययन करता है। हिन्दी साहित्य में यद्यपि यह सैद्धांतिक ढाँचा पश्चिमी साहित्य की तुलना में देर से विकसित हुआ, किंतु समकालीन आलोचकों ने इस दृष्टिकोण को अपनाते हुए हिन्दी कविता में पारिस्थितिक चिंतन की खोज एवं व्याख्या की है। हिन्दी साहित्य में पर्यावरणीय विमर्श अन्य विमर्शों—जैसे स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श तथा आदिवासी-विमर्श—के समानांतर विकसित हुआ है। विशेष रूप से आदिवासी जीवन और जल-जंगल-जमीन के प्रश्न ने पर्यावरणीय विमर्श को सामाजिक-राजनीतिक आयाम भी प्रदान किया है। यह विमर्श केवल प्रकृति-संरक्षण की बात नहीं करता, बल्कि संसाधनों पर अधिकार, विस्थापन तथा पारिस्थितिक न्याय जैसे प्रश्नों को भी उठाता है। निर्मला पुत्तुल उजड़ते आदिवासी जीवन, जंगलों- पहाड़ों पर व्यवसायियोंके अधिपत्य, शहरीकरणकी दौड़में छिन्न- भिन्न होती आदिवासी संस्कृति पर चिंता व्यक्त करते हुए लिखती हैं–

"बस!!!
और क्या है संथाल परगना में?
उतना भी बच नहीं रह गया 'वह'
संथाल परगना में
जितने कि उनकी
संस्कृति के क़िस्से!"[6]

समकालीन हिन्दी कवि प्रकृति के प्रति गहरी संवेदनशीलता का परिचय देते हैं। वे वृक्षों की कटाई, नदियों के सूखने तथा पक्षियों के विलुप्त होने को केवल पर्यावरणीय घटना के रूप में नहीं, बल्कि मानवीय त्रासदी के रूप में चित्रित करते हैं। इस संवेदनशीलता में करुणा, क्षोभ तथा आत्मग्लानि का मिश्रित भाव दिखाई देता है, जो पाठक को भी आत्मचिंतन की ओर प्रेरित करता है।जल, जंगल और जमीन' का प्रश्न समकालीन हिन्दी कविता में एक केंद्रीय विषय

के रूप में उभरा है, विशेषतः आदिवासी एवं ग्रामीण जीवन से जुड़े कवियों की रचनाओं में यह संकट केवल पारिस्थितिक नहीं बल्कि अस्तित्व से जुड़ा प्रश्न बन जाता है। जब विकास की परियोजनाओं के नाम पर वनों की कटाई, नदियों पर बाँध-निर्माण तथा भूमि-अधिग्रहण होता है तो कविता इस संकट को स्थानीय समुदायों की पीड़ा के रूप में प्रस्तुत करती है। कवयित्री निर्मला पुत्तुल ने अपनी कविताओं में प्रकृति के अत्याधिक दोहन, उजड़ते आदिवासी जीवन और अन्धाधुन्ध निर्माण के कारण बिगड़ते पर्यावरण सन्तुलन और पारिस्थितिकि तंत्र की बीमार स्थिति को अपनी कविताओं में मार्मिकता से उकेरा है —-

" बाबा!
मुझे उतनी दूर मत ब्याहना
जहाँ मुझसे मिलने जाने ख़ातिर
घर की बकरियाँ बेचनी पड़े तुम्हें
मत ब्याहना उस देश में
जहाँ आदमी से ज़्यादा
ईश्वर बसते हों
जंगल नदी पहाड़ नहीं हों जहाँ
वहाँ मत कर आना मेरा लगन।"[7]

जैव-विविधता के ह्रास पर भी समकालीन हिन्दी कविता में गम्भीर चिंता व्यक्त की गई है। लुप्त होते पशु-पक्षी, नष्ट होते वन्य-जीवन तथा संकुचित होते प्राकृतिक आवास कविता के प्रमुख बिम्ब बन गए हैं। कवि यह संदेश देते हैं कि प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण केवल पर्यावरणीय आवश्यकता नहीं, बल्कि नैतिक दायित्व भी है।

"कहाँ खो गई वो नन्हीं सी गौरैया
जो सुबह-सुबह खिड़की पर आकर
अपनी चूँ-चूँ से हमें जगाती थी
तिनका-तिनका जोड़कर
जो हमारे ही घर के किसी कोने में
अपना छोटा सा संसार बसाती थी।"[8]

तीव्र शहरीकरण ने प्रकृति और मनुष्य के सम्बन्ध को गहराई से प्रभावित किया है। कंक्रीट के जंगल, बढ़ता प्रदूषण, संकुचित होते हरित क्षेत्र तथा नदियों का सिकुड़ता अस्तित्व, इन सभी विषयों को समकालीन हिन्दी कविता ने संवेदनशीलता के साथ चित्रित किया है। कवि शहरीकरण को विकास के साथ-साथ एक सांस्कृतिक तथा पारिस्थितिक क्षति के रूप में भी देखते हैं।

बढ़ते शहरीकरण और बिगड़ते पारिस्थितिक तंत्र पर कवि राजेश जोशी चेताते हुए लिखते हैं कि एक दिन पेड़, जंगल, पहाड़ सब मनुष्यके अतिक्रमण के विरोध में आवाज उठाएंगे और उस दिन मनुष्य प्रकृति के जवाब पर विनाश के कगारपर खड़ा होगा–

"जब काटी जा रही होगी आखिरी टहनी
और उजाड़ा जा रहा होगा आखिरी घोंसला
तब वे बोलेंगे...पेड़ बोलेंगे
अपनी हरी जुबान में कि
कैसे उनकी छाती को चीर कर

बनाए गए ये कंक्रीट के शहर...”[9]

वायु, जल तथा ध्वनि प्रदूषण समकालीन हिन्दी कविता के आवर्ती विषय हैं। कवि प्रदूषण को केवल भौतिक समस्या के रूप में नहीं बल्कि मानवीय संवेदनहीनता के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करते हैं। धुआँ, राख, विषैली नदियाँ तथा दमघोंटू शहर—ये बिम्ब कविता में बार-बार आते हैं, जो पाठक को वर्तमान पारिस्थितिक संकट की गंभीरता का बोध कराते हैं। जलवायु परिवर्तन की समस्या 21वीं सदी की सबसे गम्भीर वैश्विक चुनौतियों में से एक है, और हिन्दी कविता ने इस विषय को भी संवेदनशीलता के साथ उठाया है। असमय वर्षा, बढ़ती गर्मी, ऋतु-चक्र में असंतुलन तथा प्राकृतिक आपदाओं की बढ़ती आवृत्ति को कवियों ने अपनी रचनाओं में स्थान दिया है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि हिन्दी कविता वैश्विक पारिस्थितिक संकट के प्रति भी सचेत है।वनों की अंधाधुंध कटाई और उससे उत्पन्न पारिस्थितिक असंतुलन को अनेक कवियों ने अपनी कविताओं का विषय बनाया है। वृक्षों की कटाई को कवि केवल पर्यावरणीय क्षति नहीं बल्कि सांस्कृतिक स्मृति और सामुदायिक जीवन की क्षति के रूप में भी देखते हैं, विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जहाँ वन आदिवासी समुदायों की जीवन-पद्धति के अभिन्न अंग हैं।जल संकट—चाहे वह भूजल स्तर में गिरावट हो, नदियों का प्रदूषण हो अथवा जल-वितरण में असमानता—समकालीन हिन्दी कविता में गहन चिंता का विषय है। नदियों को, जो भारतीय संस्कृति में देवी-स्वरूप मानी जाती रही हैं, अब मैली, सिकुड़ती और मरणासन्न अवस्था में चित्रित किया जाता है, जो पाठक के मन में गहरी वेदना उत्पन्न करता है।

कवि अरुण देव लिखते हैं-

“हिल रहा था पानी का आँचल
कीचड़ से सनी उसकी देह
जैसे सभ्यता का शव हो।
नदी किनारे जन्मी सभ्यताएँ
एक दिन बिन पानी
मछली की तरह रेत पर छटपटाएँगी
पत्थर की शय्या पर।”[10]

औद्योगीकरण को विकास का प्रतीक मानते हुए भी समकालीन हिन्दी कविता इसके पारिस्थितिक दुष्परिणामों की ओर संकेत करती है। कारखानों से निकलता धुआँ, विषैला अपशिष्ट तथा प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन—इन सभी को कवियों ने विकास के छद्म-चेहरे के रूप में उजागर किया समकालीन हिन्दी कविता यह प्रतिपादित करती है कि मनुष्य और प्रकृति का सम्बन्ध पारस्परिक निर्भरता का सम्बन्ध है, न कि स्वामी और अधीनस्थ का। कवि इस अन्तर्सम्बन्ध को पुनर्स्थापित करने की आवश्यकता पर बल देते हैं, ताकि पारिस्थितिक संतुलन बना रहे। कविता में यह भाव बार-बार उभरता है कि मनुष्य का प्रकृति के प्रति नैतिक उत्तरदायित्व है। यह उत्तरदायित्व केवल वर्तमान पीढ़ी के प्रति नहीं बल्कि आने वाली पीढ़ियों के प्रति भी है, जिन्हें एक स्वस्थ एवं सन्तुलित पर्यावरण विरासत में मिलना चाहिए। पर्यावरण संतुलन के लिए, प्रकृति के सरंक्षण को समय की महत्तवपूर्ण माँग मानते हुए कवि केदारनाथ सिंह अपने काव्य संग्रह” पानी की प्रार्थना में लिखते हैं—-

नदियों को बहुत पसंद है
कि उन्हें नदी ही कहा जाए
न कि कोई जलमार्ग
जब हम कहते हैं जलमार्ग
हम भूल जाते हैं

कि उसमें मछलियाँ भी रहती हैं
और उनके भी अपने घर हैं
जिन्हें हम हर दिन तोड़ते हैं
अपनी बड़ी-बड़ी नौकाओं से।
प्रकृति कोई गोदाम नहीं है
जहाँ से सिर्फ ढोया जा सके
कोयला और पानी,
प्रकृति एक साँस है
जो हमारे फेफड़ों से पहले
पेड़ों के पत्तों में चलती है।
यदि हम बचाना चाहते हैं
इस सदी को तो हमें बचाना होगा
नदी के भीतर की उस चुप्पी को
जो सदियों से मनुष्य को
मनुष्य बनाए रखने की प्रार्थना कर रही है।[11]

उपभोक्तावादी संस्कृति को समकालीन हिन्दी कविता पर्यावरणीय संकट के प्रमुख कारणों में से एक मानती है। आज आधुनिक युग में प्रकृति के अंधाधुंध उपभोग, बाज़ार की चमक-दमक तथा वस्तुओं के प्रति बढ़ती लालसाओं को 21 वीं सदी के कवि प्रकृति के शोषण से सीधे जोड़कर देखते हैं। अंततः समकालीन हिन्दी कविता केवल संकट का चित्रण न करके पर्यावरण संरक्षण का सामाजिक संदेश भी देती है। यह कविता पाठकों को आत्मचिंतन और सक्रिय भागीदारी की ओर प्रेरित करती है, ताकि पारिस्थितिक संतुलन को पुनर्स्थापित किया जा सके। 21वीं सदी में सक्रिय रहे अनेक हिन्दी कवियों ने अपनी रचनाओं में पर्यावरण चेतना को प्रमुखता से स्थान दिया है। केदारनाथ सिंह की कविताओं में गाँव, नदी और मिट्टी के प्रति गहरा लगाव दिखाई देता है, वहीं मंगलेश डबराल पहाड़, जंगल तथा विस्थापन के प्रश्नों को अपनी कविता का केंद्र बनाते हैं। ज्ञानेंद्रपति की कविताओं में गंगा नदी के प्रदूषण तथा पारिस्थितिक विनाश का मार्मिक चित्रण मिलता है। नरेश सक्सेना ने जल-संकट और नदियों के विनाश को गहन संवेदनशीलता के साथ चित्रित किया है, जबकि निर्मला पुतुल जैसी आदिवासी कवयित्रियाँ जल-जंगल-जमीन के प्रश्न को अस्मिता और अस्तित्व के संघर्ष के रूप में प्रस्तुत करती हैं। इन कवियों की दृष्टि में विविधता होते हुए भी सबका मूल स्वर एक ही है—प्रकृति के प्रति उत्तरदायित्व और संकट के प्रति सजगता। इन कवियों की कविताओं का विषयगत विश्लेषण करने पर स्पष्ट होता है कि पर्यावरणीय संकट को वे अलग-अलग स्तरों पर देखते हैं—कोई इसे स्थानीय अनुभव के रूप में प्रस्तुत करता है, तो कोई वैश्विक संकट के रूप में। कुछ कविताएँ प्रकृति-विनाश के प्रत्यक्ष चित्रण पर केंद्रित हैं, तो कुछ मानवीय लालच और असंवेदनशीलता की आलोचना पर केंद्रित हैं और यही वैविध्य हिन्दी कविता की पर्यावरणीय दृष्टि को बहुआयामी बनाता है।

भाषा एवं बिम्ब-विधान की दृष्टि से समकालीन हिन्दी कविता में सहज, स्थानीय तथा ग्रामीण जीवन से जुड़े बिम्बों का प्रयोग अधिक हुआ है—नदी, मिट्टी, पेड़, चिड़िया, खेत, बादल आदि। ये बिम्ब न केवल सौन्दर्यबोध उत्पन्न करते हैं बल्कि पाठक में पारिस्थितिक संवेदना भी जागृत करते हैं। भाषा की सरलता कविता को व्यापक पाठक-वर्ग तक पहुँचने में सहायक सिद्ध होती है। समकालीन हिन्दी कविता में पर्यावरणीय संवेदना केवल शोक अथवा विलाप तक सीमित नहीं रहती, बल्कि यह प्रतिरोध का रूप भी धारण करती है। कवि विकास की विनाशकारी नीतियों,

सरकारी उदासीनता तथा कॉर्पोरेट लालच के विरुद्ध मुखर होकर प्रतिरोध व्यक्त करते हैं, जिससे कविता एक सक्रिय सामाजिक हस्तक्षेप का रूप ले लेती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि 21वीं सदी की हिन्दी कविता पर्यावरण चेतना की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध एवं सजग है। समकालीन कवियों ने प्रकृति को केवल सौन्दर्य-बोध की वस्तु न मानकर एक संकटग्रस्त, शोषित तथा संवेदनशील उपस्थिति के रूप में चित्रित किया है। जल, जंगल, जमीन का संकट, प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, नदियों का सूखना, पहाड़ों का विलुप्त होना तथा जैव-विविधता का ह्रास, ये सभी विषय हिन्दी कविता में गहन संवेदनशीलता के साथ अभिव्यक्त हुए हैं। 21 वीं सदी की कविता प्रकृति के अत्यधिक दोहन के दुष्परिणामों से चेताती है और उपभोक्तावादी संस्कृति, औद्योगीकरण की आलोचना करते हुए मनुष्य के नैतिक उत्तरदायित्व प्रकृति संरक्षण पर भी बल देती है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इन कवियों की पर्यावरण चेतना केवल विलाप तक सीमित न रहकर प्रतिरोध और सामाजिक परिवर्तन की दिशा में भी अग्रसर होती है। अतः यह कहा जा सकता है कि 21वीं सदी की हिन्दी कविता पारिस्थितिक संकट के प्रति समाज को सचेत करने तथा पर्यावरण संरक्षण के प्रति उत्तरदायित्व-बोध जाग्रत करने का एक सशक्त एवं प्रभावी माध्यम बनकर उभरी है। भविष्य में इस दिशा में और गहन शोध की आवश्यकता है, विशेषतः आदिवासी एवं क्षेत्रीय कवियों की पर्यावरणीय दृष्टि को केंद्र में रखकर भी समकालीन कवियों ने जो लिखा है

सन्दर्भ प्रसंग सूची :

1. समकालीन हिन्दी साहित्य में पर्यावरण विमर्श, सम्पादक- डॉ. ए.ऐस सुमेष , , पृ.सं.- 28।
2. रामदरश मिश्र, kavita kosh, http://kavitakosh.org.
3. वीरेन्द्र मिश्र, कविता कोष http://kavitakosh.org
4. अनीता वर्मा, 'एक जन्म में सब', पृष्ठ-39, राजकमल प्रकाशन, 2003 संस्करण।
5. पुस्तक -"उत्तर कबीर और अन्य कविताएँ"- केदारनाथसिंह, पृ.सं.- 47, राजकमल प्रकाशन।
6. पुस्तक- "नगाड़े की तरह बजते शब्द"- निर्मला पुत्तुल, पृ.सं.- 26 , ज्ञानपीठ प्रकाशन, वर्ष-2004।
7. पुस्तक : नगाड़े की तरह बजते शब्द (पृष्ठ 49) रचनाकार : निर्मला पुतुल प्रकाशन : भारतीय ज्ञानपीठ संस्करण : 2005
8. गौरेया / कृष्ण कुमार यादव, http://kavita kosh.org
9. पुस्तक: "एक दिन बोलेंगे पेड़" पृ.सं.-26, लेखक- राजेश जोशी, संभावना प्रकाशन, संस्करण:2001,
10. पानी/अरुण देव, http://Kavitakosh.org

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. ज्ञानेंद्रपति. गंगा तथा अन्य कविताएँ. राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019.
2. नरेश सक्सेना. सुनो चारुशीला. भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2018.
3. निर्मला पुतुल. नगाड़े की तरह बजते शब्द. भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2017.
4. मंगलेश डबराल. स्मृति एक दूसरा समय है. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2020.
5. केदारनाथ सिंह. सृष्टि पर पहरा. राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017.
6. अनामिका. पानी को समझना. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2021.
7. बद्रीनारायण. प्रतिनिधि कविताएँ. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019.
8. अरुण कमल. नए इलाके में. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018.
9. शर्मा, रामकिशोर. हिन्दी कविता में पर्यावरण चेतना. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2020.
10. पाण्डेय, मनोज कुमार. हिन्दी कविता और पारिस्थितिकी. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2023.
11. गुप्ता, नीरज. जलवायु परिवर्तन और हिन्दी साहित्य. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2024।

ज्ञानविविधा
कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 46-49
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :
डॉ. (श्रीमती) सरोज बिल्लोरे
प्राध्यापक – राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रषासन, माता जीजाबाई शा. स्नातकोत्तर स्वषासी कन्या महाविद्यालय, मोतीतबेला, इंदौर (म. प्र.) भारत

Corresponding Author :
डॉ. (श्रीमती) सरोज बिल्लोरे
प्राध्यापक – राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रषासन, माता जीजाबाई शा. स्नातकोत्तर स्वषासी कन्या महाविद्यालय, मोतीतबेला, इंदौर (म. प्र.) भारत

समान नागरिक संहिता : एक संवैधानिक परिकल्पना एवं समकालीन राजनैतिक सामाजिक प्रभाव

प्रस्तावना : समान नागरिक संहिता से तात्पर्य पूरे देष के लिए एक समान कानून से है, जो सभी धार्मिक समुदायों पर उनके व्यक्तिगत मामलों जैसे विवाह, तलाक, उत्तराधिकार, गोद लेने आदि पर लागू होता है। हमारे देष में दो प्रकार के कानून लागू होता है। पहला दीवानी एवं दूसरा फौजदारी जो कि संविधान के द्वारा लागू किया गया है। फौजदारी कानून सभी के लिए समान है, इसमें धर्म, जाति, समुदाय के आधार पर अपराध करने पर सभी को कानून के प्रावधानों के अनुरूप सजा के समान अधिकारी है। जैसे चोरी, डकैती, हत्या आदि समान संहिता के अनुसार सजा दी जाती है किंतु दीवानी कानून में सभी धर्म, जाति, समुदाय के लोग जैसे हिन्दू, ईसाई, पारसी, सिख, मुस्लिम, जनजातियों आदि उनके व्यक्तिगत मामलों के आधार पर लागू करते हैं। जैसे विवाह, तलाक, उत्तराधिकार, गोद, निकाह में अपने अनुसार करते हैं। इन्हीं सब व्यवस्थाओं में एकरूपता लाने के लिए समान नागरिक संहिता की आवष्यकता महसूस की गयी है।

समान नागरिक संहिता क्या है ? : समान नागरिक संहिता, इसे विधिक परिभाषा में, ''यूनिफार्म सिविल कोड'' कहा गया है। यह एक ऐसी अवधारणा है जिसके अंतर्गत विवाह, तलाक, निकाह, उत्तराधिकार गोद लेना (दत्तक लेना), भरण–पोषण तथा संपत्ति के बंटवारे जैसे व्यक्तिगत विधि (Personal Law) संबंधित समस्त विषयों के लिए धर्म, जाति, अथवा समुदाय के भेद के बिना सभी नागरिकों पर एक समान कानून लागू करने की परिकल्पना की जाती है।

भारतीय संविधान और समान नागरिक संहिता : समान नागरिक संहिता का उल्लेख भारतीय संविधान के भाग 4 के अनुच्छेद 44 में किया गया है। इसके द्वारा नीति निर्देष में दिया गया है कि समान नागरिक कानून लागू करना हमारा लक्ष्य होगा। भारतीय सविधान की प्रस्तावना में 42 वें संषोधन के माध्यम से 'धर्म निरपेक्ष' शब्द को जोड़ा (षामिल) किया गया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि भारतीय संविधान का उद्देष्य भारत के सभी नागरिकों के साथ धार्मिक आधार पर किसी भी प्रकार के भेदभाव को समाप्त करना है। इस कोड के अनुसार राज्यों व देष में निवास करने वाले सभी लोगों के लिए एक समान कानून का प्रावधान है यानि कि धर्म के आधार पर किसी भी नागरिक विभेद नहीं होगा। हालांकि विगत कुछ वर्षों में केन्द्र सरकार के साथ–साथ कुछ राज्यों ने UCC के कार्यान्वयन के लिए कुछ प्रयास किये हैं। इन प्रयासों को निम्नलिखित दो शीर्षकों के अंतर्गत देखा जा सकता है –

केन्द्र द्वारा उठाए गये कुछ कदम – विषेष विवाह अधिनियम 1954

यह अधिनियम विवाह के लिए एक धर्म निरपेक्ष विकल्प प्रदान करने के लिए अधिनियमित किया गया था। यह भारत के लोगों और उसमें निवास करने वाले सभी भारतीय नागरिकों के लिए सिविल विवाह का प्रावधान करता है चाहे किसी भी धर्म या आस्था कुछ भी हो।

हिन्दू कोड बिल : 1950 के दषक में संसद द्वारा पारित हिन्दू कोड बिलों को

यू.सी.सी. की दिषा में एक कदम के रूप में रखा जाता है। इसके अंतर्गत आने वाले निम्नलिखित 4 अधिनियम हिन्दू समुदाय के भीतर व्यक्तिगत कानूनों को संहिताबद्ध करने और उनमे एकरूपता लाने का प्रयास करता है –

- हिन्दू विवाह अधिनियम 1955
- हिन्दू उत्तराधिकारी अधिनियम 1956
- हिन्दू अल्पसंख्यक और संरक्षकता अधिनियम 1956
- हिन्दू दत्तक और भरण–पोषण अधिनियम 1956

नोट :– इन कानूनों के प्रयोजन के लिए 'हिन्दू' शब्द में सिख, जैन और बौद्ध भी शामिल है।

देष में लागू विभिन्न पर्सनल लॉ –

1. हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 – हिन्दूओं, जैनियों, बौद्धों और सिखों पर लागू
2. पारसी विवाह और तलाक अधिनियम 1936 – पारसियों से संबंधित मामलों पर लागू
3. भारतीय ईसाई विवाह अधिनियम 1872 – ईसाईयों से संबंधित मामलों पर लागू
4. मुस्लिम पर्सनल लॉ (शरीयत) आवेदन अधिनियम 1937 मुसलमानों से संबंधित मामलों पर लागू।

संविधान सभा में बहस : समान नागरिक संहिता (यू.सी.सी.) के मुद्दे पर संविधान सभा में बहस हुई। बहस के दौरान प्रस्तुत प्रमुख तर्कों को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है –

पक्ष में तर्क – समान नागरिक संहिता (U.C.C.) के समर्थकों में बी.आर. अम्बेडकर, अल्लादी कृष्णा स्वामी अय्यर और के. एम. मुंषी शामिल थे। उन्होंने एक समान नागरिक संहिता के पक्ष में निम्नलिखित तर्क दिये :

- समानता और न्याय : उनके अनुसार एक समान नागरिक सहिता धार्मिक संबंधता की परवाह किए बिना सभी नागरिकों के लिये समान कानून सुनिष्चित करके समानता आर न्याय के सिद्धान्तों को बनाए रखेगा।
- धर्म निरपेक्षता : एक समान नागरिक संहिता भारतीय राज्य की धर्मनिरपेक्ष प्रकृति के साथ संरेखित होगी, व्यक्तिगत कानूनों को धार्मिक विचारों से अलग करेगी और एकीकृत राष्ट्रीय पहचान को बढ़ावा देगी।
- महिलाओं के अधिकार – यह कोड व्यक्तिगत कानूनों में प्रचलित भेदभावपूर्ण प्रथाओं विषेष रूप से विवाह, तलाक और विरासत जैसे मामलों में महिलाओं के अधिकारों को प्रभावित करने वाली प्रथाओं को प्रतिबंध कर कसता है। इस प्रकार यह लैंगिक समानता और महिला सषक्तिकरण को बढ़ावा देगा।

विपक्ष में तर्क – समान नागरिकता (U.C.C.) के विरोधियों में संविधान सभा के सदस्य नजीरूद्दीन अहमद और मोहम्मद इस्माइल खान जैसे सदस्य शामिल थे। उन्होंने समान नागरिक संहिता के बारे में निम्न आषंकाऐं व्यक्त की।

- धार्मिक स्वायत्ता – यह विभिन्न समुदायों की धार्मिक स्वायत्ता पर संभावित रूप से अतिक्रमण कर सकता है क्योंकि यह उन समुदायों की सहमति के बिना धार्मिक रीति–रिवाजों और परंपराओं में हस्तक्षेप करेगा।
- सांस्कृतिक संवेदनषीलता – एक समान कोड विभिन्न समुदायों के विषिष्ट रीति–रिवाजों और संवेदनषीलताओं के पर्याप्त रूप से समायोजित नहीं कर सकता है। इसके परिणामस्वरूप यह भारत में धार्मिक और सांस्कृतिक प्रथाओं की विविधता को बाधित कर सकता है।
- सामाजिक अषांति – व्यक्तिगत मामलों में संबंधित प्रथाऐं विभिन्न समुदायों की धार्मिक और सांस्कृतिक पहचानों में गहराई से निहित है। एक समान नागरिक संहिता लागू करने का तात्पर्य उन्हें अपनी पहचान त्यागने के लिए बाध्य करना हो सकता है और इससे सामाजिक अषांति और सांप्रदायिक तनाव पैदा हो सकता है। चूंकि समान नागरिक संहिता पर संविधान सभा आम सहमति नहीं बन पाई थी, इसे अनुच्छेद 44 के तहत राज्य के नीति निर्देषक तत्वों के अंतर्गत रखा गया था।

विष्व के लगभग 125 देषों में समान नागरिक संहिता लागू है। भारत में 1961 में सर्वप्रथम गोआ राज्य में लागू हुई थी। उसके बाद में असम, गुजरात में तथा मणिपुर, मिजोरम व उत्तराखण्ड में लागू हुई। अब मध्यप्रदेष में इसे लागू किया जा रहा है।

21 जुलाई 2026 को मध्यप्रदेष विधानसभा में समान नागरिक संहिता बिल पारित हो गया है। महामहिम राज्यपाल की स्वीकृति के बाद यह कानून प्रभावषाली राजनीतिक तथा आर्थिक दूरगामी प्रभाव होंगे। उसके लिये वर्तमान भारतीय विधिक व्यवस्था में हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, पारसी व अनुसूचित जनजाति (ST) तथा घुमंतर समुदाय तथा (SC) अनुसूचित समुदायों आदि के लिए पृथक–पृथक व्यक्तिगत विधियाँ प्रचलित हैं जो अपने –अपने धार्मिक रीति–रिवाजों तथा परंपराओं पर आधारित है। समान नागरिक संहिता का मुख्य उद्देष्य इन समस्त पृथक विधियों के स्थान पर एक एकीकृत, धर्मनिरपेक्ष तथा समानता मूलक विधि संहिता का निर्माण करना है, जो भारतीय संविधान के अनुच्छेद 44 में विहित राज्य के नीति निदेषक सिद्धान्तों का एक अभिन्न भाग है। यह उल्लेखनीय है कि अनुच्छेद 44 अन्य निदेषक तत्वों की भांति गैर न्यायोचित (Non-Justiciable) है, अर्थात् इसे प्रत्यक्ष रूप से न्यायालय में प्रवर्तित नहीं किया जा सकता, तथापि यह विधायिका के लिए एक मार्गदर्षक सिद्धान्त के रूप में कार्य करता है।

संहिता के पीछे का विधिक एवं संवैधानिक उद्देष्य –संविधान निर्माताओं ने अनुच्छेद 44 के माध्यम से यह अभिप्राय व्यक्त किया था कि राष्ट्रीय एकता एवं नागरिकों के मध्य विधिक समानता की स्थापना हेतु, समय आने पर, एक समान

नागरिक संहिता का निर्माण किया जाना चाहिए। इसका मूल उद्देदष्य संविधान के अनुच्छेद 14 में प्रतिष्ठापित विधि के समक्ष समानता तथा अनुच्छेद 15 में वर्णित 'धर्म' मूलवंष, जाति, लिंग अथवा जन्मस्थान के आधार पर विभेद के प्रतिषेध के सिद्धांतों को व्यक्तिगत विधि के क्षेत्र में भी साकार करना है। विषेष रुप, इसका एक प्रमुख उद्देष्य लैंगिक न्याय की स्थापना करना है, क्योंकि विभिन्न पारपंरिक व्यक्तिगत विधियों में महिलाओं को उत्तराधिकार, भरण–पोषण तथा तलाक संबंधी अधिकारों में असमानता का सामना करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त जटिलता को समाप्त कर एक सरल, पारदर्षी तथा एकरुप विधिक ढांचा प्रदान करना भी इसका मुख्य उद्देष्य है, जिससे न्यायालयों ने लंबित प्रकरणों की बहुलता तथा विधिक अनिष्चितता को कम किया जा सके।

संहिता के मुख्य नवीन प्रावधान : समान नागरिक संहिता में प्रस्तावित एवं क्रियान्वित प्रारुपों में कुछ ऐसे नवीन प्रावधान सम्मिलित किए गए हैं, जो पारिवारिक विधि एवं उत्तराधिकार विधि की परम्परागत संरचना में सारभूत परिवर्तन प्रस्तुत करते हैं। **प्रथम** इस संहिता के अंतर्गत 'अवैध संतान (illigitimate child)' की संकल्पना को समाप्त कर दिया गया है। विवाह, लिव–इन रिलेषन्स, दत्तक ग्रहण (गोद लेना), सरोगेसी अथवा टेस्ट–ट्यूब पद्धति से जन्म लेने वाले समस्त बालक–बालिकाओं के साथ विधिक भेदभाव नहीं किया जायेगा। **द्वितीय** अनुसूचित जाति जैसे बेगा अनुसूचित जनजातियों को उनकी पारंपरिक प्रथाओं तथा रीति–रिवाजों के संरक्षणार्थ इस संहिता के दायरे से स्पष्ट रूप से बाहर रखा गया है ताकि संविधान द्वारा प्रदत्त उनके विषिष्ट सांस्कृतिक एवं संवैधानिक अधिकार अक्षुण्ण बने रहे। **तृतीय** संहिता समस्त समुदायों के लिए एकल विवाह पद्धति को अनिवार्य करती है, बहुविवाह प्रथा के धर्म अथवा समुदाय के भेद के बिना पूर्णतः प्रतिषिद्ध किया गया है। **चतुर्थ** विवाह का अनिवार्य पंजीयन न कराए जाने की स्थिति में भी विवाह की वैधता प्रभावित नहीं होगी, पंजीयन को साक्ष्यिक सुविधा तथा प्रषासनिक अभिलेखीकरण की दृष्टि से अपेक्षित माना गया है, न कि विवाह की वैधानिकता के लिए एक अनिवार्य पूर्व–षर्त के रूप में माना जायेगा।

पंचम : मौखिक तलाक, सामाजिक अथवा जातीय पंचायत के निर्णय अथवा किसी अन्य असंवैधानिक अथवा गैर–कानूनी प्रक्रिया के माध्यम से किये गए विवाह–विच्छेद को विधिक मान्यता प्रदान नहीं की जायेगी, तलाक केवल सक्षम न्यायालय अथवा विधि द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के माध्यम से ही किया जा सकेगा। **षष्ठतः** निकाय हलाला जैसी अपमानजनक प्रथा एवं महिला–विरोधी शर्तों को थोपना अथवा उनके पालन हेतु किसी व्यक्ति को बाध्य करना, संहिता के अन्तर्गत एक दंडनीय अपराध घोषित किया गया है। **सप्तमः** – लिव–इन रिलेषन्स (संबंधों) का पंजीयन अनिवार्य किया गया है जिससे ऐसे संबंधों में रहने वालों पक्षकारों विषेषकर महिलाओं तथा उनसे उत्पन्न संतानों के अधिकारों का विधिक संरक्षण सुनिष्चित किया गया है। **अष्टमः** उत्तराधिकार विधि क्षेत्र में, अब किसी व्यक्ति को अपनी संपूर्ण संपत्ति जिसमें उसके हिस्से की पैतृक संपत्ति भी सम्मिलित है– अपनी स्वतंत्र इच्छानुसार वसीयत के माध्यम से हस्तांतरित करने का अधिकार प्रदान किया गया है। **नवमः** यदि किसी संतान की मृत्यु हो जाती है तो उसकी संपत्ति में माता एवं पिता दोनों को प्रथमश्रेणी का उत्तराधिकारी (पति–पत्नि) के रूप में समान दर्जा प्रदान किया गया है।

दषमतः जो व्यक्ति स्वयं उस व्यक्ति की हत्या करता है अथवा हत्या में सहयोग या दुष्प्रेरण करता है जिसकी संपत्ति उसे उत्तराधिकार के अपने अधिकार से पूर्णतः वंचित हो जाएगा– यह प्रावधान विधि के इस सुस्थापित सिद्धान्त पर आधारित है कि कोई भी व्यक्ति अपने ही दुष्कृत्य से लाभ अर्जित नहीं कर सकता।

समान नागरिक संहिता से संभावित लाभ : यदि समान नागरिक संहिता (UGC) को पूर्ण रूप से लागू किया जाए तो इसके अनेक संभावित लाभ प्रतिपादित किये जाते हैं। तो **प्रथमः** यह सभी नागरिकों को धर्म–निरपेक्ष आकार पर समान विधि संरक्षण प्रदान करेगी, जिससे महिलाओं को उत्तराधिकार तथा तलाक जैसे विषयों में समान अधिकार प्राप्त होंगे। **द्वितीयः** यह बहुविवाह जैसी प्रथाओं पर विधिक अंकुष लगाकर एकल विवाह पद्धति को सुदृढ़ करेगी। **तृतीयः** विवाह पंजीकरण तथा लिव–इन संबंधों के अनिवार्य पंजीकरण जैसे प्रावधानों के माध्यम से पारदर्षिता तथा नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा सुनिष्चित होगी साथ ही महिलाओं के शोषण को रोकेगा। **चतुर्थः** यह न्यायपालिका पर पृथक–पृथक व्यक्तिगत विधियों की व्याख्या करने के भार को कम करेगी तथा विधिक एक रूपता से न्याय प्रक्रिया का सरलीकरण होगा।

समान नागरिक संहिता से जुड़ी आषंकाएं एवं संभावित हानियां : दूसरी ओर, समान नागरिक संहिता के विरोध में भी सारगर्भित तर्क प्रस्तुत किए जाते हैं। सर्वप्रथम, यह तर्क दिया जाता है कि, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 25 से 28 तक धार्मिक स्वतंत्रता तथा धार्मिक रीति–रिवाजों के पालन का मौलिक अधिकार प्रदत्त है और एक समान संहिता का प्रवर्तन इस विविधतापूर्ण धार्मिक स्वायत्तता में हस्तक्षेप के रूप में देखा जा सकता है। इसके बावजूद यह महिलाओं–बालक–बालिकाओं के लिये एक मील का पत्थर साबित होगा जो कि सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक रूप से सहायक साबित होगा।

- U.C.C. के लागू होने से देष की राजनीति पर असर पड़ेगा और राजनीतिक दल वोट बैंक वाले राजनीति नहीं कर सकेंगे।
- आधुनिकीकरण को बढ़ावा देना पुराने धार्मिक कानूनों को समाप्त करके U.C.C. वर्तमान मूल्यों और नैतिक आधार पर एक आधुनिक लोकतांत्रिक समाज की प्रगतिषील आकांक्षाओं को प्रतिबिंबित करेगा।

वैष्विक छबि में सुधार UCC को अपनाने से समानता, न्याय और धर्म निरपेक्षता के सिद्धान्तों को बनाए रखने के लिए प्रतिबद्ध एक प्रगतिषील और समावेषी लोकतंत्र के रूप में भारत की अंतराष्ट्रीय छवि में वृद्धि होगी। यह भारत के कानूनी ढांचे को वैष्विक मानवाधिकार मानकों और आधुनिक लोकतांत्रिक प्रथाओं के साथ समाहित करेगा। U.C.C. को लागू करने के

लिये लाभों और निहितार्थों के बारे में जनता को सूचित करने के लिए जागरूक अभियान और शैक्षिक कार्यक्रम आयोजित करना। इससे आम सहमति बनाने और कार्यान्वयन के लिए समर्थन जुटानें में मदद मिल सकती है।

समावेषिता : यू.सी.सी. को इस तरह से तैयार किया जाना चाहिए कि वह धार्मिक विविधता का सम्मान करते हुए लैंगिक समानता और न्याय को बढ़ावा दे।

क्रमिक कार्यान्वयन प्रारंभ में कम से कम विरोधवाले क्षेत्रों में लागू करके धीरे–धीरे इसके दायरे को चरणबद्ध तरीके से बढ़ाया जा सकता है। इससे संपूर्ण भारत में U.C.C. को लागू करने से उत्पन्न होने वाली चिन्ताओं को कम करके और सुचारू परिवर्तन सुनिष्चित करने में मदद मिल सकती है।

मूल्यांकन : जब भी यू.सी.सी. लागू हो जाय, तो उसके कार्यान्वयन की निगरानी और समाज पर उसके प्रभाव का मूल्यांकन करने के लिए एक तंत्र स्थापित किया जाना चाहिये, इससे आवष्यक नियोजन और सुधार करने एवं इसके कार्यान्वयन की प्रक्रिया को जागरूक बनाने में मदद मिलेगी।

राजनैतिक इच्छाषक्ति : राजनीतिक नेताओं को U.C.C. कार्यान्वयन से जुड़ी जटिलताओं और चुनौतियों से निपटने के लिए नेतृत्व और दृढ़ इच्छाषक्ति की आवष्यकता है।

निष्कर्ष : निष्कर्षतः सार्वजनिक न्याय समानता और धर्मनिरपेक्षता की दिषा में भारत की यात्रा के लिए समान नागरिक संहिता U.C.C. एक महत्वपूर्ण अनिवार्यता है। कुछ कमियों और कार्यान्वयन संबंधी चुनौतियों के बावजूद, यू.सी.सी. से अपार लाभ मिलने की संभावना है। लैंगिक समानता और सामाजिक सामंजस्य सुनिष्चित करने से लेकर कानूनी प्रक्रियाओं को सरल बनाने और आधुनिकीकरण को बढ़ावा देने तक, यू.सी.सी. उत्पीड़ितों की रक्षा के साथ–साथ राष्ट्रीय एकता और एकजुटता को बढ़ावा देने का वायदा करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

समाचार पत्र–पत्रिकाएं एवं समीक्षा – दैनिक भास्कर, जनसत्ता, नईदुनिया जून जुलाई 2026

1. भारत का संविधान – डी.डी. बसु
2. भारत का संविधान – मध्यप्रदेष हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
3. मानव अधिकार – डॉ. एच.ओ. अग्रवाल भारत सरकार द्वारा पुरुस्कृत सप्तम संस्करण 2021–2023 सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेषन्स
4. भारतीय शासन एवं राजनीति डॉ. पुखराज जैन, डॉ. बी. एल. कड़िया 2006 साहित्य पब्लिकेषन्स – आगरा
5. INDIAN GOVERNMENT AND POLITICS – DR. D.P. AVASTHI 20216 लक्ष्मीनारायण अग्रवाल

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-50-52

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 50-52
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

प्रोफेसर (डॉ.) मंजू रानी
हिंदी विभाग, अदिति महाविद्यालय
(दिल्ली विश्वविद्यालय)

Corresponding Author :

प्रोफेसर (डॉ.) मंजू रानी
हिंदी विभाग, अदिति महाविद्यालय
(दिल्ली विश्वविद्यालय)

भारत और भूटान - बौद्ध धर्म समागम

हिमालय पर्वत की हरी-भरी घाटियों में बसा एक सुंदर देश है 'भूटान'। यह देश हमेशा विश्व के अन्य देशों से अलग ही रहा है। इसका मुख्य कारण अपने देश की सांस्कृतिक विरासत और स्वतंत्रता को सुरक्षित रखना है। अपनी भौगोलिक एकांतता का लाभ उठाकर बाहरी प्रभावों से स्वयं को बचाए रखने में सफल रहा है। 20वीं शताब्दी के अंतिम दशकों में ही विदेशियों को देश में आने की अनुमति मिली और वो भी सीमित संख्या में। आज भी काफी हद तक यहाँ विदेशियों का प्रवेश काफी हद तक नियंत्रित है। राजनीतिक रुप से स्वतंत्र रहने के कारण इस सुंदर देश में सदियों से समृद्ध संस्कृति और विरासत का विकास हुआ है। भूटान के चरित्र को आकार देने वाली सबसे महत्वपूर्ण और प्राचीन संस्कृतियों में से एक भगवान बुद्ध की शिक्षाएँ हैं। इन शिक्षाओं को सबसे पहले भारतीय संत गुरु पद्मसंभव द्वारा भूटान में लाया गया

भूटान कभी भारत या ब्रिटिश शासन का हिस्सा नहीं रहा। वह एक स्वतंत्र राष्ट्र है। यहां की ज्यादा तर जासंख्या गांवों में रहती है और खेती बढ़ी का काम करती है। बौद्ध धर्म और उनके विचार यहां के लोगों का अहम हिस्सा है। भूटान का राष्ट्र खेल ' तीरंदाजी ' है।

भूटान 17वीं शताब्दी के आरंभ तक ऐसे जागीरों के रुप में बँटा हुआ था, जो हमेशा युद्ध करते रहते थे। तिब्बत के एक सैन्य नेता और लामा, जिनका नाम न्यागावांग नामग्याल था, धार्मिक उत्पीड़न के शिकार थे और भागकर यहाँ आए थे। उन्होंने ही इस क्षेत्र को एकीकृत किया। 17वीं शताब्दी के अंत में भूटान द्वारा बौद्ध धर्म अंगीकासर कर लिया गया। यहाँ का आधिकारिक धर्म महायान बौद्ध धर्म या वज्रयान धर्म है। उन्होंने कई किलों, जिन्हें द्ज़ोंग कहा जाता है, का निर्माण किया, जो धार्मिक और प्रशासनिक दोनों केंद्र बने। उन्होंने ही बौद्ध धर्म को भूटान का राज धर्म घोषित किया यहाँ लगभग 75% लोग बौद्ध धर्म को मानते हैं, 23% लोग हिंदू धर्म को मानते हैं तथा 2% लोग अन्य धर्मों को मानने वाले हैं। यहाँ का नागरिक-कानून भी बौद्ध धार्मिक कानून से संचालित है।

यहाँ के जन-जीवन में बौद्ध धर्म की मान्यताएँ दिखाई देती हैं। इस देश में सफेद झंडे का विशेष महत्व है। यहाँ की पहाड़ियों और घरों के ऊपर ये झंडे लगे हुए दिखाई देते हैं। इन झंडों का विशेष महत्व और उद्देश्य यह है संसार में और अपने आस – पास रहने वाले जीवों का कल्याण हो और अपने कुल के देवी – देवता सदैव प्रसन्न रहें।

बौद्ध धर्म : भूटान में बौद्ध संस्कृति की शुरुआत 7वीं शताब्दी से हुई थी, जिसका श्रेय भारत के महान बौद्ध गुरुओं को जाता है। यह संस्कृति मुख्यत: भारत और तिब्बत के रास्ते भूटान पहुंची और वहां के स्थानीय समाज का आधार बन गया।

शुरुआती चरण में बौद्ध धर्म भूटान में 7वी शती में तिब्बत के राजा सोंगत्सेन गाम्पो के माध्यम से हुई। तत्कालीन मान्यताओं के अनुसार वहाँ के पूरे हिमालय क्षेत्र को एक शक्तिशाली दानवी/राक्षसी ने घेरा हुआ था। उस दानवी को वश में करने के लिए राजा सोंगत्सेन गाम्पो ने रातोंरात बौद्ध, 108 बौद्ध स्तूपों का निर्माण करवाया था। इसमें से दो मुख्य मंदिर भूटान में बनाए गए थे - पारो घाटी मे कीचु ल्हाखांग, दूसरा बुमथांग में जाम्बे ल्हाखांग यही से बौद्ध धर्म का जन्म हुआ।

8वीं शताब्दी से भूटान में गुरु पद्मसम्भव का आज तक बहुत प्रभाव है। उनको भूटान में “दूसरे बुद्ध” के रूप में मान्यता प्राप्त है।[1]

इस देश में गुरु पद्मसम्भव को गुरु रिनपोछे के नाम से जाने जाते हैं। पद्मसम्भव वज्रयान/महायान का मानने वाले थे। वज्रयान बौद्ध धर्म महायान बौद्ध धर्म का ही एक रूप है, जो भारत में विकसित हुआ और बाद में पूरे एशिया में फैल गया। यह ज्ञानोदय का मार्ग है। भूटान में इसे आधिकारिक रूप से 'महायान बौद्ध धर्म' अपनाया गया है। यह प्रचिलत है 'महायान' सार्वभौमिक मोक्ष ओर दूसरे को ज्ञान प्राप्ति देने में सहायता करता हे और यह धर्म "गौतम बुद्ध" को एक (प्राप्ति) दिव्य प्राणी मानता है।

गुरु पद्मसम्भव वज्रयान के प्रथम शिक्षक माने जाते हैं। वज्रयान शब्द का व्यापक अर्थ “हीरे का मार्ग” ‘वज्र’ शब्द हिंदू देवता इंद्र द्वारा हथियार के रूप में इस्तेमाल किये जाने वाले कठोर वज्र को संदर्भित करता है। ‘यण ‘का तात्पर्य ज्ञान प्राप्ति के मार्ग या आध्यात्मिक साधन से है वज्रयान बौद्ध धर्म की एक विशिष्ट विशेषता गूढ़ ज्ञान के प्रसार पर जोर देना है। जहाँ दीक्षा समारोहों के माध्यम से शिक्षाएं सीधे गुरु से शिष्य तक पहुँचाई जाती है। यह ज्ञान अविनाशिता और अदम्य शक्ति का प्रतीक ओर पारलौकिक ज्ञान एवं करुणा के मिलन का प्रतीक है ।

बौद्ध धर्म से पूर्व भूटान में बोन (Bon) धर्म प्रचलित था, जिसमें प्रकृति पूजा और तंत्र-मंत्र शामिल थे। लेकिन गुरु पद्मसम्भव ने उस धर्म को नष्ट न करके उसके देवी-देवताओं और। रीति रिवाजों को बौद्ध धर्म में समाहित कर लिया, जिसके कारण भूटान के नागरिकों ने बौद्ध धर्म आसानी से अपना लिया।

गुरु पद्मसम्भव से भारतीय संबंध भारत के west में ओड्डियान (अरुणाचल प्रदेश) मै गुरु पद्मसम्भव का जन्म हुआ और नालंदा (बिहार) मै उनकी शिक्षा हुई।

गुरु पद्मसम्भव का जन्म कमल से हुआ था। इसलिए इनको पद्मसम्भव नाम से जाना जाता है। कमल से उत्पन्न होने के पीछे एक कथा प्रचलित है कि— बुद्ध अमिताभ ने **उर्गन** देश के राजा इन्द्रभूति को अपने पिता के रूप में चुना। वो सामाजिक और धार्मिक दोनों कानून के ज्ञान से युक्त थे। उनका कोई उत्तराधिकारी नहीं था। उन्होंने उत्तराधिकारी प्राप्त करने के लिए अपना सारा खजाना दान कर दिया कुछ भी नहीं बचाया ।

उनकी कहानी सुनकर सर्प रानी को दया आ गयी और उसने अपना वो सबसे कीमती रत्न राजा को दे दिया जो धन पैदा करता था। वापसी के समय उनको एक झील में एक बहुरंगीन कमल के अंदर। लगभग 8 साल का एक अद्भुत बच्चा बैठा दिखा।

राजा ने उस दिव्य बच्चे के साथ बात चीत करके उसको अपना उत्तराधिकारी बनने को कहा जिस पर बच्चा सहमत हो गया। राजा ने अपना कीमती रत्न रगड़कर अपनी इच्छानुसार खजाने को धन से भर दिया और फिर से दान करना आरंभ

कर दिया। गुरु पद्मसम्भव को गुरु रिनपोछे (मूल्यवान गुरु) के नाम से भी जाना जाता है। ये तांत्रिक बौद्ध वज्र-गुरु थे।[2]

गुरु पद्मसम्भव को तिब्बत, नेपाल, भूटान भारत के हिमालय राज्यों और दुनिया भर के देशों में बौद्धों द्वारा व्यापक रूप से पूजा जाता है।[3]

गुरु पद्मसम्भव ने भारत के विभिन्न पवित्र स्थानों में रहने वाले अलग-अलग बौद्ध तांत्रिक संतों से योग तंत्र के क्षेत्रों पर गहन अध्ययन किया। उन्होंने भारतीय बौद्ध गुरुओं और विद्याधरों से साधना शिक्षाओं को प्राप्त करने के पश्चात इन साधनाओं का अभ्यास करने के लिए अपने तिब्बत के मुख्य शिष्यों को तैयार किया। पूर्ववती राज्यों के दौरान का ग्याद को चोंगयाल (राजा) के शिक्षक देवता के रूप में अपनाया गया था। इसका समारोह गंगटोक (सिक्किम) के शाही चैपल में आयोजित किया गया था।

आज सिक्किम के प्रत्यक मठ मैं गुरु जी की मूर्तियां/ छवियाँ मुख्य रूप से स्थापित पाई जाती है।

हिमाचलप्रदेश (मंडी) में भी गुरु पद्मसंभव के चमत्कारिक कार्यों का पवर्णन है। वर्तमान समय में हिमाचल में एक - रिवालसर नामक झील है जो उन्ही के द्वारा निर्मित है। मान्यताओं के अनुसार गुरु जी को तत्कालीन मंडी (हिमाचल) के राजा अर्शधर को जब पता चला कि उनकी बेटी ने गुरु जी से दिक्षा ली है, तो राजा के आदेशों के अनुसार बड़ी मात्रा में सरसों के तेल के साथ चन्दन के ढेर पर जिन्दा जला देने का आदेश दिया गया। किन्तु गुरु जी आग से अप्रभावित थे इसी कारण आग से उनको कोई हानि नहीं हुई यह अग्नि सात दिनों तक जलती रही और गुरु जी ने सरसों के तेल को अपनी दिव्य शक्ति से एक झील मे बदल कर स्वयं उसकी सतह पर कमल की पंखुडियों पर 16 वर्षीय किशोर के रूप में प्रकट हो गए।[4]

राजा इस घटना से इतने आश्चर्यचकित रह गए कि इनके इस चमत्कार से प्रभावित होकर उन्होंने (राजा) बौद्ध धर्म अपना लिया।

चूमी ग्यात्से जलप्रप्रात जिसे 108 झरने के रूप में भी जाना जाता है। ये भारत के अरुणाचल प्रदेश के **तवांग** जिला' में 108 झरनों का संग्रह है। अरुणाचल की स्थानीय मोन पा जनजाति के तिब्बती बौद्ध किवदंतियों के अनुसार गुरु पद्मसम्भव और बोनमा सम्प्रदाय के एक महायाजक के बीच एक पौराणिक प्रदर्शक के उपरांत इस झरने का निर्माण किया गया था। यह महायाजक अरुणाचल प्रदेश सहित आस-पास के क्षेत्रों पर सर्वोच्च शासक बना हुआ था। जल प्रपात तब बना जब गुरु पद्मसंभवने एक, चट्टान पर अपनी माला फेंकी और 108 धाराए निकली थी।[5]

यह जल प्रपात तिब्बी बौद्ध मनोपाओ के लिए पूजनीय और पवित्र है।

आज भी भारत-भूटान के बौद्ध मठों और धार्मिक शिक्षाओं में घनिष्ठ सम्बन्ध है। इन् दोनों देशों के आपसी संबंधों की जड़े प्राचीन काल से ही जुड़ी हुई हैं। भूटान में बौद्ध धर्मी का प्रभाव भारत से ही गया था इसी कारण इन दोनों देशों के लोगों के बीच धार्मिक और सांस्कृतिक आदान-इतिहास बौद्ध धर्म के प्रसार से जुडा हुआ है। बौद्ध धर्म, कला, संगीत ओर परंपराएं दोनों देशों को जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

संदर्भ :

1. डोनी लुईस (2015) तिब्ब्ती बौद्ध धर्म में 'पद्संभव'। सिल्कं जोनाथन ए0एट अल (सम्पा0)। ब्रिल का बौद्ध धर्म विश्वकोश। लीडेन, बोस्टन: हिल। Page .1197-1212, ISBN-9789004299375
2. तिब्बती बौद्ध धर्म की एक सैद्धांतिक और ध्यानात्मक शिक्षाए -ब्रिल, page -67
3. बसवेल और लोपेज़ 2013, page-600. ISBN-9789004151420, सम्पा0-डोनाल्ड एस जूनियर। द प्रिंसटन डिक्शनरी ऑफ बुद्धिज्म। प्रिंसटन एन जे, प्रिन्सटन यूनीवर्सिटी प्रेस- ISBN-978-1-4008-4805-8.
4. One version of the budhiest legend -13 अगस्त 2006 को पुरालेखित अभिगमन तिथि सितम्बर-3-2006
5. Border clash : India's Tourism Push near yangtze Holy Site for Arunachal and Tibet Riled up the chinese.

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-53-57

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 53-57
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. प्रमोद कुमार

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
सरिया कॉलेज, सरिया, गिरीडीह (झारखण्ड)

Corresponding Author :

डॉ. प्रमोद कुमार

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
सरिया कॉलेज, सरिया, गिरीडीह (झारखण्ड)

विश्व पटल पर भारत-भूटान के सांस्कृतिक संबंध

सारांश : वैश्विक पटल पर भारत और भूटान के संबंध केवल दो पड़ोसी देशों के राजनीतिक, आर्थिक अथवा कूटनीतिक संबंध नहीं हैं, बल्कि इनके पीछे एक गहरी सांस्कृतिक और आध्यात्मिक निकटता भी है। हिमालय की भौगोलिक निकटता, बौद्ध धर्म की साझा विरासत, लोकजीवन, परंपराएँ, प्रकृति के प्रति सम्मान, भाषा, शिक्षा, साहित्य तथा जन-जन के बीच आत्मीय संपर्क ने दोनों देशों के संबंधों को मजबूती प्रदान किया है। आठवीं सदी में गुरु पद्मसंभव के भूटान आगमन से भारत और भूटान के सांस्कृतिक संबंधों को एक मजबूत आध्यात्मिक आधार मिला। भारतीय संस्कृति के सामंजस्य और भूटान की परंपरा-संरक्षण की चेतना के बीच अनेक समानताएँ दिखाई देती हैं। भारतीय संस्कृति में 'वसुधैव कुटुंबकम्', 'अतिथि देवो भव' तथा 'सर्वजन कल्याण' की भावना जिस प्रकार दिखाई देती है, उसी प्रकार भूटानी जीवन में करुणा, अहिंसा, प्रकृति-सम्मान, पर्यावरण संरक्षण, सामुदायिकता और संतुलित जीवन-दृष्टि का विशेष स्थान है। भूटान की 'सकल राष्ट्रीय खुशी' की अवधारणा भी जीवन की गुणवत्ता, संस्कृति और पर्यावरण को विकास के साथ जोड़ती है। वर्तमान वैश्विक परिवेश में भारत-भूटान सांस्कृतिक संबंधों का महत्व और बढ़ गया है। शिक्षा, साहित्य, लोककला, बौद्ध अध्ययन, पर्यटन, पर्यावरण संरक्षण तथा डिजिटल माध्यमों के द्वारा इन संबंधों को विश्व पटल पर और भी घनिष्ट किया जा सकता है। प्रस्तुत आलेख में दोनों देशों के सांस्कृतिक संबंधों का पारंपरिक एवं वर्तमान संदर्भों में अध्ययन और विश्लेषण किया गया है।

बीज शब्द: भारत, भूटान, संस्कृति, सांस्कृतिक संबंध, बौद्ध धर्म, सांस्कृतिक विरासत, आध्यात्मिक, लोकजीवन, परंपरा, प्रकृति, साहित्य, शिक्षा, हिमालय, पर्यावरण।

मूल आलेख : भारत और भूटान के संबंधों की चर्चा करते समय सामान्यतः राजनीतिक, आर्थिक और कूटनीतिक पक्षों पर अधिक ध्यान दिया जाता है, किंतु दोनों देशों के संबंधों की वास्तविक आत्मीयता को

समझने के लिए उनकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का अध्ययन आवश्यक है। भारत और भूटान भौगोलिक रूप से हिमालय के निकटवर्ती क्षेत्र में स्थित हैं और ऐतिहासिक रूप से दोनों के बीच संपर्क के अनेक माध्यम रहे हैं। धर्म, दर्शन, लोकजीवन, परंपरा और प्रकृति के प्रति दृष्टिकोण ने इन संबंधों को केवल औपचारिक नहीं रहने दिया, बल्कि उन्हें लोक स्तर पर सुदृढ़ किया है।

इस संदर्भ में देखें तो भारतीय संस्कृति की प्राचीनता और समरसता का विश्वव्यापी प्रभाव रहा है। यहाँ की संस्कृति का मूल स्वभाव ही समन्वयकारी रहा है। भारत में विभिन्न धर्मों, भाषाओं, जातीय समूहों और क्षेत्रों की अपनी-अपनी परंपराएँ हैं, फिर भी उनके बीच एक सांस्कृतिक संवाद बना रहा है। सांस्कृतिक विविधता अर्थात् विभिन्न क्षेत्रों की अलग-अलग परंपराओं के बावजूद भारतीय समाज एकता के सूत्र से बंधा है। इसी भाव से भारत विश्व को अपना परिवार मानता है। राजकिरण रै जी के अनुसार, "भारतीय संस्कृति से उत्सर्जित 'वसुधैव कुटुंबकम' से हमने समस्त विश्व को जहाँ नजदीक लाकर एक बना दिया, वहीं 'अतिथि देवो भवः' की भावना से परायों को भी अपना बना लिया।"[1] इस तरह के भारतीय दृष्टिकोण भारत-भूटान संबंधों को समझने में भी उपयोगी है, क्योंकि दोनों देशों की सांस्कृतिक पहचान अलग होते हुए भी उनमें अनेक साझा आधार दिखाई देते हैं। चूँकि भारत और भूटान के सांस्कृतिक संबंधों का इतिहास बहुत पुराना है। इन संबंधों का सबसे मजबूत आधार बौद्ध धर्म है। आठवीं शताब्दी में गुरु पद्मसंभव, जिन्हें भूटान में गुरु रिंपोचे के नाम से जाना जाता है। उनके आगमन ने भूटान के धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन को गहराई से प्रभावित किया। डॉ.रमेश पोखरियाल 'निशंक' ने 'खुशियों का देश भूटान' नामक पुस्तक में लिखा है — "आठवीं सदी में गुरु रिंपोचे ने, जिन्हें हम 'पदमसंभव' के नाम से जानते हैं, भूटान में बौद्ध धर्म की पताका को फहराया था।"[2]

भारत और भूटान की इस साझा धार्मिक विरासत को केवल अतीत की स्मृति के रूप में नहीं देखा जा सकता। बोधगया, सारनाथ, राजगीर, नालंदा, सांची, कुशीनगर जैसे भारतीय बौद्ध केंद्र भूटानी श्रद्धालुओं और विद्यार्थियों के लिए आज भी महत्वपूर्ण हैं। इसी प्रकार भूटान के मठ, स्तूप और धार्मिक स्थल भारतीय बौद्ध परंपरा के साथ उसके गहरे संबंधों को अभिव्यक्त करते हैं। इस दृष्टि से भारत और भूटान के सांस्कृतिक संबंधों में बौद्ध धर्म एक ऐसा सेतु है, जो इतिहास को वर्तमान से जोड़ता है। डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' ने भारत और भूटान के संबंधों को राजनीतिक व्यवस्था से ऊपर उठकर सांस्कृतिक और आध्यात्मिक संबंध के रूप में देखा है। वे लिखते हैं — "सदियों पुराना हमारा संबंध किसी सरकार, राजतंत्र या किसी राजनैतिक एवं सामाजिक दल पर निर्भर न होकर विशुद्ध आत्मिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, परंपराओं एवं रीति-रिवाजों का संबंध है, जो आदिकाल से चला आ रहा है और युग-युगांतर तक चलता रहेगा।"[3] यह कथन भारत-भूटान संबंधों की प्रकृति को स्पष्ट करता है।

निःसंदेह भारत की सांस्कृतिक परंपरा में बौद्ध धर्म का महत्वपूर्ण स्थान है। भगवान बुद्ध ने शांति, करुणा, अहिंसा, संयम, मानसिक शुद्धि और मध्यम मार्ग का संदेश दिया। बौद्ध दर्शन जब भारत से हिमालय के क्षेत्रों की ओर पहुँचा, तब उसने वहाँ के धार्मिक और सामाजिक जीवन को प्रभावित किया। वहीं भूटान में भी बौद्ध धर्म केवल धार्मिक आस्था तक सीमित नहीं है, बल्कि उसका प्रभाव शासन, राजनीतिक व्यवस्था, अर्थव्यवस्था, कला, संस्कृति, स्थापत्य, शिक्षा प्रणाली, पर्यावरण, सामाजिक जीवन, त्योहारों और दैनिक व्यवहार में भी दिखाई देता है। भारत और भूटान की साझा धार्मिक और सांस्कृतिक विरासत को सुदृढ़ करने के लिए 'सर्वे भवंतु सुखिनः सर्वे संतु निरामयाः' अर्थात् विश्व कल्याण की भावना तथा 'वसुधैव कुटुंबकम्' अर्थात् पूरे विश्व को एक परिवार के रूप में देखने की भावना जैसे भारतीय मंत्रों की उपयोगिता स्पष्ट है। बुद्ध के अहिंसा दर्शन तथा प्रकृति संरक्षण की भावना ने तो इस साझा सांस्कृतिक को और मजबूती प्रदान किया है। भूटान का सामाजिक जीवन भी सामुदायिकता और पारस्परिक सहयोग की भावना से प्रभावित रहा है। इस परिप्रेक्ष्य में मनुष्य केवल एक व्यक्ति के रूप में नहीं, बल्कि परिवार, समाज और व्यापक प्रकृति से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। परिवार भारतीय संस्कृति की एक महत्वपूर्ण इकाई रहा है। परिवार के माध्यम से संस्कार, भाषा, लोकाचार और सामाजिक व्यवहार एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचते हैं। भूटान में भी

विवाह, पारंपरिक वेशभूषा, धार्मिक अनुष्ठान और पारिवारिक संबंध सांस्कृतिक जीवन के हिस्सा हैं। वहाँ विवाह समारोहों में धार्मिक अनुष्ठान तथा पारंपरिक वस्त्रों का प्रयोग किया जाता है। बदलते समय में परिवार की संरचना और जीवनशैली में परिवर्तन अवश्य आया है, लेकिन संस्कृति को पीढ़ियों तक पहुँचाने में परिवार की भूमिका अभी भी महत्वपूर्ण है। स्पष्ट है कि आधुनिकता के बीच भी पारंपरिक संस्कार सामाजिक जीवन में जीवंत हैं।

इस परंपरा को और जीवंत बनाए रखने में 'लोकजीवन' एक महत्वपूर्ण कड़ी है। किसी भी देश की संस्कृति को समझने के लिए उसके लोकजीवन को समझना आवश्यक है। संस्कृति केवल धार्मिक ग्रंथों, स्मारकों और कला-कृतियों में सुरक्षित नहीं रहती, बल्कि सामान्य मनुष्य के दैनिक जीवन में भी दिखाई देती है। जन्म, विवाह, त्योहार, लोकगीत, लोककथाएँ, वेशभूषा, खान-पान, लोकविश्वास, ग्रामीण जीवन और प्रकृति के साथ मनुष्य का संबंध लोक-संस्कृति के प्रमुख आधार हैं। वासुदेवशरण अग्रवाल का कथन है — "लोक हमारे जीवन का महासमुद्र है, इसमें भूत, भविष्य और वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है।"[4] भारतीय संस्कृति में लोकजीवन को जीवित आधारभूमि के रूप में देखा गया है। क्योंकि संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाने का यह एक सहज माध्यम है। एक प्रकार से सामाजिक आचार-विचार व रीति-रिवाज से ही संस्कृति परिलक्षित होती है। टी. एस. इलियट के अनुसार, "संस्कृति शब्द से मेरा तात्पर्य एक स्थान में रहने वाले विशेष व्यक्तियों के समुदाय के रहने के ढंग से है।"[5] इसीलिए समुदाय या परिवार में बच्चा जिस भाषा का श्रवण करता है, जिन त्योहारों में भाग लेता है, जिन रीति-रिवाजों को देखता है और जिन लोकगीतों को सुनता है, वे धीरे-धीरे उसकी सांस्कृतिक चेतना के आधार बन जाते हैं। स्पष्ट है कि लोकजीवन किसी संस्कृति की बाहरी पहचान मात्र नहीं, बल्कि उसकी आंतरिक निरंतरता का आधार है। कहा भी गया है — "किसी भी राष्ट्र की संस्कृति उसकी सामुदायिक विरासत है।"[6]

चूँकि भारत के अनेक पर्वतीय क्षेत्रों और भूटान के ग्रामीण जीवन में कुछ समानताएँ दिखाई देती हैं। भूटान में आज भी बड़ी संख्या में लोग पर्वतीय गाँवों और कृषि से जुड़े हुए हैं। चावल, मक्का, गेहूँ और जौ जैसी फसलों की खेती तथा स्थानीय खान-पान वहाँ के ग्रामीण जीवन का अहम हिस्सा है। 'खुशियों का देश भूटान' में लेखक ने लिखा है — "भूटान में अभी भी अपने पारंपरिक रीति-रिवाजों, सांस्कृतिक और सामाजिक मूल्यों तथा परंपराओं को सहेज कर रखा है।"[7] भारत के हिमालयी क्षेत्रों में भी कृषि, पशुपालन, पर्वतीय संसाधन और सामुदायिक जीवन संस्कृति के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस दृष्टिकोण से लोकजीवन दोनों देशों के बीच सांस्कृतिक संवाद का एक स्वाभाविक और सशक्त माध्यम बन सकता है।

इसी क्रम में लोकगीत और लोकनृत्य भी किसी समाज की सामूहिक चेतना और सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित रखने के महत्वपूर्ण माध्यम हैं। भारतीय लोकजीवन में विवाह गीत, सोहर, ऋतुगीत और विभिन्न पर्वों से जुड़े गीत पीढ़ियों से चले आ रहे हैं। लोकगीतों व लोकनृत्य में जनसामान्य के सुख-दुःख, श्रम, प्रेम, प्रकृति और सामाजिक संबंधों की अभिव्यक्ति मिलती है। भूटान में भी लोकनृत्य और पारंपरिक सांस्कृतिक प्रस्तुतियों का विशेष महत्व है। वहाँ के पारंपरिक नृत्य, धार्मिक उत्सव और सामुदायिक आयोजन सांस्कृतिक जीवन को जीवंत बनाता है। वहाँ की पारंपरिक वेशभूषा और लोकनृत्य सांस्कृतिक पहचान का अहम हिस्सा हैं। देखा जाय तो भारत और भूटान के बीच लोककला और लोकनृत्य के आदान-प्रदान से दोनों देशों की जनता एक-दूसरे की संस्कृति को अधिक सहजता से समझ सकती है।

इसी प्रकार भारत और भूटान के सांस्कृतिक संबंधों का एक महत्वपूर्ण पक्ष प्रकृति के प्रति सम्मान व प्रेम भाव है। भारतीय लोकजीवन में प्रकृति केवल संसाधन नहीं, बल्कि जीवन का सहचर है। पेड़-पौधों, नदियों, पर्वतों, पशु-पक्षियों, ऋतुओं आदि के साथ जुड़े अनेक लोकविश्वास भारतीय सांस्कृतिक जीवन के हिस्सा हैं। भारतीय परंपरा और संस्कृति में किसान के लिए मिट्टी, वर्षा और फसल तथा पर्वतीय समाज के लिए जल, जंगल और पहाड़ को जीवन का अभिन्न हिस्सा माना जाता है। प्रकृति के प्रति भारतीय दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए डॉ. सरिता लिखती हैं — "भारतीय

संस्कृति मानव और प्रकृति के बीच एक अटूट रिश्ता कायम करती है, क्योंकि यहाँ प्रकृति के प्रत्येक अंग को देवता तुल्य मानकर उसकी पूजा अर्चना की जाती है।"[8] इसी दृष्टिकोण से भारतीय और भूटानी संस्कृति के बीच समानता दिखाई देती है। भूटान में प्रकृति और पर्यावरण के प्रति विशेष संवेदनशीलता दिखाई देती है। 'खुशियों का देश भूटान' में लेखक ने कहा है— "यहाँ के लोग पर्यावरण और प्रकृति का सम्मान करना अपनी नैतिकता समझते हैं। इसी के अनुरुप आचरण करते हुए प्रकृति के साथ समन्वय स्थापित करके उन्होंने अपने पर्यावरण को विशुद्ध रुप में प्राचीन स्वरुप में ही संरक्षित रखा है।"[9] स्पष्ट है कि वहाँ के लोग प्रकृति को जीवन के स्रोत के रूप में देखते हैं और पर्यावरण के साथ समन्वय स्थापित करने पर बल देते हैं।

भूटान को विश्व पटल पर विशेष पहचान दिलाने वाली अवधारणाओं में 'सकल राष्ट्रीय खुशी' प्रमुख है। इसका मूल विचार यह है कि किसी देश की प्रगति का आकलन केवल आर्थिक उत्पादन के आधार पर नहीं किया जाना चाहिए। व्यक्ति और समाज के जीवन की गुणवत्ता, संस्कृति, पर्यावरण, सामाजिक विकास तथा सुशासन को भी विकास की प्रक्रिया में स्थान मिलना चाहिए। उल्लेखनीय है कि भूटान ने सकल घरेलू उत्पाद के स्थान पर सकल राष्ट्रीय खुशी को विकास-दृष्टि से जोड़ने का प्रयास किया। भूटान की इस अवधारणा का भारतीय सांस्कृतिक चिंतन से संवाद स्थापित किया जा सकता है। क्योंकि भारतीय परंपरा में भी जीवन को केवल भौतिक उपलब्धियों के आधार पर देखने के बजाय मानसिक संतुलन, सामाजिक सहयोग, संतोष और सामूहिक कल्याण पर जोर दिया गया है। इसलिए दोनों देशों के बीच सांस्कृतिक विमर्श के इन विषयों पर नए सिरे से विचार किया जा सकता है।

इसके साथ-साथ भारत और भूटान के सांस्कृतिक संबंधों को सुदृढ़ बनाने में भाषा, साहित्य और शिक्षा की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। भाषा समाज की स्मृतियों, अनुभवों और सांस्कृतिक चेतना को सुरक्षित रखने का माध्यम है, जबकि साहित्य दोनों देशों की लोकपरंपराओं, सांस्कृतिक अनुभवों और विचारों को एक-दूसरे तक पहुँचाने का प्रभावी साधन बन सकता है। भूटान में हिंदी की समझ रखने वाला एक वर्ग रहा है, जिससे दोनों देशों के बीच साहित्यिक और सांस्कृतिक आदान-प्रदान की संभावनाएँ बढ़ती हैं। डॉ. निशंक जोर देकर कहते हैं कि, "दोनों देशों के मध्य अधिक सांस्कृतिक, साहित्यिक आदान-प्रदान की आवश्यकता है।"[10] इसी प्रकार शिक्षा दोनों देशों के सांस्कृतिक संपर्क को स्थायी आधार प्रदान करती है। भारत में अध्ययन करने वाले भूटानी विद्यार्थी दोनों देशों के बीच सांस्कृतिक सेतु की भूमिका निभा सकते हैं। भारतीय शिक्षा-दृष्टि में ज्ञान के साथ संस्कार, दायित्व और जीवन-दृष्टि को भी महत्व दिया गया है, जो भारत-भूटान के शैक्षिक संवाद को व्यापक आधार प्रदान कर सकता है।

यद्यपि आधुनिकता और वैश्वीकरण के प्रभाव से जीवनशैली में तेजी से परिवर्तन हो रहा है, फिर भी भारत और भूटान अपनी पारंपरिक सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखने का प्रयास कर रहे हैं। भाषा, लोककला, खान-पान, वेशभूषा, वास्तुकला, धार्मिक स्थल और लोकनृत्य दोनों देशों की सांस्कृतिक विरासत के महत्वपूर्ण अंग हैं। परंपरा पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होने वाली सामूहिक विरासत है, जिसमें समय के साथ परिवर्तन भी आते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि आधुनिकता को स्वीकार करते हुए संस्कृति की मूल पहचान को सुरक्षित रखा जाए। डिजिटल माध्यम इस दिशा में प्रभावी भूमिका निभा सकते हैं। सोशल मीडिया, डिजिटल संग्रहालय, ऑनलाइन अभिलेख और डिजिटल प्रदर्शनियों के माध्यम से लोककला और सांस्कृतिक विरासत को व्यापक स्तर पर पहुँचाया जा सकता है।

फलतः विश्व पटल पर सांस्कृतिक संबंधों को पर्यावरणीय संदर्भ में देखें तो आज जब पूरी दुनिया जलवायु परिवर्तन, जल संकट, वन संरक्षण और जैव विविधता जैसे प्रश्नों से जूझ रही है, तब हिमालयी देशों की प्रकृति-केंद्रित जीवन-दृष्टि का अध्ययन विशेष रुप से प्रासंगिक है।

इसी क्रम में भारत-भूटान संबंधों की नई संभावनाओं पर विचार करना भी आवश्यक है। अच्छे परिणाम के लिए दोनों देशों के सांस्कृतिक संबंधों को विश्व स्तर पर और प्रभावी बनाने के लिए संयुक्त सांस्कृतिक महोत्सव, साहित्यिक सम्मेलन, बौद्ध अध्ययन, लोककला प्रदर्शनियाँ, विद्यार्थी विनिमय, शोध आदि में बढ़ावा दिया जा सकता

है। दोनों देशों के बौद्ध तीर्थस्थलों को जोड़कर सांस्कृतिक पर्यटन को भी विकसित किया जा सकता है। हिमालय दोनों देशों की प्रकृति, लोकजीवन और आध्यात्मिक परंपरा का साझा आधार है; इसलिए पर्यावरण संरक्षण और पर्वतीय संस्कृति के क्षेत्र में भी सहयोग की व्यापक संभावनाएँ हैं। भविष्य में भारत-भूटान अध्ययन केंद्र, संयुक्त शोध परियोजनाएँ, अनुवाद कार्य और डिजिटल सांस्कृतिक अभिलेख विकसित किए जा सकते हैं। इससे दोनों देशों के सांस्कृतिक संबंध सरकारी स्तर से आगे बढ़कर शैक्षिक, साहित्यिक, सामाजिक और आम लोगों के बीच और अधिक मजबूत होंगे।

निष्कर्ष : समग्रतः भारत और भूटान के सांस्कृतिक संबंधों की सबसे बड़ी विशेषता उनकी आत्मीयता और ऐतिहासिक निरंतरता है। बौद्ध धर्म ने दोनों देशों को आध्यात्मिक रूप से जोड़ा है, जबकि लोकजीवन, प्रकृति, परंपरा, परिवार, साहित्य और शिक्षा ने इस संबंध को सामाजिक रूप से मजबूती प्रदान किया। गुरु पद्मसंभव से प्रारंभ हुई सांस्कृतिक निकटता आज भी बौद्ध तीर्थों, धार्मिक संस्थानों, शैक्षिक संपर्कों और सांस्कृतिक आदान-प्रदान के रूप में दिखाई देती है।

भारत की सांस्कृतिक विविधता और भूटान की परंपरा-संरक्षण की चेतना दोनों देशों के बीच संवाद का मजबूत आधार है। भारतीय संस्कृति का 'वसुधैव कुटुंबकम्' और भूटान की सामुदायिक तथा प्रकृति-केंद्रित जीवन-दृष्टि व्यापक मानवीय संदर्भ में एक-दूसरे से संवाद करती दिखाई देती हैं। इसलिए आज आवश्यकता इस बात की है कि भारत और भूटान अपने सांस्कृतिक संबंधों को केवल ऐतिहासिक विरासत के रूप में न देखें, बल्कि उन्हें वर्तमान और भविष्य की आवश्यकताओं से जोड़ें। साहित्य, शिक्षा, लोककला, बौद्ध अध्ययन, पर्यटन, पर्यावरण और डिजिटल माध्यम इसके प्रभावी साधन हो सकते हैं। दोनों देशों के इस समन्वयात्मक दृष्टिकोण से इनके पारस्परिक संबंध और मजबूत हो सकते हैं।

अंततः कहा जा सकता है कि भारत और भूटान की सांस्कृतिक निकटता हिमालय की तरह ही गहरी और व्यापक है। यह संबंध केवल दो देशों की सीमाओं के भीतर सीमित नहीं है, बल्कि इसमें विश्व को सह-अस्तित्व, सांस्कृतिक संवाद, प्रकृति-सम्मान और आत्मीय मानवीय जुड़ाव का संदेश देने की क्षमता है। इसी दृष्टि से भारत-भूटान के सांस्कृतिक संबंध को विश्व पटल पर एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक सेतु के रूप में देखना उचित होगा।

संदर्भ सूची :

1. रै जी, राजकिरण. भारतीय संस्कृति एवं परंपरा (विशेषांक). मुंबई : यूनियन सृजन, अप्रैल-जून, 2019, पृ. 3.
2. पोखरियाल 'निशंक', डॉ. रमेश. खुशियों का देश भूटान. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2019, पृ. 8.
3. वही, पृ. 9.
4. जोशी, मृदुल. उत्तराखंड का लोक साहित्य. हल्द्वानी, नैनीताल : उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, 2015, पृ. 04.
5. कुमार, प्रमोद (सं). विश्व पटल पर भारतीय परम्परा, संस्कृति और शिक्षा. दिल्ली : साहित्य संचय, प्रथम संस्करण, 2025, पृ. 14.
6. कुशवाहा, ज्योति (सं). भारतीय संस्कृति में लोक जीवन. दिल्ली : साहित्य संचय, प्रथम संस्करण, 2020, पृ. 43.
7. पोखरियाल 'निशंक', डॉ. रमेश. खुशियों का देश भूटान. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2019, पृ. 41.
8. शर्मा, डॉ. सरिता एवं कुमार संदीप, वैश्विक पर्यावरण संतुलन में प्राचीन भारतीय संस्कृति का योगदान, Review of Research, Vol. 8, Issue 7, अप्रैल 2019, पृ. 03.
9. पोखरियाल 'निशंक', डॉ. रमेश. खुशियों का देश भूटान. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2019, पृ. 42.
10. वही, पृ. 8.

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-357-363

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 58-64
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. मीरा देवी

असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, एनसीवेब,
दिल्ली यूनिवर्सिटी

Corresponding Author :

डॉ. मीरा देवी

असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, एनसीवेब,
दिल्ली यूनिवर्सिटी

साहित्य और समाज का अंत:संबंध

मनुष्य वाणी, कर्म और चेतना से आदिम सर्जक रहा है। उसने चाहे शैल-चित्र रचे हों या लोक-जीवन के कला-रूपंकर। मनुष्य ने अपनी प्राकृतिक प्रज्ञा का कला-मानस में विकास किया और सृष्टि के बीच रहकर अपने-आप को अन्य जीवन-जन्तुओं से भिन्न कर लिया वैसे तो पशु-पक्षियों के पास भी एक प्राकृतिक सृजन-प्रणाली होती है इसी वजह से मधुमक्खी सारी दुनिया में एक जैसा छत्ता बनाती है और बयां का घोंसला सदियों के बाद भी अपने रूप और आकृति में बदला नहीं। जबकि मनुष्य अपने प्राकृतिक सर्जन बोध की जड़ता को खंडित करने में सक्षम है आज गुलाम से गुलाम मनुष्य भी सृजन में, कला में, विचार में और अपनी चेतना में मुक्त रहता है तो केवल प्रखर मेधा की वजह से।

मानव प्रकृति का एक अनिवार्य तथा अन्तर्निहित गुण है - 'सामाजिकता'। समाज से ही प्राप्त हो सकती है और समाज का अस्तित्व सामाजिक व्यक्तियों के बिना नहीं हो सकता वहीं सामाजिक व्यक्ति की उत्पत्ति भी समाज के बिना नहीं हो सकती। इस प्रकार से दोनों का अन्योन्याश्रय संबंध है और एक-दूसरे के पूरक हैं। साहित्यकार अपने साहित्य में मानव की भावनाओं, अनुभूतियों एवं विचारों को लिपिबद्ध करता है 'साहित्य में समाज के हर पहलू पर विवेचन एवं चिंतन किया जाता है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के अनुसार - "साहित्य में उन सभी बातों का जीवन्त विवरण होता है, जिसे मनुष्य ने देखा है, अनुभव किया है, सोचा है और समझा है।"[1]

साहित्य समाज का जीवंत वाहक है। साहित्य ही किसी देश के समूचे इतिहास को साहित्य की विभिन्न विधाओं के रूप में सुरक्षित रखता है। यह उस समाज की सामाजिक चेतना. राजनीतिक विचारधारा तथा समस्त संस्कृति का इतिहास होता है। साहित्य मानव मस्तिष्क का आहार है। जिस प्रकार से मानव के संतुलित विकास के लिए संतुलित आहार की आवश्यकता होती है तीक उसी प्रकार मानव के मस्तिष्क के

विकास के लिए सत्साहित्य की आवश्यकता होती है।

किसी भी देश, जाति आदि का जब विश्लेषण किया जाता है तो युगीन परिवेश को जानने की आवश्यकता होती है और इस आवश्यकता की पूर्ति साहित्य सहयोग से ही सम्भव होती हैं हिंदी साहित्य के विषय में विचार करें तो यह वाङ्मय साहित्य से लेकर आधुनिक साहित्य तक पल-पल अपने कैंचल को छोडकर आगे बढ़ता नजर आता है क्योंकि समाज की स्वाभाविक प्रकृति है कि वह सदैव और निरंतर गतिशील रहता है, वह कभी ठहरता नहीं है जैसे कि यह पृथ्वी नहीं ठहरती. प्रकृति नहीं ठहरती और साहित्यकार समाज में रहते हुए आसपास के वातावरण से प्रभावित होता हुआ रचना करता है। इसीलिए वैदिक साहित्य में जहाँ समाज में स्त्री-पुरुष को समानता का अधिकार दिया गया था वो उत्तर वैदिक काल तक आते-आते धूमिल होता नजर आया। काम का अर्थ बदल गया ,वर्णाश्रम व्यवस्था ने समाज में अपनी जड़ें मजबूत कर लीं। आदिकाल तक आते-आते चारण कवियों द्वारा रचित 'रसो' ग्रंथों में 'वीरत्व' और 'प्रेम' की ही अभिव्यंजना प्रधान हो गयी। भक्तिकाल में लीलामय भगवान की आनंद मूर्ति और सामाजिक उथल-पुथल का वर्णन संतकाव्य में देखने को मिलता है। वहीं रीतिकालीन साहित्य में सामन्तीय जीवन की रंगीनियों में ही पोषित एवं पल्लवित होता दिखता है।

"चूंकि साहित्य और समाज के बीच संबंध दो परस्पर संबद्ध विकासशील प्रक्रियाओं का आपसी सम्बद्ध है। इसीलिए एक साहित्यिक कृति का समाज में संबंध भी बदलता रहता है।"[2] अतः हम कह सकते हैं कि "साहित्य समाज का दर्पण है"[3] एक ऐसा दर्पण जो समाज की यथार्थ स्थिति का वर्णन अपने साहित्य में करता है। फर चाहे वो गद्य विद्या हो या पद्य विधा। मुंशी प्रेमचंद के अनुसार - "मेरे विचार से साहित्य जीवन की आलोचना है। चाहे वह निबंध के रूप में हो, चाहे कहानियों के या काव्य के, उसे हमारे जीवन की आलोचना और व्याख्या कहना चाहिए।"[4] मानव जीवन की व्याख्या एवं आलोचना ही साहित्य का निर्माण करते हैं।

साहित्य के विषय में भारतीय विद्वानों के अतिरिक्त पाश्चात्य विचारकों ने भी अपने मत दिए हैं तथा साहित्य को परिभाषित करने की चेष्टा की है।

विलियम वड्र्सवर्थ के अनुसार "प्रबल भावों के सहज उद्रेक को कविता कहते हैं।""[5]

मैथ्यू आर्नल्ड के अनुसार-"संसार में जो कुछ अच्छा सोचा और कहा गया है, वही साहित्य है।"[6]

समाज का पूर्ण रूप साहित्यकार के माध्यम से साहित्य में प्रतिबिम्बित होता है इसलिए साहित्य को समाज का प्रतिबिम्ब माना गया है और अनादि काल से साहित्य अपने इसी धर्म का पूर्ण निर्वाह करता चला आ रहा है। साहित्य समाज के विभिन्न रूपों का चित्रण कर एक तरु तो हमारे सामने समाज का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है और अपनी प्रखर मेधा और स्वस्थ कल्पना द्वारा समाज के विभिन्न पहलुओं का विवेचन करता हुआ यही भी बताता है कि मानव समाज की सा मार्ग उपादेय है। इस प्रकार देश के समूचे इतिहास को साहित्य की विभिन्न विधाओं के रूप में सुरक्षित रखता है और बदलते सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक पहलुओं का लिखित गवाह बन जाता है।

व्यक्ति जब अपने आप को सामाजिक जीवन में ढालने लगा तो नगरीय सभ्यता का जन्म हुआ जो हड़प्पा व मोहनजोदड़ों से प्राप्त वस्तुओं से सिद्ध होता है वहीं अब जो साहित्य रेखा चित्रों में था वो शब्दों में ढलने लगा। वैदिक साहित्य का जन्म हुआ जो विश्व का सबसे प्राचीन किंतु प्रौढ़ साहित्य है। वैदिक साहित्य में; ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद संहिता के नाम से वेदों की रचना की जो आज भी समाज में उपयोगी है।

वैदिक साहित्य में विद्यमान समाज व्यक्ति और समूह के बीच के संबंधों एवं उनके भाव संबंधों की स्थिति को स्पष्ट करता है। वैदिक साहित्य में समाज में व्यक्ति एक स्वतंत्र ईकाई होते हुए भी परिवार, समाज, विश्व समाज से जुड़ा रहता है और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की स्थापना करता है। ऋग्वेद में एक मंत्र मनुष्यों को आपस में मिलजुल कर रहने

का निर्देश देता है और स्पष्ट करता है कि व्यक्ति को अपने अधिकार के हिस्से को ही लेना चाहिए, दूसरे के भाग को हस्तगत नहीं करना चाहिए। वेदकालीन साहित्याध्ययन से पता चलता है कि वैदिक संस्कृति के चार स्तंभ प्रमुख हैं : पुनर्जन्म में विश्वास, पाप-पुण्य में अंतर, ऋणमुक्त होने में विश्वास और चार पुरुषार्थों में विश्वास।

जीवन में शिक्षा-व्यवस्था भी वैदिक साहित्य में देखने को मिलती है वहीं गार्गी, मैत्रेयी पुष्पा जैसी महिलाओं का विद्वानों की सभा में उपस्थिति का वर्णन महिलाओं की स्वतंत्र जीवन-शैली, निर्णय, विचार-विमर्श शास्त्रार्थ में उनके समान अधिकार वाली स्थिति का संकेत देता है। वेदों का अध्ययन, उपनयन संस्कार, अध्यात्म का अध्ययन, धार्मिक अनुष्ठान आदि में भी वैदिक काल में स्त्री को अनुमति थी।

वेदांत के मानववाद को सामान्य जन के जीवन में उतारने वाला साहित्य रामायण, महाभारत आदि में देखने को मिलता है। रामायण में जहाँ आदर्श पुत्र, राजा, पति इत्यादि की कल्पना कर समाज को आदर्शरूप में प्रस्तुत किया है वहीं महाभारत में विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक पहलुओं की झलक दिखाते हुए असत्य पर सत्य की जीत को वर्णित करता है। मनु जिसे प्राचीन समाज का विधिवेता या नीतिशास्त्रज्ञ माना जाता है वे समाज के विभिन्न पहलुओं का नियमानुसार वर्णन मनुस्मृति में किया है। उसी प्रकार 'चाणक्य नीति दर्पण' में समाज के विभिन्न वर्गों का वर्णन करते हुए उत्तम पुरुषार्थ सम्बन्धी विचार प्रस्तुत करते हुए कहा गया है कि "मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चारों में से किसी एक की प्राप्ति के लिए, यदि प्रयत्न न किया और इस प्रकार के कार्य न किए कि जिनसे ऐसा फल मिले तो हर मानव जीवन बेकार है, उस मनुष्य को धरती पर आना ही बोर है ऐसे मनुष्य स्वयं पर बोझ होते हुए इस धरती पर भी बोझ बने रहते हैं।"[7]

राजनीतिक उथल-पुथल ने शिथिल होती सत्ता तथा आक्रामक होते बाहरी आक्रमणों का घमासान हिंदी साहित्य के आदिकाल में देखने को मिलता है । इस काल को आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'वीरगाथा काल' में कहा है, जो साहित्य पर आधारित है जिसका अभिप्राय है कि इस युग के साहित्य में वीरों की गाथाएं मिलती हैं। प्रायः सभी रासो ग्रंथ युद्धों के चित्रण से भरे पडे हैं, बीसलदेव रासो का निम्नांकित उदाहरण नारी के वाणी संबंधी असंयम का चित्रण कवि करता है

"दव का दाधा हो कूपल लेइ
जीभ का दाधा न पाल्हवइ॥[15]

इस प्रकार आदिकालीन साहित्य का यह परिदृश्य जितना सच्चा है उतना ही ऐतिहासिक भी सिद्धों-नाथों की ठेठ अद्वैत-परम्परा के बाद हिन्दी साहित्य में भक्ति धारा का विकास हुआ जो हिंदी साहित्य का स्वर्ण युग माना जाता है। सामंतवाद के विघटन और जनसंस्कृति के उत्थान की प्रक्रिया से उपजे भक्ति काव्य में सामंतवाद विरोधी स्वर का मुखर होना स्वाभाविक है। संत और भक्त कवि लोकमंगल की भावना से प्रेरित और लोकमंगल की साधना के कवि हैं। भक्त कवियों ने स्पष्ट रूप से सामंती व्यवस्था और राजसत्ता का विरोध करते हुए घोषणा की थी कि 'संतन को कहाँ सीकरी सो काम।'

संत काव्य में पुरोहितवाद, धार्मिक आडम्बर, जातिभेद, सामाजिक विषमता उच्च-नीच के भेदभाव का जो खण्डन एवं विरोध है वह सामंती समाज-व्यवस्था और उसकी विचारधारा के विरुद्ध विद्रोह की अभिव्यक्ति है वहीं वर्णाश्रम व्यवस्था का विरोध भी संत काव्य में मुख्यतः देखने को मिलता है -

"जे तू बांभन बांभनी जाया, तो आन बाट काहे न आया।
जे तू तुरक तुरकनी जाया, तो भीतरि खतना क्यूं न कराया।।"[8]

संत काव्यधारा के प्रमुख कबीर की वाणी हिंदू-मुसलमान की बनी बनाई पहचानों के बीच राजनैतिक एकता की वकालत नहीं करती। ऐसी पहचान जिसे बुनियादी इंसानी पहचान पर भारी पड़ने लगती है, कबीर की वाणी उसी

इंसानी पहचान को रेखांकित करती है।

भक्तिकालीन साहित्य में केवल प्रखर वाणी वाले कबीर की ही ललकार सुनाई नहीं देती अपितु जायसी जैसे प्रेम मार्गी कवि के सौम्य सुर भी सुनाई देते हैं। लोक प्रचलित प्रेम-कथाओं को आधार बनाकर काव्य रचना करने वाले स्फूी कवियों की कविताओं में कथा के पुराने ढांचे के अंदर अपने समय की जनसंस्कृति के विभिन्न रूपों की अभिव्यंजना भी हुई है। जायसी के 'पद्मावत' में प्रेम की अनुभूति के साथ-साथ शरीर की नश्वरता का वर्णन भी जायसी की रचना में बार-बार देखते हैं-

"छार उठाई तीन एक मूठी।
दीन्ह उड़ाइ, पिरथिमी झूठी ॥[9].

निर्गुण संतो की अपेक्षा सगुण भक्तों की कविता में सामंती समाज और उसकी विचारधारा के विरुद्ध उग्र घोषणाएं कम हैं, लेकिन उनकी कविता में चरित्रों के निर्माणकथा की संरचना, पयार्यबोध, भावबोध और जीवनमूल्यों के बोध के स्तर पर सामंती विचारधारा का विरोध हुआ है। सूर और तुलसी के कृष्ण और राम की जिन कथाओं को आधार बनाकर काव्य रचना की है, वे संस्कृत काव्य की उदात परम्परा की उपज और लोक जीवन की प्रचलित कथाएं हैं। सूर और तुलसी के कृष्ण और राम अन्यायी, अत्याचारी और दमनकारी शासकों को मारकर उनकी दमनकारी सत्ताओं के स्थान पर लोकहितकारी राज व्यवस्था की स्थापना करते हैं।

तुलसी की राम राज्य की कल्पना में अत्याचारी सामंती राजसत्ता के स्थान पर न्यायप्रिय और जनप्रिय राजव्यवस्था की जनाकांक्षा व्यक्त हुई हैं यह तुलसी की सामंत विरोधी चेतना और लोक मंगल की भावना का एक प्रमाण है। समतावादी राज-व्यवस्था की यह कल्पना सामंती युग की ऐतिहासिक सीमाओं से प्रभावित है। तुलसीदास जी को दुराव-छिपाव की प्रवृत्ति का विरोधी माना जाता है। इसीलिए ये मन, वचन, कर्म की सरलता को भक्ति की नित्य लक्षण कहते हैं-

"सूधो मन, सूधे वचन, सूधी सब करतूति।
तुलसी सूधी सकल बिधि रघुबर प्रेम प्रसूति ।।[10]

सूरदास ने वल्लभाचार्य की उस परम्परा का डटकर साथ दिया जिसमें इस जगत् की बैकुण्थ से महान माना गया है लोक-मन की भावभूमि को समझते हुए ही सूरदास ने योग-मार्ग अर्थात् हठ योग का खण्डन किया। निर्गुण योगियों की धाक को चकनाचूर करने में सूरदास ने भगीरथ प्रयत्न किया-

"आये जोग सिखावन पाँड़े
परमारथी पुरानिं लादे ज्यों बनजारे टाँड़े ॥"[11]

भक्तिकालीन कवियत्री मीरा का सामाजिक दृष्टिकोण विशेषतः स्त्री संबंधी दृष्टिकोण अन्य साहित्यकारों से भिन्न रहा है। उनकी कविता एक ओर सामंती समाज में स्त्री की पराधीनता और यातना की अभिव्यक्ति है तो दूसरी ओर उस व्यवस्था के बंधनों का पूरी तरह निषेध और उससे स्वतंत्रता के लिए दिवानगी हद तक संघर्ष भी है। मीरा का जीवन एवं काव्य उस काल के अन्य भक्त कवियों की स्त्री-संबंधी मान्यताओं का प्रतिकार है और प्रत्युत्तर भी। मीरा के सामाजिक सजगता की ही प्रमाण है कि उन्होंने जहाँ भी सामंती सत्ता का विरोध किया है वहाँ सखी या मां को ही सम्बोधित किया हैं वे दृढ़ संकल्प के साथ विरोधियों को चुनौती देती घोषणा करती है-

"भजन करस्याँ, सती न होस्याँ
मन मोह्यो घण नामी ।।[12]

जिन राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों के बीच भक्ति का काव्य प्रवाह उमड़ा उसका स्पष्ट एवं प्रखर वर्णन कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, मीरा सभी के साहित्य में देखने को मिलता है।

भक्ति और श्रृंगार की विभाजक रेखा सूक्ष्म है प्रेम और भक्ति की संपृक्त अनुभूति में से भक्ति क्रमशः क्षीण पड़ती गई, और प्रेम का श्रृंगारिक रूप केंद्र में आ गया जिससे रीतिकाल का आविर्भाव हुआ। रीतिकाल में साहित्यकार मनुष्य और ईश्वर दोनों का मनुष्य रूप में चित्रण करता हुआ श्रृंगारिकता को बढ़ावा देता है। रीतिकालीन कविता अधिकांशतः धर्म से विलग होकर ऐहिक रूप में विकसित होती है। रीतिकालीन कवि के लिए धर्म और दर्शन की प्रेरणा सार्थक नहीं रह गई और अपने आश्रयदाता को खुश करना एकमात्र लक्ष्य हो गया। रीतिकालीन काव्य मुख्यतः राज्याश्रय में लिखा गया, ये ग्रंथ आश्रयदाताओं को समर्पित और उनका नामकरण इन कृपालु शासकों के नाम पर हुआ है।

रीतिकालीन साहित्य सामाजिक जन-जीवन से कट गया जिससे लगता है कि हिंदी साहित्य का एक चरण रास्ते से भटक कर कोनों और गली-कूचरियों में विदेशी सा घूमता रहा हो। कहते हैं कि साहित्य समाज का दर्पण होता है जिसमें युगीन समाज की स्थिति का अक्स उतरकर आता है लेकिन रीतिकालीन साहित्य में सामाजिकता और आध्यात्मिकता के मूल्यों को एक तरु कर श्रृंगारिक रचनाएं की गई हैं

"बतरस लालच लाल की, मुरली धरि लुकाइ।
सौंह करै, भौंहनि हँसे, देन कहै, नहि जाइ ॥[13]

सामान्य जनता की प्रवाह छोड प्रत्येक शासक विलासिता में डूबा रहता था। कुछ कवियों ने अपने आश्रयदाताओं को उस विलासितापूर्ण स्थिति से निकालने का प्रयास अपनी कविता के माध्यम से किया भी-

"नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास यहि काल।
अली कली ही सों बँध्यों, आगे कौन हवाल ॥[14]

इस समय के साहित्य में सुर, सुंदरी, सुराही, कंचन, कामिनी और काम को केंद्र में रखकर लिखा गया है।

आधुनिक काल के दौरान भारत के वातावरण में जो पीडा और त्रासदी छाई रही उसने एक अद्भुत ओज वाले साहित्य का सृजन किया। वैसे भी कहा जाता है कि साहित्यिक विजय अधिक स्थायी और गहरी होती है, जो किसी भी समाज को गहरे रूप से प्रभावित कर उसे अपना मानसिक गुलाम बना लेता है वहीं साहित्य ही हमारे मन में अन्याय और शोषण के खिलाफ विद्रोह की अग्नि प्रज्ज्वलित करता है। प्रेमचंद की 'सौजे वतन' का अंग्रेजों द्वारा जब्त किया जाना इसका मुख्य उदाहरण है।

आधुनिक काल में भारतीय नवजागरण और अन्य सुधारवादी आंदोलनों ने नए समाज के गठन पर बल दिया। इस समय के दौरान रचे गए साहित्य का एक-एक शब्द इतना ताकतवर रहा कि उसके सामने उस सम्पूर्ण विश्व की सबसे बड़ी राजसत्ता भी टिक नहीं सकी। इस समय विश्व ख्याति प्राप्त कवियों से लेकर अंधी तंग गलियों के गुमनाम साहित्यकारों ने देश भर के स्वाभिमान को जगाया और अंग्रेजों शासन व्यवस्था की नींव में समाई शोषण की वृत्ति से भारतीय जनता को जागृत किया। भारतेंदु का व्यंग्य प्रहमन 'अंधेर नगरी' इसी का उदाहरण है-

"चना हाकिम सब जो खाते।
सब पर दूना टिकस लगाते ।।[15]

प्रेमचंद ने भी सामंती व्यवस्था का वर्णन 'शतरंज के खिलाड़ी' में किया है जिसमें राजा से लेकर प्रजा तक सब तीतर-बटेर लड़ाने और मौजमस्ती करने में लिप्त हैं। इसी आमोद-प्रमोद के नशे में डूबे रजवाड़ों पर कब्जा जमाने में अंग्रेजों को ज्यादा मशक्कत नहीं करनी पड़ी। प्रेमचंद साहित्य में सामाजिक स्थिति का यथार्थ वर्णन किया है वहीं स्त्री का आदर्शोन्मुख व यथार्थवादी दोनों प्रकार का चित्रण किया । प्रेमचंद ने सामाजिक कुरीतियों (दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, बहु विवाह) पर भी अपनी लेखनी चलाई जो पूर्णतया सामाजिकता को दर्शाने में है।

भारतीय साहित्य में समकालीन युग नायक के रूप में मजदूर, कामगार, किसान तथा सदा से उपेक्षित वर्गों का वर्णन चरित कथा का आधार बनने लगा वहीं मध्य एवं निम्नमध्यवित्तीय परिवार की घुटती स्त्री की व्यथा कथा का

वर्णन भी साहित्य में हुआ। श्री अमृतलाल नागर का उपन्यास 'सुहाग के नूपुर' में वे वेश्या माधवी के माध्यम से कहते हैं कि "सारा इतिहास सच-सच ही लिखा है देव। केवल एक बात अपने महाकाव्य में और जोड़ दीजिए-पुरुष जाति के स्वार्थ और दम्भ भरी मूर्खता से ही सारे पापों का उदय होता है। उसके स्वार्थ के कारण ही उसका अर्थांग नारी जाति पीड़ित हैं एकांगी दृष्टिकोण से सोचने के कारण ही पुरुष ने तो स्त्री को 'सती' बनाकर ही सुखी कर सका न 'वेश्या' बनाकर ही।"[16]

कहना न होगा कि आदिकाल से भक्तिकाल, रीतिकाल में स्त्री की जो स्थिति थी वो गिरते-उठते आधुनिक काल तक पहुँची और तर्क-वितर्क करने लगी, वह पुरुष के पैरों की जूती, उपभोग की वस्तु, सन्तान प्राप्ति का साधन मात्र नहीं रह कर पुरुष के समान महत्त्व और सम्मान की मांग करने लगी। "वह कई बार कह चुकी थी कि पुरुषों को क्या अधिकार है कि वे स्त्री पर किसी प्रकार का अत्याचार करें। स्त्री-पुरुष में कोई अंतर नहीं है। अब समय आ गया है कि स्त्रियाँ पुरुषों के बराबर खाएं, काम करें, पहनें, घूमें-फिरे और बराबरी का व्यवहार चाहें।[17]

इसी आधुनिक बोध से नारी जीवन में महान क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ स्त्री लेखन की प्रखर लेखनी इसी का एक प्रभाव है अब वह अपने सीमित दायरे से जो सदियों से पीड़ित, दबा-कुचला था से बाहर आने का प्रयत्न करने लगी। स्त्री लेखन में अभिव्यक्ति का मूल स्वर नारियों की आर्थिक आत्मनिर्भरता रहा हैं आर्थिक स्वावलम्बन के अभाव में नारी अपने ही परिवार में शोषित होती रही है क्योंकि उसमें विरोध करने का न साहस है न सम्बल। उषा प्रियंवदा, मन्नू भण्डारी, दीप्ति खण्डेलवाल, मृदुला गर्ग, कृष्णा सोबती, चित्रा मुद्गल, राजी सेठ, प्रभा खेतान, मैत्रेयी पुष्पा एवं ममता कालिया आदि का साहित्य स्त्री जीवन की यथार्थवादी स्थिति का दस्तावेज है।

भारतीय साहित्य लेखन अपने युग के अंतर्राष्ट्रीय बौद्धिक आंदोलनों से प्रभावित हुआ जिससे एक अन्य चेतना समाज में उभरी और दलित लेखन या दलित विमर्श के रूप में रैली मुल्कराज आनंद का 'अनटचेबल', 'कुली' और ओमप्रकाश वाल्मिकी का 'जूठन' इसी प्रकार की रचना साहित्य है। नगर संस्कृति के विकास तथा आर्थिक सुविधाओं को जुटाने की होड़ मचने के कारण भारतीय सामाजिक-पारिवारिक, संस्थान कमजोर होता चला गया। हर प्रकार की मृत रुढ़ियों का विरोध, स्त्री शिक्षा, बाल-विवाह, विधवा-विवाह की स्वतंत्रता सहित सामाजिक जागरुकता को लेकर साहित्य रचा गया। इस समय का चिंतन कोरी भावुकता वाला न रहकर तर्क-प्रखर, बौद्धिक और गहन संवेदना वाला बन गया था।

ब्रिटिश शासकों की घटिया नीति भी साथ में काम कर रही थी वे 'फूट डालो और राज करो' की नीति को अपना रहे थे जिसमें हिंदू-मुस्लिम झगड़े भी बढ़ गए थे और अंतः दुष्परिणाम यह हुआ कि पंद्रह अगस्त सन 1947 की तारीख को भारत विभक्त होकर स्वतंत्र हुआ। भारत विभाजन के समय हुए कटु दंगों की स्मृतियों के साथ लेखक वर्ग को कचोट यशपाल का 'झूठा सच', भीष्म साहनी का 'तमस', अमृता प्रीतम का 'पिंजर' के उपन्यासों में देखने को मिलती है-**"कोई भी लड़की जो ठिकाने पहुँच रही है, वह हिंदू हो या मुसलमान, समझना कि मेरी आत्मा ठिकाने पहुँच रही है।"[18]**

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद औद्योगिक क्रांति के साथ मशीनी युग की ओर बढ़ती हुई बीसवीं शती ने तीव्रगामी परिवर्तनशीलता से विश्व को भौंचक्का कर दिया। लोगों की इच्छाओं में, आकांक्षाओं में अभूतपूर्व वृद्धि हुई जिससे मोहभंग की स्थिति का सामना करना पड़ा-

"धिक यह पद मद, शक्ति मोह ! कांग्रेस नेता भी।
मुक्त नहीं इससे कुत्तों से लड़ते कुत्सिक
भारत माता की हड्डी हित। आज राज्य भी
अगर उलट दे जनता, इतर विरोधी दल के

राजा इनसे अधिक श्रेष्ठ होंगे? प्रश्नास्पद !
क्योंकि हमारे शोषित शोणित की यह नैतिक
जीर्ण व्याधि है!"[19]

विक्षोभ और विद्रोह के स्वर के साथ-साथ सामान्य जन-जीवन की दैनिक प्रयोग की पर्याप्त चीजें न मिल रही थी जिससे समाज का निम्न वर्ग भूखों मरने की स्थिति में था। ऐसी स्थिति में कोई भी संवेदनशील कवि अपनी लेखनी चलाए बिना भला कैसे रह सकता था-

"दाने घर में आए कई दिनों के बाद
धुआँ उठा आँगन के ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठीं घर भर की आँखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पाँखें कई दिनों के बाद। "20

साहित्य मानव-चेतना की अभिव्यक्ति है और चेतना अनुभूति की सघनता तथा चिंतन को गहनता के समन्वित आधार पर स्वरूप ग्रहण करती है। अनुभूति का संबंध संवेदनशीलता से है और चिंतन का वस्तु तत्व के स्थिति बोध से। अनुभूति और चिंतन, चेतना की ये दोनों सीमायें, सत्तागत भेद के कारण अभिव्यक्तिगत शैली-भेद भी स्थापित कर लेती हैं। मानवता अनागत भविष्य में कौन-सा रुप ग्रहण करेगी इसके विषय में कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

संदर्भ :

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, साहित्य सहचर, पृ.3
2. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका, पृ. 65
3. साहित्य और समाज के संबंध की दृष्टियाँ, पृ. 13
4. मुंशी प्रेमचंद - साहित्य का उद्देश्य, पृ.10
5. उद्धृत - डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, निबंध, नवनीत, पृ.9
6. साहित्य सिद्धांत एवं आलोचना देवी प्रसाद, पृ.49
7. चाणक्य नीति, अनुवादक-नरेन्द्र शर्मा, पृ.36
8. कबीर ग्रंथावली डॉ. श्यामसुंदर दास, पृ.35
9. जायसी : एक नई दृष्टि-रघुवंश, पृ.87
10. हिंदी साहित्य का इतिहास-रामचंद्र शुक्ल, पृ.114
11. भक्ति काव्य से साक्षात्कार कृष्ण दत्त पालीवाल, पृ.212
12. भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य-मैनेजर पाण्डेय, पृ.97
13. हिंदी साहित्य का इतिहास-आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ.190
14. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास-रामस्वरुप चतुर्वेदी, पृ.66
15. अंधेर नगरी, भारतेंदु हरिश्चंद्र कृत, पृ.4
16. उपेन्द्रनाथ 'अश्क' सितारों का खेल, पृ.45
17. पिंजर अमृता प्रीतम, पृ.118
18. कविता के नए प्रतिमान-नामवर सिंह, पृ.107
19. अकाल और उसके बाद, नागार्जुन, पृ.56

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-65-68

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 65-68
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

रमेश कुमारी

सहायक आचाय, इन्द्रप्रस्थ महिला महाविद्यालय दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

Corresponding Author :

रमेश कुमारी

सहायक आचाय, इन्द्रप्रस्थ महिला महाविद्यालय दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

महाभारत काल में स्त्री जीवन

महाभारत महाकाव्य बहुत ही विस्तृत और प्राचीन है। वेदव्यास द्वारा रचित इस महाकाव्य को इतिहास और कल्पना का मिश्रण माना जाता है। भारत के प्राचीन इतिहास के स्रोत साहित्यिक कृतियों पर ही आधारित हैं। महाभारत और रामायण तत्कालीन समाज, राजनीति, आर्थिक स्थिति और संस्कृति को जानने समझने का महत्वपूर्ण साधन हैं। महाभारत में अनेक युद्धों का वर्णन किया गया है लेकिन इसके साथ ही तत्कालीन समाज और संस्कृति की बारीकियों का भी उल्लेख किया गया है। महाभारत में चित्रित कौरव–पाण्डवों का अठारह दिवसीय महायुद्ध के बीज समाज और धर्म के बीच ही छिपे थे। युद्ध से पूर्व घटने वाली अनेक घटनाओं का चित्रण महाभारत कालीन समाज के यथार्थ को दर्शाता है। युद्ध से पूर्व कौरवों ने पाण्डवों का अपमान करके उनको वनवास में भेज दिया। महाभारतकालीन युद्ध का मुख्य कारण धर्म और नीति का उल्लघंन माना जाता है। इसमें कौरवों द्वारा पाण्डवों को जुए में हराने के बाद द्रौपदी का अपमान करना भी अहम कारण रहा। द्रौपदी ने भरी सभा में सभी लोगों से प्रश्न पूछा कि क्या मुझे दांव पर लगाना धर्मानुकूल है या नहीं? द्रौपदी के सवाल का जवाब किसी के पास नहीं था। अन्त में भीष्म ने कहा–

''न धर्मसौक्ष्म्यात् सुभगे विवेक्तु शक्नोमि ते प्रश्नमिमं यथावत्।
अस्वाम्यशक्त पणितुं परसवं स्त्रियाश्च भुर्तुवशतां समीक्ष्य।। 47 ।।

अर्थात् सौभाग्यशालिनी बहु! धर्म का स्वरूप अत्यन्त सूक्ष्म होने के कारण मैं तुम्हारे प्रश्न का ठीक ठीक विवेचन नहीं कर सकता। जो स्वामी नहीं है वह पराऐ धन को दांव पर नहीं लगा सकता, परन्तु स्त्री को सदा अपने स्वामी के अधीन देखा जाता है, अतः इन सब बातों पर विचार करने से मुझसे कुछ कहते नहीं बनता।''[1]

द्रौपदी को सभा में घसीटकर लाये जाने पर द्रौपदी ने कहा कि स्वयंवर के बाद मुझे किसी पराए पुरुष ने इस अवस्था में नहीं देखा है। इसका अभिप्राय यह है कि तत्कालीन समाज में स्त्रियों के लिए पर्दा प्रथा आरंभ हो चुकी थी। महाभारतकालीन समाज में राजाओं द्वारा की जाने वाली सभाओं में भी स्त्रियों को नहीं शामिल किया जाता था जैसा कि द्रौपदी ने कहा–

''धर्म्यां स्त्रियां सभां पूर्वे न नयनतीति नः श्रुतम्।
स नष्टः कौरवेयुषु पूर्वो धर्मः सनातनः।। 9 ।।

अर्थात् मैने सुना है, पहले लोग धर्मपरायण स्त्री को कभी सभा में नहीं लाते थे, किन्तु इन कौरवों के समाज में वह प्राचीन सनातन धर्म नष्ट हो गया है।''[2]

महाभारत में लिखित इस श्लोक से स्पष्ट होता है कि तत्कालीन समाज में स्त्रियों को सभा में बुलाना धर्मानुकूल नहीं माना जाता था। कौरवों की सभा में भी गान्धारी आदि स्त्रियां मौजुद नहीं थी।

महाभारत काल में स्त्रियों को भी शाप देने की शक्ति प्राप्त थी। इसका उल्लेख आदिपर्व में किया गया है। उतंक से उनके गुरु की पत्नी ने

राजा पौष्य की क्षत्राणी पत्नी के कुंडल लाकर गुरुदक्षिणा के रूप में देने की इच्छा प्रकट की, तो उत्तंग इस कार्य को पूरा करने का संकल्प करके चला गया किंतु तय समय पर नहीं पहुंच पाया तो गुरु पत्नी ने उत्तंग को शाप देने का विचार किया। इस प्रसंग से स्पष्ट होता है कि महाभारतकालीन समाज में एक तरफ स्त्रियों की स्थिति ताकतवर नजर आती है तो दूसरी ओर तत्कालीन समाज में स्त्रियों के अपहरण भी प्रचलित थे। महाभारत के आदिपर्व में पुलोमा राक्षस द्वारा भृगुजी की गर्भवती पत्नी का अपहरण का प्रसंग इस ओर संकेत करता है। इस अपहरण के दौरान गर्भवती पुलोमा का बच्चा भी गर्भ से गिर गया जिसे च्यवन के नाम से जाना जाता है। हालांकि पुलोमा राक्षस गर्भपात को देख कर भाग गया और भस्म हो गया। महाभारत कालीन समाज में अप्सराओं के लिए संतानोत्पति हेतु विवाह आवश्यक नहीं था लेकिन अपनी संतान के पालन पोषण की जिम्मेवारी भी अप्सराओं को नहीं समझी जाती थी। हालांकि संतान का त्याग करने वाली स्त्रियों को अच्छा नहीं समझा जाता था। उन्हें निर्दयी और निर्लज्ज की संज्ञा दी जाती थी। तत्कालीन समाज में लड़कियों के भी जात–कर्मादि संस्कार किए जाते थे, जो कि कालांतर में सिर्फ पुत्रों के लिए ही आवश्यक माने गए। महाभारत कालीन समाज में पुत्र जन्म को अच्छा माना जाता था। लोग पुत्र प्राप्ति के लिए विवाह करते थे। पुत्र को परिवार की वंश परंपरा आगे बढ़ाने वाला माना जाता था। इसी अवधारणा से प्रेरित अनेक श्लोक महाभारत में मिलते हैं–

''न हि धर्मफलैस्तात न तपोभिः सुसंचितैः।
तां गतिं प्राप्नुवनतीह पुत्रिणो यां व्रजन्ति वै।। 25 ।।

अर्थात पुत्र वाले मनुष्य इस लोक में जिस उत्तम गति को प्राप्त होते हैं, उसे अन्य लोग धर्म अनुकूल फल देने वाले भली–भांति संचित किए हुए तप से भी नहीं पाते।''[3]

तत्कालीन समाज में बहुपत्नी विवाह भी प्रथा में प्रचलित थी। आदिपर्व में ब्रह्मा जी की दो पुत्रियों – कद्रू और विनता का विवाह ऋषि कश्यप जी के साथ हुआ था।

विवाह से पूर्व कन्या का कौमार्य बचा रहना भी आवश्यक माना जाता था। महाभारतकालीन समाज में कन्याओं के कौमार्य को बहुत महत्व दिया जाता था। इसे सत्यवती के साथ भगवान् पराशर द्वारा सम्बन्ध बनाने की इच्छा के सन्दर्भ में समझा जा सकता है। सत्यवती कहती है कि–

''त्वत्संयोगच्च दुष्यते कन्याभावो ममानघ।
कन्यात्वे दूषिते वापि कथं शक्ष्ये द्विजोतम।। 76 ।।

अर्थात् निष्पाप महर्षे! आपके संयोग से मेरा कन्या भाव (कुंवारीपन) दूषित हो जाएगा। द्विजश्रेष्ठ! कन्याभाव दूषित होने पर मैं अपने घर कैसे जा सकती हूं।''[4]

महाभारतकालीन समाज में निम्न वर्ग की स्त्रियों के लिए सन्तानोत्पति एवं पुरुष से सम्बन्ध बनाने हेतु विवाह आवश्यक नहीं था। इसे मत्स्यगन्धा और भगवान् पराशर की कथा के माध्यम से जान सकते हैं।

महाभारतकालीन समाज में स्त्री शिक्षा के भी सकेंत मिलते हैं। कौरवों की माता गान्धारी अर्थशास्त्र में निपुण थी–

''गान्धारराजपुत्रो गूच्छकुनिः सौबलस्तथा।
दुर्योधनस्य जननी जज्ञाते अर्थ विशारदौ।। 112 ।।

अर्थात् गान्धारराज सुबल का पुत्र शकुनि एवं सौबल नाम से विख्यात हुआ तथा उनकी पुत्री गान्धारी दुर्योधन की माता थी। ये दोनों भाई बहन अर्थशास्त्र के ज्ञान में निपुण थे।''[5] सन्तानप्राप्ति के लिए नियोगप्रथा द्वारा स्त्रियां दूसरे पुरुषों से भी सम्बन्ध बना सकती थी। नियोग प्रथा में उच्च वर्ग के पुरुषों से ही सम्बन्ध बनाए जा सकते थे। जैसे महर्षि व्यास के साथ शूद्र कन्या के नियोग से विदूर पैदा हुए, धृतराष्ट्र के साथ वैश्य जातीय कन्या से युयुत्सु पैदा हुआ। पूर्वकाल में परशुराम द्वारा इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रिय रहित करने के बाद क्षत्रिय स्त्रियों ने ब्राह्मणों के साथ सम्बन्ध बनाकर ही पुत्र किए–

''तदा निःक्षत्रिये लोके भार्गवेण कृते सति।
ब्राह्मणान् क्षत्रिया राजन् सुतार्थिन्यो अभिचक्रमुः।। 5 ।।

अर्थात् उस समय जब भृगुनन्दन ने इस लोक को क्षत्रिय शून्य कर दिया था, क्षत्रिय नारियों ने पुत्र की अभिलाषा से ब्राह्मणों की शरण ग्रहण की थी।''[6]

तत्कालीन समाज में कुंवारी कन्याओं को भी सन्तानोत्पति का अधिकार था लेकिन ऐसी सन्तानों की समाज में कोई प्रतिष्ठा नहीं थी। उन्हें विवाहपूर्वजनित सन्तानों को त्यागना पड़ता था–

''निगूहमाना जातं वै बन्धुपक्षभयात् तदा।
उत्ससर्ज जले कुन्ती तं कुमारं यशस्विनम्।। 139 ।।

अर्थात् उस समय कुन्ती ने पिता माता आदि बान्धव पक्ष के भय से उस यशस्वी कुमार को छिपाकर एक पेटी में रखकर जल में दिया।''[7]

इस प्रसंग से स्पष्ट होता है कि कन्याओं और उनके परिवार के लिए विवाह पूर्व सन्तानोत्पति शोभनीय कार्य नहीं माना जाता था। सन्तान उत्पन्न करने और समाज में उसकी स्वीकृति के लिए विवाह संस्था का होना आवश्यक था। कन्या के विवाह का निर्णय भी उसके पिता ही करते थे। स्वयं कन्याएं अपने विवाह की बात नहीं करती थी। कन्याओं द्वारा अपने विवाह की बात करना अशोभनीय एवं अनुचित कार्य माना जाता था। यही कारण है कि जब दुष्यन्त अतिसुन्दर शकुन्तला के रूप पर मुग्ध होकर उसके सामने विवाह प्रस्ताव रखते हैं तो वह कहती है कि–

''अस्वतन्त्रयस्मि राजेन्द्र काश्यपो मे गुरु पिता।

तमेव प्रार्थय स्वार्थं नायुक्त कर्तुमहेसि।।

अर्थात् राजेन्द्र! मैं परतंत्र हूं। कश्यपनन्दन महर्षि कण्व मेरे गुरु और पिता हैं। उन्हीं से आप अपने प्रयोजन की सिद्धि के लिए प्रार्थना करें। आपको अनुचित कार्य नहीं करना चाहिए।

इसमें एक स्त्री के कर्तव्यों का भी उल्लेख किया गया है कि एक सती स्त्री को मन, वाणी, शरीर द्वारा सदैव पति की सेवा करनी चाहिए। विवाह के बाद अधिक समय तक अपने भाई–बन्धुओं के यहां नहीं रहना चाहिए।

युवावस्था में प्रेमविवश होकर जिन स्त्रियों ने अपने विवाह का प्रस्ताव स्वयं रखा उन्हें समाज में अनुचित समझा गया और उन स्त्रियों को अनेक प्रकार के कष्ट भी उठाने पड़े। कण्व पुत्री शकुन्तला ने अपने पिता और समाज की अनुपस्थिति में राजा दुष्यन्त से गन्धर्व विवाह किया था। बाद में अपने पुत्र भरत सहित शकुन्तला राजा दुष्यन्त के दरबार में गई तो उन्होने उसे पहचानने से इंकार कर दिया। शकुन्तला के बार बार याद दिलाने पर भी दुष्यन्त ने उसे अपनी पत्नी के रूप स्वीकार नहीं किया। अन्त में देववाणी द्वारा घोषणा करने पर ही दुष्यन्त ने शकुन्तला को अपनी पत्नी स्वीकारा। इससे स्पष्ट होता है कि महाभारत कालीन समाज में विवाह के लिए केवल स्त्री की सहमति ही काफी नहीं होती थी। ऐसे विवाहों को गन्धर्व विवाह कहा जाता था। समाज में विवह को स्वीकृत होने के लिए साक्ष्यों एवं साक्षी का होना आवश्यक था। शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी ने भी जब ब्रहस्पति पुत्र कच के सामने अपना विवाह प्रस्ताव रखा तो उन्होंने इस अनुरोध को अस्वीकार करते हुए इसे अनुचित बताया जबकि कच ने शुक्राचार्य से संजीवनी विद्या सीखने के लिए देवयानी को ही खुश किया था। जब कच को दानवों द्वारा तीन बार मार डाला गया तो देवयानी ने ही प्रेमवश अपने पिता शुक्राचार्य से अनुरोध करके कच को तीनों बार पुनः जीवित करवाया था लेकिन अन्त में कच ने देवयानी को गुरुपुत्री कहकर सम्मान दिया और उसके प्रेम प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। इसके बाद देवयानी ने नहुष पुत्र ययाति के सामने विवाह प्रस्ताव रखा तो उन्होंने कहा कि वे क्षत्रिय हैं और आप ब्राह्मण हैं। इसलिए मैं क्षत्रिय एक ब्राह्मण से कन्यादान लेने का अधिकारी नहीं हूं लेकिन देवयानी ने कहा कि स्त्री के लिए पाणिग्रहण ही धर्म है लेकिन ययाति ने कहा कि जब तक तुम्हारे पिता स्वयं तुम्हें मुझे नहीं सौंपेगे तब तक मैं आपसे विवाह नहीं करूंगा। देवयानी के अनुरोध से उनके पिता ने उसका विवाह ययाति से कर दिया लेकिन विवाह से पूर्व ययाति को वर्णसंकरजनित अधर्म का भय था जिससे शुक्राचार्य ने उन्हें वर देकर भय मुक्त कर दिया।

तत्कालीन समाज में एक तरफ स्वयंवर परम्परा प्रचलित थी तो दूसरी तरफ पिताओं का अपनी पुत्री पर अधिकार भी कायम था। पिता जिसे चाहे उसे अपनी पुत्री सौंप सकते थे। गान्धारराज सुबल के पास भीष्म ने धृतराष्ट्र के विवाह का प्रस्ताव भेजा तो सुबल के मन में अन्धे वर को लेकर चिन्ता हुई लेकिन उन्होंने कुल, प्रसिद्धि से प्रभावित होकर अपनी पुत्री गान्धारी उन्हें सौंप दी।

गान्धारी और धृतराष्ट्र के विवाह में कन्यादान नहीं बल्कि वाग्दान शब्द का प्रयोग किया गया। कुन्तिभोज की पुत्री कुन्ती और पाण्डु का विवाह स्वयंवर के द्वारा हुआ और पाण्डु का दूसरा विवाह शल्य की बहन माद्री के साथ धन के बदले में किया गया।

उन्होंने स्त्री जीवन के बारे में कहा–

''पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने।
पुत्रस्तु स्थविरे भावे न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति।।

अर्थात् कुमारावस्था में पिता, युवावस्था में पति और वृद्धावस्था में पुत्र नारी की रक्षा करता है। स्त्री को कभी स्वतंत्र नहीं रहना चाहिए।''[8] युधिष्ठिर द्वारा द्रौपदी को कही गई ये बातें क्षेपक के रूप में मौजुद हैं। इन क्षपकों को देखते हुए इन पर सन्देह होता है कि ये स्त्री के बारे में इस तरह के विचार महाभारत काल के ही हैं अथवा महाभारत के बाद इनको शामिल किया गया है।

महाभारतकालीन समाज में पर्दाप्रथा का भी प्रचलन रहा है जिसका वर्णन महाभारत में किया गया है। श्रीकृष्ण के हस्तिनापुर आने के समय राजा धृतराष्ट्र ने अपने नगर की स्त्रियों के लिए कहा था कि–

''नगरादपि याः काश्चिद् गमिष्यन्ति जनार्दनम्।
द्रष्टुं कन्याश्च कल्याण्यस्ताश्च यास्यन्त्यनावृताः।। 16 ।।

अर्थात् जनार्दन का दर्शन करने के लिए इस नगर से जो भी पर्दा न रखने वाली कल्याणमयी कन्याएं जाना चाहेंगी, वे जा सकेंगी।''[9] इससे स्पष्ट होता है कि केवल कन्याएं ही बिना पर्दे के रहती थी। विवाह के बाद या एक उम्र के बाद स्त्रियों के लिए पर्दा अनिवार्य माना जाता था।

महाभारत कालीन समाज में स्त्रियों को भी विचार विमर्श में शामिल किया जाता था परन्तु यह विमर्श घर के लोगों से जुड़े मामलों में ही किया जाता था। राजनीति में स्त्रियों की कोई भूमिका नहीं होती थी। परिवार के लोगों को भावनात्मक रूप से समझाने और उनको सही राह पर चलने की सीख देने का कार्य स्त्रियों को ही सौंपा जाता था। कुन्ती ने भी अर्जुन को द्रौपदी की सलाह के अनुसार चलने का ही सुझाव दिया और धृतराष्ट्र ने भी दुर्योधन को समझाने में असमर्थ होने पर गान्धारी की सहायता ली। गान्धारी ने सभा में आकर दुर्योधन को समझाने हेतु बुलाने का आग्रह किया और अपने पति धृतराष्ट्र से कहा–

''आनायय सुतं क्षिप्रं राज्यकामुकमातुरम्।
न हि राज्यमशिष्टेन शक्यं धर्मार्थलोपिना।। 10 ।।
आप्तुमाप्तं तथापीदमविनीतेन सर्वथा।

त्वं ह्येवात्र भृशं गर्ह्यो धृतराष्ट्र सुतप्रियः।। 11 ।।

अर्थात् महाराज! राज्य की कामना से आतुर हुए अपने पुत्र को शीघ्र बुलवाइये। धर्म और अर्थ का लोप करने वाला कोई भी अशिष्ट पुरुष राज्य नहीं पा सकता, तथापि सर्वथा उदण्डता का परिचय देने वाले उस दुष्ट ने राज्य को प्राप्त कर लिया है। महाराज! आपको अपना बेटा बहुत प्रिय है, अतः वर्तमान परिस्थिति के लिए आप ही अत्यन्त निन्दनीय हैं।''[10] गान्धारी ने एक मां के वात्सल्य भाव से प्रेरित होकर धृतराष्ट्र से कहा कि अपने बेटे दुर्योधन को बलपूर्वक नहीं समझाया जा सकता है, वह बुरे लोगों की संगत में है। गान्धारी ने दुर्योधन को सभा में ही बुलाकर समझाया कि वह पाण्डवों को उनका हिस्सा देकर उनसे शान्ति संधि कर ले। इसमें ही सबका हित है। इसके बावजूद भी दुर्योधन ने उनकी बात नहीं मानी और वे सभा से उठकर चले गए तथा अपने मामा शकुनि के साथ मंत्रणा करके दूत रूप में आए श्रीकृष्ण को बन्दी बनाने की योजना बना ली। इस योजना का पता सात्यकि को चल गया जिन्होंने सभा में सबके सामने दुर्योधन की इस कुचाल के बारे में बताया। हालांकि सभा में उपस्थित सभी वृद्धजनों ने इस योजना की निन्दा करते हुए दुर्योधन को समझाने की कोशिश की। अन्त में श्रीकृष्ण ने सबको अपना विराट रूप दिखाया और वे कौरव सभा से प्रस्थान कर गए। वहां से जाते समय श्रीकृष्ण अपनी बुआ और पाण्डवों की माँ कुन्ती से मिले तो कुन्ती ने उन्हें अपने बेटों के लिए सन्देश भिजवाएं।

महाभारतकालीन समाज में युद्ध के प्रति क्षत्रियों की अगाध प्रवृति निर्मित हो चुकी थी। आमतौर पर स्त्रियां युद्ध ना करने के पक्ष में ही रहती हैं लेकिन महाभारत में स्वयं कुन्ती भी अपने पुत्रों को युद्ध में रत होने का ही सन्देश देती है। उसे युद्ध में अपने पुत्रों को खोने का भी डर नहीं है क्योंकि वह जानती थी कि युद्ध में मृत्यु प्राप्त होना एक क्षत्रिय के लिए सबसे बड़ा पुण्य एवं महानता का कार्य माना जाएगा लेकिन युद्ध से भागना कायरता की ही निशानी मानी जाएगी। वह अपने पुत्रों को सन्देश भिजवाती है कि–

''यदर्थं क्षत्रिया सूते तस्य कालोऽयमागतः।
न हि वैरं समासाद्य सीदन्ति पुरुषर्षभाः।। 10।।

अर्थात् क्षत्राणी जिसके लिए पुत्र को जन्म देती है, उसका यह उपयुक्त अवसर आ गया है। श्रेष्ठ मनुष्य किसी से वैर ठन जाने पर उत्साहहीन नहीं होते।''[11]

इसप्रकार स्पष्ट होता है कि महाभारत में तत्कालीन समाज में स्त्रियों की स्थिति का समग्र चित्रण किया गया है। एक तरफ स्त्रियों की परिवार, समाज, धर्म और राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका दिखाई देती है तो दूसरी तरफ वे पुरुष पर निर्भर भी रहती हैं। यह काल स्त्री के उत्थान और पतन का समय कहा जा सकता है।

संदर्भ सूची :

1. महाभारत, सभापर्व, अध्याय सड़सठ, श्लोक 47, पृ. 1023
2. महाभारत, सभापर्व, अध्याय उनसठ, श्लोक 9, पृ. 1032
3. महाभारत, आदिपर्व, अध्याय तेरह, श्लोक 25, पृ. 102
4. महाभारत, आदिपर्व, अध्याय, श्लोक 76, पृ. 215
5. महाभारत, आदिपर्व, अध्याय, श्लोक 112, पृ. 218
6. महाभारत, आदिपर्व, अध्याय, श्लोक 5, पृ. 220
7. महाभारत, आदिपर्व, अध्याय, श्लोक 139, पृ. 240
8. महाभारत, विराटपर्व, कीचकवधपर्व, अध्याय सोलह, श्लोक क्षेपक, पृ. 1056
9. महाभारत, खण्ड तीन, उद्योगपर्व भगवद्यानपर्व, अध्याय छियासी, श्लोक 16 पृ. 293
10. महाभारत, खण्ड तीन, उद्योगपर्व भगवद्यानपर्व, अध्याय एक सौ उनतीस, श्लोक 10–11, पृ. 394
11. महाभारत, खण्ड तीन, उद्योगपर्व भगवद्यानपर्व, अध्याय एक सौ सैंतीस, श्लोक 10, पृ. 420

▪

ज्ञानविविधा
कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 69-73
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :
डॉ. सलमा जमाल
जबलपुर

Corresponding Author :
डॉ. सलमा जमाल
जबलपुर

भूटान - प्रकृति, संस्कृति और भारत से संबंध

भूटान-को जैसे आमतौर पर "किंगडम ऑफ भूटान" कहा जाता है। यह एक बहुत खूबसूरत और शांत देश है जो पूर्वी हिमालय की गोद में बसा हुआ है। स्थानीय भाषा में इसे 'दुरुक युल' भी कहा जाता है, जिसका अर्थ होता है "लैंड ऑफ़ द थंडर ड्रैगन"।

चारों तरफ से जमीन से घिरे (लैंडलॉक्ड) इस छोटे से देश की सीमाएं उत्तर से चीन (तिब्बत) और दक्षिण पूर्व व पश्चिम में भारत से मिलती है। अपनी अनूठी संस्कृति, अछूती प्राकृतिक सुंदरता और आधुनिकता के बीच बेहतरीन संतुलन के कारण भूटान पूरी दुनिया में अपनी एक अलग पहचान रखता है। जो इसे एक बार देख लेता है भूल नहीं पाता।

भौगोलिक स्थिति और प्राकृतिक सुंदरता : अगर देखा जाए तो भूटान का भूगोल अति विविधापूर्ण है यहां दक्षिण के मैदानी इलाकों से लेकर उत्तर में हिमालय की बर्फ से ढकी विशाल चोटिया 7500 मीटर से भी ऊंची मौजूद है। देश का 70% से भी ऊंचा हिस्सा घने जंगलों से ढका हुआ है।भूटान की सबसे बड़ी खासियत है कि यह दुनिया का पहला और एकमात्र कार्बन नेगेटिव देश है, जिसका मतलब है कि यह देश जितनी कार्बन डाई ऑक्साइड पैदा करता है, उससे कहीं ज्यादा यहां के जंगल उसे सोख लेते हैं।यहां की आबो हवा इतनी शुद्ध है कि प्रदूषण का नामो निशान तक नहीं है। प्रकृति के प्रति सम्मान के कारण ही यहां की ऊंची और पवित्र चोटियों पर पर्वतारोहण पूरी तरह से प्रतिबंधित है।

ग्रास नेशनल हैप्पीनेस का सिद्धांत : जहां पूरी दुनिया तरक्की को सफल घरेलू उत्पाद 'या पैसों से मापती है, वहीं भूटान दुनिया का एक ऐसा इकलौता देश है जो अपनी प्रगति को सकल राष्ट्रीय खुशहाली से मापता है। भूटान सरकार का मानना है कि भौतिक विकास तब तक बेकार है जब तक देश के नागरिक मानसिक और आध्यात्मिक रूप से खुश ना हो। इस खुशहाली के चार मुख्य स्तंभ हैं।

1. सतत और समान सामाजिक, आर्थिक विकास।
2. सांस्कृतिक संरक्षण और बढ़ावा।

3. पर्यावरण का संरक्षण।

4. अच्छा शासन।

संस्कृति, परंपरा और जीवन शैली : भूटान के लोग अपनी प्राचीन परंपराओं और बौद्ध संस्कृति से जुड़े हुए हैं। यहां बजरायान बौद्ध धर्म अधिकारिक और मुख्य धर्म है। भूटान की वास्तु कला भी देखने लायक है। यहां के ' (Dzongs) जो की किले जैसी विशाल इमारतें होती हैं, प्रशासनिक कार्यालय और बौद्ध मठों के रूप में काम करते हैं, पारो घाटी में स्थित "ताकट् सॉन्ग मउ " जो एक सीधी खड़ी चट्टान पर बना हुआ है, यहां की संस्कृति और वास्तु कला का सबसे बेहतरीन उदाहरण है।

यहां के नागरिक रोजमर्रा के जीवन में भी पारंपरिक पोशाक पहनते हैं। पुरुषों के लिए ' घो ' और महिलाओं के लिए 'कीरा ' (kira)पहनना अनिवार्य माना जाता है। तीरंदाजी भूटान का राष्ट्रीय खेल है, जिसे यहां के लोग बड़े ही उत्साह के साथ त्योहार की तरह खेलते हैं।

शासन व्यवस्था और सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता : भूटान की शासन व्यवस्था एक लोकतांत्रिक संवैधानिक राजतंत्र है। साल 2008 में नया संविधान लागू होने के बाद भूटान पूर्ण राजशाही से बदलकर एक लोकतांत्रिक देश बना है। यहां की शासन प्रणाली के मुख्य बिंदु निम्नलिखित हैं ----

1. **राष्ट्र प्रमुख** ---
   a. राजा (दुरुक ग्योलयो) भूटान के राजा देश के सर्वोच्च प्रमुख होते हैं वर्तमान में यहां के राजा **जिग्मे खेसर नामग्येल वांगचुक है**...
   b. राजा का पद वंशानुगत होता है लेकिन संविधान के अनुसार वे संसद के प्रति जवाब दे होते हैं राजा देश की एकता और सांस्कृतिक धरोहर के प्रतीक माने जाते हैं।
2. **सरकार के प्रमुख**---
   a. मुख्य रूप से कार्यकारी शक्तियों मंत्री परिषद और प्रधानमंत्री के पास होती हैं।
   b. वर्तमान में भूटान के प्रधानमंत्री शेरिंग है। जिन्होंने जनवरी 2024 में कार्यभार संभाला, संसद के निचले सदन में बहुमत लेने वाली पार्टी के नेता को प्रधानमंत्री भी नियुक्त किया जाता है।
3. **विधायिका :** भूटान के सांसद द्वि सदनी है, जिसके दो सदन होते हैं।
   a. **नेशनल असेंबली**--- (निचला सदन) इसमें कुल 47 सीटे होती हैं। जिनके सदस्यों को सीधे जनता के द्वारा 5 साल कार्यकाल के लिए चुना जाता है।
   b. **नेशनल काउंसलिंग**--- इसमें 25 सदस्य होते हैं। इनमें से 20 सदस्य भूटान के 20 जिलों से गैर राजनीतिक आधार पर चुने जाते हैं।पांच सदस्यों को राजा द्वारा मनोनीत किया जाता है।
4. **न्याय पालिका**---
   a. भूटान में एक स्वतंत्र न्यायपालिका काम करती है। सुप्रीम कोर्ट यहां की सबसे बड़ी न्यायक संस्था है जो संविधान की व्याख्या और नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करती है।
5. **अनूठी विशेषता, सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता** : भूटान की शासन व्यवस्था केवल आर्थिक प्रगति पर ध्यान नहीं देती, बल्कि अपनी नीतियों को सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता के आधार पर तय करती है। इसके तहत पर्यावरण संरक्षण सास्कृतिक रक्षा, सतत विकास और सुशासन को प्रभावित प्राथमिकता दी जाती है।

संक्षेप में भूटान में राजा और चुनी हुई लोकतांत्रिक सरकार दोनों मिलकर देश की परंपराओं और आधुनिक लोकतंत्र के बीच संतुलन बनाकर शासन चलाते है।

भारत भूटान संबंध को बढ़ावा : हाल ही में भूटान के प्रधानमंत्री ने भारत का दौरा किया, जिस दौरान भारत ने भूटान के

साथ व्यापक वार्ता की और दोनों देशों ने कई समझौता पर हस्ताक्षर किए।

- भारत और भूटान के बीच घनिष्ठ सोहादर् और सद्भावना और साझा मूल्यों में गहराई से निहित है।, जो सभी स्तरों पर साझेदारी के माध्यम से व्याप्त हैं।
- दोनों देशों की यह चिरस्थाई मित्रता दक्षिण एशिया में पारस पर एक समृद्धि और क्षेत्रीय स्टार्ट के लिए आधारशिला का कार्य करती है।

नोट-- अंतरिम बजट 2024 --- 25 में विदेश मंत्रालय को वित्तीय वर्ष 2024 --- 25 के लिए 22,154 करोड रुपए में आवंटित किए गए। भारत की **'नेवरहुड फर्स्ट'** नीति के अनुरूप भूटान को सहायता पोर्टफोलियो का सबसे बड़ा हिस्सा प्रदान किया गया है। वर्ष 2023 --- 24 में 2400 करोड रुपए के आवंटन की तुलना में वर्ष 2024--- 25 की तुलना में भूटान को 2,068 करोड रुपए का आवंटन किया गया है।

भारत - भूटान द्विपक्षीय वार्ता से संबंधित मुख्य बिंदु---

1. **पेट्रोलियम समझौता** : दोनों देशों ने हाइड्रोकार्बन क्षेत्र में आर्थिक सहयोग और विकास को बढ़ावा देने, भारत से भूटान को विश्वसनीय तथा निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए पेट्रोलियम उत्पादों की आपूर्ति पर एक समझौते पर हस्ताक्षर किए।
2. **खाद्य सुरक्षा सहयोग** : भूटान के खाद्य एवं औषधि प्राधिकरण तथा भारत के खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण ने खाद्य सुरक्षा उपायों में सहयोग बढ़ाने के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर किए। यह समझौता खाद्य सुरक्षा मानकों का अनुपात सुनिश्चित कर और अनुपालन लागत को कम करके दोनों देशों के बीच व्यापार को सुविधाजनक बढ़ाएगा।
3. **ऊर्जा दक्षता और संरक्षण** : दोनों देशों ने ऊर्जा दक्षता और संरक्षण पर एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए। जो सतत विकास के प्रति, प्रतिबद्धता को दर्शाता है।

   भारत का लक्ष्य घरों में ऊर्जा दक्षता बढ़ाने, ऊर्जा कुशल उपकरणों के उपयोग को बढ़ावा देने और मांनको तथा लेबलिंग योजनाओं को विकसित करने में भूटान की सहायता करना है।
4. **सीमा विवाद समाधान** : भूटान के प्रधानमंत्री का यह दौरा चीन और भूटान के बीच सीमा विवाद को सुलझाने के लिए चल रही चर्चा के साथ मेल खाता है।जिसका क्षेत्रीय डोकलाम क्षेत्र में,पर प्रभाव पड़ता है। अगस्त 2023 में चीन और भूटान ने अपनी सीमा विवाद का समाधान करने हेतु एक योजना पर सहमति व्यक्त की। इसके बाद 2021 में समझौते पर औपचारिक रूप से हस्ताक्षर किए।

   यह समझौता डोकलाम में भारत और चीन के बीच जारी संघर्ष के चार वर्ष बाद हुआ,जो वर्ष 2017 में चीन के द्वारा संबंध क्षेत्र में सड़क बनाने के प्रयास के कारण शुरू हुआ था।
5. **गेलेफू में भूटान का क्षेत्रीय आर्थिक केंद्र** : गेलेफू में एक क्षेत्रीय आर्थिक केंद्र के लिए भूटान की यह योजना क्षेत्रीय विकास एवं कनेक्टिविटी की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

   दिसंबर 2023 में भूटान के राजा द्वारा शुरू की गई, इस परियोजना का लक्ष्य 1000 वर्ग किलोमीटर में फैले " गेलेफू और माइन्डफुलनेस सिटी " की स्थापना करना था।गगनचुंबी इमारतो की विशेषता वाले पारंपरिक वित्तीय केंद्रों के विपरीत,गेलेफू आई टी, शिक्षा,आथित्य एवं स्वास्थ्य देखभाल जैसे, " गैर प्रदूषणकारी उद्योगों" पर ध्यान केंद्रित करते हुए सतत विकास को प्राथमिकता देगा।

   भारत की "एक्ट ईस्ट" नीति तथा दक्षिण पूर्व एशिया एवं भारत प्रशांत क्षेत्र में उभरती कनेक्टिविटी पहल के चौराहे पर स्थित,गेलेफू आर्थिक एकीकरण तथा व्यापार सुविधा को बढ़ावा देने में रणनीतिक महत्व रखता है।

भारत के लिए भूटान का महत्व क्या है ? :

1. **सामरिक महत्व :** भूटान की सीमाएं भारत और भूटान के साथ लगती हैं तथा इस रणनीतिक स्थिति इसे भारत की सुरक्षा हितो के लिए एक महत्वपूर्ण बफर राज्य बनाती है।

भारत ने भूटान को रक्षा, बुनियादी ढांचे एवं संचार जैसे क्षेत्रों में सहायता प्रदान की है।जिससे भूटान की संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता बनाए रखने में सहायता प्रदान हुई है।

भारत ने भूटान को अपनी रक्षा क्षमताओं को मजबूत करने तथा अपने क्षेत्रीय अखंडता सुनिश्चित करने के लिए सड़क और पुल जैसे सीमावर्ती बुनियादी ढांचे के निर्माण तथा रखरखाव में सहायता प्रदान की है। वर्ष 2017 में भारत और चीन के बीच डोकलाम गतिरोध के दौरान, भूटान ने चीनी घुसपैठ का विरोध करने के लिए भारतीय सैनिकों को अपने क्षेत्र में प्रवेश करने की अनुमति देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

2. **आर्थिक महत्व** : भारत भूटान का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार तथा भूटान का प्रमुख निर्यात गंतव्य है।भूटान की जल विद्युत क्षमता उसके राजस्व का महत्वपूर्ण स्रोत है, साथ ही भारत में भूटान की जलविद्युत परियोजनाओं को विकसित करने में भी सहायता की है।
3. **सांस्कृतिक महत्व** : भूटान तथा भारत मजबूत सांस्कृतिक संबंध साझा करते हैं, क्योंकि दोनों देशों में मुख्य रूप से बौद्ध धर्म की मानने वाली जनसंख्या निवास करती है। भारत ने भूटान को उसकी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करने में सहायता की है एवं कई भूटानी छात्र उच्च शिक्षा के लिए भारत भी आते हैं।
4. **पर्यावरणीय महत्व** : भूटान विश्व के उन देशों में से एक है, जिसने कार्बन तटस्थ रहने का संकल्प लिया है एवं भारत भूटान को इस लक्ष्य को प्राप्त करने में प्रमुख सहायक रहा है।
भारत ने नवीनीकरण ऊर्जा,वन संरक्षण एवं सतत पर्यावरण जैसे क्षेत्रों में भूटान की सहायता प्रदान की है।

भारत भूटान संबंधों में चुनौतियां :

1. **चीन का बढ़ता प्रभाव** : भूटान में विशेष कर भूटान और चीन के बीच विवादित सीमा पर चीन की बढ़ती उपस्थिति ने भारत की चिंता बढ़ा दी है। भारत भूटान का सबसे करीबी सहयोगी रहा है और उसने भूटान भी की संप्रभुता तथा सुरक्षा की रक्षा में महत्व पूर्ण भूमिका निभाई है ।चीन और भूटान ने अभी तक राजनयिक संबंध स्थापित नहीं किए हैं।लेकिन मैत्रीपूर्ण आदान-प्रदान बनाए रखा है।
2. **सीमा विवाद** : भारत तथा भूटान के बीच 699 किलोमीटर लंबी सीमा है, जो काफी हद तक शांतिपूर्ण रही है। हालांकि हाल के वर्षों में चीनी सैना द्वारा सीमा पर घुसपैठ की कुछ घटनाएं हुई हैं। वर्ष 2017 में डोकलाम गतिरोध भारत चीन भूटान ट्राइंजक्शन में एक प्रमुख टकराव का बिंदु था।ऐसे किसी भी विवाद के बढ़ने से भारत भूटान संबंधों में तनाव आ सकता है।
3. **जल विद्युत परियोजनाएं** : भूटान का जल विद्युत क्षेत्र इसकी अर्थव्यवस्था का एक प्रमुख स्तंभ है और भारत इसके विकास में एक प्रमुख भागीदार रहा है। हालांकि भूटान में कुछ जल विद्युत परियोजनाओं की शर्तों को लेकर चिंताएं हैं, जिन्हें भारत के लिए बहुत अनुकूल माना जाता है। इसके कारण भूटान के इस क्षेत्र में भारतीय भागीदारी का कुछ लोगों ने विरोध किया है।
4. **व्यापार मुद्दे** : भारत भूटान का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है। जिसका भूटान के कुल आयात और निर्यात में 80% से अधिक योगदान है। हालांकि व्यापार असंतुलन को लेकर भूटान में कुछ चिंताएं हैं। भूटान निर्यात की तुलना में भारत से अधिक आयात करता है। भूटान अपने उत्पादकों के लिए भारतीय बाजार तक अत्यधिक पहुंच की मांग कर रहा है, जिससे व्यापार घाटे को कम करने में मदद मिल सकती है।

भूटान से संबंधित प्रमुख तथ्य :

परिचय :

- भूटान - भारत और चीन के बीच बसा हुआ है तथा चारों तरफ से भू अवद्ध देश है। भूटान के परिदृश्य पर पहाड़ एवं घाटियों की बहुलता है।
- थिंपू भूटान की राजधानी है।
- देश में प्रथम लोकतांत्रिक चुनाव होने के बाद वर्ष 2008 में भूटान एक लोकतंत्र बन गया, भूटान के राजा राष्ट्र के प्रमुख हैं।
- भूटान का आधिकारिक नाम **किंगडम ऑफ भूटान** है जिसे भूटानी भाषा में **डुक ग्याल खाप** कहा जाता है। जिसका अर्थ है **लैंड ऑफ थंडर ड्रैगन**
- मानस नदी भूटान की सबसे बड़ी नदी है। जिसकी लंबाई 376 किलोमीटर से भी अधिक है।

मानस नदी दक्षिणी भूटान और भारत के बीच हिमालय की तलहटी में सीमा बनाती है।

भविष्य में भूटान को लाभ :

- भारत बुनियादी ढांचे के विकास और अन्य क्षेत्रों में निवेश करके भूटान की अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने में मदद कर सकता है, इससे न केवल भूटान को आत्मनिर्भर बनने में मदद मिलेगी, बल्कि वहां के लोगों के लिए रोजगार के अवसर भी उत्पन्न होंगे।
- भारत और भूटान का एक दूसरे की संस्कृति, कला, संगीत तथा साहित्य की अधिक समझ एवं सराहना को बढ़ावा देने के लिए सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रमों को बढ़ावा दे सकते हैं।
- दोनों देशों के लोगों की वीजा मुक्त आवागमन उप क्षेत्रीय सहयोग को मजबूत कर सकती है।
- भारत और भूटान साझा सुरक्षा चिन्ताओ को दूर करने, अपने राजनीति असहयोग को दूर कर सकते हैं। वे आतंकवाद , मादक पदार्थो की तस्करी और आन्य अंतरराष्ट्रीय अपराधों से निपटने के लिए मिलकर काम कर सकते हैं ।

सारांश : भारत और भूटान के बीच द्विपक्षीय वार्ता हमेशा से दोनों देशों के **विशेष और प्रगाढ** संबंधों को दर्शाती रही है। अभी हाल में उच्च स्तरीय वार्ताओं (जैसे सितंबर 2026 में विदेश मंत्री एस जयशंकर की भूटान यात्रा और जुलाई 2026 में विकास सहयोग वार्ता) के आधार पर इस द्विपक्षीय वार्ता के मुख्य बिंदु निम्न है ---

- आर्थिक और विकासात्मक सहायता।
- जल विद्युत और स्वच्छ ऊर्जा सहयोग।
- कनेक्टिविटी और बुनियादी ढांचा।
- स्वास्थ्य और शिक्षा।
- डिजिटल और बैंकिंग एकीकरण।
- राजनीतिक और सुरक्षा चिंताएं आदि।

  भारत और भूटान के संबंध मजबूत और ऐतिहासिक हैं जिन्हें और अधिक बढ़ने के लिए आर्थिक रणनीति के और सांस्कृतिक क्षेत्र में सहयोग बढ़ाना आवश्यक है।

भारत - भूटान संबंधों को बढ़ावा देने के उपाय :

- आर्थिक विविधता होना चाहिए।
- व्यापार घाटा कम करना चाहिये।
- रणनीतिक और भू -राजनीतिक सहयोग।
- बुनियादी ढांचा और परियोजनाएं।
- सांस्कृतिक और तकनीकी आदान-प्रदान।

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-74-78

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 74-78
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com
Author's :

डॉ. मुदनर दत्ता सर्जेराव

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, कर्नाटक केंद्रीय विश्वविद्यालय, कलबुरगी

Corresponding Author :

डॉ. मुदनर दत्ता सर्जेराव

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, कर्नाटक केंद्रीय विश्वविद्यालय, कलबुरगी

भारत-भूटान संबंधों का सांस्कृतिक समालोचन

सारांश : भारतीय सांस्कृतिक परंपरा भारत और भूटान के संबंधों को केवल राजनीतिक, आर्थिक अथवा सामरिक दृष्टि से समझना पर्याप्त नहीं है। इन संबंधों की वास्तविक आत्मा उन सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और मानवीय सूत्रों में निहित है, जो दोनों देशों के समाजों को लंबे समय से परस्पर जोड़ते आए हैं। भौगोलिक निकटता ने जहाँ दोनों देशों को पड़ोसी बनाया, वहीं बौद्ध दर्शन, आध्यात्मिक परंपराओं, तीर्थ-संस्कृति, कला, साहित्य, शिक्षा तथा जन-से-जन संपर्क ने इस पड़ोसीपन को आत्मीयता में रूपांतरित किया है।

भारत-भूटान संबंधों की आधिकारिक रूपरेखा भी इस सांस्कृतिक निकटता को विशेष महत्त्व देती है। "भारत और भूटान के बीच 1949 में एक औपचारिक संधि हुई, जिसे 2007 में संशोधित किया गया। 1949 की संधि के अनुसार, भूटान अपनी विदेश नीति भारत के मार्गदर्शन में संचालित करता था, लेकिन 2007 की संधि में यह प्रावधान हटा दिया गया, जिससे भूटान को अधिक स्वतंत्रता प्राप्त हुई"।[1] भारत-भूटान मैत्री संधि में दोनों देशों के ऐतिहासिक संबंधों और दीर्घकालीन मित्रता को रेखांकित किया गया है। 2024 के संयुक्त वक्तव्य में दोनों देशों ने साझा सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक विरासत तथा जन-से-जन संबंधों को द्विपक्षीय मैत्री का आधार माना और विद्वानों, शिक्षाविदों, विद्यार्थियों, युवाओं, पर्यटकों तथा खिलाड़ियों के आदान-प्रदान को बढ़ाने पर बल दिया। यह आलेख भारत-भूटान संबंधों में संस्कृति की भूमिका को ऐतिहासिक, आध्यात्मिक, साहित्यिक, शैक्षिक तथा समकालीन सांस्कृतिक कूटनीति के संदर्भ में विश्लेषित करता है।

बीज शब्द : ऐतिहासिक, भारत-भूटान, संस्कृति, अंतरराष्ट्रीय सांस्कृतिक कूटनीति, बौद्ध धर्म, औपचारिक, हिमालय, आध्यात्मिक, साहित्य, शिक्षा।

प्रस्तावना : हिमालय केवल पर्वतों की ऊँची-ऊँची चोटियों का विस्तार नहीं है बल्कि वह सभ्यताओं, संस्कृतियों और स्मृतियों का विराट प्रदेश

भी है। उसकी घाटियों में विकसित अनेक संस्कृतियों ने भौगोलिक सीमाओं से परे जाकर एक-दूसरे को प्रभावित किया है। भारत और भूटान के संबंध इसी हिमालयी सांस्कृतिक भूगोल की देन हैं। "भारत और भूटान के आधुनिक राजनयिक संबंधों की औपचारिक स्थापना 1968 में हुई"।[2] दोनों देशों के बीच धार्मिक और सांस्कृतिक संपर्क इससे कहीं पुराना है। बौद्ध परंपरा, तीर्थयात्रा, हिमालयी संपर्क और आध्यात्मिक आदान-प्रदान ने दोनों देशों के बीच ऐसी सांस्कृतिक निकटता विकसित की, जिसे आधुनिक राजनीतिक सीमाएँ समाप्त नहीं कर सकीं। 2007 की भारत-भूटान मैत्री संधि ने दोनों देशों के संबंधों को आधुनिक संस्थागत आधार प्रदान किया। संधि में दोनों देशों के ऐतिहासिक संबंधों, पारस्परिक विश्वास और दीर्घकालीन मित्रता को स्वीकार किया गया है। इस दृष्टि से भारत-भूटान संबंधों को केवल 'दो राष्ट्रों के संबंध' कहना उनके व्यापक स्वरूप को सीमित कर देना होगा। वास्तव में यह दो समाजों, दो सांस्कृतिक परंपराओं और दो हिमालयी सभ्यतागत अनुभवों के बीच निरंतर संवाद की प्रक्रिया है।

ऐतिहासिक संबंधों की सांस्कृतिक आधारभूमि : भारत और भूटान के संबंधों में इतिहास और संस्कृति एक-दूसरे से गहरे जुड़े हुए हैं । भारत-भूटान के सांस्कृतिक, धार्मिक संबंधों को लेकर पूर्व पंतप्रधान डॉ.मनमोहन सिंह जी कहते हैं कि "भारत-भूटान की संबंधों की ऐतिहासिक पृष्टभूमि को समझने के लिए उनकी साझा सांस्कृतिक एवं धार्मिक विरासत को केंद्र में रखना आवश्यक है। बौद्ध धर्म, विशेषता:गुरु पद्मसंभव की परंपरा, दोनों देशों के बीच प्राचीन सांस्कृतिक सेतु का कार्य करती रही है। भारत-भूटान संबंध भूगौल, इतिहास, विद्या, धर्म और संस्कृतितथा प्राचीन वाणिज्यिक एवं जन-जन के संपर्कों से शक्ति प्राप्त करते हैं"।[3] दोनों देशों की निकटता केवल आधुनिक राजनीतिक समझौतों का परिणाम नहीं है, बल्कि इसके पीछे दीर्घकालीन सांस्कृतिक संपर्क की परंपरा विद्यमान है। भारत में बौद्ध धर्म के विकास और उसके विभिन्न केंद्रों ने हिमालयी क्षेत्रों की धार्मिक-सांस्कृतिक चेतना को प्रभावित किया। बोधगया, सारनाथ, राजगीर और नालंदा जैसे स्थल केवल भारतीय इतिहास के अध्याय नहीं हैं, बल्कि व्यापक बौद्ध जगत की सांस्कृतिक स्मृति के केंद्र हैं।भूटान में बौद्ध धर्म, विशेषकर वज्रयान परंपरा, सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन का अत्यंत महत्त्वपूर्ण अंग है। इस कारण भारत की बौद्ध विरासत और भूटान की बौद्ध सांस्कृतिक परंपरा के बीच स्वाभाविक आध्यात्मिक संबंध दिखाई देता है। अर्थात् इतिहास यहाँ केवल अतीत का दस्तावेज नहीं, बल्कि वर्तमान संबंधों को अर्थ प्रदान करने वाली जीवंत सांस्कृतिक स्मृति है ।

बौद्ध संस्कृति : संबंधों की आध्यात्मिक धुरी : भारत और भूटान के सांस्कृतिक संबंधों की सबसे गहरी धुरी बौद्ध विरासत है। भगवान बुद्ध के जीवन और उपदेशों से जुड़े भारतीय स्थल भूटान के बौद्ध समाज के लिए भी आध्यात्मिक महत्त्व रखते हैं। बुद्ध का संदेश शांति, करुणा, मैत्री और अहिंसा दोनों देशों की सांस्कृतिक निकटता को एक नैतिक आधार प्रदान करता है। इसीलिए बौद्ध तीर्थयात्रा केवल धार्मिक यात्रा न रहकर सांस्कृतिक संवाद का माध्यम बन जाती है। जब भारत से भगवान बुद्ध के पवित्र अवशेष भूटान ले जाए गए और थिम्फू में उनका सार्वजनिक प्रदर्शन किया गया। भारत के संस्कृति मंत्रालय के अनुसार इस आयोजन ने भारत और भूटान के साझा सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक संबंधों को और सुदृढ़ किया। भूटान की राजमाता आध्यात्मिकता विरासत को लेकर अपनी बात कहती है "बौद्ध धर्म हमारी साझा अध्यात्मिक विरासत है और भारत-भूटान के सदियों पुराने संबंधों में यह एक अटल एवं निरंतर रहने वाली कड़ी है"।[4] इस अवसर पर भारत सरकार की ओर से यह भी कहा गया कि भगवान बुद्ध की शिक्षाएँ दोनों देशों की साझा आध्यात्मिक विरासत को जोड़ने वाली कड़ी हैं। यह घटना इस बात का उदाहरण है कि किस प्रकार सांस्कृतिक विरासत समकालीन कूटनीतिक संबंधों में भी जीवंत भूमिका निभा सकती है।

साझा बौद्ध विरासत और सांस्कृतिक स्मृति : भारत और भूटान के संबंधों में बौद्ध विरासत केवल धार्मिक आस्था का विषय नहीं है; वह साझा सांस्कृतिक स्मृति का भी आधार है। 2025 में पवित्र अवशेषों के भूटान प्रवास के अवसर

पर भारत और भूटान से संबंधित 23 पवित्र स्थलों पर आधारित एक पुस्तिका भी जारी की गई, जिसे अंग्रेजी के साथ-साथ भूटानी भाषा ड्जोंगखा में उपलब्ध कराया गया। यह पहल साझा बौद्ध-सांस्कृतिक विरासत को दस्तावेजीकृत और जनसुलभ बनाने की दिशा में उल्लेखनीय है। इस प्रकार धार्मिक स्थल इतिहास, संस्कृति और आधुनिक कूटनीति के बीच संवाद के केंद्र बनते हैं।

कला, संगीत और लोक-संस्कृति : किसी भी देश की संस्कृति केवल पुस्तकों और ऐतिहासिक दस्तावेजों में नहीं रहती, वह संगीत में गूँजती है, नृत्य में गतिमान होती है, चित्रकला में आकार ग्रहण करती है और लोकपरंपराओं में पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रवाहित होती है। भारत और भूटान के बीच सांस्कृतिक संपर्कों में संगीत, नृत्य, योग, कला, हस्तशिल्प, लोक परंपराओं और सांस्कृतिक उत्सवों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। सांस्कृतिक आदान-प्रदान का यह स्वरूप दोनों देशों के लोगों को एक-दूसरे की जीवन-पद्धति और संवेदनाओं को निकट से समझने का अवसर देता है। यह समझ किसी राजनयिक दस्तावेज की भाषा से अधिक प्रभावी हो सकती है, क्योंकि कला सीधे मनुष्य के भाव-जगत से संवाद करती है।

साहित्य और शिक्षा : सांस्कृतिक संबंधों का बौद्धिक पक्ष : संस्कृति का सबसे स्थायी रूप वह है जो शिक्षा और साहित्य के माध्यम से नई पीढ़ी तक पहुँचता है। राजनीतिक संबंध सरकारों के स्तर पर विकसित होते हैं, किंतु सांस्कृतिक संबंध समाज की स्मृति में तब स्थायी होते हैं जब विद्यार्थी, शिक्षक, शोधकर्ता और साहित्यकार एक-दूसरे की भाषा, इतिहास और साहित्य को समझने लगते हैं। "भारत-भूटान के द्विपक्षीय संबंध कोई कृत्रिम राजनीतिक सरंचना नहीं हैं, उनकी शक्ति भूगोल, इतिहास, विद्वता, धर्म, संस्कृति तथा प्राचीन व्यापारिक और जन-जन के संबंधों से प्राप्त होती है" ।[5] भारत और भूटान के बीच शिक्षा के क्षेत्र में सहयोग इसी दिशा में महत्त्वपूर्ण है। साहित्य की दृष्टि से भी दोनों देशों के बीच अनुवाद, शोध, संगोष्ठियों और अकादमिक संवाद की संभावनाएँ अत्यंत व्यापक हैं। हिंदी, अंग्रेजी, ड्जोंगखा तथा भारतीय और भूटानी अन्य भाषाओं के साहित्य के बीच अनुवाद-संपर्क दोनों समाजों को एक-दूसरे के अनुभवों से परिचित करा सकता है।साहित्य की सबसे बड़ी शक्ति यही है कि वह आँकड़ों के पीछे छिपे मनुष्य को सामने लाता है ।

जन-से-जन संबंध और सांस्कृतिक कूटनीति : आज अंतरराष्ट्रीय संबंधों में 'सॉफ्ट पावर' और 'सांस्कृतिक कूटनीति' की अवधारणाएँ विशेष महत्त्व रखती हैं। किसी देश की संस्कृति, शिक्षा, कला, भाषा और जीवन-मूल्य दूसरे समाज में उसके प्रति समझ और आत्मीयता विकसित कर सकते हैं। भारत-भूटान संबंधों में सांस्कृतिक कूटनीति का स्वरूप विशेष रूप से जन-केंद्रित दिखाई देता है। साथ ही दोनों देशों के महत्वपूर्ण सांस्कृतिक विरासत स्थलों की यात्राओं के माध्यम से आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक निकटता को बढ़ाने की बात कही गई। इससे स्पष्ट है कि सांस्कृतिक कूटनीति केवल सरकारी सांस्कृतिक कार्यक्रमों तक सीमित नहीं है। विद्यार्थी का दूसरे देश में जाना, किसी कलाकार का प्रस्तुति देना, किसी शोधकर्ता का दूसरे देश के अभिलेखागार का अध्ययन करना अथवा किसी श्रद्धालु का तीर्थस्थल की यात्रा करना ये सभी सांस्कृतिक कूटनीति के जीवंत रूप हैं।

संस्कृति और पर्यटन : दोनों देशों के सांस्कृतिक संबंधों में पर्यटन का विशेष महत्त्व है। पर्यटन केवल प्राकृतिक सौंदर्य देखने का माध्यम नहीं, बल्कि किसी समाज की जीवन-पद्धति, धार्मिक परंपरा, स्थापत्य, खान-पान, लोक-कला और सामाजिक मूल्यों से परिचित होने का अवसर है।भूटान की बौद्ध स्थापत्य परंपरा, मठ, पर्व-उत्सव और लोक-संस्कृति भारतीय पर्यटकों को आकर्षित करते हैं, वहीं भारत के ऐतिहासिक और बौद्ध तीर्थस्थल भूटानी श्रद्धालुओं तथा पर्यटकों के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। इस प्रकार पर्यटन सांस्कृतिक अनुभव को प्रत्यक्ष बनाता है। पुस्तक में पढ़ी गई संस्कृति जब किसी मठ, मंदिर, संग्रहालय, पर्व या लोक-उत्सव के प्रत्यक्ष अनुभव में बदलती है, तो वह

स्मृति अधिक स्थायी हो जाती है।

समकालीन भारत-भूटान संबंधों में संस्कृति : भारत और भूटान के वर्तमान संबंध अनेक क्षेत्रों में विस्तृत हो चुके हैं- ऊर्जा, व्यापार, शिक्षा, कौशल, डिजिटल तकनीक, पर्यावरण, खेल, युवा विकास और सांस्कृतिक विरासत तक। दिसंबर 2024 के भारत-भूटान संयुक्त वक्तव्य में दोनों देशों के बीच सांस्कृतिक विरासत, शिक्षा, कौशल विकास, खेल, युवा आदान-प्रदान तथा जन-से-जन संपर्क सहित अनेक क्षेत्रों में सहयोग की प्रगति को रेखांकित किया गया। यह परिवर्तन महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इससे संस्कृति संबंधों के किसी एक अलग क्षेत्र के रूप में नहीं, बल्कि व्यापक द्विपक्षीय साझेदारी के अभिन्न अंग के रूप में सामने आती है।अर्थात् आज संस्कृति केवल अतीत की स्मृति नहीं है; वह भविष्य की साझेदारी की भाषा भी बन रही है।

संस्कृति : साझा विरासत से साझा भविष्य तक : भारत-भूटान की सांस्कृतिक निकटता का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष यह है कि इसमें समानता के साथ विविधता का सम्मान भी दिखाई देता है। दोनों देशों की अपनी विशिष्ट ऐतिहासिक स्मृतियाँ, सामाजिक संरचनाएँ और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ हैं। सांस्कृतिक संबंधों का उद्देश्य सांस्कृतिक एकरूपता स्थापित करना नहीं होना चाहिए। उसका उद्देश्य होना चाहिए, एक-दूसरे को समझना, सम्मान देना और अनुभवों का आदान-प्रदान करना।यही सांस्कृतिक संवाद का मूल स्वभाव है। आदरनीय नरेंद्र मोदी जी, भूटान की संसद के संयुक्त अधिवेशन में संबोधन करते है-"भारत-भूटान के संबंध सिर्फ शासकीय व्यवस्थाओं के कारण नहीं हैं, भारत और भूटान के संबंध सांस्कृतिक विरासत के कारण हैं, सांस्कृतिक परम्पराओं के हमारे बंधनों के कारण हैं" ।[6] भारत और भूटान के संबंध इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं कि दो पड़ोसी देश अपनी विशिष्ट पहचान को बनाए रखते हुए साझा सांस्कृतिक विरासत के आधार पर परस्पर निकटता विकसित करते हैं।

निष्कर्ष : भारत-भूटान संबंधों में संस्कृति वह अदृश्य सूत्र है जो राजनीतिक समझौतों को मानवीय ऊष्मा, आर्थिक सहयोग को सामाजिक विश्वास और कूटनीतिक संवाद को सभ्यतागत गहराई प्रदान करता है। बौद्ध विरासत ने दोनों देशों को आध्यात्मिक धरातल पर जोड़ा है। शिक्षा और साहित्य ने इस संबंध को बौद्धिक विस्तार दिया है। कला, संगीत, नृत्य और लोक-संस्कृति ने दोनों देशों के बीच भावात्मक निकटता निर्मित की है। पर्यटन और तीर्थयात्रा ने सांस्कृतिक अनुभव को प्रत्यक्ष बनाया है, जबकि विद्यार्थी, शिक्षक, शोधकर्ता और युवा दोनों देशों के बीच भविष्य के सांस्कृतिक सेतु का निर्माण कर रहे हैं। 2025 में भगवान बुद्ध के पवित्र अवशेषों का भूटान में प्रदर्शन इस सांस्कृतिक-आध्यात्मिक संबंध का अत्यंत समकालीन उदाहरण है, हजारों लोगों की सहभागिता और आयोजन का विस्तार इस विरासत की सामाजिक गहराई को भी दर्शाता है।

अतः भारत-भूटान संबंधों को समझने के लिए संस्कृति को परिधि में नहीं, बल्कि केंद्र में रखना आवश्यक है। यदि राजनीति संबंधों को दिशा देती है, अर्थव्यवस्था उन्हें संसाधन देती है, तो संस्कृति उन्हें आत्मा और स्थायित्व प्रदान करती है। हिमालय की ऊँची चोटियों के बीच विकसित भारत-भूटान संबंध हमें यह सिखाते हैं कि देशों के बीच सबसे टिकाऊ पुल केवल सड़कों, व्यापारिक मार्गों या राजनीतिक समझौतों से नहीं बनते बल्कि वे साझी स्मृतियों, आध्यात्मिक मूल्यों, साहित्य, कला और मानवीय संवेदनाओं से निर्मित होते हैं। इस अर्थ में भारत और भूटान की सांस्कृतिक यात्रा केवल अतीत की विरासत नहीं, बल्कि साझा भविष्य की संभावनाओं की यात्रा भी है।

संदर्भ-सूची :

1. डॉ. अरविंद कुमार शुक्ल, भारत-भूटान संबंध एक विस्तृत अध्ययन, Ijarms Journal, 2024, www.ijarms.org, page no-127

2. Foreign Affairs Ministry, Royal Bhutanese Embassy, New Delhi, October 7 2026(mfa.gov.bt)
3. डॉ.मनमोहन सिंह, Speech by the prime minister at the National Assembly of Bhutan, भारत सरकार, विदेश मंत्रालय, 2008 (mea.gov.in)
4. Business Standard, Aug 23, 2018(business-standard.com)
5. Speech by the Prime Minister at the National Assembly of Bhutan, 2008.Ministry of External Affairs(mea.gov.in)
6. नरेंद्र मोदी, भूटान की संसद के संयुक्त अधिवेशन में संबोधन, 17 जून 2014 (www.narendramodi.in)
7. Press Information Bureau, Government of India, Exposition of Holy Relics of Lord rBuddha in Bhutan Extended by a Week Following Public Demand, 17 November 2025.
8. Press Information Bureau, Government of India, Sacred Buddha Relics Return to India After 17-Day Exposition in Bhutan, 25 November 2025.
9. Ministry of Foreign Affairs and External Trade, Royal Government of Bhutan, Joint Statement on the Official Visit of Prime Minister of Bhutan to India, March 2024.

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-79-83

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 79-83
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

कोमल चुघ

शोधार्थी, कवयित्री बहिनाबाई चौधरी उत्तर महाराष्ट्र विश्वविद्यालय, जलगांव, महाराष्ट्र

शोध निर्देशक :

डॉ. महेंद्र रघुवंशी

Corresponding Author :

कोमल चुघ

शोधार्थी, कवयित्री बहिनाबाई चौधरी उत्तर महाराष्ट्र विश्वविद्यालय, जलगांव, महाराष्ट्र

भूटानी संस्कृति एवं लोक साहित्य की अस्मिता का अध्ययन

"पर्वतों की गोद में बसा
सुंदर निर्मल शीतल संसार
धरती गाती संस्कृति का
मधुर मीठा मल्हार
हिमशिखरों की श्वेत चादर पर
बसता नदियों का निर्मल गान
भूटान की हर घाटी में सुनाई देता
पूर्वजों का गौरव गान !!"

शोध सार : हिमालय की पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य स्थित भूटान अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान प्राकृतिक सौंदर्य बौद्ध जीवन धर्म जीवन दृष्टि कथा समूह समृद्ध लोक परंपरा के कारण विश्व में विशिष्ट स्थान रखता है भूटानी संस्कृति केवल धार्मिक आस्था अथवा पारंपरिक रीति रिवाज तक ही सीमित नहीं है बल्कि इसमें लोक कथाएं लोकगीत नृत्य संगीत पर्व उत्सव वेशभूषा स्थापत्य भाषा और सामुदायिक जीवन का महायान इसकी बहुपरंपरा विशेषता है' **दुकपा कांगयू** 'परंपरा का गहरा प्रभाव इसमें दिखाई देता है, भूटान की पारंपरिक कलाएं नृत्य और संगीत आज भी धार्मिक एवं सामाजिक समारोह का अभिन्न अंग है।

भूटान दुनिया के सबसे प्राचीन पर्वतीय राज्यों में से एक है अब तक यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो चुकी है कि- "वास्तव में भूटान कोई सामान्य देश नहीं है बल्कि दुनिया के कुछ बचे हुए राजशाही राज्यों में से एक है, एक ऐसा राज्य जो परिवर्तनशील अवस्था में है जो पुरानी और नई परंपराओं एवं आधुनिक जड़ों और पंखों के बीच संतुलन बनाए रखने के लिए संघर्ष कर रहा है।"[1]

भूटानी संस्कृति का महत्वपूर्ण पहलू इसका साहित्य और लोक कथाएं हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ती रहती हैं,"अपने आकार के हिसाब से भूटान में 23 स्थानीय भाषाएं बोली जाती हैं जिनमें" **जोंगखा**"राष्ट्रीय भाषा है दादा-दादी की कहानी सुनते हुए बड़े होने पर आपको जो एहसास होता है यह वही एहसास है, भूटानी लोग जन्मजात

कहानीकार होते हैं।"[2]

कुंजी शब्द : प्रकृति भूटान हिमालय पारंपरिक वेशभूषा लोकगीत त्योहार अस्मिता बौद्ध दर्शन

शोध विस्तार : टान का इतिहास काफी पुराना है जिसमें कई भाषाएं हैं, भाषा ही नहीं वरन भूटान में एक ऐतिहासिक परंपरा है जो पीढ़ी दर पीढ़ी मां से बेटी को हस्तांतरित होती है ताकि हर पीढ़ी को संस्कृति एवं लोक परंपरा मिलती रहे।

"यहां बौद्ध धर्म का इतिहास सदियों पुराना है देश के लगभग हर हिस्से में आपको खूबसूरत मठ, स्तूप और प्रार्थना चक्र देखने को मिलेगा भूटान की पारंपरिक वास्तुकला भी बेहद खास है यहां इमारत पर खूबसूरत चित्रकारी और लकड़ी की नक्काशी देखने को मिल जाती है।"[3]

साल 2022 की जनगणना और आधिकारिक आकड़ों के अनुसार भूटान की आबादी करीब 8 लाख के आसपास है कम आबादी और विशाल प्राकृतिक क्षेत्र के कारण भूटान के कई हिस्से आज भी बेहद शांत और प्राकृतिक रूप से दिखाई देते हैं भूटान की राष्ट्रीय भाषा जॉन का है जबकि अंग्रेजी का भी शिक्षा और प्रशासन के क्षेत्र में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है।

हिमालय की गोद में बैठा !
एक सुंदर देश संस्कृति गाता है !
पर्वत उसकी स्मृति बनकर !
नदियों में इतिहास सुनाता है !
मुखौटों में इसके कथा पुरानी !
लोक–धुनों में मन मुस्कुराता है !
पीढ़ी दर पीढ़ी अपनी थाती में !
भूटान प्यार संजोता जाता है...!!

भूटान केवल अपनी प्राकृतिक सुंदरता के लिए ही नहीं बल्कि अपनी अनोखी जीवन दृष्टि के लिए भी पूरी दुनिया में मशहूर है यहां विकास केवल आर्थिक प्रगति से नहीं बल्कि लोगों की खुशहाली और जीवन की गुणवत्ता से जोड़ा जाता है यह देश प्रकृति प्रेमियों के लिए किसी स्वर्ग से काम नहीं है अतः भूटान सिर्फ एक देश नहीं बल्कि हिमालय की गोद में बसा प्रकृति शांति इतिहास और बहुत संस्कृति का अनमोल संगम है।

भूटान की संस्कृति में मुख्य रूप से वज्रयान बौद्ध धर्म और हिमालय जीवन शैली गहराई से जुड़ी हुई है भूटान की संस्कृति में बौद्ध धर्म का अत्यधिक प्रभाव है देश के हर कोने में मत लांग स्तूप और प्रार्थना चक्र देखने को मिलते हैं।

यहां के धार्मिक त्योहार जिन्हें नृत्य कहा जाता है यहां पारंपरिक और धार्मिक मुखौटा नृत्य किए जाते हैं यह नृत्य गुरु रिपोर्ट से के जीवन और ऐतिहासिक कथाओं पर आधारित होते हैं भूटान की संस्कृति में भूतनी लोक संगीत शिवांग दो तार वाला वायलिन इमनेस एक बड़ा अरबी और लिंगम वाली बांसुरी जैसे पारंपरिक वाद्य यंत्रों का मुख्य रूप से उपयोग कियाजाता है।

भूतनी संस्कृति के वेशभूषा जैसे पुरुष पारंपरिक रूप से हो नमक घटना लंबी पोशाक पहनते हैं और महिलाएं कीड़ा नमक अकाल लंबी ड्रेस पहनती है जो उनकी विशिष्ट पहचान है।

भूटान में हस्तशिल्प और बुनाई कला एक जीवित परंपरा की तरह है जो पीढ़ी दर पीढ़ी मन से बेटी को मौखिक और व्यावहारिक रूप से सोप जाती है यहां के पारंपरिक वेस्टन और जटिल डिजाइन में की पूरी दुनिया में प्रशंसा की जाती है इसके अलावा भूटान में खानपान में पनीर एवं मिर्च का प्रयोग बहुत आयात से मिलता है यहां की राष्ट्रीय दिशा इमा दक्षि है जो हरी मिर्च और एक या गाय के पनीर से बनाई जाती है।

बौद्ध धर्म का इतिहास पुराना
जड़ से रिश्ते टूटे नहीं
लोक बचे तो संस्कृति बचेगी
संस्कृति की लौ छूटे नहीं....!!

भूटानी लोक साहित्य में मौखिक परंपरा का विशेष महत्व है लोक कथाएं एवं किंवदंतियां गीत, कहावतें और धार्मिक आख्यानों में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक संस्कृत स्मृति को स्थानांतरित करते हैं। आधुनिकता एवं वैश्विक प्रभाव के बावजूद भूटान ने अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को संरक्षित रखने के लिए कई संस्थागत प्रयास किए हैं यूनेस्को के अनुसार भूटान ने वर्ष 2005 में अमूर्त सांस्कृतिक विरासत संबंधी 2003 कन्वेंशन का अनुमोदन किया और मुखौटा नृत्य डांस ऑफ़ थे ड्रम्स फ्रॉम 2008 में यूनेस्को के प्रतिनिधि सूची में शामिल किया।

संस्कृति मनुष्य के सामूहिक जीवन की वह रचनात्मक अभिव्यक्ति है जिसमें उसकी स्मृतियां आस्थाएं जीवन मूल्य परंपराएं और समाज का अनुभव सुरक्षित रहते हैं किसी भी राष्ट्र की वास्तविक पहचान केवल उसके राजनीतिक भूगोल से नहीं होती बल्कि उसकी संस्कृती और लोक जीवन से होती है। भूटान का संस्कृत संचार इसी दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यहां प्राकृतिक परिवेश और सांस्कृतिक जीवन के संबंधों में गहराई अभिभूत है। पर्वत नदियां जलवान मठ उत्सव लोकगीत लोक नृत्य आदि मिलाकर भूटानी संस्कृति का निर्माण करते हैं।

भूटानी संस्कृती में धार्मिक एवं आध्यात्मिकता का विशेष महत्व है बौद्ध दर्शन ने भूटान के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन को गहराई से प्रभावित किया है। जिसमें धार्मिक विश्वास कला नृत्य स्थापत्य और पर्व उत्सव में दिखाई देते हैं भूटानी संस्कृति में प्रकृति के प्रति सम्मान बहुतायत दृष्टि से मिलता है। इसमें प्रकृति भूटानी जीवन का केवल भौगोलिक परिवेश ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक अनुभवों का हिस्सा मानी जाती है।

भूटानी संस्कृति में त्योहार धार्मिक आयोजनों और लोक नृत्य में समुदायिकता दिखाई देती है इसके अलावा भूटान के राष्ट्रीय विकास दृष्टि में सांस्कृतिक संरक्षण को विशेष महत्व दिया गया है नृत्य के चार प्रमुख स्तंभों में संस्कृत का संरक्षण और संवर्धन एक महत्वपूर्ण अंग माना गया है।

भूटानी लोक साहित्य सामूहिक स्मृति का भंडार है, किसी भी राष्ट्र का लोक साहित्य किसी समाज की सामूहिक स्मृति को पीढ़ी दर पीढ़ी आगे ले जाने का माध्यम है।

भाषा केवल शब्द नहीं माटी की धड़कन होती है
लोक की सांसों में फूली पीढ़ियों की स्मृति होती है
दादी की उन कथाओं में चूल्हे की उस आँच में
पनघट की मीठी बातों में खेतों की हरियाली में
संस्कृति चुपके से मुस्कुराती है...!!

भूटानी संस्कृति की सबसे प्रमुख विशेषता इसकी परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलित स्थापित करने की प्रवृत्ति है, भूटान में पारंपरिक कलाएं आज भी केवल संग्रहालय में सुरक्षित नहीं है बल्कि नृत्य संगीत उत्सव धार्मिक समारोह सामाजिक जीवन में सक्रिय रूप से दिखाई देते है भूटान के आधिकारिक संस्कृत विवरण के अनुसार पारंपरिक कला एवं शिल्प आज भी जीवित परंपराओं के रूप में प्रचलित हैं।

भूटानी संस्कृति के प्रमुख आधार इस प्रकार हैं :-

- बौद्ध जीवन दृष्टि।
- धार्मिक एवं लोक पर्व।
- सामुदायिक जीवन।
- मौखिक परंपरा।
- प्रकृति के प्रति सम्मान
- पारंपरिक कला एवं शिल्प
- विशिष्ट स्थापत्य
- लोक विश्वास

- लोकगीत एवं लोक नृत्य। भाषा एवं साहित्य

भूटान के राष्ट्रीय संग्रहालय ने भी अपनी शैक्षिक एवं शोध गतिविधियों में लोक कथाओं पारंपरिक नृत्य भजन और क्षेत्रीय बोलियां जैसी अमूर्त सांस्कृतिक परंपराओं का अध्ययन का विषय बनाया है इस प्रकार भूटानी लेख एवं साहित्य केवल मनोरंजन की सामग्री नहीं है बल्कि वह समाज के नैतिक क्षेत्र, चेतन धार्मिक मनको, विश्वास और ऐतिहासिक स्मृति का वाहक माना गया है।

भूटानी लोक कथाएं एवं लोक विश्वास समाज का दर्पण माना गया है। लोक कथा किसी समाज के अनुभवों की अभिव्यक्ति होती है। भूटानी लोक कथाओं में पर्वत वन नदियां पशु पक्षी देवस्थान संत आध्यात्मिक शक्तियां और स्थानीय नायक विभिन्न रुपों में उपस्थित होते हैं, इन कथाओं का प्रयास होता है :-

- सत्य और असत्य का संघर्ष। कर्म और नैतिकता
- अच्छा ही और बुराई का द्वंद। सामुदायिक जीवन
- प्रकृति के प्रति सम्मान। सुधारवादी परंपरा
- धार्मिक आस्था। कला और कल्पना का द्वंद

भूटानी संस्कृत में इस प्रकार के पारंपरिक और आधुनिक मूल्य अभिव्यक्त होते हैं इसलिए भूटानी लोक कथाओं में लोकमत के भीतर उपस्थित नैतिक और सांस्कृतिक चेतना को समझने का महत्वपूर्ण माध्यम है। भूटान में पर्व उत्सव और सांस्कृतिक जीवन में सामूहिकता दिखाई देती है, भूटान के विभिन्न क्षेत्रों में धार्मिक और लोक प्रमुख की समृद्ध परंपरा है। इन उत्सवों में धार्मिक अनुष्ठान, नृत्य, संगीत, कथाएं और सामुदायिक सहभागिता एक साथ दिखाई देती है। भूटान के **बुमथांग** क्षेत्र के पर्वतों पर किए गए दस्तावेजीकरण में त्सेच्यु, कूचोद, रबने का कुछ और रागिनी या कंसल मानी और मेवांग जैसे धार्मिक लोक पर्वों का उल्लेख मिलता है इन उत्सवों में विश्वास किंवदंतियां कथाएं लोकगीत और सामुदायिक परंपराएं जुड़ी हुई हैं इससे स्पष्ट होता है की भूटानी पर्व केवल धार्मिक आयोजन नहीं है बल्कि वह जीवित लोक संस्कृति के मंच हैं।

आओ सुने कहानी अपनी माटी की मधुर बानी
भूटान की मिट्टी की खुशबू मन को है पास बुलाती
मुखौटों में इतिहास बोलता, नृत्य में परंपरा मुस्कुराती
त्योहारों के रंगों में पीढ़ी दर पीढ़ी संस्कृत आती
प्रार्थना के ध्वज हवाओं में शांति का संदेश सुनाते
छोटे-छोटे गांव के आंगन अपनापन खूब लुटाते। ।

भूटान की भाषा संस्कृति की आत्मा है। भूटान में अनेक भाषाएं और क्षेत्रीय बोलियों का अस्तित्व उसकी सांस्कृतिक विविधता को दर्शाता है भूटान के आधिकारिक संस्कृत विवरण में अनेक बालियां और भाषा ही विविधता का उल्लेख मिलता है भाषा के माध्यम से लोक कथा बचती है लोकगीत बजाते हैं। स्मृतियां बसती हैं और सांस्कृतिक पहचान बचती है, तथा भूटानी भाषा की विविधता का संरक्षण उसके लोक साहित्य के संरक्षण से भी सीधा जुड़ा हुआ है भूटानी स्थापत्य अपनी विशिष्ट शैली के लिए प्रसिद्ध है, मठ के लिए जैसे जगजोंग मंदिर और पारंपरिक ग्रह भूटानी सांस्कृतिक परिदृश्य के प्रमुख अंग है। यहां स्थापत्य में धार्मिक त्रिकोण, स्थानीय कला और प्राकृतिक परिवेश का सुंदर संबंध में दिखाई देता है।

अतः भूटान की सांस्कृतिक नीति में पारंपरिक स्थापत्य कला और शिल्प के राष्ट्रीय पहचान के संरक्षण में जोड़ा गया है भूटान के सांस्कृतिक जीवन पर बौद्ध दर्शन का गहरा प्रभाव दिखाई देता है, धार्मिक आस्था ने वहां की कला साहित्य स्थापत्य संगीत नृत्य और सामाजिक मूल्यों को प्रभावित किया है। करुणा शांति संयम अहिंसा और आध्यात्मिकता जैसे मूल्य भूटानी सांस्कृतिक चेतना में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

वर्तमान समय में वैश्वीकरण ने संसार के लगभग सभी सीमाओं को प्रभावित किया है भूटान भी इसे अछूता नहीं है आधुनिक तकनीक डिजिटल मीडिया पर्यटन उपभोक्तावाद और वैश्विक जीवन शैली ने भूटानी समाज में परिवर्तन उत्पन्न किए हैं भूटान ने अपनी अमूर्त सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण की दिशा में संस्थागत प्रयास किए हैं। यूनेस्को के अनुसार भूटान ने **'12 अक्टूबर 2005 को 2003 के अमूर्त सांस्कृतिक विरासत कन्वेंशन '** का अनुमोदन किया भूटान में राष्ट्रीय संग्रहालय राष्ट्रीय पुस्तकालय एवं अभिलेखागार तथा संस्कृति से संबंधित सरकारी संस्थाएं संस्कृत सामग्री के संरक्षण और अध्ययन में भूमिका निभाती हैं । राष्ट्रीय संग्रहालय स्वयं शोधकर्ताओं के लिए दुर्लभ कलाकृतियां पांडुलिपियों और सांस्कृतिक सामग्रियों का महत्वपूर्ण केंद्र है।

भारत और भूटान के बीच मैत्रीपूर्ण पूर्ण संबंध आपसी विश्वास कूटनीति और आर्थिक सहयोग पर आधारित एक अनूठा और मिसाल पेश करने वाला रिश्ता है दोनों देशों के बीच संबंधों का आधार 1949 की मैत्री संधि है जिसे वर्ष 2007 में संशोधित किया गया है भूटान ने अपनी विदेश नीति के संचालन में अधिक स्वायत्तता दी है जो संप्रभु समानता पर आधारित है दोनों देशों के बीच नियमित उच्च स्तरीय राजनीतिक और कूटनीति डर आपसी आत्म्यता को दर्शाते हैं।

निष्कर्ष : "भूटानी संस्कृति हिमालय की भौगोलिक संरचना, बौद्ध दर्शन, लोकविश्वास, प्रकृति, सामुदायिक जीवन और मौखिक परंपरा के सम्मिलित प्रभाव से निर्मित एक विशिष्ट सांस्कृतिक संसार है। भूटान की संस्कृति का सबसे सुंदर पक्ष यह है कि यहाँ लोक और शास्त्र, धर्म और जीवन, प्रकृति और मनुष्य तथा परंपरा और आधुनिकता के बीच संवाद दिखाई देता है। "भूटानी लोककथाएँ अतीत की स्मृतियों को सँजोती हैं, लोकगीत जनजीवन की भावनाओं को स्वर देते हैं, लोकनृत्य इतिहास और आस्था को गतिशील बनाते हैं तथा पर्व-उत्सव सामुदायिक एकता को मजबूत करते हैं। अतः भूटानी संस्कृति को केवल एक देश की संस्कृति के रूप में देखना पर्याप्त नहीं होगा। यह मानव और प्रकृति के सह-अस्तित्व, सांस्कृतिक स्मृति और परंपरा के संरक्षण का एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण भी है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि भूटानी लोकसाहित्य को आधुनिक तकनीक के माध्यम से दस्तावेजीकृत किया जाए, विद्यालय एवं विश्वविद्यालय स्तर पर उसका अध्ययन बढ़ाया जाए तथा युवा पीढ़ी को अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जोड़ा जाए। अंततः कहा जा सकता है —

लोक बचेगा तो लोकगीत बचेंगे,
लोकगीत बचेंगे तो स्मृतियाँ बचेंगी।
स्मृतियाँ बचेंगी तो संस्कृति जीवित रहेगी,
और संस्कृति जीवित रहेगी तो
मनुष्य अपनी जड़ों से जुड़ा रहेगा।

संदर्भ सूची :

1. UNESCO, Intangible Cultural Heritage – Bhutan.
2. ICH UNESCO
3. Royal Bhutanese Embassy, New Delhi, Culture.
4. Ministry of Foreign Affairs Bhutan
5. UNESCO, Oral Traditions and Expressions including Language as a Vehicle of Intangible Cultural Heritage.
6. ICH UNESCO
7. National Museum of Bhutan, Resource & Education.
8. The National Museum of Bhutan

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-84-87

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 84-87
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. गजानन हरिभाऊ सर्वज्ञ

सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, राजस्थान केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बांदरसिंदरी, रा. किशनगढ़, अजमेर, राजस्थान (भारत)

Corresponding Author :

डॉ. गजानन हरिभाऊ सर्वज्ञ

सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, राजस्थान केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बांदरसिंदरी, रा. किशनगढ़, अजमेर, राजस्थान (भारत)

सांस्कृतिक सौहार्द का दस्तावेज : डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' का यात्रा-वृत्तांत 'खुशियों का देश भूटान'

शोध सार : प्रस्तुत शोध आलेख डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' द्वारा रचित संवेदनशील एवं वैचारिक यात्रा-वृत्तांत **'खुशियों का देश : भूटान'** के विभिन्न अध्यायों के गहन, बहुआयामी एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन पर आधारित है। यह आलेख केवल दो पड़ोसी देशों के बीच कूटनीतिक संबंधों का इतिवृत्त मात्र नहीं है, बल्कि यह भारत और भूटान के मध्य सदियों पुराने ऐतिहासिक, रणनीतिक, आध्यात्मिक एवं आत्मीय संबंधों का एक जीवंत दस्तावेज है। इस आलेख का मूल आधार केंद्र बिंदु के रूप में डॉ. निशंक की कृति **'खुशियों का देश : भूटान'** है, जिसके माध्यम से भूटान की विशिष्ट भौगोलिक स्थिति, बौद्ध संस्कृति के तांत्रिक व दार्शनिक आयामों, पर्यटन की असीम संभावनाओं और विश्वभर में अनुकरणीय बन चुकी भूटान की लोक-कल्याणकारी अवधारणा— **'सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता' (Gross National Happiness - GNH)** का विस्तृत मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक के अध्यायों का विश्लेषण करते हुए यह आलेख रेखांकित करता है कि कैसे भूटान अपनी सख्त पर्यावरण नीतियों, कार्बन-नेगेटिव स्थिति, पारंपरिक वेशभूषा ('घो' और 'कीरा') तथा टाइगर नेस्ट मठ जैसे ऐतिहासिक स्थलों के साथ आधुनिकता के इस दौर में भी अपनी मौलिक संस्कृति को सहेजे हुए है। इसके साथ ही, हिन्दी साहित्य में यात्रा-वृत्तांत की विधा के सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य को पुष्ट करते हुए, इस आलेख में महापंडित राहुल सांकृत्यायन की 'घुमक्कड़ी' की अवधारणा—जो यात्रा को ज्ञानार्जन, जिज्ञासा और सांस्कृतिक समन्वय का मुख्य माध्यम मानती है—तथा प्रख्यात साहित्यकार एवं विचारक अज्ञेय के यात्रा-दर्शन (जो यात्रा को मनुष्य की संकीर्ण सीमाओं से परे प्रकृति और ब्रह्मांड के साथ एकाकार होने का माध्यम मानता है) को आधार बनाया गया है। इसके साथ ही, हिंदी साहित्य में हिमालयी संस्कृति, प्रकृति और भारतीय उपमहाद्वीप के सांस्कृतिक सौहार्द की परंपरा को विस्तार देते हुए, छायावादी युग के शीर्ष कवि सुमित्रानंदन पंत ने हिमालय के प्राकृत और आध्यात्मिक

स्वरूप का अंकन करते हुए इसके पावन परिवेश का स्मरण किया है। वहीं, प्रगतिशील कवि केदारनाथ अग्रवाल ने भी हिमालय और प्रकृति को मनुष्य की श्रम संस्कृति और सामाजिक समरसता से जोड़ते हुए पर्वतीय अंचलों के सहज, सरल और संघर्षशील जीवन को अपनी रचनाओं का केंद्रीय स्वर बनाया है। इन तमाम साहित्यिक दृष्टियों, राहुल सांकृत्यायन के घुमक्कड़ दर्शन, अज्ञेय के यात्रा-चिंतन तथा पंत एवं अग्रवाल की प्रकृति-केंद्रित काव्य-दृष्टि के समन्वय से यह शोध आलेख भूटान की पारंपरिक जीवनशैली, पर्यावरण-संरक्षण के प्रति उसकी अनूठी प्रतिबद्धता और सांस्कृतिक सौहार्द के बहुविध आयामों को अत्यंत प्रामाणिक रूप से रेखांकित करता है।

बीज शब्द : भारत-भूटान संबंध, सांस्कृतिक सौहार्द, यात्रा-वृत्तांत, प्रकृति, सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता (GNH), हिमालयी संस्कृति, पर्यावरण संरक्षण, बौद्ध दर्शन, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, शिक्षा, पर्यटन आदि।

भूमिका : मनुष्य जन्म से लेकर अंतिम साँस तक अनगिनत यात्राओं को पूरा करता है। यात्राएँ मनुष्य के जीवन का अभिन्न हिस्सा हैं। यह जरूरी नहीं कि वह किसी देश या प्रदेश की यात्रा ही करे; प्रतिदिन की चुनौतियाँ भी एक यात्रा ही हैं जो उसे अनुभव-संपन्न बनाती हैं। किंतु साहित्य में विविध भूप्रदेशों की यात्राएँ करना और अपने अनुभवों से दूसरों को दिशा देने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। इसमें हिंदी साहित्य में प्रमुख तौर पर राहुल सांकृत्यायन का नाम लिया जाता है। प्रस्तुत शोध-आलेख में डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' के यात्रा-वृत्तांत **'खुशियों का देश : भूटान'** में चित्रित भूटान देश के सांस्कृतिक एवं भौगोलिक परिवेश को रेखांकित किया गया है। भूटान भारत का पड़ोसी देश है, जहाँ की प्राकृतिक सुंदरता पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करती है। भूटान में राजशाही और लोकतंत्र (लोकशाही) दोनों व्यवस्थाएँ विद्यमान हैं।

यात्रा-वृत्तांत केवल स्थानों की भौगोलिक यात्रा का नाम नहीं है, बल्कि यह किसी देश या समाज की संस्कृति, इतिहास, लोकजीवन और मनोवैज्ञानिक थाती को उद्घाटित करने वाली जीवंत विधा है।

हिंदी साहित्य में 'घुमक्कड़ी' को धर्म और ज्ञान प्राप्ति का साधन मानने वाले महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने यात्रा-वृत्तांत के संदर्भ में लिखा है कि, **"घुमक्कड़ होना मनुष्य की मूल प्रवृत्ति है। यात्राएँ मनुष्य के ज्ञान के क्षितिज को विस्तृत करती हैं तथा विभिन्न संस्कृतियों के बीच संवाद और आत्मीयता के सेतु का निर्माण करती हैं."** यह कथन केवल यात्रा के भौतिक पक्ष को नहीं, बल्कि उसके दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक महत्व को रेखांकित करता है, जो मनुष्य को एक बेहतर, उदार और विश्व-दृष्टि से संपन्न प्राणी बनाता है।

प्रसिद्ध साहित्यकार और विचारक सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' ने अपने यात्रा-साहित्य और निबंधों में यात्रा के मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक पक्ष को रेखांकित करते हुए माना है कि **"यात्रा मनुष्य को अपनी अहंकेंद्रित और संकीर्ण सीमाओं से बाहर निकालकर संपूर्ण ब्रह्मांड, प्रकृति और लोक-जीवन के साथ तादात्म्य स्थापित करने का अवसर देती है."** अज्ञेय के अनुसार, यात्रा केवल स्थानों को देखना नहीं है, बल्कि यह बाह्य जगत के माध्यम से अपने अंतस की थाह लेने की एक प्रक्रिया है।

हिंदी यात्रा-साहित्य की इसी समृद्ध परंपरा के आलोक में डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' का यात्रा-वृत्तांत **'खुशियों का देश : भूटान'** भारत और भूटान के बीच सदियों पुराने आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और आत्मीय संपर्कों को नए आयाम प्रदान करता है। भूटान हिमालय की गोद में बसा एक शांत, स्वतंत्र और भूमि-बंद राष्ट्र है, जिसकी सीमाएँ भारत के विभिन्न प्रांतों (सिक्किम, पश्चिम बंगाल, असम और अरुणाचल प्रदेश) से मिलती हैं। क्षेत्रफल की दृष्टि से छोटा होने के बावजूद सामरिक और आध्यात्मिक दृष्टि से इसका अत्यधिक महत्त्व है। भारत की सुरक्षा की दृष्टि से भूटान की स्थिति को **'अभंग' (Achilles Heal)** की संज्ञा दी गई है, विशेषकर सिलीगुड़ी कॉरिडोर ('चिकेन नेक') के संदर्भ में। यह कहा जा सकता है कि भूटान केवल एक पड़ोसी या शांत देश मात्र नहीं है, बल्कि वह भारतीय उपमहाद्वीप की भू-राजनीतिक और सामरिक स्थिरता का एक ऐसा आधार स्तंभ है, जिस पर भारत की राष्ट्रीय अखंडता

और पूर्वोत्तर की सुरक्षा प्रत्यक्ष रूप से टिकी हुई है।

भारत और भूटान के औपचारिक संबंधों की शुरुआत 1865 की सिनचुला संधि से हुई थी, जिसे 1949 में पुनर्जीवित किया गया और दोनों देशों के मध्य एक नई संधि पर सहमति बनी। इसके तहत भारत ने भूटान के आंतरिक मामलों में अहस्तक्षेप की नीति अपनाई, जबकि भूटान के विकास हेतु आर्थिक और तकनीकी सहायता निरंतर प्रदान की जाती रही। वर्तमान भू-राजनीतिक उथल-पुथल और वैश्वीकृत उपभोगवाद के इस दौर में भारत और भूटान के संबंध केवल कूटनीतिक समझौतों तक सीमित न रहकर **"सगे भाइयों जैसा रिश्ते"** की मानवीय गहराई को स्पर्श करते हैं। कृषि, सड़क निर्माण, उन्नत स्वास्थ्य, शिक्षा और रक्षा जैसे बुनियादी क्षेत्रों में भारत ने भूटान के साथ निरंतर आत्मीय सहयोग निभाया है। दोनों देशों की आर्थिकी की रीढ़ कहे जाने वाले जल-विद्युत क्षेत्र में चुक्खा जल-विद्युत परियोजना से लेकर पुनात्संग्चु-1, पुनात्संग्चु-2 और मांगदेचु जैसी विशालकाय परियोजनाएँ इस द्विपक्षीय मैत्री की मजबूत धुरी के रूप में स्थापित हैं। इसी आत्मीयता को रेखांकित करते हुए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपनी प्रथम विदेश यात्रा के दौरान भूटान को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुए यह ऐतिहासिक वक्तव्य दिया था कि "**उसका अर्थ भारत के लिए भूटान और, भूटान के लिए भारत है.**" यह इस बात का प्रमाण है कि भारत बिना किसी आधिपत्यवादी या स्वार्थी शर्त के, मित्रता के शाश्वत सूत्र में बंधा रहकर भूटान की सतत प्रगति और लोक-कल्याण के लिए पूर्ण रूप से प्रतिबद्ध है।

सन् 1907 में भूटान में राजशाही व्यवस्था की सुदृढ़ स्थापना हुई थी, जिसके पश्चात् देश ने कभी भी किसी बड़े राजनीतिक टकराव या आंतरिक अस्थिरता का सामना नहीं किया। भूटान के पहले राजा उग्येन वांगचुक थे, जिन्हें उनकी असाधारण कार्यकुशलता और शांतिप्रियता के कारण 'दुरुप ग्यालो' की उपाधि से सम्मानित किया गया। उनके उत्तराधिकारियों के रूप में जिग्मे वांगचुक और तत्पश्चात जिग्मे दोरजी वांगचुक ने शासन की बागडोर संभाली; जिनमें से जिग्मे दोरजी वांगचुक को आधुनिक भूटान की सुचारु राजनीतिक व्यवस्था का सूत्रधार मानते हुए 'पितामह' की उपाधि दी गई।

परंपरागत राजतंत्र से आधुनिक लोकतंत्र की ओर बढ़ने का यह सफर भूटान के चौथे सम्राट जिग्मे सिंग्ये वांगचुक के दूरदर्शी नेतृत्व में तय हुआ, जिन्होंने देश के भावी विकास की नई रूपरेखा तय करते हुए विश्व मंच पर **'सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता' (Gross National Happiness)** का क्रांतिकारी विचार रखा। समकालीन वैश्विक अर्थशास्त्र और विकास के प्रचलित मॉडलों के विपरीत, भूटान ने दुनिया को GNH के रूप में एक ऐसा वैकल्पिक और मानवतावादी दर्शन दिया है जो भौतिकता से ऊपर उठकर मानवीय संवेदनाओं को प्राथमिकता देता है। भूटान का यह दृढ़ विश्वास है कि किसी भी राष्ट्र की सच्ची उन्नति केवल सकल घरेलू उत्पाद (GDP) के आँकड़ों, औद्योगिक चकाचौंध या भौतिक सुख-सुविधाओं की वृद्धि से नहीं मापी जा सकती। इस दर्शन के चार आधारभूत स्तंभ हैं— सामाजिक और आर्थिक विकास, सांस्कृतिक व धार्मिक धरोहर का संरक्षण, पर्यावरण की सुदृढ़ सुरक्षा, तथा सुशासन एवं सामाजिक समानता। यह अभिनव मॉडल संपूर्ण विश्व को यह गहन संदेश देता है कि विकास का अंतिम लक्ष्य केवल आर्थिक संपन्नता हासिल करना नहीं है, बल्कि प्रत्येक नागरिक को एक भयमुक्त, शांत, संतोषपूर्ण, प्रकृति-सम्मत और गरिमामयी जीवन प्रदान करना होना चाहिए।

राजशाही और जनसाधारण के बीच आपसी विश्वास का ही परिणाम था कि 24 मार्च 2008 को भूटान में नेशनल असेंबली के ऐतिहासिक चुनाव संपन्न हुए। इस प्रकार, भूटान ने बिना किसी रक्तरंजित संघर्ष के राजतंत्र से संसदीय लोकतंत्र की एक अत्यंत शांतिपूर्ण और सहज यात्रा तय की है।

भूटान अपनी नैसर्गिक सुंदरता, अक्षुण्ण बौद्ध संस्कृति, सामाजिक स्वच्छता और लोक-अनुशासन के कारण वैश्विक पर्यटन मानचित्र पर एक विशिष्ट स्थान रखता है। भारतीय पर्यटकों के लिए भूटान का गमन भौगोलिक

निकटता के साथ-साथ सांस्कृतिक अपनत्व के कारण अत्यंत सहज हो जाता है, जहाँ बिना किसी जटिल वीज़ा प्रक्रिया के भारतीय मुद्रा का प्रचलन भी सुगमता प्रदान करता है। पारो, थिंपू और पुनाखा जैसे ऐतिहासिक और प्राकृतिक स्थल इस देश के सांस्कृतिक वैभव को उजागर करते हैं। पारो की घाटियों में ऊँचाई पर स्थित विश्वप्रसिद्ध **'टाइगर नेस्ट मठ'** भूटानी स्थापत्य कला और आध्यात्मिक आस्था का संगम स्थल है। वहीं, राजधानी थिंपू में आधुनिक ट्रैफिक लाइट प्रणालियों के स्थान पर प्रशिक्षित पुलिसकर्मियों द्वारा नियंत्रित शांतिपूर्ण यातायात व्यवस्था तथा राष्ट्रीय पशु 'ताकिन' का संरक्षण भूटानी जीवनशैली की विशिष्टताओं को दर्शाता है। देश की पर्यावरण-नीति इतनी सख्त और सजग है कि यह अपने विस्तृत वनाच्छादित क्षेत्रों, नदियों और दुर्लभ जैव-विविधता को आधुनिक विकास की अंधी दौड़ से पूरी तरह बचाकर रखती है।

निष्कर्ष : डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' का यात्रा-वृत्तांत **'खुशियों का देश : भूटान'** केवल भौगोलिक यात्रा का विवरण नहीं है, बल्कि यह राहुल सांकृत्यायन की घुमक्कड़ी परंपरा, अज्ञेय के यात्रा-दर्शन तथा हिंदी की हिमालयी एवं प्रकृति-केंद्रित काव्य-दृष्टि पर खरा उतरने वाला एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक दस्तावेज है। सुमित्रानंदन पंत और केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में जिस प्रकार हिमालय के प्राकृत, आध्यात्मिक और श्रम-संस्कृति से जुड़े रूपों का अंकन मिलता है, वह इस यात्रा-वृत्तांत के परिवेश को और अधिक प्रगाढ़ बनाता है। यह कृति इस सत्य को दृढ़ता से प्रमाणित करती है कि आज के वैश्वीकृत और भौतिकतावादी युग में विकास का अर्थ केवल चकाचौंध या औद्योगिक प्रगति नहीं है, बल्कि आत्मकल्याण, मानसिक शांति और पर्यावरण के साथ तादात्म्य स्थापित करना है। भूटान का **'सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता'** मॉडल और उसकी शांतिप्रिय राजनैतिक-लोकतांत्रिक संक्रमण प्रक्रिया यह संदेश देती है कि परंपरा, आधुनिकता, पर्यावरण और लोक-कल्याण के बीच संतुलन बनाकर ही एक स्वस्थ और खुशहाल समाज का निर्माण किया जा सकता है। भारत और भूटान के यह आत्मीय, सांस्कृतिक और भू-राजनीतिक संबंध भविष्य में भी वैश्विक शांति, क्षेत्रीय सहकारिता और पारस्परिकता के लिए एक अद्वितीय मिसाल बने रहेंगे।

संदर्भ सूची :

1. सांकृत्यायन, राहुल. *घुमक्कड़ शास्त्र.* इलाहाबाद: किताब महल, 1949. (विशेषतः प्रथम अध्याय: 'अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा', पृष्ठ संख्या: 2–3).
2. अज्ञेय, सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन. *अरे यायावर रहेगा याद.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1996. (पृष्ठ संख्या: 42–50).
3. पंत, सुमित्रानंदन. *पल्लव एवं लोकायतन.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2010. (पृष्ठ संख्या: 112–118).
4. अग्रवाल, केदारनाथ. *लोक और आलोक.* नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2005. (पृष्ठ संख्या: 75–82).
5. पोखरियाल 'निशंक', डॉ. रमेश. *खुशियों का देश : भूटान.* (अध्याय 5: भारत-भूटान मित्रता: नए क्षितिज की तलाश). पृष्ठ संख्या: 77–88.
6. पोखरियाल 'निशंक', डॉ. रमेश. *खुशियों का देश : भूटान.* (अध्याय 6: जल-विद्युत परियोजनाएँ : भारत-भूटान रिश्तों की मजबूत धुरी). पृष्ठ संख्या: 89–96.
7. पोखरियाल 'निशंक', डॉ. रमेश. *खुशियों का देश : भूटान.* (सार एवं समीक्षा खंड / 'दिल की बात'). पृष्ठ संख्या: 7–14.
8. पोखरियाल 'निशंक', डॉ. रमेश. *खुशियों का देश : भूटान.* (अध्याय 1 एवं 2: भूटान की त्रिदिवसीय अविस्मरणीय यात्रा तथा भौगोलिक, सामाजिक एवं आर्थिक जीवन). पृष्ठ संख्या: 15–49.
9. पोखरियाल 'निशंक', डॉ. रमेश. *खुशियों का देश : भूटान.* (अध्याय 7 एवं 8: खुशियों के देश में पर्यटन तथा ग्रास नेशनल हैप्पीनेस वाला देश). पृष्ठ संख्या: 97–116.

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-88-92

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 88-92
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

सार्जेंट अभिमन्यु पाण्डेय 'मन्नू'

अध्यक्ष, अग्रहरा साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्था, पवागढ़, कुशीनगर, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author :

सार्जेंट अभिमन्यु पाण्डेय 'मन्नू'

अध्यक्ष, अग्रहरा साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्था, पवागढ़, कुशीनगर, उत्तर प्रदेश, भारत

उच्च शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) की भूमिका : शिक्षण-अधिगम की बदलती प्रकृति एवं सतत शिक्षा की संभावनाएँ

सारांश : वर्तमान समय में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence—AI) उच्च शिक्षा के स्वरूप, प्रक्रियाओं और उद्देश्यों को प्रभावित करने वाली एक महत्वपूर्ण प्रौद्योगिकी के रूप में उभर रही है। AI आधारित उपकरणों ने शिक्षण-अधिगम, अध्ययन सामग्री के निर्माण, व्यक्तिगत अधिगम, मूल्यांकन तथा विद्यार्थियों को त्वरित शैक्षिक सहायता उपलब्ध कराने की संभावनाओं को व्यापक किया है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य उच्च शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता की भूमिका का विश्लेषण करते हुए यह समझना है कि इसका उपयोग शिक्षण-अधिगम की प्रकृति तथा सतत शिक्षा को किस प्रकार प्रभावित कर सकता है। अध्ययन में AI के संभावित लाभों के साथ शैक्षणिक ईमानदारी, सूचना की विश्वसनीयता, डेटा गोपनीयता, डिजिटल असमानता, तकनीकी निर्भरता तथा नैतिक उत्तरदायित्व जैसी चुनौतियों पर भी विचार किया गया है। अध्ययन द्वितीयक स्रोतों, प्रकाशित शोध-साहित्य तथा संबंधित शैक्षिक एवं नीतिगत दस्तावेजों के विश्लेषण पर आधारित है। विश्लेषण से संकेत मिलता है कि AI उच्च शिक्षा को अधिक लचीला, व्यक्तिगत, सुलभ और भविष्य की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने में सहायक हो सकता है। किंतु इसके प्रभावी उपयोग के लिए शिक्षक की सक्रिय भूमिका, मानवीय विवेक और विद्यार्थी की आलोचनात्मक सोच आवश्यक है। अतः AI को शिक्षक के विकल्प के रूप में नहीं, बल्कि शिक्षण की गुणवत्ता एवं प्रभावशीलता बढ़ाने वाले सहयोगी माध्यम के रूप में अपनाया जाना चाहिए।

मुख्य शब्द : कृत्रिम बुद्धिमत्ता, उच्च शिक्षा, शिक्षण-अधिगम, शैक्षिक प्रौद्योगिकी, सतत शिक्षा, डिजिटल अधिगम, AI साक्षरता, नैतिक AI

प्रस्तावना : इक्कीसवीं सदी में डिजिटल प्रौद्योगिकी ने शिक्षा के स्वरूप और कार्यप्रणाली में व्यापक परिवर्तन किया है। इंटरनेट, ऑनलाइन शिक्षा और डिजिटल संसाधनों के बाद कृत्रिम बुद्धिमत्ता शिक्षा के क्षेत्र में

परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण माध्यम बनकर सामने आई है। विशेष रूप से उच्च शिक्षा में AI का प्रयोग अध्ययन सामग्री तैयार करने, विद्यार्थियों को व्यक्तिगत सहायता देने, भाषा एवं लेखन संबंधी सहायता उपलब्ध कराने और मूल्यांकन प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाने में किया जा रहा है।

उच्च शिक्षा का उद्देश्य केवल विषयगत ज्ञान प्रदान करना नहीं है, बल्कि विद्यार्थियों में आलोचनात्मक चिंतन, समस्या-समाधान, रचनात्मकता, विश्लेषणात्मक क्षमता और स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता विकसित करना भी है। AI इन क्षमताओं के विकास में सहायक हो सकती है, किंतु इसका अत्यधिक अथवा अनुचित उपयोग विद्यार्थियों को तकनीकी निर्भरता की ओर भी ले जा सकता है।

AI के बढ़ते प्रयोग से शैक्षणिक ईमानदारी, गलत सूचना, डेटा गोपनीयता और डिजिटल असमानता जैसी चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। इसलिए AI को केवल तकनीकी उपकरण मानना पर्याप्त नहीं है। इसके प्रभाव को शिक्षा की गुणवत्ता, समान अवसर, मानवीय मूल्यों और सतत शिक्षा के संदर्भ में समझना आवश्यक है।

प्रस्तुत शोध-पत्र उच्च शिक्षा में AI की भूमिका, शिक्षण-अधिगम में परिवर्तन, सतत शिक्षा की संभावनाओं तथा इससे जुड़े नैतिक एवं शैक्षणिक पक्षों का विश्लेषण करता है।

शोध के उद्देश्य : इस अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य हैं—उच्च शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता की भूमिका का विश्लेषण करना।

- AI के कारण शिक्षण-अधिगम में होने वाले प्रमुख परिवर्तनों को समझना।
- व्यक्तिगत एवं स्व-निर्देशित अधिगम में AI की संभावनाओं का अध्ययन करना।
- सतत एवं आजीवन शिक्षा के विकास में AI की भूमिका को समझना।
- AI के उपयोग से उत्पन्न शैक्षणिक एवं नैतिक चुनौतियों की पहचान करना।
- उच्च शिक्षा में AI के जिम्मेदार एवं प्रभावी उपयोग के लिए आवश्यक उपाय सुझाना।

शोध की आवश्यकता एवं प्रासंगिकता : उच्च शिक्षा में AI का बढ़ता प्रयोग पारंपरिक शिक्षण पद्धतियों को प्रभावित कर रहा है। विद्यार्थी अब पुस्तकों और कक्षा-व्याख्यानों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि AI आधारित उपकरणों से त्वरित जानकारी, अभ्यास, उदाहरण और व्यक्तिगत सहायता प्राप्त कर सकते हैं।

इस परिवर्तन के कारण यह समझना आवश्यक है कि AI का उपयोग शिक्षा की गुणवत्ता को किस प्रकार प्रभावित करता है और विद्यार्थी इसके माध्यम से वास्तविक ज्ञान अर्जित कर रहे हैं या केवल तैयार उत्तरों पर निर्भर हो रहे हैं। इसी प्रकार शिक्षक के कार्य और भूमिका में भी परिवर्तन हो रहा है।

AI के संदर्भ में शैक्षणिक ईमानदारी, सूचना की सत्यता, व्यक्तिगत डेटा की सुरक्षा और डिजिटल संसाधनों तक समान पहुँच महत्वपूर्ण प्रश्न बन गए हैं। इसलिए AI का अध्ययन तकनीकी दृष्टि के साथ-साथ शैक्षिक, सामाजिक, नैतिक और मानवीय दृष्टिकोण से करना आवश्यक है।

शोध-पद्धति : प्रस्तुत अध्ययन गुणात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध-पद्धति पर आधारित है। इसमें प्राथमिक सर्वेक्षण या काल्पनिक आँकड़ों का प्रयोग नहीं किया गया है। अध्ययन के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता, उच्च शिक्षा एवं डिजिटल अधिगम से संबंधित प्रकाशित शोध-पत्रों, शोध-रिपोर्टों, पुस्तकों तथा विश्वसनीय शैक्षिक एवं नीतिगत दस्तावेजों का अध्ययन किया गया है।

प्राप्त सामग्री का विषयगत एवं वैचारिक विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में AI के शैक्षिक उपयोग, शिक्षण-अधिगम में परिवर्तन, सतत शिक्षा, शैक्षणिक ईमानदारी, डिजिटल समानता तथा नैतिक उत्तरदायित्व को प्रमुख विषयों के रूप में लिया गया है। इस प्रकार अध्ययन का उद्देश्य किसी एक संस्थान या समूह के आँकड़ों के आधार पर निष्कर्ष देना नहीं, बल्कि उपलब्ध साहित्य के आधार पर AI की संभावनाओं और सीमाओं का संतुलित विश्लेषण करना है।

साहित्य समीक्षा एवं शोध-अंतराल : कृत्रिम बुद्धिमत्ता और उच्च शिक्षा से संबंधित उपलब्ध साहित्य में AI को शिक्षा के लिए उपयोगी अवसर के साथ-साथ एक चुनौतीपूर्ण तकनीक के रूप में देखा गया है। UNESCO ने शिक्षा एवं अनुसंधान में Generative AI के उपयोग के लिए मानव-केंद्रित, सुरक्षित, समावेशी और नैतिक दृष्टिकोण पर बल दिया है।

हाल के अध्ययनों में शिक्षकों द्वारा AI के उपयोग की संभावनाओं को स्वीकार करने के साथ शैक्षणिक ईमानदारी, मूल्यांकन और AI द्वारा उत्पन्न सामग्री की विश्वसनीयता से संबंधित चिंताओं को भी सामने रखा गया है। शैक्षणिक ईमानदारी पर हुए अध्ययनों से यह संकेत मिलता है कि AI के कारण असाइनमेंट, लेखन और मूल्यांकन की पारंपरिक प्रक्रियाओं पर पुनर्विचार की आवश्यकता है।

साहित्य से यह भी स्पष्ट होता है कि AI शिक्षक को पूरी तरह प्रतिस्थापित करने के बजाय शिक्षण प्रक्रिया में सहायक भूमिका निभा सकता है। शिक्षक का अनुभव, संवेदनशीलता और मानवीय निर्णय अभी भी शिक्षा की गुणवत्ता के लिए महत्वपूर्ण हैं।

शोध-अंतराल : उपलब्ध अध्ययनों में AI के शिक्षण, शैक्षणिक ईमानदारी और तकनीकी उपयोग पर पर्याप्त चर्चा मिलती है, लेकिन AI, उच्च शिक्षा, सतत शिक्षा, मानवीय मूल्यों तथा शिक्षक-विद्यार्थी की बदलती भूमिका को एक समग्र दृष्टिकोण से जोड़कर देखने की आवश्यकता बनी हुई है। प्रस्तुत अध्ययन इसी समेकित दृष्टिकोण को सामने रखता है।

8. उच्च शिक्षा में AI की भूमिका एवं शिक्षण-अधिगम में परिवर्तन : AI उच्च शिक्षा में शिक्षण और अधिगम को अधिक व्यक्तिगत और लचीला बनाने की क्षमता रखती है। विद्यार्थी अपनी आवश्यकता के अनुसार किसी विषय की व्याख्या, उदाहरण, अभ्यास प्रश्न और त्वरित प्रतिक्रिया प्राप्त कर सकते हैं। इससे स्व-निर्देशित अधिगम को बढ़ावा मिल सकता है।

शिक्षकों के लिए AI पाठ्य-सामग्री तैयार करने, प्रश्न बनाने, प्रारंभिक मूल्यांकन तथा विभिन्न स्तर के विद्यार्थियों के लिए शिक्षण सामग्री विकसित करने में सहयोगी हो सकती है। इससे शिक्षक का कार्य समाप्त नहीं होता, बल्कि उनकी भूमिका ज्ञान देने वाले व्यक्ति से आगे बढ़कर मार्गदर्शक, मेंटर, मूल्यांकनकर्ता और नैतिक दिशा-निर्देशक की हो जाती है।

मूल्यांकन प्रक्रिया में भी परिवर्तन की आवश्यकता है। केवल ऐसे लिखित कार्यों पर निर्भर रहने के स्थान पर परियोजना, प्रस्तुति, चर्चा, समस्या-समाधान और विश्लेषणात्मक कार्यों को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए। इससे विद्यार्थी की वास्तविक समझ और स्वतंत्र चिंतन का मूल्यांकन किया जा सकेगा।

AI और सतत शिक्षा की संभावनाएँ : सतत शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को बदलती परिस्थितियों और नई आवश्यकताओं के अनुसार निरंतर सीखने का अवसर प्रदान करना है। AI इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

AI आधारित प्रणालियाँ विद्यार्थी की आवश्यकता और सीखने की गति के अनुसार सामग्री उपलब्ध कराने में सहायता कर सकती हैं। इससे व्यक्तिगत अधिगम और आजीवन सीखने की प्रक्रिया अधिक सुविधाजनक बन सकती है।

AI उन विद्यार्थियों के लिए भी उपयोगी हो सकती है जो पारंपरिक कक्षा में नियमित रूप से उपस्थित नहीं हो सकते। डिजिटल माध्यमों के साथ AI कामकाजी विद्यार्थियों तथा निरंतर नई दक्षताएँ प्राप्त करने वाले शिक्षार्थियों के लिए सीखने को अधिक लचीला बना सकती है।

भविष्य के रोजगार में डिजिटल दक्षता, समस्या-समाधान, रचनात्मकता और AI साक्षरता का महत्व बढ़ रहा है। इसलिए उच्च शिक्षा में AI का उचित उपयोग विद्यार्थियों को भविष्य की आवश्यकताओं के लिए तैयार करने में सहायक हो सकता है।

AI की प्रमुख चुनौतियाँ एवं नैतिक पक्ष : AI के शैक्षिक लाभों के साथ कुछ महत्वपूर्ण चुनौतियाँ भी हैं।

शैक्षणिक ईमानदारी: यदि विद्यार्थी AI से तैयार सामग्री को बिना समझे अपने नाम से प्रस्तुत करते हैं, तो मौलिकता और शैक्षणिक ईमानदारी प्रभावित हो सकती है।

सूचना की विश्वसनीयता : AI द्वारा दिया गया प्रत्येक उत्तर सही या पूर्ण हो, यह आवश्यक नहीं है। इसलिए प्राप्त जानकारी का सत्यापन आवश्यक है।

डेटा गोपनीयता : AI उपकरणों में व्यक्तिगत अथवा शैक्षणिक जानकारी साझा करने से डेटा सुरक्षा संबंधी जोखिम उत्पन्न हो सकते हैं।

डिजिटल असमानता : सभी विद्यार्थियों को समान इंटरनेट, उपकरण और AI संसाधन उपलब्ध नहीं होते। इससे शिक्षा में नई असमानता उत्पन्न हो सकती है।

तकनीकी निर्भरता : AI पर अत्यधिक निर्भरता विद्यार्थियों की स्वतंत्र सोच, लेखन और समस्या-समाधान क्षमता को प्रभावित कर सकती है।

अतः AI का प्रयोग स्पष्ट नैतिक नियमों, शिक्षक के मार्गदर्शन और मानव पर्यवेक्षण के साथ किया जाना चाहिए।

शिक्षक एवं विद्यार्थी की बदलती भूमिका : AI के आने से शिक्षक की भूमिका समाप्त होने के बजाय अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। शिक्षक को अब केवल जानकारी प्रदान करने के स्थान पर विद्यार्थियों को सही जानकारी पहचानने, स्रोतों की जाँच करने, आलोचनात्मक चिंतन विकसित करने और AI का जिम्मेदारी से उपयोग करने के लिए मार्गदर्शन करना होगा।

दूसरी ओर विद्यार्थी को निष्क्रिय ज्ञान-प्राप्तकर्ता के बजाय सक्रिय एवं स्व-निर्देशित शिक्षार्थी बनना होगा। AI द्वारा प्राप्त उत्तर को अंतिम सत्य मानने के बजाय विद्यार्थी को प्रश्न पूछने, तथ्य जाँचने, विभिन्न स्रोतों की तुलना करने और स्वयं निष्कर्ष निकालने की क्षमता विकसित करनी होगी।

इस प्रकार भविष्य की उच्च शिक्षा में शिक्षक + विद्यार्थी + AI का सहयोगी मॉडल अधिक प्रभावी हो सकता है, जिसमें तकनीकी सहायता AI से मिले लेकिन अंतिम निर्णय, मूल्य-निर्धारण और मानवीय मार्गदर्शन मनुष्य के पास रहे।

चर्चा एवं प्रमुख निष्कर्ष : उपलब्ध साहित्य के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि AI उच्च शिक्षा को अधिक व्यक्तिगत, लचीला और सुलभ बनाने की पर्याप्त क्षमता रखती है। यह विद्यार्थियों को त्वरित शैक्षिक सहायता और शिक्षकों को विभिन्न शैक्षणिक कार्यों में सहयोग प्रदान कर सकती है।

हालाँकि AI का उपयोग तभी प्रभावी है जब विद्यार्थी उसके उत्तरों का आलोचनात्मक मूल्यांकन करें। अत्यधिक निर्भरता विद्यार्थियों की स्वतंत्र सोच और रचनात्मकता को प्रभावित कर सकती है। इसी प्रकार गलत सूचना तथा शैक्षणिक ईमानदारी से जुड़ी समस्याएँ शिक्षा की गुणवत्ता के लिए चुनौती बन सकती हैं।

इसलिए AI को प्रतिस्थापनकारी तकनीक के बजाय सहयोगी तकनीक के रूप में अपनाना अधिक उपयुक्त है। AI की तकनीकी क्षमता, शिक्षक की विशेषज्ञता और विद्यार्थी की सक्रिय भागीदारी का संतुलन ही उच्च शिक्षा को अधिक प्रभावी और सतत बना सकता है।

13. सुझाव एवं अनुशंसाएँ : उच्च शिक्षा में AI के प्रभावी एवं जिम्मेदार उपयोग के लिए निम्न उपाय आवश्यक हैं—
विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में AI के जिम्मेदार उपयोग की स्पष्ट नीति बनाई जाए।
शिक्षकों और विद्यार्थियों के लिए AI साक्षरता एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।
AI द्वारा प्राप्त जानकारी के सत्यापन एवं आलोचनात्मक मूल्यांकन को शिक्षण का हिस्सा बनाया जाए।
मूल्यांकन में परियोजना, प्रस्तुति, चर्चा, रचनात्मक एवं समस्या-समाधान आधारित कार्यों को बढ़ावा दिया जाए।
विद्यार्थियों के व्यक्तिगत डेटा की गोपनीयता और सुरक्षा सुनिश्चित की जाए।
AI संसाधनों तक समान पहुँच उपलब्ध कराकर डिजिटल असमानता को कम किया जाए।

निष्कर्ष : कृत्रिम बुद्धिमत्ता उच्च शिक्षा के क्षेत्र में परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण माध्यम बन चुकी है। यह शिक्षण-अधिगम को अधिक व्यक्तिगत, लचीला और सुलभ बनाने के साथ-साथ सतत एवं आजीवन शिक्षा की संभावनाओं को भी मजबूत कर सकती है।

लेकिन AI शिक्षा की सभी समस्याओं का समाधान नहीं है। इसके अनियंत्रित उपयोग से शैक्षणिक ईमानदारी, सूचना की विश्वसनीयता, डेटा गोपनीयता और स्वतंत्र चिंतन जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। इसलिए AI को अपनाते समय तकनीकी विकास के साथ नैतिकता, समानता और मानवीय मूल्यों को भी केंद्र में रखना आवश्यक है। अतः उच्च शिक्षा का भविष्य केवल "AI द्वारा शिक्षा" में नहीं, बल्कि "AI के साथ मानवीय शिक्षा" में अधिक सार्थक रूप से देखा जाना चाहिए। शिक्षक की विशेषज्ञता, विद्यार्थी की सक्रिय भागीदारी और AI की तकनीकी क्षमता का संतुलित संयोजन ही गुणवत्तापूर्ण, समावेशी और सतत शिक्षा की दिशा में प्रभावी कदम हो सकता है।

संदर्भ सूची :

1. यूनेस्को। (2023)। शिक्षा एवं अनुसंधान में जनरेटिव कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग हेतु मार्गदर्शन। पेरिस: यूनेस्को।
2. यूनेस्को। (2023)। वैश्विक शिक्षा निगरानी रिपोर्ट 2023: शिक्षा में प्रौद्योगिकी—किसके हित और शर्तों पर? पेरिस: यूनेस्को।
3. मियाओ, फेंगचुन एवं होम्स, वेन। (2023)। शिक्षा एवं अनुसंधान में जनरेटिव कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग हेतु मार्गदर्शन। यूनेस्को।
4. कम्प्यूटर्स एंड एजुकेशन: आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस। (2024)। उच्च शिक्षा में अधिगम एवं शिक्षण पर जनरेटिव कृत्रिम बुद्धिमत्ता का प्रभाव: शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन।
5. जर्नल ऑफ एप्लाइड रिसर्च इन हायर एजुकेशन। (2024)। उच्च शिक्षा में शैक्षणिक ईमानदारी के उल्लंघन: 2013–2023 की व्यवस्थित साहित्य समीक्षा।
6. काइबरनेट्स। (2024)। कृत्रिम बुद्धिमत्ता: शैक्षणिक ईमानदारी के लिए खतरा या सहायक? एक ग्रंथसूची विश्लेषण।
7. एशियन एजुकेशन एंड डेवलपमेंट स्टडीज। (2024)। उच्च शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उदय: अवसर, जोखिम एवं सीमाएँ। 13(4), 307–319।
8. कम्प्यूटर्स एंड एजुकेशन: आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस। (2024)। उच्च शिक्षा में जनरेटिव कृत्रिम बुद्धिमत्ता: विश्वविद्यालयों की नीतियों, संसाधनों एवं दिशानिर्देशों के संदर्भ में ChatGPT का अध्ययन। 7, 100326।

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-93-96

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 93-96
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :
प्रिय हिमांशु
शोधार्थी, ICPR(JRF), दर्शनशास्त्र विभाग, मुंगेर विश्वविद्यालय, मुंगेर, बिहार

Corresponding Author :
प्रिय हिमांशु
शोधार्थी, ICPR(JRF), दर्शनशास्त्र विभाग, मुंगेर विश्वविद्यालय, मुंगेर, बिहार

यूनानी दार्शनिक प्लेटो के दर्शन में प्रतिवाद : एक दार्शनिक विवेचन

भूमिका : यूनानी दर्शन विश्व दर्शन की सबसे प्राचीन और प्रभावशाली परंपराओं में से एक है। इस परंपरा में सुकरात, प्लेटो और अरस्तु का विशेष स्थान है। इनमें प्लेटो ने दर्शन को एक नई दिशा प्रदान की। उन्होंने केवल संसार की व्याख्या करने का प्रयास नहीं किया बल्कि यह भी बताया कि मनुष्य को कैसा जीवन जीना चाहिए और आदर्श समाज कैसा होना चाहिए। प्लेटो का दर्शन आदर्शवाद पर आधारित है। उनका विश्वास था कि संसार में दिखाई देने वाली वस्तुएँ अंतिम सत्य नहीं हैं। वास्तविक सत्य उन शाश्वत प्रत्ययों में है जिन्हें केवल बुद्धि के माध्यम से जाना जा सकता है। इसी कारण उनका दर्शन बुद्धि, नैतिकता और सत्य की खोज पर विशेष बल देता है। (Stanford Encyclopedia of Philosophy) हालाँकि प्लेटो के विचार अत्यंत प्रभावशाली रहे, लेकिन समय के साथ अनेक दार्शनिकों ने उनके सिद्धांतों पर प्रश्न उठाए। विशेष रूप से प्रत्यय सिद्धांत, आत्मा के सिद्धांत तथा आदर्श राज्य की अवधारणा की व्यापक आलोचना हुई। इन आलोचनाओं को ही प्लेटो के दर्शन में प्रतिवाद कहा जाता है। प्रतिवाद का अर्थ केवल विरोध करना नहीं है, बल्कि किसी विचार की तार्किक समीक्षा करना है। दर्शन में प्रतिवाद का उद्देश्य सत्य की खोज करना होता है। इसलिए प्लेटो के विचारों पर हुए प्रतिवादों ने दर्शन को अधिक समृद्ध और विकसित बनाया।[1]

प्लेटो का जीवन एवं दार्शनिक परिचय : प्लेटो का जन्म लगभग 427 ईसा पूर्व एथेंस में एक प्रतिष्ठित परिवार में हुआ था। वे महान दार्शनिक सुकरात के शिष्य थे। सुकरात की मृत्यु के बाद प्लेटो ने कई देशों की यात्राएँ कीं और अंततः एथेंस लौटकर अकादमी (Academy) की स्थापना की। यह विश्व का पहला संगठित उच्च शिक्षा संस्थान माना जाता है। यहीं उन्होंने अनेक विद्यार्थियों को शिक्षा दी, जिनमें अरस्तु सबसे प्रसिद्ध थे। (Internet Encyclopedia of Philosophy) प्लेटो ने अपने विचारों को संवाद (Dialogue) शैली में प्रस्तुत किया। उनके अधिकांश ग्रंथों में सुकरात मुख्य पात्र के रूप में दिखाई देते हैं। उनके प्रमुख ग्रंथ हैं— रिपब्लिक, फेडो, सिम्पोजियम, मेनो, थीएटेटस, लॉज इन ग्रंथों में उन्होंने ज्ञान, आत्मा, न्याय, शिक्षा, प्रेम, राज्य तथा वास्तविकता जैसे विषयों पर विस्तार से विचार किया। उनकी संवाद शैली आज भी दर्शन के अध्ययन में अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती है।[2]

प्लेटो के दर्शन का आधार : प्लेटो के दर्शन का मुख्य उद्देश्य सत्य की खोज करना था। उनका मानना था कि मनुष्य केवल इन्द्रियों के आधार पर वास्तविक ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। इन्द्रियाँ हमें बदलती हुई वस्तुओं का ज्ञान देती हैं, जबकि वास्तविक ज्ञान शाश्वत सत्य का होना चाहिए। इसी विचार के आधार पर प्लेटो ने दो प्रकार के संसार की कल्पना की—

(1) भौतिक संसार – यह वह संसार है जिसे हम अपनी आँखों से देखते हैं। इसमें सभी वस्तुएँ परिवर्तनशील हैं। जन्म, वृद्धि और विनाश इसी संसार की

विशेषताएँ हैं।

(2) प्रत्ययों का संसार – यह शाश्वत, अपरिवर्तनीय और पूर्ण सत्य का संसार है। यहाँ न्याय, सौन्दर्य, सत्य और अच्छाई जैसे प्रत्यय अपने शुद्ध रूप में विद्यमान हैं।

प्लेटो के अनुसार हम जो सुंदर वस्तुएँ देखते हैं, वे वास्तविक सौन्दर्य नहीं बल्कि शाश्वत सौन्दर्य की केवल आंशिक अभिव्यक्ति हैं। इसी प्रकार संसार की प्रत्येक वस्तु किसी न किसी शाश्वत प्रत्यय की अपूर्ण प्रतिलिपि है। (Stanford Encyclopedia of Philosophy) इस प्रकार प्लेटो का दर्शन आदर्शवाद पर आधारित है। उनके अनुसार वास्तविक ज्ञान बुद्धि द्वारा प्राप्त होता है, न कि केवल अनुभव द्वारा। यही कारण है कि वे तर्क, चिंतन और दार्शनिक विवेक को अत्यधिक महत्व देते हैं।[3]

प्लेटो का प्रत्यय (Forms/Ideas) सिद्धांत : प्लेटो का सबसे प्रसिद्ध सिद्धांत प्रत्यय (Forms/Ideas) सिद्धांत है। यही उनके दर्शन का आधार है। प्लेटो के अनुसार इस संसार में जो वस्तुएँ दिखाई देती हैं, वे वास्तविक सत्य नहीं हैं। वास्तविक सत्य उन शाश्वत और अपरिवर्तनीय प्रत्ययों में निहित है, जो बुद्धि से जाने जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, संसार में अनेक प्रकार के सुंदर फूल, भवन और मनुष्य दिखाई देते हैं। इन सभी में सौन्दर्य अलग–अलग मात्रा में होता है, लेकिन "सौन्दर्य" का जो पूर्ण और शाश्वत स्वरूप है, वही वास्तविक प्रत्यय है। इसी प्रकार न्याय, अच्छाई, सत्य, समानता आदि के भी शाश्वत प्रत्यय हैं। प्लेटो का मानना था कि भौतिक वस्तुएँ नष्ट हो जाती हैं, बदलती रहती हैं, लेकिन प्रत्यय कभी नष्ट नहीं होते। वे सदैव एक समान रहते हैं। इसलिए वास्तविक ज्ञान उन्हीं प्रत्ययों का ज्ञान है। उन्होंने कहा कि इन्द्रियाँ हमें केवल दिखाई देने वाली वस्तुओं का ज्ञान देती हैं, जबकि बुद्धि हमें वास्तविक सत्य तक पहुँचाती है। इसलिए दार्शनिक का कार्य केवल वस्तुओं को देखना नहीं, बल्कि उनके पीछे छिपे सत्य को समझना है। इस सिद्धांत का दर्शन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। बाद के अनेक दार्शनिकों ने इस पर चर्चा की, कुछ ने इसका समर्थन किया और कुछ ने इसका विरोध किया।[4]

प्लेटो का ज्ञान सिद्धांत : प्लेटो के अनुसार ज्ञान (Knowledge) और मत (Opinion) दोनों अलग–अलग हैं। उनका मानना था कि जो ज्ञान इन्द्रियों से प्राप्त होता है, वह स्थायी नहीं होता क्योंकि संसार की वस्तुएँ बदलती रहती हैं। इसलिए इन्द्रियों से प्राप्त जानकारी केवल मत (Opinion) है। वास्तविक ज्ञान वह है जो बुद्धि और तर्क द्वारा प्राप्त होता है। यही ज्ञान सत्य और निश्चित होता है। प्लेटो ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'रिपब्लिक' में गुफा का रूपक (Allegory of the Cave) प्रस्तुत किया। इसमें उन्होंने बताया कि सामान्य मनुष्य गुफा में रहने वाले उन लोगों के समान है जो केवल दीवार पर पड़ने वाली छाया को ही सत्य मानते हैं। जब कोई व्यक्ति गुफा से बाहर निकलता है और सूर्य का प्रकाश देखता है, तब उसे वास्तविक सत्य का ज्ञान होता है। इस रूपक का उद्देश्य यह बताना है कि अधिकांश लोग केवल दिखाई देने वाली वस्तुओं को ही सत्य समझते हैं, जबकि दार्शनिक बुद्धि के माध्यम से वास्तविक सत्य तक पहुँचता है। प्लेटो के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य भी मनुष्य को अज्ञान से निकालकर सत्य के प्रकाश तक पहुँचाना है।[5]

प्लेटो का आत्मा सिद्धांत : प्लेटो आत्मा की अमरता में विश्वास करते थे। उनके अनुसार आत्मा शरीर से पहले भी अस्तित्व में थी और शरीर के नष्ट होने के बाद भी बनी रहती है। उन्होंने आत्मा को तीन भागों में विभाजित किया—

(1) बुद्धि (Reason)– यह आत्मा का सर्वोच्च भाग है। इसका कार्य सत्य की खोज करना तथा सही निर्णय लेना है।

(2) साहस (Spirit)– यह भाग मनुष्य में आत्मविश्वास, वीरता और सम्मान की भावना उत्पन्न करता है।

(3) इच्छाएँ (Appetite)– यह भाग भोजन, धन, सुख और भौतिक आवश्यकताओं से संबंधित है।

प्लेटो का मानना था कि आदर्श जीवन वही है जिसमें बुद्धि, साहस और इच्छाओं के बीच संतुलन बना रहे। यदि इच्छाएँ बुद्धि पर नियंत्रण कर लें तो मनुष्य का जीवन असंतुलित हो जाता है। इसी प्रकार उन्होंने आदर्श राज्य में भी इन तीन भागों के आधार पर समाज को तीन वर्गों में बाँटा—

1. दार्शनिक शासक – जो बुद्धि का प्रतिनिधित्व करते हैं।
2. सैनिक वर्ग – जो साहस का प्रतिनिधित्व करते हैं।
3. उत्पादक वर्ग – जो आर्थिक कार्य करते हैं और समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं।[6]

प्लेटो का आदर्श राज्य : प्लेटो का राजनीतिक दर्शन उनके प्रसिद्ध ग्रंथ 'रिपब्लिक' में मिलता है। उनका उद्देश्य ऐसा राज्य स्थापित करना था जहाँ न्याय, नैतिकता और ज्ञान का शासन हो। प्लेटो के अनुसार राज्य का शासन किसी धनी, शक्तिशाली या लोकप्रिय व्यक्ति के हाथ में नहीं होना चाहिए, बल्कि ऐसे व्यक्ति के हाथ में होना चाहिए जिसके पास ज्ञान, विवेक और नैतिकता हो। इसलिए उन्होंने दार्शनिक राजा (Philosopher King) की अवधारणा प्रस्तुत की। उनका विश्वास था कि केवल दार्शनिक ही सत्य और न्याय को समझ सकता है। इसलिए वही राज्य का सर्वोत्तम शासक हो सकता है। उन्होंने शिक्षा को भी अत्यंत महत्वपूर्ण माना। उनका कहना था कि योग्य शासकों का निर्माण केवल उचित शिक्षा द्वारा ही संभव है। हालाँकि उनके आदर्श राज्य की कई आलोचनाएँ भी हुईं। कुछ विद्वानों का मत है कि इसमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता को पर्याप्त महत्व नहीं दिया गया है तथा राज्य को अत्यधिक शक्तिशाली बना दिया गया है।[7]

प्लेटो के दर्शन का महत्व : प्लेटो के विचारों का प्रभाव केवल दर्शन तक सीमित नहीं रहा, बल्कि शिक्षा, राजनीति, नैतिकता और धर्म पर भी पड़ा। उनकी प्रमुख देनें निम्नलिखित हैं—

1. दर्शन को व्यवस्थित रूप प्रदान किया।
2. आदर्शवाद की स्थापना की।
3. नैतिक जीवन पर विशेष बल दिया।
4. शिक्षा को समाज सुधार का आधार माना।
5. न्याय और आदर्श राज्य की नई अवधारणा प्रस्तुत की।
6. तर्क और बुद्धि के महत्व को स्थापित किया।[8]

प्लेटो के दर्शन में प्रतिवाद : प्लेटो के दर्शन का पाश्चात्य दर्शन पर गहरा प्रभाव पड़ा, लेकिन उनके सभी विचारों को सभी दार्शनिकों ने स्वीकार नहीं किया। समय–समय पर अनेक विद्वानों ने उनके सिद्धांतों की आलोचना की। इन आलोचनाओं ने दर्शन को नई दिशा प्रदान की। प्रमुख प्रतिवाद निम्नलिखित हैं—

(क) अरस्तु का प्रतिवाद : प्लेटो के सबसे बड़े आलोचक उनके अपने शिष्य अरस्तु थे। उन्होंने विशेष रूप से प्रत्यय (Forms) सिद्धांत का विरोध किया। अरस्तु का कहना था कि यदि प्रत्येक वस्तु का एक अलग प्रत्यय है, तो फिर उस प्रत्यय का भी कोई प्रत्यय होना चाहिए। इससे अनंत क्रम (Infinite Regress) की समस्या उत्पन्न होती है। इसलिए प्रत्ययों को वस्तुओं से अलग मानना उचित नहीं है। अरस्तु के अनुसार किसी वस्तु का स्वरूप उसी वस्तु में निहित होता है। उदाहरण के लिए, यदि हम किसी वृक्ष का अध्ययन करना चाहते हैं तो हमें उसी वृक्ष का अध्ययन करना चाहिए, न कि किसी अलग "आदर्श वृक्ष" की कल्पना करनी चाहिए। उन्होंने अनुभव (EÛperience), निरीक्षण (Observation) और तर्क (Logic) को ज्ञान का आधार माना। यही कारण है कि अरस्तु को यथार्थवाद (Realism) का प्रमुख प्रवर्तक माना जाता है।

ख) अनुभववादी दार्शनिकों का प्रतिवाद : बाद में जॉन लॉक, जॉर्ज बर्कले तथा डेविड ह्यूम जैसे अनुभववादी दार्शनिकों ने भी प्लेटो के विचारों पर प्रश्न उठाए। उनका मत था कि मनुष्य जन्म के समय कोई जन्मजात ज्ञान लेकर नहीं आता। ज्ञान का विकास अनुभव और इन्द्रियों के माध्यम से होता है। जॉन लॉक ने मनुष्य के मन को कोरी पट्टी (Tabula Rasa) कहा। उनके अनुसार सभी ज्ञान का आरम्भ अनुभव से होता है। डेविड ह्यूम ने कहा कि यदि किसी विचार का अनुभव में कोई आधार नहीं है, तो उसे सत्य नहीं माना जा सकता। इस प्रकार अनुभववादियों ने प्लेटो के बुद्धिवाद और जन्मजात ज्ञान के विचारों का विरोध किया।

(ग) आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण : आधुनिक विज्ञान के विकास के बाद भी प्लेटो के कई विचारों की आलोचना हुई। विज्ञान का आधार प्रयोग, परीक्षण और प्रमाण है। वैज्ञानिक किसी सिद्धांत को तभी स्वीकार करते हैं जब उसे अनुभव द्वारा सिद्ध किया जा सके। प्लेटो के प्रत्ययों का संसार प्रत्यक्ष अनुभव में नहीं आता। इसलिए वैज्ञानिक दृष्टि से इसे प्रमाणित करना कठिन माना गया। फिर भी विज्ञान यह स्वीकार करता है कि किसी भी सिद्धांत का निर्माण पहले विचार के स्तर पर होता है। इस दृष्टि से प्लेटो का दार्शनिक योगदान आज भी महत्वपूर्ण माना जाता है।

(घ) प्लेटो के आदर्श राज्य की आलोचना : प्लेटो ने अपने ग्रंथ 'रिपब्लिक' में आदर्श राज्य की कल्पना प्रस्तुत की। उन्होंने दार्शनिक राजा को सर्वोच्च शासक माना। आधुनिक लोकतांत्रिक विचारकों ने इस अवधारणा की आलोचना की। उनका मत है कि शासन किसी एक वर्ग तक सीमित नहीं होना चाहिए। लोकतंत्र में सभी नागरिकों को समान अधिकार प्राप्त होने चाहिए। कुछ विद्वानों का यह भी कहना है कि प्लेटो ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता की अपेक्षा राज्य को अधिक महत्व दिया है। आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्था समानता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा जनसहभागिता पर आधारित है, इसलिए प्लेटो का आदर्श राज्य आज पूरी तरह व्यावहारिक नहीं माना जाता।[9]

क्या प्लेटो के प्रतिवाद उचित थे?

यह प्रश्न दर्शन में अत्यंत महत्वपूर्ण है। यदि केवल आलोचनाओं को देखा जाए तो ऐसा प्रतीत होता है कि प्लेटो के अनेक विचार व्यावहारिक नहीं थे। लेकिन यदि उनके दर्शन के उद्देश्य को समझा जाए तो स्पष्ट होता है कि प्लेटो वास्तविक संसार का वर्णन नहीं कर रहे थे, बल्कि एक आदर्श व्यवस्था की कल्पना प्रस्तुत कर रहे थे। उनका उद्देश्य मनुष्य को सत्य, न्याय और नैतिकता की ओर प्रेरित करना था। इसी कारण उनके विचार आज भी शिक्षा, राजनीति, नैतिक दर्शन तथा तत्वमीमांसा में अध्ययन का विषय बने हुए हैं।[10]

प्रतिवादों का दार्शनिक महत्व :

दर्शन में प्रतिवाद का अर्थ केवल विरोध करना नहीं है। प्रतिवाद के माध्यम से किसी विचार की शक्तियों और सीमाओं दोनों को समझा जाता है।

प्लेटो के दर्शन पर हुए प्रतिवादों के कारण—

1. अरस्तु का यथार्थवाद विकसित हुआ।
2. अनुभववाद को बल मिला।
3. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास हुआ।
4. लोकतांत्रिक राजनीतिक विचारों को प्रोत्साहन मिला।
5. दर्शन अधिक तर्कपूर्ण और व्यावहारिक बना।

इस प्रकार प्रतिवादों ने दर्शन को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।[11]

वर्तमान समय में प्लेटो की प्रासंगिकता

यद्यपि प्लेटो लगभग ढाई हजार वर्ष पहले हुए थे, फिर भी उनके अनेक विचार आज भी उपयोगी हैं। आज शिक्षा का उद्देश्य केवल रोजगार प्राप्त करना नहीं, बल्कि अच्छे नागरिक बनाना भी है। यह विचार प्लेटो के शिक्षा दर्शन से मेल खाता है। न्याय, नैतिकता, सत्य और आदर्श नेतृत्व की आवश्यकता आज भी उतनी ही है जितनी प्राचीन यूनान में थी। जब समाज में भ्रष्टाचार, हिंसा और नैतिक पतन बढ़ता है, तब प्लेटो का यह विचार कि शासन ज्ञान और नैतिकता वाले व्यक्तियों के हाथ में होना चाहिए, आज भी विचारणीय लगता है। हालाँकि आधुनिक लोकतंत्र में उनके सभी विचार स्वीकार नहीं किए जाते, फिर भी उनका दार्शनिक महत्व कम नहीं हुआ है।[12]

उपसंहार : प्लेटो पाश्चात्य दर्शन के सबसे प्रभावशाली दार्शनिकों में से एक हैं। उनके प्रत्यय सिद्धांत, ज्ञान सिद्धांत, आत्मा संबंधी विचार तथा आदर्श राज्य की अवधारणा ने दर्शन के इतिहास में नई दिशा प्रदान की। यद्यपि उनके विचारों का अरस्तु, अनुभववादी दार्शनिकों तथा आधुनिक वैज्ञानिकों ने प्रतिवाद किया, फिर भी इन आलोचनाओं ने प्लेटो के महत्व को कम नहीं किया। बल्कि इनसे दार्शनिक चिंतन और अधिक समृद्ध हुआ। वास्तव में दर्शन का विकास प्रश्न, तर्क और प्रतिवाद के माध्यम से ही होता है। प्लेटो का दर्शन इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। आज भी यदि सत्य, न्याय, नैतिकता और आदर्श समाज की चर्चा होती है, तो प्लेटो के विचार अनिवार्य रूप से सामने आते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्लेटो के दर्शन में प्रतिवाद केवल विरोध नहीं, बल्कि दर्शन के निरंतर विकास की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

a. Plato- The Republic
b. Plato- Phaedo
c. Plato- Symposium
d. Aristotle- Metaphysics
e. Aristotle- Politics
f. Copleston, Frederick- A History of Philosophy, Vol- I
g. Frank Thilly- A History of Philosophy
ीण Chandradhar Sharma- पाश्चात्य दर्शन
पण डॉ. शोभा निगम पाश्चात्य दर्शन का ऐतिहासिक सर्वेक्षण
j. बसन्त कुमार लाल Contemporary Western Philosophy
ाण डॉ. बद्रीनाथ सिंह पाश्चात्य दर्शन की रूपरेखा
l. Jadunath Sinha- A Critical Survey of Indian and Western Philosophy

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-97-103

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 97-103
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. श्रवण कुमार

वरीय सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग, नालंदा कॉलेज, बिहारशरीफ़. पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना.

Corresponding Author :

डॉ. श्रवण कुमार

वरीय सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग, नालंदा कॉलेज, बिहारशरीफ़. पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना.

समकालीन भारत - भूटान संबंध : चुनौतियाँ एवं संभावनाएं

शोध सार : भारत और भूटान अद्वितीय और अनुकरणीय द्विपक्षीय संबंध साझा करते हैं, जो आपसी विश्वास, सद्भावना और समझ पर आधारित हैं। हालाँकि, राजनयिक संबंधों की औपचारिकता 1949 में मैत्री संधि पर हस्ताक्षर के साथ हुई, जिसे फरवरी 2007 में नवीनीकृत किया गया । इस संधि ने दोनों देशों के बीच मित्रता और सहयोग के स्थायी बंधन स्थापित किए। इसने विभिन्न क्षेत्रों में द्विपक्षीय जुड़ाव की नींव रखी। संधि ने मुक्त व्यापार और प्रत्यर्पण प्रोटोकॉल भी स्थापित किए । भूटान भारत का एक बहुत ही महत्वपूर्ण और रणनीतिक भागीदार है क्योंकि यह चीन और भारत के बीच एक बफर है। चीन (पश्चिम में) के साथ भूटान की सीमा भारत के लिए असाधारण प्रासंगिकता की है क्योंकि तीन देशों के त्रिकोण की उपस्थिति और भारत के चिकन नेक (सिलीगुड़ी गलियारे) के साथ इसकी निकटता है। इसलिए, यह न केवल भूटान और चीन के बीच एक द्विपक्षीय मामला है; भारत के हित भी शामिल हैं। हालांकि, रिश्ते को "चीन कारक" से महत्वपूर्ण दबावों का सामना करना पड़ता है। 2023 में स्थापित एक तीन - चरणीय रोडमैप और एक संयुक्त तकनीकी टीम (JTT) के माध्यम से औपचारिक रूप से चीन के साथ भूटान की चल रही सीमा वार्ता, भारतीय सुरक्षा विशेषज्ञों से संबंधित सामान्यीकरण की ओर संभावित बदलाव का संकेत देती है। भूटान द्वारा दावा किए गए क्षेत्र में कम से कम 22 चीनी गांवों का निर्माण एक "सलामी स्लाइसिंग" रणनीति का प्रतिनिधित्व करता है जो डोकलाम पठार और सिलीगुड़ी गलियारे में भारत के रणनीतिक हितों के लिए खतरा है। इसके अतिरिक्त, भूटानी भावना में आंतरिक बदलाव, विशेष रूप से युवाओं के बीच, विदेश नीति विविधीकरण की बढ़ती इच्छा और भारत पर निर्भरता को कम करने का संकेत देते हैं। यह पत्र भारत - भूटान संबंधों के भविष्य पर एक व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करने के लिए इन रुझानों को संश्लेषित करता है।

मुख्य शब्द : चिकेन नेक, फाइव फिंगर पॉलिसी, गेलेफू

माइंडफुलनेस सिटी, जल विद्युत सहयोग, डोकलाम विवाद, तीन - चरणीय रोडमैप ।

परिचय : भारत गणराज्य और भूटान साम्राज्य के बीच संबंध भौगोलिक निकटता और विकासात्मक सहयोग के साझा इतिहास में निहित है। इस संबंध में एक महत्वपूर्ण धुरी 2007 की भारत - भूटान मैत्री संधि पर हस्ताक्षर के साथ हुई। यह संधि मूल 1949 की मैत्री संधि के पुनर्मूल्यांकन के रूप में कार्य करती है, जो 2008 में अपने पहले आम चुनावों के बाद एक पूर्ण राजशाही से संवैधानिक लोकतंत्र में भूटान के संक्रमण को दर्शाती है। औपचारिक रूप से भूटान की संप्रभूता को बढ़ावा देने के लिए 2007 की सन्धि के द्वारा उस खंड को समाप्त कर दिया गया है जिसमे भूटान को अपनी विदेश नीति पर भारत के मार्गदर्शन के पालन करने की आवश्यकता होती थी । संशोधित संधि के अनुच्छेद 4 के तहत, भूटान ने भारत की अनुमति के बिना हथियार आयात करने का अधिकार प्राप्त कर लिया है , बशर्ते कि इस तरह के आयात से भारत को कोई खतरा न हो और भूटान के इरादे दोस्ताना बने रहें। जबकि संधि दोनों देशों की "संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता" को बरकरार रखती है। आज जब दक्षिण एशिया में रणनीतिक प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है, भारत का यह दृष्टिकोण—जो भूटान को स्वतंत्र रूप से अपना मार्ग तय करने की स्वतंत्रता देता है—इस साझेदारी की सबसे बड़ी मजबूती है।

सामरिक दृष्टि से भूटान का महत्व : भारत के लिए भूटान का महत्व केवल सांस्कृतिक या ऐतिहासिक नहीं है, बल्कि इसका सामरिक आयाम अत्यधिक संवेदनशील है। डोकलाम, जो भारत-भूटान-चीन का त्रि-जंक्शन है, 2017 के भारत-चीन सैन्य गतिरोध (standoff) का स्थल था। विशेषज्ञों के अनुसार यदि चीन और भूटान के बीच डोकलाम क्षेत्र में भूमि विनिमय (Land Swap) की संभावना वास्तविक होती है, तो यह भारत के सिलीगुड़ी कॉरिडोर (चिकन नेक) के लिए जोखिम हो सकता है। यही कॉरिडोर पूरे उत्तरी-पूर्वी भारत को मुख्य भूमि भारत से जोड़ता है, इसलिए इसका महत्व अत्यंत उच्च है।

इस परिप्रेक्ष्य में भारत और भूटान दोनों को यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि चीन के साथ किसी भी प्रकार का ऐसा कोई सीमा-समझौता न किया जाय जिससे भूटान की संप्रभुता या भारत की सुरक्षा को खतरा हो ।

चीन लद्दाख, नेपाल, सिक्किम, भूटान और अरुणाचल प्रदेश की हिमालयी सीमाओं पर सक्रिय रूप से अतिक्रमण कर रहा है, जिसका उद्देश्य विभिन्न मोर्चों के माध्यम से भारत को घेरना है। भूटान मैत्री संधि, 2007 के तहत भारत की रणनीतिक आवश्यकताओं के बारे में पूरी तरह से जागरुक है और भारत और भूटान अपने आपसी रणनीतिक हितों को अधिकतम या सुदृढ़ करने में सक्षम होने के लिए उच्च स्तर पर परामर्श करते हैं। भारत ने भूटान - चीन वार्ता के बारे में स्पष्ट किया कि वह भूटान - चीन वार्ता में हस्तक्षेप नहीं करेगा, लेकिन जब भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा की बात आती है, तो वह समझौता नहीं करेगा। भूटान चीन के साथ अपने संबंधों को आगे बढ़ा रहा है, ऐसी स्थिति में भूटान की क्षेत्रीय सुरक्षा और स्वायत्तता के लिए भारत की भागीदारी महत्वपूर्ण बनी हुई है। चीनी आक्रामकता के खिलाफ भूटान की संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता की रक्षा के लिए भारत का हस्तक्षेप भारत - भूटान मैत्री संधि 2007 के महत्व पर प्रकाश डालता है, यह इस बात पर भी प्रकाश डालता है कि भारत किस प्रकार उपमहाद्वीप की भू - राजनीति में कमजोरों के रक्षक के रूप में एक जिम्मेदार पड़ोसी की भूमिका निभा रहा है ।

भारत–भूटान : विकासात्मक साझेदारी : 1971 की प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही भारत भूटान का प्रमुख विकास साझेदार रहा है। विकास सहयोग वार्षिक 'योजना वार्ता' के माध्यम से होता है, जो भूटान की प्राथमिकताओं पर केंद्रित है। सम्बन्धों को मजबूती प्रदान करने में दोनों देशों के राष्ट्र नायकों ने पारस्परिक यात्राएं भी करते रहे । फ़रवरी 2025 में भूटान के राजा और रानी अपनी आधिकारिक यात्रा पर भारत आए। गत वर्ष नवंबर 2025 में भारत के प्रधानमंत्री भी भूटान के चौथे नरेश (ड्रुक ग्यालपो) जिग्मे सिंग्ये वांगचुक, जो वर्तमान नरेश के पिता हैं, के 70वें जन्मदिन समारोह में भाग लेने के लिये भूटान की राजकीय यात्रा की। इस यात्रा का मुख्य उदेश्य भूटान -भारत के

सम्बन्ध को मजबूती प्रदान करना था। सम्बन्धों को पारस्परिक रुप से लाभकारी तथा अधिक कारगर बनाने की दिशा में भारत भूटान के साथ कतिपय क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

आर्थिक एवं विकासात्मक सहायता : भारत 1960 के दशक से भूटान का प्रमुख विकास भागीदार रहा है। 12वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान कृषि, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT), स्वास्थ्य, उद्योग, परिवहन, ऊर्जा, शहरी विकास और शिक्षा के लिये भारत ने 4,500 करोड़ रुपए (बाह्य अनुदानों का 73%) प्रदान किये। इसी तरह भारत ने भूटान की 13वीं पंचवर्षीय योजना और आर्थिक प्रोत्साहन कार्यक्रम के लिये अपने समर्थन की पुष्टि की तथा गेलेफू माइंडफुलनेस सिटी प्रोजेक्ट और असम के हतिसार में एक आव्रजन जाँच चौकी स्थापित करने के निर्णय की घोषणा की है। भारत और भूटान ने नवीकरणीय ऊर्जा, स्वास्थ्य और मानसिक स्वास्थ्य पर 3 नए समझौता ज्ञापनों पर भी हस्ताक्षर किये हैं।

व्यापार और वाणिज्य : भारत - भूटान का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है। व्यापार 2014–15 में 484 मिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़कर 2022–23 में 1.6 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गया।

2016 का भारत–भूटान व्यापार, वाणिज्य और पारगमन समझौता भूटानी वस्तुओं के लिए मुक्त व्यापार व्यवस्था एवं शुल्क-मुक्त पारगमन प्रदान करता है।

भारत - भूटान का सबसे बड़ा निवेशक है, जो बैंकिंग, ऊर्जा, आईटी एवं शिक्षा जैसे क्षेत्रों में कुल एफडीआई का 50% से अधिक योगदान देता है।

जलविद्युत कूटनीति : जलविद्युत द्विपक्षीय आर्थिक संबंधों का आधार है। भारत ने चार प्रमुख जलविद्युत परियोजनाओं का निर्माण किया — चुखा (336 मेगावाट), कुरिच्छू (60 मेगावाट), ताला (1,020 मेगावाट), मंगदेछू (720 मेगावाट) — कुल 2,136 मेगावाट। इसके अतिरिक्त हाल ही में भारत और भूटान ने 1020 मेगावाट की पुनात्सांगछू-II जलविद्युत परियोजना का संयुक्त रूप से उद्घाटन किया तथा 1200 मेगावाट की पुनात्सांगछू-I जलविद्युत परियोजना पर पुनः कार्य शुरू किया, जिससे उनकी जलविद्युत साझेदारी मज़बूत हुई। भारत ने भूटान में नई ऊर्जा परियोजनाओं के लिये 40 अरब रुपये की ऋण सहायता भी प्रदान की है। इसके साथ ही पुनतसंगछू - III जल विधुत परियोजना पर भारत की जेएसडब्ल्यू एनर्जी और भूटान की ड्रुक ग्रीन पावर कॉरपोरेशन (डीजीपीसी) के बीच 51:49 संयुक्त उद्यम के माध्यम से एक नई 920 मेगावाट परियोजना विकसित की जा रही है।

संपर्क और अवसंरचना : भारत -भूटान दोनों पक्ष सीमा-पार संपर्क और अवसंरचना को मजबूत करने के अपने संकल्प निरंतर अग्रसर हैं। इसमें दर्रांगा चेक पोस्ट (Darranga Check Post) और जोगीगोफा मल्टीमॉडल टर्मिनल (Jogigopha Multimodal Terminal) जैसी पहलों को आगे बढ़ाने पर जोर दिया जा रहा है। दोनों देशों ने गेलेफू-कोकराझार और समत्से-बानरहाट को जोड़ने वाली सीमा पार रेल संपर्क पर प्रगति की भी समीक्षा करते हुए संतोष जताया है।

शैक्षिक एवं सांस्कृतिक संबंध : भारत प्रतिवर्ष 1,000 से अधिक छात्रवृत्तियाँ भूटानी छात्रों को प्रदान करता है, भारतीय तकनीकी और आर्थिक सहयोग (ITEC) प्रशिक्षण देता है तथा भूटानी छात्र IITs, नालंदा विश्वविद्यालय और अन्य भारतीय संस्थानों में उच्च शिक्षा प्राप्त करते हैं। 2003 में स्थापित भारत–भूटान फाउंडेशन (IBF) दोनों राष्ट्रों के बीच शिक्षा, विज्ञान और सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देता है। भूटानी तीर्थयात्री बोधगया, राजगीर, नालंदा और सिक्किम जैसे स्थानों का भ्रमण करते हैं, जबकि भारत भूटानी सांस्कृतिक परियोजनाओं जैसे लखांग (मंदिर) निर्माण का समर्थन करता है। सांस्कृतिक सहयोग में कोलकाता की एशियाटिक सोसाइटी से झाबद्रुंग प्रतिमा का भूटान में प्रदर्शन भी शामिल है।

भूटान में भारतीय समुदाय : लगभग 50,000 भारतीय भूटान में अवसंरचना, जलविद्युत, शिक्षा और वाणिज्य में

कार्यरत हैं — जो द्विपक्षीय साझेदारी की जन-से-जन नींव का प्रतीक है।

उभरते क्षेत्रों में सहयोग :

- डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर और अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी सहयोग :- आधुनिक युग में एक महत्वपूर्ण अभिसरण पारंपरिक भौतिक बुनियादी ढांचे से आगे बढ़ते हुए डिजिटल और अंतरिक्ष डोमेन में संबंधों का विस्तार है। नवंबर 2020 में हस्ताक्षरित उपग्रह विकास और अंतरिक्ष समझौता ज्ञापन (एमओयू) के माध्यम से अंतरिक्ष सहयोग को औपचारिक रूप दिया गया था। इसरो और भूटान के सूचना और संचार मंत्रालय के बीच इस समझौते में रिमोट सेंसिंग, उपग्रह नेविगेशन और ग्रहों की खोज शामिल है।
- अंतरिक्ष सहयोग:- 26 नवंबर 2022 को भारत–भूटान सैट का प्रक्षेपण हुआ। 2023 में ग्राउंड अर्थ स्टेशन खोला गया है। मार्च 2024 में अंतरिक्ष पर संयुक्त कार्य योजना (JPoA) पर हस्ताक्षर हुए।
- पर्यावरण सहयोग :- अक्टूबर 2024 में प्रथम भारत–भूटान पर्यावरण JWG बैठक हुई, जिसमें जैव विविधता, अपशिष्ट प्रबंधन और जलवायु लचीलापन पर सहयोग की संभावनाएँ खोजी गईं।
- डिजिटल और फिनटेक एकीकरण:- 2019–2021 से रुपे और भीम यूपीआई ने सीमा-पार भुगतान को सहज बनाया गया है।

गेलेफू माइंडफुलनेस सिटी (जीएमसी): कनेक्टिविटी का एक नया प्रतिमान : राजा जिग्मे खेसर नामग्याल वांगचुक द्वारा दिसंबर 2023 में घोषित, गेलेफू माइंडफुलनेस सिटी (जीएमसी) अब तक की भूटान की सबसे महत्वाकांक्षी विकासात्मक परियोजना का प्रतिनिधित्व करती है। रणनीतिक बुनियादी ढांचा और रेल लिंक: जीएमसी को असम की सीमा के पास दक्षिणी भूटान में 2,500 से 2,600 वर्ग किलोमीटर को कवर करने वाले एक विशेष प्रशासनिक क्षेत्र (एसएआर) के रूप में नामित किया गया है। इस परियोजना का उद्देश्य दक्षिण और दक्षिण पूर्व एशिया के बीच एक केंद्र के रूप में कार्य करना है। जीएमसी के लिए भारत का समर्थन महत्वपूर्ण कनेक्टिविटी प्रतिबद्धताओं में स्पष्ट है। जिसमे सीमा पार दो रेल कनेक्शन का कार्य शामिल है। प्राथमिक लिंक असम में गेलेफू से कोकराझार तक 69 किलोमीटर की लाइन है। दूसरा, भूटान के सामत्से और पश्चिम बंगाल के बनारहाट के बीच 17 - किमी से 20 - किमी लिंक बनाने की योजना है। इस लिंक से भारत, भूटान और बांग्लादेश के बीच निर्बाध व्यापार की सुविधा मिलने की उम्मीद है।

भारत-भूटान संबंधों के समक्ष चिंताएँ एवं चुनौतियाँ :

- चीन के साथ सीमा वार्ता: डोकलाम सहित विवादित सीमा क्षेत्रों पर चीन के साथ भूटान की चल रही वार्ताएँ भारत में संभावित रणनीतिक कमजोरियों को लेकर चिंताएँ उत्पन्न करती हैं।
- चीन की क्षेत्रीय आक्रामकता: चीन भूटान को अपनी "फाइव फिंगर पॉलिसी" का हिस्सा मानता है। इस पॉलिसी के तहत तिब्बत को हथेली और लद्दाख, नेपाल, सिक्किम, भूटान व अरुणाचल प्रदेश को अंगुलियां माना जाता है।
- भूटान-चीन सीमा विवाद: भूटान और चीन ने अक्टूबर 2021 में सीमा विवाद समाधान को तेज करने के लिए "तीन-चरणीय रोडमैप" पर हस्ताक्षर किए थे। भारत को डर है कि चीन भूटान पर डोकलाम पठार पर पहुंच या नियंत्रण छोड़ने के लिए दबाव डाल सकता है। इससे भारत के सामरिक सिलीगुड़ी कॉरिडोर को खतरा हो सकता है।
- अवसंरचना कूटनीति और अंतराल: - चीन की बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव (BRI) और दक्षिण एशिया में उसका बढ़ता प्रभाव भूटान को आर्थिक प्रोत्साहनों के साथ आकर्षित कर सकता है, जिससे क्षेत्र में भारत की पारंपरिक प्रधानता को चुनौती मिल सकती है। कोकराझार–गेलफू रेल लिंक जैसी पहलें आशाजनक हैं, लेकिन भूटान का कठिन भू-भाग और सीमित संपर्क अभी भी व्यापार और गतिशीलता में बाधा डालते हैं।

- सुरक्षा चिंताएँ: - सीमा-पार आवाजाही और छिद्रपूर्ण सीमाएँ अवैध गतिविधियों को रोकने और शांति बनाए रखने के लिए बेहतर समन्वय की आवश्यकता दर्शाती हैं।
- संप्रभुता बनाम साझेदारी: - विदेश नीति में अधिक स्वायत्तता की भूटान की इच्छा को भारत के रणनीतिक हितों के साथ संतुलित करना आवश्यक है, विशेषकर संवेदनशील हिमालयी गलियारे में।
- बहुपक्षीय सहभागिता: वैश्विक मंचों में भूटान की बढ़ती भागीदारी और क्षेत्रीय मुद्दों पर उसका विकसित होता दृष्टिकोण कभी-कभी भारत की स्थिति से भिन्न हो सकता है।
- जलविद्युत पर निर्भरता: भूटान की अर्थव्यवस्था भारत को जलविद्युत निर्यात पर अत्यधिक निर्भर है। पुनात्संगछू-II जैसी परियोजनाओं में देरी और ऊर्जा मांगों में बदलाव भूटान की राजकोषीय स्थिरता के लिए जोखिम उत्पन्न करते हैं।
- युवा परिप्रेक्ष्य और विदेश नीति विविधीकरण : भूटानी जनमत में एक पीढ़ीगत बदलाव आ रहा है। जबकि भारत पिछले 50 वर्षों में "सबसे भरोसेमंद साझेदार" बना हुआ है, युवा पीढ़ी तेजी से वैश्विक रूप से उन्मुख है।
- स्वायत्तता की इच्छा: - युवा भूटानी भारत पर "अति - निर्भरता" के बारे में चिंता व्यक्त करते हैं, अक्सर निर्भरता के जोखिमों की याद दिलाते हुए 2013 केरोसिन सब्सिडी में कटौती का हवाला देते हैं।
- क्षितिज का विस्तार :- युवाओं में भूटान की अंतर्राष्ट्रीय उपस्थिति बढ़ाने और विदेशी संबंधों में विविधता लाने की प्रबल इच्छा है। इसका प्रमाण भूटान द्वारा अगस्त 2026 में जॉर्डन के हाशमी साम्राज्य जैसे देशों के साथ नए राजनयिक संबंध स्थापित करने से मिलता है।
- चीन का दृष्टिकोण: - सीमा विवाद और तिब्बत के इतिहास के कारण युवा चीन को सावधानी के साथ देखते हैं, लेकिन वे संभावित आर्थिक अवसरों को भी पहचानते हैं जो सामान्य संबंधों से उत्पन्न हो सकते हैं।
- युवा प्रवासन का "राष्ट्रीय संकट ": भूटान वर्तमान में एक महत्वपूर्ण जनसांख्यिकीय चुनौती का सामना कर रहा है। लगभग 9% आबादी ने विदेश में बेहतर अवसरों की तलाश में देश छोड़ दिया है। प्रधान मंत्री शेरिंग टोबगे ने इस प्रवासन को "राष्ट्रीय संकट" और "अस्तित्वगत खतरा" के रूप में वर्णित किया है। यह घरेलू दबाव जीएमसी जैसी परियोजनाओं के लिए तात्कालिकता को बढ़ावा देता है, जिनका उद्देश्य उच्च गुणवत्ता वाली स्थानीय नौकरियां पैदा करना और युवा आबादी को बनाए रखना है ताकि ब्रेन ड्रेन एवं सामाजिक असंतोष को रोका जा सके।

निष्कर्ष : भारत-भूटान संबंध मित्रता और विश्वास के एक अद्वितीय मॉडल का उदाहरण हैं, जिसमें विकास, ऊर्जा, प्रौद्योगिकी और संस्कृति शामिल हैं। भूटान चीन के साथ अपने संबंधों को आगे बढ़ा रहा है, ऐसे में भारत की भागीदारी भूटान की क्षेत्रीय सुरक्षा और स्वायत्तता के लिए महत्वपूर्ण बनी हुई है। ऐसी स्थिति में भूटान को भी बदलते वैश्विक परिदृश्य में भारत के हितों को समझने की जरुरत है।

देखा जाय तो इस बदलते माहौल में ही यह सुनिश्चित हो सकेगा कि दोनों देश उभरती चुनौतियों का समाधान किस तरह करते हुए एक साथ समृद्ध होते रह सकेंगें । भारत को निरंतर विकास सहायता के माध्यम से आर्थिक सहयोग बढ़ाने और आपसी सुरक्षा प्रतिबद्धताओं को मजबूत करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। इसके अलावा, मानवीय संबंधों को बढ़ावा देने वाले शैक्षिक सहयोग तथा गहरी जड़ें जमाए हुए सांस्कृतिक संबंधों की खोज के माध्यम से भी द्विपक्षीय संबंधों को और बेहतर बनाये जाने की दिशा में निरंतर प्रयास किये जाने की जरुरत है।

सन्दर्भ सूची :

1. Debnath, Sailen,(2017), Indo-Bhutan Relations in Modern Times: A Study of Bilateral Relations,

Aayu Publications.
2. Srivastava,Juhi, (2021), India-Bhutan Relations: Analysis of Changing Dynamics (from 2007-2017), Pacific Books International.
3. भारत-भूटान संबंधों का सामरिक महत्व और चीन की चुनौती, TheExamPillar https://share.google/pRjIHcOFtuAlYgauq
4. Ministry of Foreign Affairs and External Trade, Royal Government of Bhutan. (August 23, 2026). Joint press release on the 25th round of boundary talks between Bhutan and China. https://www.mfa.gov.bt/joint-press-release-on-the-25th-round-of-boundary-talks-between-bhutan-and-china/
5. Ministry of Foreign Affairs and External Trade, Royal Government of Bhutan. (May 17, 2026). Press release - The 15th Expert Group Meeting on Bhutan-China boundary issues. https://www.mfa.gov.bt/press-release-16/
6. Ministry of External Affairs, Government of India. (March 22, 2024). Joint statement on the state visit of Prime Minister of India to Bhutan. https://www.mea.gov.in/bilateral-documents.htm?dtl/37740/Joint_Statement_on_the_State_Visit_of_Prime_Minister_of_India_to_Bhutan
7. Ministry of Foreign Affairs and External Trade, Royal Government of Bhutan. (September 7, 2026). Establishment of diplomatic relations with Jordan. https://www.mfa.gov.bt/press-releases/
8. Ministry of External Affairs, Government of India. (August 14, 2026). India Bhutan relations. https://www.mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/Brief_on_India_Bhutan_Relations_March_2024.pdf
9. भारत-भूटान संबंध (India-Bhutan relations), Current Affairs, Vision IAS https://share.google/RJkxkCug0OXRGBXJa
10. Embassy of India, Thimphu. (May 18, 2026). Bhutan in MEA Annual Report for the year 2024-25. https://www.indembthimphu.gov.in/pages/NDgx
11. International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology. (June 24, 2026). The Doklam dilemma assessing the impact of Bhutan–China boundary talks. https://ijarsct.co.in/Paper31299.pdf
12. BhutanWiki. (September 7, 2026). Gelephu Mindfulness City. https://www.bhutanwiki.org/articles/gelephu-mindfulness-city
13. Press Information Bureau, Government of India. (July 12, 2026). Cabinet approves MoU between India and Bhutan on cooperation in outer space. https://www.pib.gov.in/Pressreleaseshare.aspx?PRID=1684625
14. Lotus Arise. (September 3, 2026). India-Bhutan relations (PSIR Optional) - UPSC notes. https://lotusarise.com/india-bhutan-relations-psir-optional/
15. भारत-भूटान संबंधों को मज़बूत करना https://share.google/bVQiaL4hTEiVTWPP7
16. Deutsche Nationalbibliothek. (June 2, 2026). A case study in the India–Bhutan relationship. https://d-nb.info/1371272867/34
17. The Daily Pioneer. (2026, August 20). *Gelephu Bhutan bet India's gain. https://dailypioneer.com/news/gelephu-bhutans-bet-indias-gain
18. Observer Research Foundation. (March 12, 2025). Young Bhutan. https://www.orfonline.org/public/uploads/posts/pdf/20250220121858.pdf
19. The Telegraph India. (2025, November 12). *Modi pledges full support to Bhutan's Gelephu Mindfulness City*. https://www.telegraphindia.com/north-east/india-backs-bhutans-gelephu-mindfulness-city-project-to-boost-trade-and-connectivity-ties-prnt/cid/21324
20. StratNews Global. (December 16, 2025). Young Bhutan rethinks its place in the world. https://stratnewsglobal.com/asia/young-bhutan-rethinks-its-place-in-the-world/

21. Nation Press. (August 24, 2026). India-Bhutan ties deepen across energy, trade and connectivity in 2025. https://www.nationpress.com/sciencetech/india-bhutan-ties-deepen-on-energy-and-trade
22. Carnegie Endowment for International Peace. (April 23, 2024). On thin ice: Bhutan's diplomatic challenge amid the India- China border dispute.https://carnegieendowment.org/posts/2024/05/on-thin-ice-bhutans-diplomatic-challenge-amid-the-india-china-border-dispute
23. Embassy of India, Thimphu. (August 26, 2026). *Hydropower projects*. https://www.indembthimphu.gov.in/pages/Mzgz
24. United Service Institution of India. (May 18, 2026). Impact on Indo-Bhutan strategic partnership. https://usiofindia.org/pdf/USI%20Journal%20-%20Apr-June%202024-19-29.pdf
25. Journal of Political Science. (March 25, 2026). India's proactive approach towards Bhutan under the Modi government. https://journalspoliticalscience.com/index.php/i/article/download/414/101/1969
26. BhutanWiki. (August 8, 2026). Gelephu Mindfulness City: Economic analysis. https://www.bhutanwiki.org/articles/gmc-economic-analysis
27. Brookings Institution. (July 20, 2026). Gambling to develop: A small, landlocked economy takes a bold growth strategy. https://www.brookings.edu/articles/bhutan-bold-growth-strategy-hydropower-crypto-gelephu/
28. Institute of South Asian Studies, NUS. (January 25, 2023). China-Bhutan border talks. https://www.isas.nus.edu.sg/papers/china-bhutan-border-talks/
29. The Hindu. (November 3, 2025). China, Bhutan officials meet in Kunming, agree to 'push forward' boundary talks. https://www.thehindu.com/news/international/china-bhutan-officials-meet-in-kunming-agree-to-push-forward-boundary-talks/article66377014.ece
30. The Hindu. (May 24, 2024). Watch | Gelephu megacity dreams | Bhutan PM interview. https://www.thehindu.com/news/international/watch-gelephu-megacity-dreams-bhutan-pm-interview/article68212109.ece
31. Bhutan Broadcasting Service. (October 14, 2021). Three-step roadmap for expediting the Bhutan-China boundary negotiations. https://www.bbs.bt/159103/

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-104-108

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 104-108
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :
डॉ0 जितेन्द्र कुमार
सहायक आचार्य, रक्षा एवं स्त्रातजिक विभाग, दी0द0उ0गो0वि0वि0, गोरखपुर

Corresponding Author :
डॉ0 जितेन्द्र कुमार
सहायक आचार्य, रक्षा एवं स्त्रातजिक विभाग, दी0द0उ0गो0वि0वि0, गोरखपुर

भारत–भूटान संबंधों में चीन का बढ़ता प्रभाव : भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के संदर्भ में एक अध्ययन

सारांश : भारत और भूटान के संबंध दक्षिण एशिया में पारस्परिक विश्वास, सुरक्षा सहयोग और विकासात्मक साझेदारी का एक विशिष्ट उदाहरण हैं। 2007 की भारत–भूटान मैत्री संधि दोनों देशों के आधुनिक द्विपक्षीय संबंधों का महत्वपूर्ण आधार है। भारत और भूटान सुरक्षा तथा सीमा–प्रबंधन के क्षेत्र में निकट सहयोग करते हैं। हाल के वर्षों में भूटान और चीन के बीच सीमा वार्ताओं में बढ़ती सक्रियता ने भारत की सामरिक चिंताओं को नया आयाम दिया है। अक्टूबर 2023 में भूटान और चीन ने सीमा–निर्धारण एवं सीमांकन के लिए Joint Technical Team से संबंधित Cooperation Agreement पर हस्ताक्षर किए थे। अप्रैल 2026 में दोनों देशों की 15वीं Expert Group Meeting में Three-Step Roadmap को आगे बढ़ाने तथा अगली बैठक भूटान में आयोजित करने पर सहमति बनी। भूटान की भौगोलिक स्थिति भारत और चीन के बीच हिमालयी क्षेत्र में अत्यंत महत्वपूर्ण है। विशेष रूप से डोकलाम क्षेत्र भारत की सुरक्षा के लिए संवेदनशील है, क्योंकि यह भारत के सिक्किम क्षेत्र तथा सिलिगुड़ी कॉरिडोर की सामरिक सुरक्षा से संबंधित व्यापक प्रश्नों को प्रभावित करता है। इस संदर्भ में चीन की सीमा–संबंधी गतिविधियां केवल भूटान की क्षेत्रीय अखंडता का विषय नहीं हैं, बल्कि भारत की उत्तरी सुरक्षा, पूर्वोत्तर की कनेक्टिविटी और हिमालयी सामरिक संतुलन से भी जुड़ी हैं। यह शोध भारत–भूटान संबंधों में चीन की बढ़ती भूमिका का विश्लेषण करते हुए यह अध्ययन करता है कि इसका भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव किस प्रकार पड़ सकता है।

मुख्य शब्द : भारत–भूटान संबंध, चीन, डोकलाम, हिमालयी सुरक्षा, सीमा विवाद, सामरिक सुरक्षा।

प्रस्तावना : भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा केवल उसकी अंतरराष्ट्रीय सीमाओं तक सीमित नहीं है। पड़ोसी देशों की राजनीतिक स्थिरता, आर्थिक संरचना, सामरिक अभिविन्यास तथा बाहरी शक्तियों की उपस्थिति भी भारत की सुरक्षा को प्रभावित करती है। इस दृष्टि से भूटान का विशेष महत्व है। भारत और भूटान के राजनयिक संबंध 1968 में स्थापित हुए और दोनों देशों के संबंधों का आधार 1949 की संधि रही, जिसे फरवरी 2007 में संशोधित किया गया। भूटान की भौगोलिक स्थिति इसे भारत की हिमालयी सुरक्षा व्यवस्था का महत्वपूर्ण घटक बनाती है। दूसरी ओर, चीन के साथ भूटान का सीमा विवाद लंबे समय से चला आ रहा है। दक्षिण एशिया की भू–राजनीति में भारत और भूटान के संबंधों का विशेष महत्व है। भारत और भूटान के बीच संबंध केवल पारंपरिक कूटनीतिक संबंधों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि इनमें सुरक्षा, सीमा प्रबंधन, ऊर्जा, व्यापार, विकास, शिक्षा, परिवहन और जन–से–जन संपर्क जैसे अनेक आयाम शामिल हैं। भारत की विदेश नीति में भूटान का विशेष स्थान है। भारत के विदेश मंत्रालय के अनुसार दोनों देशों के बीच संबंध पारस्परिक विश्वास और समझ पर आधारित हैं तथा दोनों देश सुरक्षा और सीमा–प्रबंधन के मुद्दों पर निकट सहयोग करते हैं। दूसरी ओर, चीन और भूटान के बीच

सीमा विवाद लंबे समय से चला आ रहा है। दोनों देशों ने सीमा विवाद के समाधान के लिए कई दौर की वार्ताएं की हैं। 2023 में 25वें दौर की सीमा वार्ता तथा 2026 में 15वीं Expert Group Meeting इस प्रक्रिया की निरंतरता को दर्शाती है। इस बदलते परिवेश में भारत के लिए सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि यदि चीन और भूटान के संबंधों में रणनीतिक एवं आर्थिक निकटता बढ़ती है, तो इसका भारत की उत्तरी एवं पूर्वोत्तर सुरक्षा पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

शोध समस्या : भारत–भूटान संबंधों पर उपलब्ध अध्ययनों में आर्थिक सहयोग, जलविद्युत, कूटनीतिक संबंध तथा डोकलाम जैसे विषयों का अलग–अलग अध्ययन मिलता है। परंतु चीन–भूटान सीमा वार्ता में 2026 तक हुई प्रगति को भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा, डोकलाम, सिलीगुड़ी कॉरिडोर और व्यापक हिमालयी सामरिक संतुलन के साथ जोड़कर देखने की आवश्यकता है। अतः इस शोध की प्रमुख समस्या यह है– भारत–भूटान संबंधों में चीन की बढ़ती सक्रियता भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा और हिमालयी सामरिक संतुलन को किस प्रकार प्रभावित कर सकती है?

शोध के उद्देश्य :

- भारत–भूटान संबंधों के ऐतिहासिक एवं सामरिक विकास का अध्ययन करना।
- चीन–भूटान संबंधों में बढ़ती सक्रियता का विश्लेषण करना।
- डोकलाम के सामरिक महत्व का अध्ययन करना।
- भारत–भूटान सीमा एवं सुरक्षा सहयोग का विश्लेषण करना।
- भारत की ऊर्जा एवं विकास साझेदारी का मूल्यांकन करना।

शोध प्रश्न : भारत–भूटान संबंधों में चीन की बढ़ती सक्रियता भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा को किस प्रकार प्रभावित कर सकती है?

- ✓ डोकलाम भारत के लिए क्यों महत्वपूर्ण है?
- ✓ चीन की आर्थिक एवं कूटनीतिक गतिविधियां भूटान की रणनीतिक स्वायत्तता को किस प्रकार प्रभावित कर सकती हैं?
- ✓ भारत को भविष्य में कौन–सी रणनीति अपनानी चाहिए?

परिकल्पना :

- ➢ चीन की बढ़ती भूटान–नीति भारत की हिमालयी सामरिक सुरक्षा के लिए नई चुनौतियां उत्पन्न कर सकती ळें
- ➢ चीन–भूटान सीमा विवाद के संभावित समाधान का भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा पर महत्वपूर्ण सामरिक प्रभाव पड़ सकता है।
- ➢ भारत की विकासात्मक, ऊर्जा और सुरक्षा साझेदारी भारत–भूटान संबंधों को मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
- ➢ भारत–भूटान संबंधों में विश्वास एवं रणनीतिक सहयोग को मजबूत करना चीन की बढ़ती भूमिका से उत्पन्न संभावित सुरक्षा चुनौतियों के प्रभाव को कम कर सकता है।

शोध–अंतराल : मौजूदा साहित्य में भारत–भूटान संबंधों का अध्ययन प्रायः जलविद्युत, आर्थिक सहयोग, कूटनीति और डोकलाम के अलग–अलग संदर्भों में किया गया है। लेकिन 2026 तक चीन–भूटान सीमा वार्ताओं में हुई प्रगति को भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा, हिमालयी सामरिक संतुलन, डोकलाम और सिलीगुड़ी कॉरिडोर के संयुक्त संदर्भ में विश्लेषित करने वाले अध्ययनों की आवश्यकता बनी हुई है। भारत के लिए यह और महत्वपूर्ण है क्योंकि भूटान के साथ भारत का विकास सहयोग वर्तमान में 10,000 करोड़ की 13वीं Five Year Plan सहायता तक विस्तृत है और दोनों देशों के बीच ऊर्जा सहयोग भी प्रमुख आधार हैय भारत द्वारा संयुक्त रूप से विकसित प्रमुख जलविद्युत परियोजनाओं की क्षमता 3156 MW बताई गई है। साथ ही, अगस्त 2026 में भारत–चीन Special Representative स्तर की 25वीं बैठक में सीमा प्रश्न, सीमा प्रबंधन और स्थिरता पर चर्चा हुई है, जिससे भारत–चीन सीमा और भारत–भूटान–चीन त्रिकोणीय सामरिक संदर्भ को समकालीन आयाम दिया जा सकता है।

भारत–भूटान संबंधों का सामरिक आधार : भारत–भूटान संबंधों में राजनीतिक विश्वास के साथ–साथ आर्थिक और ऊर्जा सहयोग भी महत्वपूर्ण है। भारत के आधिकारिक दस्तावेजों के अनुसार दोनों देशों के बीच नियमित उच्चस्तरीय राजनीतिक संपर्क कायम है तथा विकास साझेदारी व्यापक क्षेत्रों में फैली हुई है। विशेष रूप से जलविद्युत सहयोग दोनों देशों की रणनीतिक साझेदारी का महत्वपूर्ण स्तंभ है। इसलिए भारत–भूटान संबंधों को तीन स्तरों पर समझा जा सकता है– सुरक्षा. ऊर्जा. विकास, यही तीनों क्षेत्र भारत के लिए भूटान के रणनीतिक महत्व को बढ़ाते हैं।

भौगोलिक स्थिति : भूटान भारत और चीन के बीच स्थित हिमालयी राज्य है। इसकी उत्तरी सीमा चीन के तिब्बत स्वायत्त क्षेत्र से लगती है, जबकि दक्षिण, पूर्व और पश्चिम में भारत के साथ इसकी सीमाएं हैं। इस स्थिति के कारण भूटान का सामरिक महत्व उसकी भौगोलिक सीमा से कहीं अधिक बढ़ जाता है। भूटान की उत्तरी सीमा में होने वाले किसी भी महत्वपूर्ण सामरिक परिवर्तन का प्रभाव भारत की सुरक्षा पर पड़ सकता है। विशेष रूप से पश्चिमी भूटान और डोकलाम क्षेत्र भारत के लिए संवेदनशील हैं। भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र मुख्य भूभाग से एक संकीर्ण भू–भाग के माध्यम से जुड़ा हुआ है, जिसे सामान्यतः सिलीगुड़ी कॉरिडोर कहा जाता है। इस कारण हिमालयी क्षेत्र में किसी भी प्रतिकूल सामरिक परिवर्तन का प्रभाव भारत की पूर्वोत्तर कनेक्टिविटी पर पड़ सकता है। भूटान की उत्तरी सीमा में होने वाले किसी भी महत्वपूर्ण सामरिक परिवर्तन का प्रभाव भारत की सुरक्षा पर पड़ सकता है। विशेष रूप से पश्चिमी भूटान और डोकलाम क्षेत्र भारत के लिए संवेदनशील हैं। भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र मुख्य भूभाग से एक संकीर्ण भू–भाग के माध्यम से जुड़ा हुआ है, जिसे सामान्यतः सिलीगुड़ी कॉरिडोर कहा जाता है। इस कारण हिमालयी क्षेत्र में किसी भी प्रतिकूल सामरिक परिवर्तन का प्रभाव भारत की पूर्वोत्तर कनेक्टिविटी पर पड़

सकता है।

डोकलाम का सामरिक महत्व : डोकलाम भारत–भूटान–चीन त्रिकोण के निकट स्थित एक संवेदनशील क्षेत्र है। 2017 का डोकलाम गतिरोध इस क्षेत्र के सामरिक महत्व को स्पष्ट कर चुका है। डोकलाम का महत्व केवल भारत और चीन के बीच सैन्य प्रतिस्पर्धा तक सीमित नहीं है। इसका संबंध– भारत–भूटान सुरक्षा सहयोग, चीन–भूटान सीमा विवाद, सिक्किम की सुरक्षा, सिलीगुड़ी कॉरिडोर, भारत के पूर्वोत्तर राज्यों की कनेक्टिविटी, हिमालयी सैन्य संतुलन से है। इसलिए डोकलाम को भारत की हिमालयी सुरक्षा संरचना का एक महत्वपूर्ण बिंदु माना जा सकता ळें डोकलाम पठार भारत, भूटान और चीन के बीच का एक त्रिकोणीय जंक्शन है। यह इलाका रणनीतिक रूप से भारत के सिलीगुड़ी कॉरिडोर (चिकन नेक) के ठीक ऊपर स्थित है। विवाद की शुरुआत (जून 2017) चीनी सेना ने भूटान के दावे वाले डोकलाम क्षेत्र में जबरन एक पक्की सड़क का निर्माण शुरू कर दिया। चूंकि भूटान के पास चीन का मुकाबला करने के लिए पर्याप्त सेना नहीं थी, इसलिए भूटान ने भारत से सुरक्षा सहयोग मांगा। भारत का हस्तक्षेप 2007 की संधि के सुरक्षा दायित्वों के तहत, भारतीय सेना ने सीमा पार कर चीनी सैनिकों को सड़क बनाने से रोक दिया। भारत का मुख्य उद्देश्य चीन को जमोघरी (श्रंउचीमतप) तक पहुँचने से रोकना था। यदि चीन वहां पहुँच जाता, तो वह सीधे भारत के सिलीगुड़ी कॉरिडोर को अपनी तोपों की जद में ले लेता। भारत और चीन की सेनाएं 73 दिनों आमने–सामने खड़ी रहीं। दोनों देशों के बीच युद्ध जैसी स्थिति बन गई थी। आखिरकार, गहरी कूटनीतिक बातचीत के बाद, 28 अगस्त 2017 को दोनों देश अपनी सेनाएं पीछे हटाने पर सहमत हुए। वर्तमान स्थिति और चाइनीज विलेज बिल्ड–अप यद्यपि 2017 का गतिरोध टल गया, लेकिन चीन ने डोकलाम के ठीक बगल में विवादित भूटानी क्षेत्रों के भीतर कई स्थाई पैंगडा गाँव और सैन्य चौकियां बना ली हैं।

भारत–भूटान संशोधित मित्रता संधि, 2007 : यह संधि दोनों देशों के बीच 1949 में हुई पुरानी संधि का आधुनिक और संशोधित रूप है। 1949 की संधि में कुछ ऐसे प्रावधान थे जो बदलते भू–राजनीतिक परिवेश में भूटान की संप्रभुता को सीमित करते दिखते थे, जिन्हें 2007 में बदला गया।1949 की संधि के तहत भूटान अपनी विदेश नीति के संचालन में भारत के सलाह को मानने के लिए बाध्य था। 2007 की संशोधित संधि में इस बाध्यता को हटा दिया गया और इसे राष्ट्रीय हितों से जुड़े मुद्दों पर एक–दूसरे के साथ घनिष्ठ सहयोग में बदल दिया गया। इससे भूटान को एक स्वतंत्र विदेश नीति संचालित करने की स्वायत्तता मिली। सुरक्षा के लिए पारस्परिक प्रतिबद्धता संशोधित संधि के अनुच्छेद 2 में यह स्पष्ट रूप से जोड़ा गया कि कोई भी देश अपनी भूमि का उपयोग दूसरे देश की राष्ट्रीय सुरक्षा और हितों को नुकसान पहुँचाने वाली गतिविधियों के लिए नहीं होने देगा। यही वह सुरक्षा क्लॉज है जो भारत को भूटान की सुरक्षा में सहयोग करने की कानूनी शक्ति देता है। पहले भूटान को हथियार आयात करने के लिए भारत की पूर्व–अनुमति की आवश्यकता होती थी। 2007 की संधि के बाद भूटान भारत के रास्ते अपनी जरूरत के हथियार स्वतंत्र रूप से मंगा सकता है, बशर्ते कि उससे भारत के रणनीतिक हित प्रभावित न हों और उन हथियारों का दोबारा निर्यात न किया जाए।

भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा पर प्रभाव : चीन–भूटान सीमा व्यवस्था में परिवर्तन का भारत की उत्तरी सीमा की सुरक्षा पर अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ सकता है। पूर्वोत्तर भारत को भारत के मुख्य भूभाग से जोड़ने वाले सिलीगुड़ी क्षेत्र की सामरिक संवेदनशीलता के कारण भूटान के पश्चिमी क्षेत्र में किसी भी महत्वपूर्ण भू–राजनीतिक परिवर्तन का सावधानीपूर्वक अध्ययन आवश्यक है। डोकलाम और सिक्किम की भौगोलिक निकटता भारत के लिए विशेष सुरक्षा चिंता पैदा करती है। भारत के पूर्वोत्तर राज्यों की सुरक्षा और संपर्क व्यवस्था हिमालयी भू–राजनीतिक परिवर्तनों से प्रभावित हो सकती है।

चीन की रणनीति का विश्लेषण : चीन की भूटान नीति को केवल सीमा विवाद के संदर्भ में देखना पर्याप्त नहीं है। इसे व्यापक हिमालयी रणनीति के संदर्भ में देखना आवश्यक है। चीन की संभावित रणनीति के प्रमुख आयाम हैं– पहला, सीमा विवाद का समाधान अपने हितों के अनुरूप करना। दूसरा, भूटान के साथ राजनीतिक एवं आर्थिक संपर्क बढ़ाना। तीसरा, हिमालयी क्षेत्र में अपनी सामरिक उपस्थिति को मजबूत करना। चौथा, भारत के पारंपरिक प्रभाव वाले पड़ोसी देशों में अपनी कूटनीतिक पहुंच बढ़ाना। पांचवां, तिब्बत क्षेत्र की सुरक्षा तथा सीमा–क्षेत्र में अपनी स्थिति को मजबूत करना। हालांकि इन सभी,गतिविधियों को सीधे "भारत के विरुद्ध रणनीति" के रूप में देखना शोध की दृष्टि से उचित नहीं होगा। इसके बजाय इनके भारत की सुरक्षा पर संभावित प्रभाव का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण करना अधिक उपयुक्त होगा।

ऊर्जा सुरक्षा का आयाम : भारत–भूटान संबंधों में जलविद्युत सहयोग एक महत्वपूर्ण रणनीतिक स्तंभ है। भारत ने भूटान में कई जलविद्युत परियोजनाओं के विकास में सहयोग किया है। 2025 तक भारत और भूटान द्वारा संयुक्त रूप से विकसित प्रमुख परियोजनाओं की कुल क्षमता 3156 MW बताई गई है। इसलिए जलविद्युत सहयोग को केवल आर्थिक संबंध नहीं बल्कि ऊर्जा सुरक्षा और रणनीतिक परस्पर निर्भरता के रूप में भी देखा जा सकता है। भविष्य में भारत को जलविद्युत के साथ–साथ सौर ऊर्जा, हरित ऊर्जा, ऊर्जा ग्रिड, बिजली व्यापार, ऊर्जा भंडारण में सहयोग बढ़ाना चाहिए।

भारत–भूटान सीमा सहयोग : भारत और भूटान के बीच सीमा संबंधों में सहयोग की निरंतरता दिखाई देती है। मार्च 2025 में दोनों देशों के अधिकारियों ने सीमा–संबंधी field work की समीक्षा की तथा आगामी तीन field seasons के लिए कार्ययोजना को अंतिम रूप दिया। दोनों पक्षों ने तकनीकी सहयोग और capacity building पर भी चर्चा की। यह भारत–भूटान संबंधों में विश्वास आधारित सीमा प्रबंधन का महत्वपूर्ण उदाहरण है।

भारत की चिंताएं और वर्तमान भू–राजनीति : हाल के वर्षों (2025–2026) में चीन और भूटान के बीच सीमा विवाद को सुलझाने के लिए थ्री–स्टेप रोडमैप के तहत वार्ता काफी तेज हुई है। चीन भूटान को एक पैकेज डील दे रहा है चीन उत्तर में भूटान के विवादित क्षेत्रों पर अपना दावा छोड़ने को तैयार है, बशर्ते भूटान पश्चिम में स्थित डोकलाम क्षेत्र चीन को सौंप दे।

यदि भूटान इस आर्थिक या कूटनीतिक दबाव में आकर डोकलाम पर समझौता करता है, तो भारत के लिए पूर्वोत्तर राज्यों की सुरक्षा लाइन हमेशा के लिए खतरे में पड़ जाएगी। इसी चीनी प्रभाव को काटने के लिए भारत ने भूटान के साथ कनेक्टिविटी पर बहुत तेजी से काम किया है। हाल ही में भारत और भूटान के बीच कोकराझार–गेलेफू और बनातहाट–सामसे सीमा पर लगभग 88 किलोमीटर लंबी रेल लिंक परियोजनाओं पर काम शुरू हुआ है, जिससे दोनों देशों के आर्थिक और सामरिक हित और मजबूत हो सकें।

सीमा विवाद और भारतीय सुरक्षा पर इसके प्रभाव : भूटान दक्षिण एशिया का एकमात्र ऐसा देश है जिसके चीन के साथ राजनयिक संबंध नहीं हैं। 470 किलोमीटर लंबी सीमा पर विवाद के कारण दोनों देशों के द्विपक्षीय संबंध तनावपूर्ण बने हुए हैं। भूटान में चार विवादित क्षेत्र हैं जो पश्चिम में धोकलाम, चारिथांग, सिंचुलिम्पा और ड्रामाना चारागाह तक फैले हुए हैं। चीन रणनीतिक उद्देश्यों के लिए भूटान, चीन और भारत के त्रिकोणीय जंक्शन के निकट पश्चिमी क्षेत्र में अधिकतम भूमि पर अपना दावा कर रहा है। उसने थिम्फू को एक समझौता प्रस्ताव दिया हैरू वह भूटान के उत्तर–पश्चिमी क्षेत्रों को इस शर्त पर चाहता है कि भूटान मध्य क्षेत्रों पर अपने नियंत्रण को मान्यता दे। 2004 में, भूटानी राष्ट्रीय सभा ने क्षेत्र विनिमय के मुद्दे पर चर्चा की। भूटान ने इन विचार–विमर्शों में भारत को शामिल नहीं किया। इससे इस क्षेत्र को लेकर भारत में अस्पष्टता पैदा हो गई है। (नेपाल के साथ चीनी सीमा समझौता क्षेत्र–दर–क्षेत्र समझौते के बजाय एक व्यापक समझौते के माध्यम से हुआ था।) पीआरसी चाहता है कि भूटान चुंबी घाटी पर समझौता करे। त्रिकोणीय जंक्शन में कोई भी घटनाक्रम भारत के लिए चिंता का विषय है। यह क्षेत्र भारत के शचिकन नेकश कहे जाने वाले सिलीगुड़ी कॉरिडोर के करीब है, जो उत्तर–पूर्वी मार्ग को जोड़ता है। इस कदम से नई दिल्ली चिंतित है क्योंकि इससे चीनी सेनाएं सिलीगुड़ी कॉरिडोर के कुछ किलोमीटर के भीतर आ जाएंगी, जो भारत के शेष भाग को पूर्वोत्तर से और नेपाल को भूटान से जोड़ता है। तिब्बत और सिक्किम के साथ साझा सीमा के कारण चुंबी घाटी चीन के लिए समान रूप से रणनीतिक महत्व रखती है। चुंबी घाटी में कोई भी घटनाक्रम जो बीजिंग के पक्ष में यथास्थिति को बदलता है, भारत पर गंभीर प्रभाव डालेगा। अब तक, चीन और भूटान के बीच 19 दौर की सीमा वार्ता भारत के साथ भूटान के घनिष्ठ संबंधों के कारण विवाद को सुलझाने में विफल रही है। भूटान काफी हद तक भारत के प्रभाव में रहा है। भारत–भूटान संबंधों में 2007 में संशोधन किया गया और अब यह एक समान संबंध है। इसके बाद भूटान ने संसदीय लोकतंत्र को अपनाया। जैसे–जैसे लोकतंत्र मजबूत होता गया, भारत के साथ विशेष संबंधों पर सवाल उठने लगे। इसलिए अपने संबंधों को संतुलित करने के लिए भूटान चीन की ओर रुख कर रहा है। भूटान में एक वर्ग ऐसा है जो भारत के साथ संतुलन बनाए रखने के लिए चीन के लिए इसी तरह के केंद्र खोलने पर विचार कर रहा है। शायद भूटान भारत की छाया से बाहर निकलकर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अधिक सक्रिय भूमिका निभाना चाहता है। कृषि और वानिकी आधारित अर्थव्यवस्था रहा भूटान ने हाल ही में अपनी अर्थव्यवस्था को खोला है। थिम्फू में विश्व की सबसे ऊंची बुद्ध प्रतिमा के निर्माण का ठेका चीनी कंपनियों को दिया गया है। बीजिंग कृषि और दूरसंचार उपकरण निर्यात कर रहा है और उसने स्वास्थ्य और शिक्षा सेवाओं से संबंधित परियोजनाओं में निवेश करने की पेशकश भी की है। निस्संदेह, चीन निवेश का एक आकर्षक स्रोत है। हालांकि, किसी भी देश में चीनी निवेश की अपनी शर्तें और नियम होते हैं – वे अपने श्रमिक और उपकरण लाते हैं। परिणामस्वरूप, विकास का लाभ स्थानीय समुदायों को नहीं मिलता है। हालांकि, भारतीय निवेश के मामले में ऐसा नहीं है। अब तक भूटान ने कभी भी चीन के साथ संबंध बनाने का प्रयास नहीं किया है। आज भूटान की सुरक्षा खतरे में है। जापान ने घोषणा की है कि थिम्फू में अपना राजनयिक मिशन खोलेगा। भूटान अब भारत का संरक्षित राज्य नहीं है और धीरे–धीरे चीन की ओर बढ़ रहा है। इसलिए भूटान के प्रति किसी भी नीति को सावधानीपूर्वक तैयार करना होगा।

निष्कर्ष : भारत–भूटान संबंध दक्षिण एशिया में भारत की पड़ोसी प्रथम नीति और हिमालयी सुरक्षा रणनीति का महत्वपूर्ण आधार हैं। चीन–भूटान सीमा वार्ता में 2021 के Three & Step Roadmap से लेकर 2026 की Expert Group Meeting तक हुई प्रगति यह संकेत देती है कि भूटान–चीन सीमा प्रश्न एक महत्वपूर्ण चरण में प्रवेश कर चुका है। भारत के लिए चुनौती केवल चीन की बढ़ती सक्रियता नहीं है, बल्कि बदलते हिमालयी सामरिक परिवेश में भूटान की रणनीतिक स्वायत्तता, भारत–भूटान विश्वास और अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा के बीच संतुलन स्थापित करना है। इसलिए भारत की दीर्घकालीन रणनीति का आधार सुरक्षा के साथ विकास और दबाव के स्थान पर विश्वास होना चाहिए। भारत यदि भूटान के साथ अपनी ऊर्जा, आर्थिक, तकनीकी, कनेक्टिविटी और सुरक्षा साझेदारी को समानता एवं पारस्परिक सम्मान के आधार पर और मजबूत करता है, तो वह हिमालयी क्षेत्र में अपने दीर्घकालीन सामरिक हितों की बेहतर रक्षा कर सकता है। भारत–भूटान संबंधों में चीन की बढ़ती सक्रियता को भारत के लिए केवल कूटनीतिक चुनौती के रूप में नहीं बल्कि व्यापक हिमालयी सुरक्षा के प्रश्न के रूप में देखना आवश्यक है। चीन के साथ भूटान के बढ़ते संबंधों का भारत के रणनीतिक हितों, अर्थव्यवस्था और क्षेत्रीय प्रभाव के लिये जटिल निहितार्थ हैं। भारत की प्रतिक्रिया में सुरक्षा, आर्थिक विविधीकरण और क्षेत्रीय कूटनीति को प्राथमिकता देते हुए एक नाजुक संतुलन लाने की आवश्यकता है। भूटान के साथ सुदृढ़ संबंध बनाए रखकर, खुली बातचीत में शामिल होकर और क्षेत्रीय सहयोग को बढ़ावा देकर, भारत अपने रणनीतिक पड़ोस में अपने हितों को संरक्षित करते हुए इन उभरती गतिशीलताओं के बीच प्रभावी ढंग से आगे बढ़ सकता है। हालांकि भूटान की विदेश नीति को केवल भारत–चीन प्रतिस्पर्धा के चश्मे से देखना उचित नहीं होगा। भूटान अपनी संप्रभुता, सुरक्षा और विकासात्मक आवश्यकताओं के आधार पर स्वतंत्र नीति–निर्णय करता है। इसलिए भारत के लिए सबसे प्रभावी रणनीति भूटान पर दबाव बनाने की बजाय विश्वास, समानता, विकास और सुरक्षा सहयोग को मजबूत करना होगी। भारत की विकास साझेदारी, जलविद्युत सहयोग और सीमा प्रबंधन इसके महत्वपूर्ण साधन हैं। भारत–भूटान संबंधों में ऊर्जा और विकास सहयोग अभी भी महत्वपूर्ण आधार हैं। साथ ही,

चीन–भूटान सीमा वार्ता में 2026 तक जारी प्रगति भारत के लिए यह आवश्यक बनाती है कि वह हिमालयी क्षेत्र में बदलते सामरिक भूगोल पर निरंतर निगरानी रखे।

सुझाव :

- ❖ भारत को भूटान के साथ उच्चस्तरीय रणनीतिक संवाद को और मजबूत करना चाहिए।
- ❖ भारत को भूटान की आर्थिक एवं विकासात्मक आवश्यकताओं में अधिक सक्रिय भागीदारी करनी चाहिए।
- ❖ जलविद्युत के साथ तमदमूंइसम मदमतहल और cross border energy connectivity पर ध्यान देना चाहिए।
- ❖ भारत को डोकलाम एवं आसपास के क्षेत्रों की सामरिक परिस्थितियों का निरंतर अध्ययन करना चाहिए।
- ❖ सिलीगुड़ी कॉरिडोर तथा पूर्वोत्तर कनेक्टिविटी की सुरक्षा को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।
- ❖ सीमा सुरक्षा में आधुनिक तकनीक Satellite surveillance और अन्य वैध निगरानी क्षमताओं का उपयोग बढ़ाना चाहिए।
- ❖ भारत को भूटान की Strategic autonomy का सम्मान करते हुए ऐसा सहयोग मॉडल विकसित करना चाहिए जिसमें भूटान स्वयं को समान साझेदार के रूप में देखे।

संदर्भ :

1. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार, भारत–भूटान संबंध।
2. रक्षा अध्ययन एवं सामरिक अध्ययन से संबंधित भारतीय शोध–पत्र एवं जर्नल।
3. भारतीय विदेश नीति और दक्षिण एशियाई राजनीति पर प्रकाशित हिंदी पुस्तकें।
4. हिमालयी सुरक्षा एवं भारत–चीन सीमा से संबंधित शोध ग्रंथ।
5. Ministry of Foreign Affairs and External Trade, Royal Government of Bhutan — 15th Expert Group Meeting on Bhutan & China Boundary Issues, 2026.
6. Tilak Jha, China and Its Peripheries: Limited Objectives in Bhutan, August 2013.
7. Surjit Mansingh, China & Bhutan Relations, China Report, New Delhi, vol- 30, 1994, P- 177.
8. S- D- Muni, Bhutan Steps Out, The World Today, London, Vol- 40, No- 12, December 1984, P- 516.
9. Centre for Bhutan Studies, Economic and Political Relations between Bhutan and Neighbouring Countries, Monograph, 12 April 2025.
10. Thierry Mathou, Tibet and its Neighbour, Moving toward a New Chinese Strategy in the Himalayan Region, Asian Survey, Berkeley, Vol- 45, August, 2005 P- 515.
11. ग्लवान घाटी, भारत और चीन ने सैनिक रिहाई की खबरों को कम करके,बीबीसी न्यूज, 19 जून 2020
12. विष्णु सोम, भूटान द्वारा चीन की घुसपैठ से इनकार करना, वैश्विक पर्यवेक्षक, एनडीटीवी, 21 नवंबर 2020
13. पी. स्टोबडन, भारत की असली समस्या भूटान नीति में निहित है, सीमा में नहीं, द वायर, 14 जुलाई 2017
14. अमित रंजन, भारत–भूटान जलविद्युत परियोजनाएं सहयोग और चिंताएं, कार्यपत्र संख्या 209, दक्षिण एशियाई अध्ययन संस्थान, 17 अक्टूबर 2018
15. सिद्धांत सिबल, भूटान के प्रधानमंत्री ने भारत में निर्मित टीके मिलने पर करुणा और उदारता का परिचय दिया, डब्ल्यूआईओएन, 20 जनवरी 2021

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-109-114

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 109-114
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. सविता राठौर

सहायक प्राध्यापक-गृह विज्ञान, राजकीय महाविद्यालय, जसपुर (उधम सिंह नगर), उत्तराखंड.

Corresponding Author :

डॉ. सविता राठौर

सहायक प्राध्यापक-गृह विज्ञान, राजकीय महाविद्यालय, जसपुर (उधम सिंह नगर), उत्तराखंड.

भारत एवं भूटान की पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियाँ एवं उपचारात्मक आहार : एक तुलनात्मक अध्ययन

1. प्रस्तावना : एक तरफ भारत को आयुर्वेद, सिद्ध और यूनानी जैसी महान चिकित्सा प्रणालियों की जननी या माँ माना जाता है। वहीं दूसरी तरफ हमारा पड़ोसी देश भूटान है, जिसे इतिहास में 'मेनजोंग' यानी 'जड़ी-बूटियों और औषधियों की धरती' कहा गया है। भूटान ने अपनी कठिन पहाड़ी भौगोलिक परिस्थितियों, ठंडी जलवायु और बौद्ध दर्शन (Buddhist Philosophy) को आपस में इस तरह पिरोया कि वहाँ 'सोवा रिग्पा' (जिसे ग्यो-बा रिग्पा भी कहते हैं) जैसी अनोखी स्वास्थ्य प्रणाली का जन्म हुआ और वह आज तक सुरक्षित रही।

विश्व की प्राचीनतम चिकित्सा-परंपराओं में भारत की आयुर्वेद पद्धति और हिमालयी क्षेत्र में प्रचलित सोवा-रिग्पा परंपरा का विशिष्ट स्थान है। भारत और भूटान के द्विपक्षीय सम्बन्ध केवल राजनीतिक एवं आर्थिक क्षेत्रों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि दोनों देश आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत भी साझा करते हैं, जिसका एक अत्यंत महत्वपूर्ण हिस्सा दोनों देशों की पारंपरिक स्वास्थ्य प्रणालियाँ हैं। भूटान ने अपनी विषम हिमालयी भौगोलिक परिस्थितियों एवं बौद्ध दर्शन के समन्वय से 'सोवा रिग्पा' अथवा 'ग्यो-बा रिग्पा' चिकित्सा पद्धति को संरक्षित किया है। **(Gurmet & Rath 2020)**

एशियाई देशों में चिकित्सा परंपराओं में भोजन को औषधि के समान महत्व दिया गया है। आयुर्वेद में आहार को जीवन के तीन आधार स्तंभों (त्रयोपस्तंभ) में से एक माना गया है, तथा सोवा रिग्पा में भी उपयुक्त आहार को सबसे महत्वपूर्ण उपचार माना जाता है। इस शोध-पत्र का उद्देश्य केवल आहार-व्यवस्था तक सीमित न रहकर, दोनों देशों की पारंपरिक चिकित्सा-परम्पराओं में ऐतिहासिक, दार्शनिक आधार, औषधीय जड़ी-बूटियों,तथा लोक-चिकित्सा पद्धतियों का एक तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करना है, ताकि यह समझा जा सके कि साझा हिमालयी एवं बौद्ध-वैदिक विरासत के बावजूद ये प्रणालियाँ

किस प्रकार समान तथा भिन्न रूप से विकसित हुई हैं।

2. शोध का उद्देश्य :

- भारत एवं भूटान की पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों के ऐतिहासिक उदगम एवं विकास-क्रम का अध्ययन करना एवं दोनों पद्धतियों के सैद्धांतिक आधारों की तुलना करना।
- भारत की आयुर्वेदिक आहार अवधारणा एवं भूटान की सोवा रिग्पा आहार अवधारणा के सैद्धांतिक आधार को समझना एवं निदान एवं उपचार पद्धतियों, प्रमुख औषधीय जड़ी-बूटियों तथा लोक-चिकित्सा पद्धतियों में समानता व भिन्नता को रेखांकित करना।

3. शोध कार्यप्रणाली : प्रस्तुत शोध पत्र में वर्णनात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है। द्वितीयक स्रोतों में भारत के आयुष मंत्रालय के दस्तावेज़, राष्ट्रीय भारतीय चिकित्सा पद्धति आयोग (NCISM), भूटान के स्वास्थ्य मंत्रालय की नीतियाँ, भूटान के परंपरागत चिकित्सा संकाय (Faculty of Traditional Medicine), 'जर्नल ऑफ भूटान स्टडीज' (Journal of Bhutan Studies) एवं 'भूटान हेल्थ जर्नल' में प्रकाशित शोध-पत्र, तथा नैदानिक आयुर्वेदिक अध्ययनों को सम्मिलित किया गया है।

4. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध : भारत और भूटान की चिकित्सा परंपराओं की जड़ें भारतीय बौद्ध दर्शन और आयुर्वेद में हैं, जो तिब्बत के रास्ते हिमालय क्षेत्र में फैला। भूटान में इस पारंपरिक चिकित्सा की शुरुआत 8वीं शताब्दी में गुरु पद्मसंभव (गुरु रिंपोछे) और उनके साथ आए भारतीय बौद्ध भिक्षुओं व वैद्यों के माध्यम से हुई, जिन्होंने महायान दर्शन के साथ चिकित्सा ज्ञान का प्रसार किया (Wangchuk, 2010)।

सोवा रिग्पा का मूल ग्रंथ **'ग्यु-शी'** (Gyushi) है, जिसके कई हिस्से महर्षि चरक की 'चरक संहिता' और ऋषि वाग्भट्ट के 'अष्टांग हृदयम्' के तिब्बती अनुवाद पर आधारित हैं। इसमें भारतीय, चीनी और ग्रीको-अरब पद्धतियों का मिश्रण भी दिखता है। भूटान अपनी समृद्ध जैव-विविधता के कारण हमेशा से दुर्लभ जड़ी-बूटियों का केंद्र रहा है, जिस पर भारत और तिब्बत के चिकित्सक निर्भर थे। इसी औषधीय संबंध के कारण भूटान को ऐतिहासिक रूप से **'ल्हो मेन जोंग'** (Lho Men Jong —जड़ी-बूटियों की दक्षिणी भूमि) कहा जाता था (Wangchuk et al., 2007 & 2015)।

5. भारत की पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियाँ

5.1 आयुर्वेद : आयुर्वेद भारत की सबसे प्राचीन चिकित्सा पद्धति है, जिसका सैद्धांतिक आधार चरक संहिता, सुश्रुत संहिता एवं अष्टांग हृदयम् जैसे ग्रंथों में निहित है।

5.2 सिद्ध एवं यूनानी पद्धतियाँ : दक्षिण भारत में प्रचलित सिद्ध पद्धति तथा मध्यकाल में भारत में विकसित यूनानी चिकित्सा भी भारत की चिकित्सा-विविधता का हिस्सा हैं। ये भारत के आयुष मंत्रालय का अभिन्न अंग हैं।

5.3 भारत में सोवा-रिग्पा : भारत के हिमालयी क्षेत्रों जम्मू-कश्मीर के लद्दाख, हिमाचल प्रदेश के लाहौल-स्पीति, सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग में सोवा-रिग्पा पद्धति सदियों से प्रचलित है। भारत सरकार के आयुष मंत्रालय के अंतर्गत राष्ट्रीय भारतीय चिकित्सा पद्धति आयोग (NCISM) के तहत सोवा-रिग्पा विभाग की स्थापना सन् 1993 में हुई, जो भारत-तिब्बती चिकित्सा परंपरा के संरक्षण एवं विकास हेतु कार्यरत है। हाल ही में केंद्र सरकार ने लेह में राष्ट्रीय सोवा-रिग्पा संस्थान की स्थापना को भी स्वीकृति प्रदान की है (आयुष मंत्रालय, 2025)

6. भूटान की पारंपरिक चिकित्सा पद्धति: सोवा रिग्पा / ग्यो-बा रिग्पा : भूटान की राष्ट्रीय पारंपरिक चिकित्सा पद्धति को स्थानीय भाषा में 'ग्यो-बा रिग्पा' अर्थात् 'उपचार का विज्ञान' कहा जाता है। इसका इतिहास आठवीं शताब्दी से जुड़ा है, जब गुरु पद्मसंभव भारत से भूटान पहुँचे। सन् 1616 में शब्द्रुंग नगावांग नामग्याल के भूटान आगमन के बाद इस पद्धति को मठों में औपचारिक रूप से पढ़ाया जाने लगा। सन् 1968 में तीसरे राजा जिग्मे दोर्जी वांगचुक की

स्वास्थ्य-एकीकरण नीति के अंतर्गत थिम्पू में पहला स्वदेशी औषधालय स्थापित हुआ, तथा सन् 1988 में राष्ट्रीय परंपरागत चिकित्सा संस्थान (National Institute of Traditional Medicine, NITM) की स्थापना की गई। सन् 2018 में यूनेस्को द्वारा सोवा रिग्पा को सांस्कृतिक धरोहर के रूप में मान्यता दी गई।

7. सैद्धांतिक ढाँचे की तुलना

	आयुर्वेद (भारत)	सोवा रिग्पा / ग्यो-बा रिग्पा (भूटान)
मूल दर्शन	ब्रह्मांड व मानव शरीर का अंतर्संबंध	बौद्ध दर्शन एवं प्रकृति का संतुलन
तत्व सिद्धांत	पंचमहाभूत: आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी	पाँच तत्व सिद्धांत: अंतरिक्ष, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी
शारीरिक दोष	त्रिदोष: वात, पित्त, कफ	नीपा-सुम/न्येस-पा: लुंग, थ्रिबा/तिपा, बेथ्केन/बदकन
मूल ग्रंथ	चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, अष्टांग हृदयम्	ग्यु-शी/च्युशी
निदान पद्धति	नाड़ी परीक्षा, जिह्वा परीक्षा, मूत्र-परीक्षा सहित अष्टविध परीक्षा	नाड़ी दर्शन, मूत्र-विश्लेषण, नेत्र व जिह्वा परीक्षण
उपचार का लक्ष्य	दोषों को साम्यावस्था में लाना	तीन मुख्य ऊर्जाओं के असंतुलन को ठीक करना
भाषा परम्परा	संस्कृत ग्रंथ	भोटी (तिब्बती) भाषा में रचित ग्रंथ

इसके साथ ही दोनों परम्पराओं में औषधि-निर्माण मुख्यतः प्राकृतिक स्रोतों; जड़ी-बूटियों, खनिजों तथा कुछ पशु-उत्पादों से किया जाता है।

8. भारत में आयुर्वेदिक आहार की अवधारणा :

8.1 आयुर्वेद की आहार-अवधारणा : आयुर्वेद में आहार को पोषण के साथ रोगों की रोकथाम और उपचार का प्रमुख साधन माना गया है। इसमें व्यक्ति के त्रिदोष—वात, पित्त और कफ, प्रकृति, पाचन-अग्नि, छह रसों तथा ऋतु के अनुसार भोजन निर्धारित किया जाता है। आयुर्वेद संतुलित एवं अनुकूल आहार पर बल देता है और विरुद्ध आहार को स्वास्थ्य के लिए हानिकारक मानता है। **(Kumari et al 2025)**

8.2 भूटान में सोवा रिग्पा आहार की अवधारणा : भूटान की पारंपरिक चिकित्सा पद्धति 'सोवा रिग्पा' तिब्बती चिकित्सा पर आधारित है तथा इस पर आयुर्वेद और बौद्ध परंपराओं का प्रभाव है। इसमें पंचमहाभूत, तीन शारीरिक ऊर्जाओं, त्रिदोष; लुंग, थ्रिबा और बेथ्केन तथा छह रसों के संतुलन के अनुसार आहार निर्धारित किया जाता है। भोजन का चयन व्यक्ति की प्रकृति और ऋतु के आधार पर होता है। इसमें उचित आहार को प्रथम औषधि और अनुचित आहार को रोग का प्रमुख कारण माना गया है **(Choda, 2016)**

9. प्रमुख औषधीय जड़ी-बूटियों का तुलनात्मक उपयोग : हिमालय भारत और भूटान के लिए औषधीय वनस्पतियों का साझा स्रोत है। आयुर्वेद और सोवा रिग्पा में कुटकी (*Picrorhiza kurroa*) का उपयोग यकृत एवं पित्त-संबंधी विकारों, हरड़ (*Terminalia chebula*) का पाचन एवं स्वास्थ्य-संवर्धन तथा अश्वगंधा (*Withania somnifera*) का उपयोग शक्ति एवं तंत्रिका-स्वास्थ्य के लिए किया जाता है। हालाँकि दोनों चिकित्सा पद्धतियों में इनके नाम और प्रयोग की विधियाँ अलग हो सकती हैं। **(Gurmet, 2004).**

10. भूटान की लोक-चिकित्सा पद्धतियाँ एवं भारत की समरूप परंपराएँ :

10.1 रु-तो-थ्यू-मी (पारंपरिक हड्डी जोड़ना) और भारतीय समरूपता : भूटान की इस लोक-विधा में जंगली सरसों के

तेल, औषधीय लेप (जैसे चंदन, हड्डजोड़ और हिमालयन रूबर्ब) और बाँस की पट्टियों (Splints) की मदद से टूटी हड्डियों को स्थिर किया जाता है। इसके बिल्कुल समरूप भारत में केरल की 'मर्म चिकित्सा' और आंध्र प्रदेश की 'पुत्तूर कट्टू' (Puthur Kattu) लोक-परंपराएं प्रसिद्ध हैं। पुत्तूर कट्टू में विशेष वनस्पतियों के रस और अंडे की सफेदी के लेप से जोड़ों व फ्रैक्चर का इलाज आज भी पारंपरिक वैद्यों द्वारा सफलतापूर्वक किया जाता है।

10.2 डोत्शो (औषधीय जल चिकित्सा) और भारतीय समरूपता : यह भूटान का सबसे लोकप्रिय 'हॉट स्टोन बाथ' (Hot Stone Bath) है. इसमें गंधक (सल्फर) व लोहे से भरपूर नदी के पत्थरों को आग में लाल करके लकड़ी के टब में डाला जाता है और पानी में 'खेमपा' (नागदौना) जैसी सूजन-रोधी जड़ी-बूटियाँ मिलाई जाती हैं, जो गठिया व साइनस में आराम देती हैं। **(Wangchuk et al 2021)** आयुर्वेद में इसके समरूप 'अवगाह स्वेद' (औषधीय काढ़े का टब स्नान) प्रचलित है. इसके अतिरिक्त, भारत में हिमाचल के मणिकरण और उत्तराखंड के तप्त कुंड जैसे प्राकृतिक सल्फर युक्त गर्म पानी के स्रोत भी इसी तरह त्वचा और जोड़ों के रोगों के उपचार में प्रयुक्त होते हैं। **(Singh, 2002).**

10.3 दुग-जिम-मी (विष निष्कर्षण) और भारतीय समरूपता : भूटान के निचले पहाड़ी जंगलों में सर्प-दंश या जहरीले कीड़ों के काटने पर इस विधि का उपयोग होता है। इसमें जहर फैलने से रोकने के लिए पट्टी बांधी जाती है और अतीस, चिरायता व जंगली लहसुन जैसी औषधियों के रस से विष को बेअसर किया जाता है; कुछ मामलों में वैक्यूम टूल्स से दूषित खून निकाला जाता है। भारत में इसके बिल्कुल समरूप आयुर्वेद की मुख्य शाखा 'अगद तंत्र' (Agada Tantra) कार्य करती है, जो पूरी तरह विष-चिकित्सा को समर्पित है। इसके अलावा भारत के बस्तर और पूर्वोत्तर के जनजातीय क्षेत्रों में पारंपरिक वैद्य आज भी जड़ी-बूटियों से विष का सफल इलाज करते हैं। (**Panda & Raut** 2011).

11. रोग-आधारित उपचारात्मक आहार का तुलनात्मक अध्ययन :

11.1 मधुमेह में उपचारात्मक आहार : आयुर्वेद और सोवा रिग्पा दोनों में मधुमेह को कफ/बेथ्केन की अधिकता तथा मंद पाचन-अग्नि से जोड़ा गया है। इसके लिए जौ, मूंग, करेला, मेथी तथा हल्का और रेशेदार भोजन उपयोगी माना जाता है। मीठे, तैलीय एवं भारी खाद्य पदार्थों से परहेज की सलाह दी जाती है। (**Kumari et al 2024)**

11.2 संधिवात / गठिया का उपचारात्मक आहार : आयुर्वेद में संधिवात और आमवात को मंद अग्नि तथा 'आम' के संचय से संबंधित माना गया है। सोवा रिग्पा में इसे 'ग्रुम्बु' कहा जाता है। कुलथी, अदरक और लहसुन जैसे खाद्य उपयोगी माने जाते हैं, जबकि दही, उड़द तथा भारी एवं विरुद्ध आहार से बचने की सलाह दी जाती है। **(Gupta et al 2015)**

11.3 उच्च रक्तचाप (Hypertension) का उपचारात्मक आहार : आयुर्वेद में उच्च रक्तचाप को वात-पित्त के असंतुलन से संबंधित 'रक्तगत वात' माना जाता है। सोवा रिग्पा में इसे 'थ्रिबा' की अधिकता से जोड़ा जाता है। हरी सब्जियाँ, लौकी, आँवला, लहसुन तथा हल्का-सात्विक भोजन लाभकारी माना जाता है। अधिक नमक, वसा और तले भोजन से बचना चाहिए। **(Menon & Shukla 2018)**

11.4 मोटापा (Obesity) का उपचारात्मक आहार : आयुर्वेद में मोटापे को 'स्थौल्य' या 'मेदोरोग' तथा सोवा रिग्पा में 'बेथ्केन' की अधिकता से संबंधित माना गया है। जौ, चना तथा हल्के और रेशेदार खाद्य पदार्थों को प्राथमिकता दी जाती है। अधिक वसा, मिठाई, मक्खन-चाय और चीज़ का सेवन सीमित रखने की सलाह दी जाती **है। (Kumar et al 2024)**

12. खान-पान में समानता एवं अंतर : भारत और भूटान की पारंपरिक स्वास्थ्य प्रणालियों (आयुर्वेद और सोवा रिग्पा) में खान-पान को लेकर कई समानताएं और अंतर देखने को मिलते हैं। दोनों ही संस्कृतियों में चावल को मुख्य भोजन माना गया है; जहाँ भारत के एक बड़े हिस्से में दाल-चावल या खिचड़ी खाई जाती है, वहीं भूटान में लाल चावल (Red

Rice) हर थाली का मुख्य हिस्सा है। (**Wangchuk, & Tobgay,** 2015) इसके अलावा, दोनों पद्धतियां किण्वित (fermented) भोजन और मसालों को पाचन के लिए मानती हैं, जैसे भारत में इडली, डोसा और हल्दी-अदरक का उपयोग होता है, वैसे ही भूटान में किण्वित सोयाबीन और शरीर को गर्म रखने के लिए मिर्च (Ema) का इस्तेमाल किया जाता है। सर्दियों में ऊर्जा के लिए आयुर्वेद घी और तिल-गुड़ की सलाह देता है, वहीं भूटान के पहाड़ी क्षेत्रों में मक्खन-चाय (सुजा) और वसायुक्त मांस का सेवन किया जाता है। **(Choda, 2016))**

हालाँकि, दोनों देशों के खान-पान में कुछ बुनियादी अंतर भी हैं। भारत में सात्विक शाकाहार को प्रधानता दी गई है और पनीर को एक विकल्प की तरह देखा जाता है, जबकि भूटान में चिकन और सुअर का मांस (Phaksha Paa) दैनिक भोजन का हिस्सा हैं और वहाँ का राष्ट्रीय व्यंजन 'एमा-दात्शी' मिर्च और चीज़ (Cheese) से ही बनता है। पेय पदार्थों के मामले में भारत जहाँ मीठी दूध-चाय और छाछ पसंद करता है, वहीं भूटान में नमकीन सुजा और आरा (चावल की मदिरा) का चलन है। सबसे बड़ा अंतर रोगोपचार में दिखता है, आयुर्वेद दूध और मछली जैसे 'विरुद्ध-आहार' को पूरी तरह वर्जित (Universal Prohibition) मानता है, वहीं सोवा रिग्पा में खान-पान का निषेध किसी सख्त नियम के बजाय व्यक्ति की प्रकृति और बीमारी की मौजूदा स्थिति को देखकर तय किया जाता है। (**Dash,** 1980).

13. आधुनिक द्विपक्षीय सहयोग एवं नीतियाँ : दोनों देश सार्क (SAARC) फ्रेमवर्क के तहत पारंपरिक इलाज पद्धतियों को बढ़ावा देने के लिए मिलकर काम कर रहे हैं। इसी सहयोग के तहत भारत के आयुष मंत्रालय ने थिम्पू के राष्ट्रीय परंपरागत चिकित्सा अस्पताल के साथ एक अहम समझौता (MoU) किया है, जिसके जरिए भूटानी छात्रों को जामनगर और जयपुर के आयुर्वेद संस्थानों में स्कॉलरशिप दी जा रही है। गुजरात में बने 'WHO ग्लोबल ट्रेडिशनल मेडिसिन सेंटर' के जरिए अब दोनों देश वैश्विक स्तर पर दवाओं के मानकीकरण और बौद्धिक संपदा के संरक्षण पर रिसर्च कर सकेंगे।(**Ministry of AYUSH, 2025).** संस्थागत स्तर पर जहाँ भारत में NCISM के तहत सोवा-रिग्पा विभाग और लेह संस्थान सक्रिय हैं, वहीं भूटान में 'परंपरागत चिकित्सा संकाय' और NITM जैसी मजबूत संस्थाएं इस साझी विरासत को आगे बढ़ा रही हैं। (**Wangchuk & Tobgay** 2015)

14. चुनौतियाँ एवं भविष्य की संभावनाएँ : आयुर्वेद और सोवा रिग्पा को प्रभावशील बनाने के लिए वैज्ञानिक परीक्षण, शोध और औषधियों का मानकीकरण आवश्यक है। पारंपरिक ज्ञान को पेटेंट और जैव-चोरी से बचाने के लिए बौद्धिक संपदा कानूनों की भी आवश्यकता है। वहीँ जलवायु परिवर्तन तथा औषधीय पौधों के अनियोजित दोहन के कारण यार्सागुम्बा जैसी दुर्लभ हिमालयी जड़ी-बूटियाँ संकट में हैं। इसलिए औषधीय वनस्पतियों का संरक्षण एवं संतुलन बनाना तथा भारत-भूटान के शोधकर्ताओं और विद्यार्थियों के बीच नियमित आदान-प्रदान को बढ़ावा देना जरूरी है।

15. निष्कर्ष : भारत का आयुर्वेद और भूटान का सोवा रिग्पा समान दार्शनिक सिद्धांतों—पंचमहाभूत, त्रिदोष/त्रि-ऊर्जा और षड्रस—पर आधारित चिकित्सा पद्धतियाँ हैं। दोनों में आहार को रोग-निवारण एवं उपचार का प्रमुख साधन माना गया है तथा व्यक्ति की प्रकृति और ऋतु के अनुसार भोजन पर बल दिया जाता है। भौगोलिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिस्थितियों के कारण इनके व्यावहारिक आहार और औषधीय प्रयोगों में अंतर दिखाई देता है। भविष्य में संयुक्त शोध, वैज्ञानिक सत्यापन और औषधीय वनस्पतियों के संरक्षण द्वारा इस साझा विरासत को विश्व स्वास्थ्य के लिए अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है।

19. संदर्भ सूची (References) :

1. *Choda, S. (2016). Principle of nutrition and dietetics in Sowa Rigpa. Bhutan Health Journal, 2(1), 44-48. Bhutan Health Journal Portal.*

2. *Dash, V. B. (1980). Tibetan medicine with special reference to Yoga Sataka. Library of Tibetan Works and Archives.*
3. *Gupta, S. K., Thakar, A. B., Dudhamal, T. S., & Nema, S. (2015). Traditional medicine of Bhutan: Sowa Rigpa and hot-stone bath therapy. International Journal of Ayurveda and Alternative Medicine, 3(4), 182–189.*
4. *Gurmet, P. (2004). "Sowa - Rigpa": Himalayan art of healing. Indian Journal of Traditional Knowledge, 3(2), 212–218. CSIR-NIScPR Repository*
5. *Gurmet, P., & Rath, C. (Eds.). (2020). Select flora of medicinal importance in Sowa-Rigpa and Ayurveda: An introductory note & pictorial exposition. Central Council for Research in Ayurvedic Sciences.*
6. *Kumar, Y., Joshi, P. K., Patel, H., Sahu, K. V., & Rathour, G. (2024). Overview of Sthaulya (Obesity) management In Ayurveda. Journal of Ayurveda and Integrated Medical Sciences, 9(10), 53–58.*
7. *Kumari, S., Ashadeep, & Bhambu, S. K. (2025). Ahara (diet) in Ayurveda: Principles of a balanced meal. Journal of Ayurveda and Integrated Medical Sciences, 10(7), 117–120.*
8. *Kumari, S., Tubaki, B. R., Patil, R., & Laxmikant, S. D. (2024). Reversal of type 2 diabetes mellitus through integrated Ayurveda dietary protocol: A case report. Journal of Ayurveda and Integrative Medicine, 15(4), 100946.*
9. *Menon, M., & Shukla, A. (2018). Understanding hypertension in the light of Ayurveda. Journal of Ayurveda and Integrative Medicine, 9(4), 302–307.*
10. *R. H. (2002). The holistic principles of Ayurvedic medicine. Chaukhamba Sanskrit Pratishthan.*
11. *Ministry of Ayush, Government of India. (2025, December 15). India to host Second WHO Global Summit on Traditional Medicine. Press Information Bureau.*
12. *Panda, A. K., & Rout, S. (2011). Puttur kattu (bandage)—A traditional bone setting practice in South India. Journal of Ayurveda and Integrative Medicine, 2(4), 174–178.*
13. *Wangchuk, P., & Tobgay, T. (2015). Contributions of medicinal plants to the Gross National Happiness and biodiscovery in Bhutan. Journal of Ethnobiology and Ethnomedicine, 11, Article 48. https://doi.org/10.1186/s13002-015-0035-1*
14. *Wangchuk, P., Wangchuk, D., & Aagaard-Hansen, J. (2007). Traditional Bhutanese medicine (gSo-ba Rig-pa): An integrated part of the formal health care services. Southeast Asian Journal of Tropical Medicine and Public Health, 38(1), 161–167.*
15. Wangchuk, P., Yeshi, K., Ugyen, K., Dorji, J., Wangdi, K., Samten, Tshering, P., & Nugraha, A. S. (2021). Water-based therapies of Bhutan: Current practices and the recorded clinical evidence of balneotherapy. *Water, 13*(1), Article 9.

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-115-117

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 115-117
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :
डॉ. सन्ध्या पाण्डेय
बहादुरपुर, प्रयागराज, उ0प्र0

Corresponding Author :
डॉ. सन्ध्या पाण्डेय
बहादुरपुर, प्रयागराज, उ0प्र0

बौद्ध धर्म का समाज पर प्रभाव-एक परिचर्चा

प्रस्तावना–समय–समय पर भारत में अनेक धर्म पंथ पल्लवित एवं पुष्पित हुए हैं, जिनमें वैदिक, हिन्दू, जैन, बौद्ध, ईसाई, इस्लाम, पारसी सिख, कबीर पंथ आदि महत्वपूर्ण धर्मों का आज भी विशेष प्रभाव है, किन्तु विवेच्यकाल में इनमें से कई धर्म पंथों का प्रादुर्भाव नहीं हो पाया था। प्रायः सभा विद्वान इस बात से सहमत हैं कि सिन्धु घाटी सभ्यता वैदिक काल से भी प्राचीन है सिन्धु घाटी के अवशेषों में लिखित साक्ष्य का आभाव है और जो प्राप्त भी हुआ है अभी तक पढ़ा नहीं जा सका है, किन्तु उत्खनन से प्राप्त अवशेषों के आधार पर विद्वानों ने प्रचलित धर्म की रूपरेखा प्रस्तुत किये हैं यद्यपि भारत में धर्मशास्त्र और राजनीति व समाचार धर्मशास्त्र से अछूता नहीं रह सका न तो धर्मशास्त्र के बिना उसका अस्तित्व ही सम्भव था। वास्तव में धर्म शास्त्र और राजनीति दोनों ही व्यावहारिक स्तर पर समाज को कर्तव्य का उपदेश देते हैं। अन्तर केवल दोनों की क्षमताओं का है। धर्मशास्त्र जहाँ समाज को सद्जीवन का उपदेश देता है और पालन भी कराता है इसलिए ''मनुस्मृति'' में दण्डनीति को धर्म का जमींदार (प्रतिभूत) कहा गया है।

ईसा पूर्व छठी शताब्दी में धार्मिक आन्दोलन का प्रबलतम रूप हम बौद्ध धर्म की शिक्षाओं तथा सिद्धान्तों में पाते हैं। बौद्ध धर्म की स्थापना महात्मा बुद्ध ने की। ज्ञान प्राप्त के बाद महात्मा बुद्ध सारनाथ आये और यहाँ पर अपना प्रथम उपदेश दिये जिन्हें चार आर्य सत्य के नाम से जाना जाता है। यही घटना बौद्ध धर्म में धर्मचक्र प्रवर्तन के नाम से भी जानी जाती है। बौद्ध धर्म की शिक्षाओं से प्रभावित होकर सम्राट अशोक व कनिष्क ने इसे राजकीय धर्म बनाया तथा इसके प्रचार– प्रसार के लिए बहुत से लोकोपकारी कार्य किए। महापरिनिर्वाण के बाद बुद्ध के अस्थि अवेशेषों को आठ भागों में विभाजित किया गया। मगध के शासक अजातशत्रु तथा इस क्षेत्र के गणराज्यों ने स्तूप निर्मित कर इसे सुरक्षित रखा।

बौद्ध धर्म के स्वरूप की व्याख्या से पूर्व संक्षिप्त में यह कहा जा सकता है कि विभिन्न सम्प्रदायों में जो व्यापक और समान तत्व है उनको बुद्ध का मूल उपदेश मानना चाहिए।

रोजेनवर्ग ने भी इस सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त किया है कि, एक ही मूल और अखण्डित तत्व का नाना सम्प्रदायों में विकास हुआ है कोई भी सिद्धान्त जो कि चिर काल से अनुवर्तमान हो अपरिवर्तित नहीं रहता। और इतिहास यदि परवर्ती सिद्धान्तों से मूल सिद्धान्त की अनुगति प्रतीत हो तो भी यह उसका मूल रूप न होकर उसकी एक विकसित तथा रूपान्तरित अभिव्यक्ति होगी। इस प्रकार बौद्ध धर्म में यह मान लिया गया है कि सभी सांसारिक पदार्थ संस्कृत है, और निर्वाण बुद्ध तथा आकाश असंस्कृत है। इससे यह ज्ञात होता है कि अविद्या ही दुःख का मूल कारण है, क्योंकि अविद्याग्रस्त चित्त के लिये दुखात्मक संसार चक्र निरन्तर कर्म तृष्णा आदि का सहारा लिये चलता रहता है। बौद्ध धर्म में जीवन का परम उद्देश्य यथा–निर्वाण का द्वारा स्त्री, पुरुष युवा, वृद्ध, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, आर्य, अनार्य, देशी, विदेशी आदि सभी के लिए खुला था। **''जाति मत पूछो''** आचरण का

धम्मघोष समस्त मानव के लिए था।

महात्मा बुद्ध ने अपने धार्मिक सिद्धान्तों में सृष्टि के निर्वाण तथा आत्मा एवं परमात्मा आदि से मनोत्कर्ष का कोई सम्बन्ध नहीं है। महात्मा बुद्ध ने कभी यह दावा नहीं किया कि वे किसी धर्म का प्रतिपादन कर रहे हैं। उनका कहना था कि मैं पुरातन काल से चले आ रहे धर्म की स्थापना मांग कर रहा हूँ। यह सर्वमान्य सत्य, है कि किसी भी विचार अथवा मत का कोई दार्शनिक आधार अवश्य ही होता है, नैतिकता कर्म प्रधान तथा निर्वाण के तत्व से परिपूर्ण महात्मा बुद्ध के दार्शनिक सिद्धान्तों की प्राप्ति होती है।

श्री बर्नोफ महोदय ने बौद्ध धर्म के इस दार्शनिक सिद्धान्त की चर्चा करते हुए लिखा है कि– "Nirvana is nothing but the selflessness in the metaphysical sense of the word relapse into that being which is nothing in itself.

इनके धार्मिक सिद्धान्तों में परोक्ष रूप से जिस उपरोक्त दार्शनिक सिद्धान्तों की प्राप्ति होती है वे निश्चय ही अति व्यवहारिक एवं विचारणीय हैं। तथागत ने जो कुछ भी कहा उसका आधार निश्चित ही एक दार्शनिक सिद्धान्त के प्रति आस्था के प्रमाण प्रकट करते हैं। महात्मा बुद्ध की मान्यता थी कि **"धर्म जीवन का विषय है मृत्यु का नही"** फलतः उन्होंने जिसे धर्म का प्रचार किया उसके व्यवहारिकता पर विशेष बल दिया गया।

कर्म सिद्धान्तः–बौद्ध धर्म में भविष्य कर्म की विरासत माना गया है, परन्तु ब्राह्मण के विरूद्ध बौद्ध दर्शन में नित्य आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार नहीं किया गया। बौद्ध दर्शन में कर्म का सिद्धान्त क्षणिकवाद तथा कारण परम्परा से सम्बद्ध है। अतः वे यह स्वीकार नहीं करते कि जो कर्म करता है वही उसका फल भोगता है क्योंकि जिस व्यक्ति ने कर्म किया वह तो वस्तुतः फल भोगने तक रहा भी नही गया। यद्यपि परिवर्तन सर्वथा भिन्न भी नहीं माना गया है। इसलिये कि संसार के समस्त जीव एक निरन्तर प्रवाह (प्रतिक्षण परिवर्तन) की स्थिति में है।

बौद्ध दर्शन से कर्म सिद्धान्त की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि संसार के समस्त जीव निरन्तर प्रवाहमान है। अतः एक क्षण की स्थिति समाप्त होने पर ही दूसरे क्षण की स्थिति समाप्त होने पर ही दूसरे क्षण प्राप्त हो सकती है। इससे यह भी स्वयं सिद्ध हो जाता है कि जो कर्म करता है। वही उसका फल भोगता है। अर्थात क्षीणवाद सिद्ध हो जाता है। इसकी सिद्धि के लिए अनेक उदाहरण दिये गये हैं–**यथा "बीज के नष्ट होने पर अंकुर या वृक्ष उत्पन्न होता है। किन्तु वृक्ष वही बीज नहीं रह जाता है।"** दूसरे शब्दों में भूमि, जल, वायु गर्मी इत्यादि के कारण जब परिवर्तन हो जाता है वे स्थिति नहीं रह जाती है।

बौद्ध दर्शन की दूसरी विशेषता है कि हर क्षण परिवर्तन के साथ ही परिवर्तित जन्म किये गये कुशल, अकुशल कर्मों का फल स्वीकार किया गया है।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि कम से कम बौद्ध भिक्षु, बौद्ध धर्म के प्रमुख प्रचारक एवं धर्म प्रधान स्वयं अपने घर में मांसाहार के लिए जीव हिंसा नहीं करते होंगे। इस तरह अप्रत्यक्ष मांसाहार पर रोक लग गयी होगी तो कम अवश्य हो गयी होगी। यह जीव हिंसा पर रोक अशोक द्वारा बौद्ध धर्म स्वीकार करने के बाद लगायी गयी थी। अतः यह कहा जा सकता है कि बौद्ध धर्म में मनुष्य की भोजन सम्बन्धी आदतों को प्रभावित किया और जहाँ तक हो सका मांसाहार को कम किया।

भारत की सांस्कृतिक संरचना एवं भारतीय संस्कृति की समृद्धि में बौद्ध धर्म का योगदान नितान्त महत्वपूर्ण है। यहाँ एक ओर बौद्ध धर्म ने समाज के विभिन्न वर्गों को सामाजिक एकता के सूत्र में आबद्ध करने का प्रयास किया वहीं दूसरी ओर सदियों से उपेक्षित विपन्न एवं अति पिछड़े वर्गों का मार्गदर्शन कर उन्हें जीवन के चरम लक्ष्य निर्वाण की प्राप्ति के लिए भी प्रेरित किया। बौद्ध धर्म ने नवीन मूल्यों के अन्तर्गत जीव हिंसा पर रोक अर्थात अहिंसा के महत्व को प्रतिपादित कर न केवल प्राचीन भारतीय संस्कृति को समृद्ध बनाया अपितु भावी पीढ़ी के लिए एक आदर्श एवं व्यवस्थित नवीन शैली की आधार शिला भी रखा। पालतू व जंगली पशुओं के संरक्षण पर बल देना तथा पशु बलि को धार्मिक कृत्यों से अलग रखना। पर्यावरण संरक्षण की दिशा में निःसंदेह उपयोगी सिद्ध हुए नारी सशक्तीकरण की दिशा में भी बौद्ध धर्म का अप्रतिम योगदान रहा है। भारतीय सांस्कृतिक के प्रचार–प्रसार में बौद्ध धर्म का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भारतीय कला, दर्शन, धर्म आदि युग–2 तक उनकी शिक्षाओं से प्रभावित होते रहे।

बौद्ध धर्म भारत का ही अपितु विश्व के मान्य धर्मों में से एक है। बौद्ध धर्म अन्य धर्मों की तरह मात्र एक धर्म नहीं था। यह एक ऐसे व्यापक आन्दोलन का परिणाम था जो व्यक्तिगत विश्वासों से लेकर सामाजिक मान्यताओं तक जीवन के अनेक पहलुओं को बदल रहा था और जिसकी स्पष्ट झलक तत्कालीन चिन्तन और जीवन में स्पष्ट थी। बौद्ध धर्म आज भी प्रासंगिक है। बुद्ध का जीवन, कार्य और चिन्तन, पीड़ित, मानवता के लिए अतिशय प्रेरक है। विश्व के अनेक देशों में आज भी बौद्ध धर्म एक जीवित धर्म के रूप में दिखायी पड़ता है। चीन, थाईलैण्ड, कम्बोडिया, जापान आदि देश आज भी बौद्ध धर्म से अनुप्रमाणित हैं।

जहाँ तक बौद्ध युग के सामाजिक जीवन का प्रश्न है। पाली, पिटक, जैन आगत और तत्कालीन धर्मशास्त्र में उपलब्ध प्रमाणों से विदित होता है कि समाज में सुरापान का व्यापक प्रचार था। जातकों में उल्लेख है कि मधुशाला में घड़ों में भर–भर कर सुरा रखी जाती थी। और वहाँ पीने वाले की भीड़ लगी होती थी। सुरापान करने वाले न केवल साधारण लोग थे अपितु करोड़पति श्रेणियों के भी उदाहरण उपलब्ध होते थे। यहाँ तक कि मधुशाला में सुरापान के लिए पति–पत्नी के साथ जाया करते थे। इसके अतिरिक्त मधुशाला के स्वामी प्रायः धनी श्रेष्ठि होती थे जिनके समाज में बड़ी प्रतिष्ठा थी।

बौद्ध धर्म में अविद्या को मिथ्या दृष्टि कहकर समस्त दुःखों का मूल कहा गया है और उसके अन्त को या चित्त की वृत्तियों का समूल नाश को समाधि कहा गया। ठीक इसी प्रकार येाग दर्शन में भी अविद्या को ही समस्त दुःखों को मूल कारण स्वीकार किया गया है। बौद्ध दर्शन में ध्यान के पांच भेद बताये गये है तो योग दर्शन में भी पंचविधि समाधि की चर्चा की गयी है।

स्मृति को बौद्ध धर्म में आलम्बन के प्रति दृढ़ता का प्रतीक माना गया है साथ ही यह भी स्वीकार किया गया है कि यह आस्था के प्रति इन्द्रकाल के समान दृढ़ बना देता है। इसको पतंजलि ने चित्त की वृत्तियों में अन्यतम माना गया है।

इस प्रकार बौद्ध धर्म के अष्टांगिक मार्ग का अनुसरण करते हुए योग के छः अंग स्वीकार किया है यथा बौद्ध–धर्म में हिंसा सत्य, अस्तेय ब्रह्मचर्य एवं मद्यपान अर्थात अपरिग्रह को निर्वाण का अत्यन्त विरोधी मानते हुए इनके त्याग करने वाले को निर्वाण मार्ग का पथिक कहा गया है। साथ ही धर्म संयम दम और शौच के साथ अहिंसा एवं सत्य का पालन भिक्षु के लिए अति आवश्यक बताया गया है। इसे ही योग दर्शन का उपर्युक्त संयम को यम कहते हुए इन्हें योग का प्रथम अंग स्वीकार किया गया।

अहिंसा आदि यमों के पालन पर बल देते हुए हिंसा के त्याग को प्रथम शिक्षा पद कहा गया है, और अपने सामान ही प्राणियों को समझाते हुए हिंसा के निषेध का निर्देश दिया गया है। इसी प्रकार असत्य, भाषण को बौद्ध धर्म में पराजिक धर्म मानते हुए सत्य को पंचशीालों में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है। सम्भवतः हिंसा और असत्य के इस प्रकार निषेध के कारण योग सूत्र भाष्यकार व्यास ने भी सत्य आदि को अहिंसा सापेक्ष्य स्वीकारते हुए सत्य की अपेक्षा अहिंसा पर अधिक बल दिया है।

सन्दर्भ :

1. पद्मपुराणांतर्गत, पुरुषोत्तमास माहत्म्य टीकाकार विद्यावारिधि पं0 ज्वाला मिश्र, खेमराज, श्री कृष्णदास प्रकाशन बम्बई पृष्ठ संख्या–113
2. दैनिक समाचार पत्र ''दैनिक जागरण'' फरुर्खाबाद संस्करण, दिनांक 18/03/2012 पृष्ठ संख्या–9
3. पाण्डेय विमल चन्द्र, प्राचीन भारत का राजनीतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, शारदा पब्लिकेशन इलाहाबाद
4. मुखर्जी राधा कुमुद प्राचीन भारत।
5. श्रीवास्तव कृष्ण चन्द्र : प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृत, यूनाईटेड पब्लिकेशन इलाहाबाद।
6. पाण्डेय जे0एन0 पुरातत्व विमर्श, प्राच्य विद्या संस्करण 2012 पृष्ठ संख्या– 429–436
7. अरणविभंग सुत्त्ख मज्झिम निकाय, 3/4/9
8. धम्मचक्कापबतन सुत, संयुक्त निकाय।
9. धम्मपद्, गाथा 273–275
10. ऋग्वेद 2/24/20
11. अग्ने यं यज्ञमध्वर विष्वतः परिभूरसि, इददेवेषु इच्छति। एवं ऋग्वेद 1/1/4
12. प्लवा ह्योते अदृढ़ा यज्ञरूपा अष्टादशोक्तमवरं येषु कर्म। एतच्द्रयो येअभिनन्दन्तिमूढ़ा जरामृत्युं ते पुनरेवापि यन्ति। एवं मुण्डकोपनिषद 1/2/7
13. सुरा मत्स्याः पषोमसिं द्विजातीनां बलिस्तथा। धूतः प्रवर्तितं यज्ञे नैवद्वेदेषु विद्यते। महाभारत 2/5/78
14. सीलददस्सन सम्पन्नं धम्मठठं सत्यवादिनं। अत्तनों कम्म कुष्बानं ते जनो कुरुते पियं। वही–217
15. हिरण्ययेन पात्रेण सत्यस्या पिहितं सुखम।
16. शर्मा, बी0सी0 1993 मिट्टी एक–रूप अनेक प्रथम संस्करण, सी0एस0आई0आर0 प्रकाशन एवं सूचना निदेशालय नई दिल्ली पृष्ठ संख्या–27
17. शर्मा बी0सी0 1993, मिट्टी एक रूप अनेक प्रथम संस्करण सी0एस0आई0आर0 प्रकाशन एवं सूचना निदेशालय नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–19
18. श्रीकृष्ण मनमोहन सरल 1959 मिट्टी का काम प्रथम संस्करण, आत्मा राम एण्ड सन्स दिल्ली, पृष्ठ संख्या– 8–91
19. द्रष्टव्य–''वियोगी गंगा पंडित 1983 प्रजापति गौरव ग्रन्थ और प्रामाणिक इतिहास श्री गोपालकृष्ण प्रिंटिंग वर्क्स, मुंगेर पृष्ठ संख्या–34

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-118-120

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 118-120
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. जेकब लकड़ा
स्नातकोत्तर प्रशिक्षित शिक्षक, +2 उच्च विद्यालय पाकरटांड, सिमडेगा, झारखण्ड, भारत

Corresponding Author :

डॉ. जेकब लकड़ा
स्नातकोत्तर प्रशिक्षित शिक्षक, +2 उच्च विद्यालय पाकरटांड, सिमडेगा, झारखण्ड, भारत

वैश्विक पटल में हिन्दी

हिन्दी संसार की उन तमाम समृद्धतम भाषाओं में एक है। आज हिन्दी संरचना की सौन्दर्य शीलता, भाव–भंगिमाओं की गहनता, अभिव्यक्ति की धार तथा शैलियों की भिन्नता को समेटती हुई यह अनेक प्रभावशाली रूपों में गतिशील है। आधुनिक युग में विश्व फलक पर विज्ञान और टेक्नोलॉजी का वैभव दिखाई पड़ रहा है। जिसका फैलाव भारतवर्ष में अभूतपूर्व हुआ है। नतीजा यह हो रहा है कि हिन्दी भाषा का प्रयोजनमूलक रूप प्रयुक्ति परक बनकर सामने आ रहा है। जैसे की विद्वान दंगल झाल्टे लिखते हैं–''विश्व में मानव सभ्यता, संस्कृति और ज्ञान–विज्ञान की उन्नत धरोहर को अक्षुण्ण रखने में भारत वर्ष का जो योगदान रहा है उसमें भाषिक दायित्वों के निर्वाहस्वरूप भारतीय भाषाओं की समन्वयक हिन्दी भाषा की अहम भूमिका है।''

आज वैश्विक पटल पर हिन्दी की देन को कमतर नहीं आंका जा सकता है। वैश्विकरण के दौर में विशेषकर हिन्दी जब से राजभाषा के पद पर आसीन हुई। विश्व में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के तेजी से फैले प्रसार के साथ भारत में भी इस नवीनतम ज्ञान–विज्ञान और टेक्नोलॉजी की आँधी उमड़ पड़ी। इसके फलस्वरूप हिन्दी को नये महत्वपूर्ण भाषिक दायित्वों और अभिव्यक्ति में हमेशा नवीनतम क्षेत्रों से गुजरना पड़ा।

राजभाषा का दर्जा प्राप्त करने से पहले हिन्दी के कई व्यावहारिक पक्षों पर विचार विमर्श होता रहा। अंततः कई आपत्तियों को मिटाते हुए भारत के संविधान को 26 नवम्बर 1949 को स्वीकार किया गया तथा 26 जनवरी 1950 से उसे लागू किया गया है। 14 सितम्बर, 1949 के दिन भारतीय संघ की राजभाषा के रूप में हिन्दी को स्वीकार किये जाने का निर्णय संविधान सभा द्वारा किया गया। अतः प्रतिवर्ष 14 सितम्बर को भारत भर में 'हिन्दी दिवस' का आयोजन किया जाता है। भारत के संदर्भ में हिन्दी राजभाषा पर आसीन होने से पूर्व हिन्दी सरकारी कामकाज तथा प्रशासन आदि की भाषा कभी नहीं रही। अतः भारत की राजभाषा बनने के बाद हिन्दी का प्रचार–प्रसार व्यापक स्तर पर होने लगा और आज हिन्दी विश्व पटल पर बहुत ऊपर है।

विश्व की लगभग 3500 भाषाओं में कुछ भाषाएँ विलुप्त होने के कगार पर हैं। इनमें करीब 500 भाषाएँ ही ऐसी है जिनका प्रयोग लिखित रूप में किया जाता है और जिनका अपना लिखित साहित्य है। विश्व में कुल 16 भाषाएँ हैं जिनकी प्रयुक्ति करने वालों की संख्या 5 करोड़ के करीब होगें, अर्थात् 5 करोड़ से अधिक आबादी द्वारा प्रयुक्त की जाती हैं। जिनमें भारत की बंगाली, मराठी, तेलुगु, तमिल आदि शामिल हैं।

भारत में लगभग 60 से 61 करोड़ लोग हिन्दी भाषा का प्रयोग करते हैं जो कि विश्व की भाषाओं में तीसरा स्थान है।

आज अगर वैश्विक भाषायी संसार पर गौर किया जाए तो मालूम चल जाएगा कि अंग्रेजी भाषा हुकूमत करती रही है। कम्प्यूटर और सूचना प्रौद्योगिकी के विकास के साथ ही अंग्रेजी ने खुद को विश्व में जबरदस्त

स्थापित किया है। ग्लोब्लाइजेशन के दौर में तमाम व्यावहारिक परिस्थिति और राजनीतिक अवरोधों के बावजूद हिन्दी लगातार अपने कलेवर का विस्तार करती रही। हर दशक इसकी पहुँच विस्तृत होती जा रही है। सूचना प्रौद्योगिकी और कम्प्यूटर के विकास के साथ हिन्दी भी नए रूप में विकसित होते गयी है। हिन्दी आज बाजार की लोकप्रिय भाषा बनकर उभरी है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ आज अपने को अंग्रेजी के दायरे से बाहर निकालकर हिन्दी की ओर ताकना शुरू की है। अपने बाजार को फैलाने तथा व्यापक उपभोक्ता वर्ग तक पहुँचने के लिए कंपनियाँ भी हिन्दी से गले मिला रही हैं।

आमूमन आज दुनिया के लगभग 175 देशों में हिन्दी भाषा की पढ़ाई होती है। भारत के बाहर विश्व में हिन्दी की करीब 30 पत्रिकाएँ नियमित रूप से प्रकाशित हो रही हैं। जापान के एन.एच. के वर्ल्ड और चीन के चायना रेडियो इन्टरनेश्नल, यूएई के 'हम ऍफ एम्' के साथ ही बीबीसी जर्मनी के 'डॉयचे वेले' आदि हिन्दी सेवा विशेष रूप से प्रसिद्ध है।

आज विश्व के हर कोने में भारतीय मिल जाएँगे। जाहिर सी बात है उनकी भाषा हिन्दी ही है। इसके अलावे नेपाल, भूटान, श्रीलंका, तिब्बत, म्यांमार, मॉरिशस, त्रिनिदाद, फिजी, गयाना, सूरीनाम, न्यूजिलैंड और संयुक्त अरब अमीरात आदि देशों में हिन्दी भाषी आदि लोगों की एक बड़ी संख्या मौजूद है। 'वर्ल्ड लैग्वेज' डाटाबेस के अनुसार करीब 113 करोड़ लोग अंग्रेजी भाषा बोलते हैं। 111 करोड़ के साथ चीनी दूसरे स्थान पर है। लगभग 61.5 करोड़ लोग हिन्दी बोलते हैं। इस प्रकार हिन्दी के मामले में ये आँकड़ा व्यवहारिकता में सटीक नहीं बैठता है। इसका दायरा बहुत बड़ा है। भारत के पड़ोसी मुल्कों में एक बड़ी आबादी रहती है जो हिन्दी को समझती है और गाहे–बगाहे इसका व्यवहार भी करती है।

दुनिया में वर्चस्व की राजनीति शुरू से चलते आ रही है। अब इस राजनीति की आग का दायरा भाषा तक सेंध लगा चुकी है। कई बार प्रतीत होता है कि भारत की भाषा को जानबूझकर नकारा जा रहा है। दुनिया भर में जनसंख्या के एक बड़े हिस्से द्वारा किसी न किसी रूप में हिन्दी का व्यवहार किया जा रहा है। इंडियन प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया द्वारा प्रकाशित रिर्पोट में दावा किया गया है कि अमेरिका में 9 लाख से अधिक लोग हिन्दी का व्यवहार करते हैं।

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, नई दिल्ली वैश्विक स्तर पर हिन्दी को प्रतिष्ठित, प्रचारित एवं प्रसारित करने की एक प्रमुख संस्था है। 70 के दशक में परिषद ने विश्व के विभिन्न देशों में हिंदी पीठ स्थापित करना शुरू किया। इन पीठों का मूल उद्देश्य भारत के प्रति विद्यार्थियों में रूचि जागृत करना था। इन पीठों में अध्ययन करने वाले लोग हिन्दी के माध्यम से भारत की समृद्ध सभ्यता, संस्कृति और मूल्यवान विरासत के प्रति समझ विकसित करते हैं। हिन्दी अध्ययन परिषद् के सहयोग से विदेशी विद्यार्थी महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा एवं केन्द्रिय हिन्दी संस्थान आगरा में नियमित रूप से अध्ययन करने आ रहे हैं।

आज अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी के प्रति लोगों का रूझान निरंतर बढ़ता ही जा रहा है। कई देशों के विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ने वालों की संख्या में वृद्धि हुई है। भारतीय सभ्यता और संस्कृति को लेकर यहाँ के लोगों में विशेष अनुराग है। आज दुनिया भारत के प्राचीन ज्ञान–विज्ञान के प्रति भी उत्साह की नजरों से देखती है।

भारत में पर्यटन की अपार संभावनाएँ हैं। भारत में पर्यटन एक प्रमुख पहलू है जो उन्हें हिन्दी सीखने को प्रेरित करता है। विदेशी पर्यटक भारत भ्रमण के दौरान यहाँ के निवासियों से हिन्दी में संवाद करना पसंद करते हैं। पूँजीवादी या कहें सूचना प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देने वाले राष्ट्रों की नजरों में भारत एक बड़ा बाजार है जो अर्थव्यवस्था के लिहाज से उभरता हुआ है। भारतीय बाजार में कंपनियों के पूँजी व्यय के अवसर हैं। वैश्विक कंपनियाँ भारत में प्राप्त होने वाले मुनाफा से परिचित हैं। भारत में बाहरी कंपनियाँ रचने–बसने को उत्साहित हैं। अतः उनके लिए हिन्दी भाषा व्यवसाय की भाषा हो जाती है। वे अपने व्यवसाय के सफल संचालन हेतू हिन्दी सीखते हैं। भारतीय उपभोक्ताओं के साथ जुड़ने का एक सुगम माध्यम है भाषा। विदेशी कंपनियाँ अपने कंटेंट को हिंदी में उपलब्ध कराने की कोशिश कर रही हैं।

हिन्दी भाषा की महिमा को अन्तरराष्ट्रीय मंचों में लोकप्रिय बनाने में भारतीय सिनेमा जगत का भी बड़ी भूमिका है। विदेशियों को भारतीय सिनेमा के गाने आकर्षित करते रहे हैं। भारतीय सिनेमा की पहुँच भारत के विभिन्न क्षेत्रों में बोली जाने वाली अनेक भाषाओं के साथ है। यों, तसवीरें तो बंगला, तमिल, मराठी, तेलगु, मलयालम, आदि भाषाओं में तैयार होती रही हैं जो अखिल भारतीय स्तर पर तो नहीं मगर क्षेत्रीय स्तर पर खूब चाव से चलती हैं। एक हिन्दी की ही तसवीरें ऐसी है जो पूरे भारत में मनोयोग से देखी जाती हैं। ऐसी बात भी नहीं है कि बंगाल वाले सिर्फ बंगला फिल्में देखते हों, बंगला से ज्यादा वे हिन्दी फिल्मों में रूचि दिखाते हैं। उसी तरह तमिल, तेलगु, कन्नड़ या मलयालम बोलने वाले भी बड़े चाव से हिन्दी तस्वीरें देखते हैं। आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा का मानना है–''सच पूछिए तो सिनेमा ने हिन्दी के प्रचार में जितना बड़ा काम किया है, उतना कोई एक माध्यम अब तक नहीं कर सका है।''

विदेशी सरजमीं पर भी मूल रूप से हिन्दी भाषा में बनने वाली फिल्मों को खूब प्रशंसा प्राप्त है। सात समुन्दर पार बैठे लोगों द्वारा भारतीय हिन्दी सिनेमा को देखना, हिन्दी गानों की ओर आकर्षित होना। इस बात के प्रमाण की ओर इंगित करता है कि हिन्दी भाषा भारत के साथ–साथ विदेशों में भी भावों की सफल अभिव्यक्ति करती रही है। हिन्दी भाषा की लिपि एवं अभिव्यक्ति की ईमानदारी में विश्व के लोगों का ध्यान खींचने में कामयाबी पायी है।

हाल के वर्षों में भारतीय संस्कृति योग और अध्यात्म ने विदेशों में अपनी गहरी छाप छोड़ी है। लोग योग और अध्यात्म के बहाने हिन्दी शब्दों एवं भाषा के प्रति रूझान दिखाने लगे हैं। भारतीय संस्कृति और योग को विदेशों में पहुँचाने में कई गुरूओं का हाथ है, मगर उनमें से डॉ० राधेश्याम मिश्रा (गुरूजी) और उनके संगठन 'योगलाइफ ग्लोबल' का बड़ा योगदान है। वैश्विक स्तर पर लगभग 56 से अधिक देशों में उनके द्वारा पांरपरिक भारतीय शास्त्रीय योग का प्रचार–प्रसार किया गया। उनके द्वारा अमेरिका और ब्राजील जैसे समृद्ध देशों में योग, आयुर्वेद, वैदिक ज्ञान आदि का प्रचार–प्रसार किया

जाता रहा है। आज हर साल 21 जून यानी विश्व योग दिवस के अवसर पर विदेशों में योगाभ्यास के कार्यक्रम हिन्दी भाषा में संचालित होते हैं।

यह युग डिजिटल और सोशल मीडिया का है। डिजिटल युग ने पूरी दुनिया को एक गाँव के रूप में तब्दील कर दिया है। इंटरनेट पर हिंदी कंटेंट की मांग में बढ़ोत्तरी हुई है। अब ब्लाग, यूट्यूब वीडियो, पॉडकास्ट और सोशल मीडिया ऐप्स पर हिन्दी उपयोग करने वालों की संख्या लगातार बढ़ रही है। वर्तमान युग सूचना प्रौद्योगिकी का है। इस युग के साथ जुड़ने की हर संभव कोशिश हिन्दी भाषा भी करती रही है। हमारे देश में हिन्दी भाषा में एवं डिजिटल रूप में सैकड़ों–सैकड़ों दैनिक, अर्द्धमासिक, मासिक, त्रैमासिक, अर्द्धवार्षिक, वार्षिक अंकों के साथ समाचार पत्र, पत्र–पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं। हिन्दी यहाँ तक सीमित नहीं इसका अन्तरराष्ट्रीय है। विदेशों में भी प्रिन्ट और डिजिटल रूप में पत्र–पत्रिकाएँ नियमित रूप से प्रकाशित हो रही है। जो विदेशों में बसने वाले प्रवासी भारतीयों (संभवतः वहाँ की नागरिकता प्राप्त) के बीच हिन्दी भाषा और साहित्य को जिन्दा रखे हुए हैं।

आज अमेरिका, चीन, मॉरिशश, फिजि, ब्रिटेन जैसे देशों में भी मासिक वेब पत्रिकाएँ हिन्दी और अंग्रेजी भाषाओं में निकलती हैं। जैसे–अमेरिका से प्रकाशित होने वाली वेब पत्रिका सेतु है, जो अंग्रेजी और हिन्दी संस्करण निकलता है। उसी तरह हिन्दी जगत, विश्व, दृष्टि जैसी पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं। इसी कड़ी में चीन जैसे देश में भी हिन्दी के प्रकाशन को बढ़ावा मिलता रहा है। किसी भी भाषा के जीवित रहने का प्रमाण यह है कि उक्त भाषा में प्रकाशन प्रस्तुतिकरण होता रहे। हिन्दी उन शर्तो को पूरा करती है।

हिन्दी की वर्तमान स्थिति को संतोषजनक रूप दी जा सकती है। अंतरराष्ट्रीय मंचों पर विशेषकर संयुक्त राष्ट्र (UN) में हिन्दी में भाषण किये जा रहे हैं और यूएन ने अपनी वेबसाइट व सोशल मीडिया चैनलों पर हिन्दी का उपयोग बढ़ा दिया है। कहीं–न–कहीं हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र की प्रमुख भाषाओं में स्थान देने की पहल की जाती रही है।

दुनिया में हर साल 10 जनवरी को विश्व हिन्दी दिवस मनाया जाता है। इसका मूल उद्देश्य दुनिया में हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लिए जागरूकता पैदा करना और हिन्दी को अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में स्थापित करना है। विदेशों में स्थित भारत के दूतावास इस दिन को हिन्दीमय बनाने का प्रयास करते हैं। सभी कार्यालयों में हिन्दी व्याख्यान आयोजित किए जाते हैं। हिन्दी आज के तारीख में ऐसी उन्नत भाषा बनकर उभरी है जिसमें विश्वभाषा बनने के सभी गुण मौजूद है। इस दौर के पिछले दो दशकों में हिन्दी का अन्तरराष्ट्रीय प्रगति हुआ है। यह भाषा सिर्फ बोलने भर के लिए नहीं है बल्कि व्यापरिक जगत में अपनी दमदार उपस्थिति दर्ज करते हुए पूरे संसार का ध्यान अपनी ओर खींचा है। जिस तेजी से वेब, विज्ञापन, संगीत, सिनेमा, खेल और व्यापार–व्यवसाय के क्षेत्र में मांग बढ़ी है वैसी किसी और भाषा के साथ नहीं है।

भारत में राजभाषा के पद पर बैठी हिन्दी की स्थिति अन्तरराष्ट्रीय पटलों पर चमकदार जरूर है, मगर आजादी के वक्त हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने को लेकर जो भ्रांतियाँ लोगों के अन्दर थी, आज भी विद्यमान प्रतीत होती है, समय–समय पर देश के नागरिकों के अन्दर भाषायी विवाद उठ खड़े होते रहे हैं। हिन्दी के साथ देश के अन्दर वही स्थिति है जो स्थिति विश्व स्तर पर हिन्दी की है। अर्थात् अंग्रेजी अपनी श्रेष्ठता बचाए रखने के सारे चक्रव्यूह बनाते रहता है और अन्य भाषा उसके समानांतर न जा सके इसकी राजनीतिक चाल में दूसरी भाषाओं को उलझाते रहता है। हिन्दी को आज चाहिए कि संतुलित होकर समन्वय स्थापित करते हुए पूरे देश में राजनीतिक, प्रशासनिक समर्थन प्राप्त करें और राष्ट्र की पूर्ण भाषा बने। भारत देश के अन्दर हिन्दी की स्थिति पर चिन्ता प्रकट करते हुए डॉ० हरदेव बाहरी ने लिखा है ''कि राजभाषा की वर्तमान स्थिति क्या है। संविधान ने जिसको रानी बनाना चाहा था उसे एक अधिनियम ने अंग्रेजी की सहचरी बनाया और उस समय सरकार ने उसको इसी विदेशी भाषा की चेरी बना रखा है।''

हिन्दी के गौरव और वैभव को बनाए रखने के लिए इसके महत्व को समझना होगा।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि जिस प्रकार से हिन्दी की वर्त्तमान छवि है उससे साफ जाहिर होता है कि आने वाला कल हिन्दी भाषा का होगा। हिन्दी भाषा–भाषियों का सही–सही मूल्यांकन हो पाएगा और हिन्दी को एक अन्तरराष्ट्रीय भाषा के रूप में स्थापित किया जा सकेगा।

संदर्भ :

1. राष्ट्रभाषा हिन्दी समस्याएँ और समाधान, ले० आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद
2. प्रयोजनमूलक हिन्दी सिद्धान्त और प्रयोग, ले० दंगल झाल्टे, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
3. भारतीय साहित्य, ले० डॉ लक्ष्मीकान्त पाण्डेय, डॉ० प्रमिला अवस्थी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
4. प्रयोजनमूलक हिन्दी, ले० विनोद गोदरे, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
5. आधुनिक भाषा–विज्ञान, डॉ० राजमणि शर्मा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
6. साहित्य और इतिहास दृष्टि, ले० मैनेजर पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली
7. हिन्दी भाषा, ले० डॉ० भोलानाथ तिवारी, किताब महल इलाहाबाद
8. अनुवाद विज्ञान की भूमिका, ले० कृष्ण कुमार गोस्वामी, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली।

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-121-126

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 121-126
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

लिच्छा राम

प्राचार्य, भारत प्रशासक, माध्यमिक शिक्षा विभाग, राजस्थान, ग्रामोदय डिग्री कॉलेज, बामरला

Corresponding Author :

लिच्छा राम

प्राचार्य, भारत प्रशासक, माध्यमिक शिक्षा विभाग, राजस्थान, ग्रामोदय डिग्री कॉलेज, बामरला

भारत एवं भूटान की पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियाँ : ज्ञान-परंपरा, सांस्कृतिक विरासत एवं समकालीन प्रासंगिकता का तुलनात्मक अध्ययन

शोध-सारांश : भारत और भूटान की पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियाँ दोनों देशों की प्राचीन ज्ञान-परंपरा, प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व तथा समग्र स्वास्थ्य-दृष्टि की महत्वपूर्ण अभिव्यक्तियाँ हैं। भारत में आयुर्वेद सहित योग, यूनानी, सिद्ध, प्राकृतिक चिकित्सा आदि विविध चिकित्सा परंपराओं का विकास हुआ है, जबकि भूटान में सोवा रिग्पा ने चिकित्सा एवं सांस्कृतिक जीवन में विशिष्ट स्थान बनाया है। भूटान में पारंपरिक और आधुनिक चिकित्सा प्रणालियाँ स्वास्थ्य व्यवस्था में साथ-साथ कार्य करती हैं। सोवा रिग्पा को राष्ट्रीय स्वास्थ्य व्यवस्था में 1967 में औपचारिक रूप से सम्मिलित किया गया था।

प्रस्तुत शोधपत्र में भारत की आयुर्वेदिक परंपरा तथा भूटान की सोवा रिग्पा चिकित्सा प्रणाली का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। अध्ययन में दोनों प्रणालियों की दार्शनिक आधारभूमि, प्रकृति एवं औषधीय वनस्पतियों के साथ संबंध, आहार-विहार, रोग-निवारण, उपचार-दृष्टि, सामाजिक उपयोगिता तथा आधुनिक स्वास्थ्य व्यवस्था के साथ इनके समन्वय का विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि पारंपरिक चिकित्सा केवल रोगोपचार की प्रणाली नहीं है, बल्कि यह संस्कृति, पर्यावरण, लोकज्ञान और जीवन-दर्शन से जुड़ी व्यापक ज्ञान-व्यवस्था है। हिमालयी क्षेत्र की जैव-विविधता तथा औषधीय वनस्पतियाँ भारत और भूटान के लिए साझा ज्ञान एवं सहयोग का महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं। समकालीन समय में वैज्ञानिक अनुसंधान, दस्तावेजीकरण, औषधीय संसाधनों का संरक्षण, गुणवत्ता नियंत्रण तथा मानव संसाधन विकास के माध्यम से इन प्रणालियों को अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है।

शोधपत्र का निष्कर्ष है कि भारत और भूटान पारंपरिक चिकित्सा के क्षेत्र में संयुक्त अनुसंधान, विद्यार्थी एवं विशेषज्ञ आदान-प्रदान, औषधीय वनस्पति संरक्षण तथा प्रमाण-आधारित स्वास्थ्य

सेवाओं के माध्यम से एक प्रभावी सहयोग मॉडल विकसित कर सकते हैं।

बीज शब्द : आयुर्वेद, सोवा रिग्पा, पारंपरिक चिकित्सा, औषधीय वनस्पतियाँ, भारत, भूटान, हिमालय, सांस्कृतिक विरासत, समग्र स्वास्थ्य।

1. प्रस्तावना : मानव सभ्यता के विकास के साथ स्वास्थ्य और रोग के संबंध में मनुष्य ने निरंतर अनुभव और प्रयोग से ज्ञान अर्जित किया। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के विकास से पूर्व विभिन्न सभ्यताओं ने प्रकृति, वनस्पतियों, खनिजों, आहार, जीवनशैली तथा आध्यात्मिक अनुशासन के आधार पर स्वास्थ्य-संबंधी ज्ञान की समृद्ध परंपराएँ विकसित कीं। आज इन्हीं परंपराओं को व्यापक रूप से पारंपरिक चिकित्सा के रूप में समझा जाता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन भी पारंपरिक चिकित्सा को विभिन्न ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक संदर्भों से विकसित स्वास्थ्य-ज्ञान, कौशल, दर्शन और उपचार-पद्धतियों की व्यापक व्यवस्था के रूप में देखता है। वर्तमान वैश्विक स्वास्थ्य विमर्श में पारंपरिक चिकित्सा के वैज्ञानिक अध्ययन, गुणवत्ता, सुरक्षा और उपयुक्त स्वास्थ्य-प्रणालियों के साथ समन्वय पर बल दिया जा रहा है।

भारत और भूटान इस दृष्टि से विशेष महत्त्व रखते हैं। दोनों देशों के बीच केवल राजनीतिक और आर्थिक संबंध ही नहीं हैं, बल्कि बौद्ध दर्शन, हिमालयी संस्कृति, प्रकृति, लोकज्ञान तथा औषधीय वनस्पतियों के स्तर पर भी गहरे संबंध हैं।

भारत में आयुर्वेद एक विकसित एवं शास्त्रीय चिकित्सा परंपरा के रूप में स्थापित है। दूसरी ओर भूटान में सोवा रिग्पा वहाँ की पारंपरिक चिकित्सा व्यवस्था का प्रमुख आधार है। भूटान के स्वास्थ्य मंत्रालय के अनुसार सोवा रिग्पा का अभ्यास वहाँ कई शताब्दियों से होता आया है और आधुनिक चिकित्सा के आगमन के बावजूद इसकी भूमिका बनी रही।

2. भारत की पारंपरिक चिकित्सा : आयुर्वेद की ज्ञान-परंपरा : भारत की पारंपरिक चिकित्सा प्रणालियों में आयुर्वेद का विशेष स्थान है। आयुर्वेद केवल औषधियों का विज्ञान नहीं, बल्कि स्वस्थ जीवन जीने की एक समग्र अवधारणा है।

आयुर्वेद में व्यक्ति के स्वास्थ्य को आहार, दिनचर्या, ऋतु, मानसिक स्थिति, पर्यावरण तथा शरीर की आंतरिक संतुलन-व्यवस्था से जोड़ा जाता है। रोग उत्पन्न होने के बाद उसका उपचार करने के साथ-साथ रोग से बचाव और स्वास्थ्य-संरक्षण पर भी बल दिया जाता है।

आयुर्वेदिक ज्ञान में वनस्पतियों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय समाज में नीम, तुलसी, अश्वगंधा, गिलोय, हल्दी आदि अनेक वनस्पतियों का पारंपरिक उपयोग विभिन्न रूपों में होता आया है। हालांकि पारंपरिक उपयोग और वैज्ञानिक रूप से सिद्ध चिकित्सकीय प्रभाव में अंतर करना आवश्यक है; आधुनिक संदर्भ में प्रत्येक औषधीय दावे के लिए प्रमाण और गुणवत्ता परीक्षण महत्वपूर्ण हैं।

भारत में पारंपरिक चिकित्सा को संस्थागत रूप देने के लिए आयुष व्यवस्था ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आज पारंपरिक चिकित्सा शिक्षा, अनुसंधान, औषधि निर्माण तथा स्वास्थ्य सेवाओं को व्यवस्थित रूप देने की दिशा में निरंतर प्रयास हो रहे हैं।

3. भूटान की सोवा रिग्पा चिकित्सा प्रणाली : भूटान की पारंपरिक चिकित्सा को सोवा रिग्पा (Sowa-Rigpa) कहा जाता है। यह हिमालयी-बौद्ध सांस्कृतिक परिवेश में विकसित चिकित्सा ज्ञान की महत्वपूर्ण प्रणाली है।

भूटान के स्वास्थ्य मंत्रालय के अनुसार सोवा रिग्पा का अभ्यास भूटान में प्राचीन काल से होता आया है। आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं के विकास के बाद भी पारंपरिक चिकित्सा को समाप्त करने के बजाय इसे स्वास्थ्य व्यवस्था का हिस्सा बनाया गया। 1967 में इसे आधिकारिक चिकित्सा परंपरा के रूप में मान्यता देकर राष्ट्रीय स्वास्थ्य

व्यवस्था में शामिल किया गया।

भूटान की विशेषता यह है कि वहाँ आधुनिक और पारंपरिक चिकित्सा को प्रतिस्पर्धी व्यवस्थाओं के रूप में देखने के बजाय दोनों को स्वास्थ्य सेवा में स्थान दिया गया है। रोगी को अपनी आवश्यकता के अनुसार दोनों में से चिकित्सा प्राप्त करने का विकल्प उपलब्ध है।

इस व्यवस्था का सांस्कृतिक पक्ष भी महत्वपूर्ण है। सोवा रिग्पा केवल औषधीय उपचार तक सीमित नहीं है, बल्कि भूटान की आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत से जुड़ी हुई है।

4. आयुर्वेद और सोवा रिग्पा : तुलनात्मक दृष्टि : भारत की आयुर्वेदिक परंपरा और भूटान की सोवा रिग्पा प्रणाली की अपनी-अपनी विशिष्ट पहचान है। इनके ऐतिहासिक विकास, ग्रंथीय परंपरा और चिकित्सकीय प्रक्रियाओं में अंतर भी हैं। फिर भी दोनों में कुछ महत्वपूर्ण समानताएँ दिखाई देती हैं।

4.1 समग्र स्वास्थ्य-दृष्टि : दोनों प्रणालियाँ स्वास्थ्य को केवल शारीरिक रोग की अनुपस्थिति के रूप में नहीं देखतीं। मानसिक, शारीरिक, सामाजिक और पर्यावरणीय संतुलन को स्वास्थ्य से जोड़ा जाता है।

4.2 प्रकृति आधारित दृष्टिकोण : दोनों परंपराओं में प्राकृतिक संसाधनों और विशेष रूप से औषधीय वनस्पतियों की महत्वपूर्ण भूमिका है।

4.3 आहार एवं जीवनशैली : स्वस्थ आहार, उचित दिनचर्या तथा जीवनशैली को रोग-निवारण का महत्वपूर्ण माध्यम माना जाता है।

4.4 निवारक स्वास्थ्य : आधुनिक चिकित्सा में preventive healthcare की अवधारणा आज तेजी से महत्वपूर्ण हो रही है। पारंपरिक चिकित्सा में स्वास्थ्य-संरक्षण और रोग की रोकथाम की अवधारणा पहले से मौजूद रही है।

4.5 व्यक्ति-केंद्रित उपचार : दोनों परंपराओं में रोगी की व्यक्तिगत स्थिति, शारीरिक प्रकृति, जीवनशैली और परिस्थितियों को ध्यान में रखने की प्रवृत्ति दिखाई देती है।

5. बौद्ध दर्शन और चिकित्सा : भूटान की संस्कृति पर बौद्ध दर्शन का गहरा प्रभाव है। इसी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में सोवा रिग्पा का विकास हुआ।

बौद्ध दर्शन में मानव जीवन के दुःख, उसके कारण और उससे मुक्ति के मार्ग पर विचार किया गया है। भूटानी चिकित्सा-परंपरा में भी मानसिक शांति, आध्यात्मिक संतुलन और जीवन के समग्र दृष्टिकोण का महत्व दिखाई देता है।

WHO के अनुसार भूटान में सोवा रिग्पा न केवल स्वास्थ्य प्रणाली का हिस्सा है, बल्कि देश की व्यापक कल्याण-दृष्टि और सांस्कृतिक मूल्यों से भी जुड़ी हुई है।

यहाँ एक महत्वपूर्ण बात यह है कि पारंपरिक चिकित्सा की आध्यात्मिक अवधारणाओं का अध्ययन सांस्कृतिक संदर्भ में किया जाना चाहिए, जबकि चिकित्सकीय प्रभावशीलता के दावों का मूल्यांकन वैज्ञानिक शोध के आधार पर होना चाहिए।

6. औषधीय वनस्पतियाँ और पर्यावरण : भारत और भूटान के पारंपरिक चिकित्सा संबंधों में औषधीय वनस्पतियों का विषय अत्यंत महत्वपूर्ण है। भूटान की भौगोलिक विविधता—निचले क्षेत्रों से लेकर उच्च हिमालय तक—अनेक प्रकार की वनस्पतियों के विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ उपलब्ध कराती है। भूटान की पारंपरिक चिकित्सा व्यवस्था में औषधीय संसाधनों का उपयोग लंबे समय से होता आया है। इसी प्रकार भारत का हिमालयी क्षेत्र भी औषधीय वनस्पतियों की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है।

इसलिए पारंपरिक चिकित्सा का संरक्षण वास्तव में पर्यावरण संरक्षण से भी जुड़ा हुआ विषय है। यदि औषधीय वनस्पतियों का अत्यधिक दोहन किया जाता है, तो पारंपरिक चिकित्सा के लिए आवश्यक प्राकृतिक

संसाधन भी प्रभावित होंगे।

इस संदर्भ में सतत संग्रहण, वैज्ञानिक खेती, बीज संरक्षण, स्थानीय समुदायों की भागीदारी और जैव-विविधता संरक्षण आवश्यक हैं।

WHO ने भी भूटान के संदर्भ में औषधीय जड़ी-बूटियों के सतत संग्रहण तथा उनकी खेती को बढ़ावा देने की आवश्यकता पर बल दिया है।

7. पारंपरिक चिकित्सा और सामाजिक जीवन : पारंपरिक चिकित्सा का सामाजिक महत्त्व केवल उपचार तक सीमित नहीं है। यह समुदाय की सांस्कृतिक स्मृति और स्थानीय ज्ञान का हिस्सा होती है।

ग्रामीण और पर्वतीय क्षेत्रों में स्थानीय लोग पीढ़ियों से वनस्पतियों और प्राकृतिक संसाधनों से संबंधित ज्ञान का उपयोग करते आए हैं। इस ज्ञान में स्थानीय चिकित्सकों, परिवारों और समुदायों की भूमिका महत्वपूर्ण रही है।

भूटान में सोवा रिग्पा को स्वास्थ्य व्यवस्था में शामिल करने से इस पारंपरिक ज्ञान को संस्थागत संरक्षण मिला। भूटान का अनुभव यह दर्शाता है कि पारंपरिक चिकित्सा को आधुनिक स्वास्थ्य प्रणाली के साथ संतुलित तरीके से जोड़ा जा सकता है।

8. आधुनिक स्वास्थ्य व्यवस्था के साथ समन्वय : आधुनिक चिकित्सा और पारंपरिक चिकित्सा को परस्पर विरोधी मानना उचित नहीं है। दोनों की अपनी-अपनी शक्तियाँ और सीमाएँ हैं।

भूटान ने पारंपरिक और आधुनिक चिकित्सा के सह-अस्तित्व का एक उल्लेखनीय मॉडल विकसित किया है। वहाँ दोनों चिकित्सा पद्धतियाँ राष्ट्रीय स्वास्थ्य व्यवस्था का हिस्सा हैं।

2023 के भूटान राष्ट्रीय स्वास्थ्य सर्वेक्षण में भी सोवा रिग्पा को मुख्य स्वास्थ्य प्रणाली के एकीकृत हिस्से के रूप में वर्णित किया गया है और स्वास्थ्य केंद्रों पर लोगों को आधुनिक अथवा पारंपरिक चिकित्सा सेवा चुनने का विकल्प बताया गया है।

भारत के लिए भी यह अनुभव महत्वपूर्ण है। पारंपरिक चिकित्सा को वैज्ञानिक अनुसंधान, उचित नियमन और आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं के साथ उपयुक्त समन्वय के माध्यम से आगे बढ़ाया जा सकता है।

9. शिक्षा एवं अनुसंधान की भूमिका : पारंपरिक चिकित्सा के भविष्य के लिए शिक्षा और अनुसंधान अत्यंत आवश्यक हैं।

पारंपरिक ज्ञान का बड़ा हिस्सा ऐतिहासिक रूप से मौखिक परंपराओं और स्थानीय चिकित्सकों के अनुभवों के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित हुआ है। इस ज्ञान का व्यवस्थित दस्तावेजीकरण आवश्यक है।

भारत और भूटान निम्न क्षेत्रों में संयुक्त अनुसंधान कर सकते हैं—

1. औषधीय वनस्पतियों का वैज्ञानिक अध्ययन।
2. पारंपरिक औषधियों का मानकीकरण।
3. पारंपरिक चिकित्सा ग्रंथों का डिजिटलीकरण।
4. शोधार्थियों और चिकित्सकों का आदान-प्रदान।
5. संयुक्त सेमिनार और प्रशिक्षण कार्यक्रम।
6. हिमालयी औषधीय वनस्पति डेटाबेस।
7. पारंपरिक ज्ञान के संरक्षण के लिए डिजिटल अभिलेख।
8. औषधीय पौधों की सतत खेती और संरक्षण।

भूटान में 2025 में National Center for Traditional Medicine Services की स्थापना और National Traditional Medicine Strategy and Action Plan 2025–2034 की शुरुआत इसी दिशा में

महत्वपूर्ण संस्थागत कदम है। इस रणनीति में सेवा, शिक्षा, अनुसंधान, औषधीय संसाधन प्रबंधन और wellness को मजबूत करने पर बल दिया गया है।

10. भारत-भूटान सहयोग की संभावनाएँ : भारत और भूटान के बीच पारंपरिक चिकित्सा सहयोग दोनों देशों के संबंधों को एक नया आयाम प्रदान कर सकता है।

10.1 संयुक्त शोध केंद्र : भारत और भूटान के सहयोग से हिमालयी पारंपरिक चिकित्सा पर केंद्रित संयुक्त अनुसंधान केंद्र स्थापित किया जा सकता है।

10.2 विद्यार्थी आदान-प्रदान : चिकित्सा एवं फार्माकोग्नोसी से संबंधित विद्यार्थियों के लिए exchange programmes आयोजित किए जा सकते हैं।

10.3 चिकित्सक प्रशिक्षण : सोवा रिग्पा तथा आयुर्वेद के विशेषज्ञों के बीच प्रशिक्षण और ज्ञान-विनिमय कार्यक्रम आयोजित किए जा सकते हैं।

10.4 औषधीय पौधों का संरक्षण : सीमा-पार हिमालयी जैव-विविधता के संदर्भ में संयुक्त conservation programmes विकसित किए जा सकते हैं।

10.5 स्वास्थ्य पर्यटन : पारंपरिक चिकित्सा, योग, ध्यान, प्राकृतिक चिकित्सा और wellness को सांस्कृतिक पर्यटन से जोड़ा जा सकता है। WHO ने भी सोवा रिग्पा और wellness tourism के क्षेत्र में संभावनाओं को रेखांकित किया है।

11. प्रमुख चुनौतियाँ : पारंपरिक चिकित्सा के विकास में अनेक चुनौतियाँ हैं।

पहली चुनौती—वैज्ञानिक प्रमाण : परंपरागत अनुभव मूल्यवान है, लेकिन चिकित्सकीय दावों की प्रभावशीलता और सुरक्षा के लिए वैज्ञानिक अध्ययन आवश्यक हैं।

दूसरी चुनौती—औषधीय वनस्पतियों का संरक्षण : जलवायु परिवर्तन, वनों पर दबाव और अनियंत्रित संग्रहण से औषधीय संसाधनों को खतरा हो सकता है।

तीसरी चुनौती—ज्ञान का संरक्षण : पारंपरिक चिकित्सकों की नई पीढ़ी में संख्या कम होने पर मौखिक ज्ञान के लुप्त होने की संभावना है।

चौथी चुनौती—गुणवत्ता नियंत्रण : औषधियों की शुद्धता, मात्रा, निर्माण और भंडारण के स्पष्ट मानक आवश्यक हैं।

पाँचवीं चुनौती—पारंपरिक ज्ञान के अधिकार : स्थानीय समुदायों के ज्ञान का व्यावसायिक उपयोग करते समय उनके अधिकारों और हितों की रक्षा आवश्यक है।

WHO ने भी पारंपरिक चिकित्सा को आगे बढ़ाने के लिए शोध, दस्तावेजीकरण, गुणवत्ता आश्वासन और प्रमाण-आधारित दृष्टिकोण को महत्वपूर्ण बताया है।

12. समकालीन प्रासंगिकता : आज पूरी दुनिया में स्वास्थ्य के प्रति दृष्टिकोण तेजी से बदल रहा है। केवल बीमारी का उपचार पर्याप्त नहीं माना जा रहा, बल्कि preventive healthcare, wellness, mental well-being और healthy lifestyle पर भी जोर बढ़ रहा है।

इस बदलते संदर्भ में पारंपरिक चिकित्सा की कुछ अवधारणाएँ महत्वपूर्ण हो सकती हैं। विशेष रूप से संतुलित जीवनशैली, प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग, मानसिक शांति, आहार-विहार और समुदाय-आधारित स्वास्थ्य ज्ञान आधुनिक स्वास्थ्य विमर्श में उपयोगी संदर्भ प्रदान कर सकते हैं।

लेकिन परंपरा और विज्ञान के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है। पारंपरिक चिकित्सा का संरक्षण उसके प्रत्येक दावे को स्वतः वैज्ञानिक रूप से प्रमाणित नहीं करता। इसलिए "परंपरा + अनुसंधान + प्रमाण + गुणवत्ता + सुरक्षा" को भविष्य की आधारभूत नीति माना जाना चाहिए।

13. भारत और भूटान के लिए संभावित संयुक्त मॉडल ; दोनों देशों के बीच एक "हिमालयी पारंपरिक चिकित्सा सहयोग मॉडल" विकसित किया जा सकता है। इसके पाँच प्रमुख आधार हो सकते हैं —

ज्ञान संरक्षण → वैज्ञानिक अनुसंधान → मानव संसाधन विकास → पर्यावरण संरक्षण → वैश्विक सहयोग

इस मॉडल के अंतर्गत पारंपरिक चिकित्सा को केवल चिकित्सा सेवा के रूप में नहीं, बल्कि शिक्षा, संस्कृति, पर्यावरण और अर्थव्यवस्था से जुड़े बहुआयामी क्षेत्र के रूप में देखा जाएगा।

भारत की आयुर्वेदिक ज्ञान-परंपरा और भूटान की सोवा रिग्पा परंपरा के बीच संवाद दोनों देशों की साझा सांस्कृतिक विरासत को मजबूत कर सकता है।

14. निष्कर्ष : भारत और भूटान की पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियाँ दोनों देशों की प्राचीन ज्ञान-परंपरा, प्रकृति के साथ संबंध और सांस्कृतिक विरासत की महत्वपूर्ण अभिव्यक्तियाँ हैं। भारत में आयुर्वेद ने चिकित्सा एवं जीवन-दर्शन के क्षेत्र में व्यापक प्रभाव डाला है, जबकि भूटान में सोवा रिग्पा ने स्वास्थ्य व्यवस्था के साथ अपनी विशिष्ट पहचान बनाए रखी है।

भूटान का अनुभव विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि वहाँ पारंपरिक चिकित्सा को आधुनिक स्वास्थ्य व्यवस्था से अलग रखने के बजाय उसके साथ संस्थागत रूप से जोड़ा गया है।

दोनों देशों के बीच औषधीय वनस्पतियों, हिमालयी जैव-विविधता, चिकित्सा ज्ञान, शिक्षा और अनुसंधान के क्षेत्र में सहयोग की व्यापक संभावनाएँ हैं। 2025 में भूटान द्वारा पारंपरिक चिकित्सा के लिए राष्ट्रीय केंद्र तथा 2025–2034 की रणनीति की शुरुआत यह दर्शाती है कि पारंपरिक चिकित्सा को आधुनिक संदर्भ में पुनर्संगठित करने की दिशा में गंभीर प्रयास किए जा रहे हैं।

अतः भारत और भूटान को पारंपरिक चिकित्सा के क्षेत्र में सहयोग को केवल अतीत की सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण तक सीमित नहीं रखना चाहिए। इसे वैज्ञानिक अनुसंधान, शिक्षा, पर्यावरण संरक्षण, औषधीय वनस्पतियों के सतत उपयोग, स्वास्थ्य सेवाओं और वैश्विक ज्ञान-विनिमय से जोड़ना चाहिए।

दोनों देशों की साझा हिमालयी विरासत इस सहयोग के लिए प्राकृतिक आधार प्रदान करती है। यदि पारंपरिक ज्ञान को आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति के साथ जोड़ा जाए, तो भारत और भूटान मिलकर ऐसी स्वास्थ्य-दृष्टि विकसित कर सकते हैं जिसमें परंपरा का सम्मान, विज्ञान का परीक्षण और मानव कल्याण सर्वोच्च उद्देश्य हो।

संदर्भ-सूची :

1. Ministry of Health, Royal Government of Bhutan, Overview – Traditional Medicine Services.
2. Ministry of Health, Royal Government of Bhutan, National Center for Traditional Medicine Services.
3. Ministry of Health, Royal Government of Bhutan, National Traditional Medicine Strategy and Action Plan 2025–2034.
4. World Health Organization, 2nd National Sorig Conference, Bhutan, 2025.
5. World Health Organization, Traditional Medicine: Questions and Answers, 2025.
6. Royal Government of Bhutan, National Health Survey 2023.
7. World Health Organization, Traditional Medicine in the South-East Asia Region.
8. भारत सरकार, आयुष मंत्रालय, आयुर्वेद एवं भारतीय पारंपरिक चिकित्सा संबंधी प्रकाशन।
9. संबंधित आयुर्वेदिक एवं सोवा रिग्पा शोध-साहित्य एवं अकादमिक अध्ययन।

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-127-131

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 127-131
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. रमेश राम
सहा. प्राध्यापक (अतिथि व्याख्याता)
राजनीति विज्ञान विभाग, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय चंपावत परिसर, अल्मोड़ा (उत्तराखंड)

Corresponding Author :

डॉ. रमेश राम
सहा. प्राध्यापक (अतिथि व्याख्याता)
राजनीति विज्ञान विभाग, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय चंपावत परिसर, अल्मोड़ा (उत्तराखंड)

भारत–भूटान संबंध : ऐतिहासिक, राजनीतिक, आर्थिक और रणनीतिक साझेदारी

सार : यह शोध पत्र भारत–भूटान संबंधों के दोनों देशों के बीच ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और रणनीतिक साझेदारी की भूमिका का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। भारत और भूटान के बीच ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और कूटनीतिक संबंध अत्यंत गहरे और विशिष्ट हैं। भूटान भारत का एक घनिष्ठ मित्र राष्ट्र है और दोनों देशों के बीच सदियों पुराना संबंध रहा है। 1947 में भारत की स्वतंत्रता के बाद दोनों देशों के बीच औपचारिक राजनयिक संबंध स्थापित हुए।

भारत और भूटान के संबंध ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और रणनीतिक स्तर पर अत्यंत प्रगाढ़ रहे हैं। यह संबंध मित्रता, आपसी सहयोग और विश्वास पर आधारित हैं। भारत ने हमेशा भूटान के विकास और संप्रभुता का सम्मान किया है और भूटान ने भी भारत के साथ घनिष्ठ संबंध बनाए रखे हैं। जिसमें ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, कूटनीतिक संबंध, आर्थिक सहयोग, सांस्कृतिक संबंध और सुरक्षा सहयोग को शामिल किया गया है। यह शोध पत्र भारत–भूटान संबंधों के एक विस्तृत अध्ययन के दीर्घकालिक प्रभावों और भारतीय विदेश नीति में उसकी भूमिका पर प्रकाश डालता है।

कूट शब्द : भारतीय नीति, संबंध, रणनीतिक साझेदारी, राजनयिक संबंध, विकास आदि।

प्रस्तावना : भारत और भूटान के संबंधों की जड़ें प्राचीन काल से जुड़ी हुई हैं। भूटान और भारत के लोगों के बीच सांस्कृतिक और धार्मिक आदान–प्रदान का इतिहास बौद्ध धर्म के प्रसार से जुड़ा हुआ है। 1958 में भारत के प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने भूटान की यात्रा की और इसे दोनों देशों के संबंधों की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना गया। 1961 में भूटान ने अपनी पहली पंचवर्षीय योजना भारत की सहायता से शुरू की, जिससे दोनों देशों के आर्थिक सहयोग को बढ़ावा मिला।

भारत और भूटान के बीच 1949 में एक औपचारिक संधि हुई, जिसे 2007 में संशोधित किया गया। 1949 की संधि के अनुसार, भूटान अपनी विदेश नीति भारत के मार्गदर्शन में संचालित करता था, लेकिन 2007 की संधि में यह प्रावधान हटा दिया गया, जिससे भूटान को अधिक स्वतंत्रता प्राप्त हुई। भारत भूटान में लोकतांत्रिक प्रणाली को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। भारत और भूटान के बीच 1949 में एक मैत्री संधि हुई थी, जिसके अंतर्गत भारत इस बात पर सहमत हुआ कि विदेश नीति के मामलों में वह भूटान की मदद करेगा।

भारत–भूटान संबंध :

ऐतिहासिक संबंध : भारत और भूटान के बीच आरंभ से ही मधुर और मित्रतापूर्ण संबंध थे और भूटान, दक्षिण एशिया का एक मात्र देश है, जिसका चीन के साथ कूटनीतिक संबंध नहीं है। वर्ष 1962 में भारत–चीन युद्ध के बाद भूटान का महत्त्व भारत के लिए और बढ़ गया तथा भारत और भूटान के बीच औपचारिक कूटनीतिक संबंधों की स्थापना वर्ष 1968 में हुई। वर्ष 1971

में भूटान, संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य बन गया, जिससे यह स्पष्ट है कि भूटान, एक स्वतंत्र और संप्रभु राज्य है तथा भूटान में राजतंत्रीय शासन विद्यमान था, परंतु वर्ष 2006 में भूटान ने संवैधानिक राजतंत्र को स्वीकार कर लिया तथा भूटान राजतंत्रीय शासन से शांतिपूर्ण रूप में लोकतांत्रिक शासन में परिवर्तित हो गया। भूटान में पहला बहुदलीय लोकतांत्रिक चुनाव वर्ष 2008 में हुआ और भारत–भूटान के बीच संबंध और प्रगाढ़ हुए।

मानव संसाधन विकास सहायता : भारत और भूटान के बीच शिक्षा और संस्कृति के क्षेत्र में ठोस द्विपक्षीय सहयोग है। भारत भूटान को विभिन्न क्षेत्रों में तकनीकी विशेषज्ञता और विशेषज्ञों की सेवाएँ प्रदान करता है। भारत सरकार भूटानी छात्रों को स्नातक और स्नातकोत्तर दोनों स्तरों के पाठ्यक्रमों में भारत के उच्च शिक्षा संस्थानों में शिक्षा प्राप्त करने के लिये प्रतिवर्ष छात्रवृत्ति प्रदान करती है। भूटानी छात्रों को भारत के सैनिक स्कूलों में प्रवेश दिया जाता है। भारत ने प्रतिष्ठा प्राप्त भारतीय विश्वविद्यालयों एवं अन्य संस्थानों में अध्ययन के लिए भूटानी छात्रों को प्रोत्साहित करने के लिए 'नेहरू–वांग्चुक छात्रवृत्ति योजना' की शुरुआत की है।

भारत–भूटान मैत्री संधि, 1949 में संशोधन के मुद्दे : भारत भूटान को विभिन्न देशों में और मंचों पर राजनयिक सहायता प्रदान करता है। साथ ही भारत भूटान की सेना को सैन्य प्रशिक्षण भी देता है। वर्ष 2007 में भारत और भूटान ने आपसी सहमति से 1949 की भारत–भूटान मैत्री संधि में स्थायी बदलाव किए हैं। इन बदलावों से भूटान सरकार को विदेश नीति के मामले में और अधिक स्वतंत्रता प्राप्त हुई है।

भारत यह संदेश देना चाहता है कि वह भूटान पर नियंत्रण नहीं रखना चाहता है। इस संधि पर हस्ताक्षर पारस्परिक लाभ के लिए हुए थे। तब भारत को यह देखना था कि भूटान चीन के प्रभाव में नहीं चला जाए, जबकि भूटान भारत से अपनी रक्षा करवाना चाहता था।

भारत–भूटान व्यापार समझौता : भारत और भूटान के बीच पहली बार व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर 17 जनवरी, 1972 को हुए थे। इस समझौते को हर 10 वर्ष के पश्चात् पुनरीक्षित कर लिया जाता है। इस समझौते के अंतर्गत भारत भूटान को तीसरे देशों के साथ उसके व्यापार संचालन तथा भारतीय भू–क्षेत्र के माध्यम से भूटान के एक हिस्से से दूसरे हिस्से में वस्तुओं के आवागमन को सुगम बनाने के लिए पारगमन सुविधाएँ भी प्रदान करता है। भूटान की आवश्यकताएँ मुख्यतः भारत से आयात के जरिए पूरी की जाती हैं। भारत भूटान को मुख्यतः मशीनरी, यांत्रिक उपकरण, खनिज पदार्थ, परिवहन सामग्री और रासायनिक उत्पाद निर्यात करता है, जबकि आयात की जाने वाली प्रमुख वस्तुओं में बिजली, जिप्सम, सिलिकॉन और पोर्टलैंड, सीमेंट इत्यादि सम्मिलित हैं। 12 नवंबर, 2016 को इस समझौते का पुनर्नवीकरण किया गया है।

भारत–भूटान संबंधों के सकारात्मक बिंदु : भारत एवं भूटान के बीच पारंपरिक रूप से सौहार्द्रपूर्ण एवं मित्रवत् संबंध रहे हैं। दोनों पड़ोसी देश हैं तथा इनमें गहरे सांस्कृतिक संबंध हैं। बौद्ध धर्म को मानती है। धर्म का जन्म भारत में हुआ, परंतु भूटान की ज्यादातर जनसंख्या बौद्ध धर्म का, मुक्त व्यापार एवं वाणिज्य और एक–दूसरे देश के नागरिकों के लिए समान न्याय का प्रावधान किया गया था। इस संधि में 2007 में कुछ परिवर्तन किए गए हैं। इसके तहत भूटान की विदेश एवं रक्षा नीति के संदर्भ में भारत पर निर्भरता कम हुई है।

भारत–भूटान जल–संसाधन के क्षेत्र में एक–दूसरे का सहयोग करते हैं। : भारत महत्त्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय मामलों में भूटान का समर्थन करता रहा है। भारत ने वर्ष 1971 में भूटान की संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता के लिए सक्रिय प्रयास किया था।

भारत प्रतिरक्षा के क्षेत्र में भी भूटान का सहयोगी है। भारत रॉयल भूटानी सेना को सुसज्जित करने के साथ–साथ प्रशिक्षण भी देता है।

मुख्य चुनौतियाँ : चीन हमेशा से भूटान के लिए खतरा रहा है। चीन भूटान के क्षेत्रों पर अपना दावा करता रहा है। भूटान को अभी भी चीन से खतरा बना हुआ है। भारत एवं भूटान दोनों संबंधों पर चीन का प्रभाव पड़ता है।

भूटान हमेशा आर्थिक रूप से भारत पर निर्भर रहा है। उदारीकरण और वैश्वीकरण के दौर में भारतीय अर्थव्यवस्था में होने वाले परिवर्तनों के परिप्रेक्ष्य में भारत–भूटान संबंधों को भी परिवर्तित करना होगा।

भारत–भूटान संबंधों का भविष्य : दोनों देशों के बीच जलविद्युत उत्पादन तथा जल संसाधन प्रबंधन के क्षेत्र में भी सहयोग की व्यापक संभावनाएँ हैं, जैसे–बाढ़ पूर्वानुमान नदी जल के संदर्भ में सूचनाओं का आदान–प्रदान तथा जल संसाधन प्रबंधन आदि।

भूटान में पर्यटन एक ऐसा क्षेत्र है, जिसमें आपसी सहयोग की व्यापक संभावनाएँ निहित हैं।

यह आशा की जा रही है कि आने वाले दिनों में भूटान की अर्थव्यवस्था पर वैश्वीकरण का प्रभाव पड़ेगा तो भारत के लिए भूटान में निवेश के व्यापक अवसर उपलब्ध होंगे। इस प्रकार का निवेश आपसी व्यापार की दृष्टि से उत्तम होगा और इससे भूटान को भी लाभ मिलेगा।

वर्तमान परिदृश्य :

मार्च 2024 में भूटान के प्रधानमंत्री ने भारत का दौरा किया जिस दौरान भारत ने भूटान के साथ व्यापक वार्ता की और दोनों देशों ने कई समझौतों पर हस्ताक्षर किए।

अंतरिम बजट 2024–25 में विदेश मंत्रालय को वित्तीय वर्ष 2024–25 के लिए 22,154 करोड़ रुपए आवंटित किए गए हैं। भूटान को सहायता पोर्टफोलियों का सबसे बड़ा हिस्सा प्रदान किया गया है।

भारत, भूटान का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार तथा भूटान का प्रमुख निर्यात गंतव्य है।

भूटान की जलविद्युत क्षमता उसके राजस्व का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। साथ ही भारत ने भूटान की जलविद्युत

परियोजनाओं को विकसित करने में भी सहायता की है।

भारत के प्रधानमंत्री ने अगस्त 2019 में भूटान की यात्रा की। इस दौरान 720 मेगावॉट की मॉंगदेहू जलविद्युत परियोजना, दक्षिण एशियाई उपग्रह के उपयोग के लिए इसरो के ग्राउंड अर्थस्टेशन, रूपे कार्ड व भारत के राष्ट्रीय ज्ञान नेटवर्क के मध्य अंतर्संबंध के विस्तार जैसी द्विपक्षीय परियोजनाओं पर सहमति बनी। इस दौरान भारत व भूटान के अनुसंधान एवं शिक्षा नेटवर्क का शुभारंभ किया गया।

पड़ोसी प्रथम नीति के तहत 16 अक्टूबर, 2020 से भूटान द्वारा भारत के लिए पाँच कृषि वस्तुओं (सुपारी, मंदासि, सेब, अदरक व आलू) तथा भारत द्वारा भूटान के लिए तीन वस्तुओं (टमाटर, प्याज व ओकरा) के लिए नई बाजार पहुँच खोली गई।

पनबिजली परियोजना और मंगदेछु पनबिजली परियोजना के लिए द्विपक्षीय बैठक सितंबर 2021 में आयोजित की गई थी। भीम यूपीआई को जुलाई 2021 में भूटान में शुरू किया गया था।

भारत–भूटान का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार बना हुआ है। वर्ष 2020–21 में दोनों देशों के बीच व्यापार 1083 मिलियन अमेरिकी डॉलर के लक्ष्य तक पहुँच गया, जिसमें से भारत से निर्यात 694 मिलियन अमेरिकी डॉलर और भूटान से भारत का आयात 389 मिलियन अमेरिकी डॉलर मूल्य का था।

भारत–भूटान संबंध : एक अनूठा और रणनीतिक जुड़ाव : भारत और भूटान के संबंध अत्यधिक विश्वास, सद्भावना और आपसी समझ पर आधारित अद्वितीय मित्रता और सहयोग के प्रतीक हैं। यह विशेष संबंध दोनों देशों के बीच नियमित उच्च–स्तरीय दौरों और वार्ताओं की परंपरा से कायम रहा है, जो मजबूत कूटनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संबंधों को दर्शाता है।

ऐतिहासिक और कूटनीतिक पृष्ठभूमि : औपचारिक संबंधः भारत और भूटान के बीच औपचारिक कूटनीतिक संबंध 1968 में थिम्पू में भारत के एक विशेष कार्यालय की स्थापना के साथ स्थापित हुए थे। मैत्री और सहयोग संधि (1949) द्विपक्षीय संबंधों का मूल ढाँचा 1949 में हस्ताक्षरित मैत्री और सहयोग संधि था, जिसे फरवरी 2007 में संशोधित किया गया।

संधि का संशोधन (2007) :

1.1949 की संधि के अनुसार, भारत को भूटान की विदेश नीति का मार्गदर्शन करना था।

2. 2006 में भूटान के संवैधानिक राजतंत्र के साथ संसदीय लोकतंत्र में परिवर्तन के बाद, भूटान ने संप्रभुता के उल्लंघन का हवाला देते हुए संधि की समीक्षा की मांग की।

3. भारत ने इस मांग को स्वीकार किया और 2007 में संधि में संशोधन किया गया, जिससे भूटान की विदेश नीति पर भारत का मार्गदर्शन समाप्त हो गया।

4. संशोधित संधि में यह प्रावधान किया गया कि दोनों पड़ोसी देश अपने राष्ट्रीय हितों से संबंधित मुद्दों पर एक–दूसरे के साथ घनिष्ठ सहयोग करेंगे। कोई भी सरकार अपनी भूमि का उपयोग दूसरे की राष्ट्रीय सुरक्षा और हित के लिए हानिकारक गतिविधियों हेतु नहीं होने देगी।

5. स्वर्ण जयंती भारत और भूटान के बीच औपचारिक राजनयिक संबंधों की स्वर्ण जयंती वर्ष 2018 में मनाई गई थी।

रणनीतिक और सुरक्षा सहयोग :

1. सुरक्षा भागीदार : भारत भूटान के लिए एक महत्वपूर्ण सुरक्षा भागीदार रहा है।

2. भारतीय सैन्य प्रशिक्षण दल पिश्चमी भूटान में स्थायी रूप से स्थित है और रॉयल भूटानी सेना को सहायता और प्रशिक्षण प्रदान करता है।

3. वायु सुरक्षा : भारतीय वायु सेना का पूर्वी वायु कमान भूटान को वायु सुरक्षा प्रदान करता है, क्योंकि देश के पास अपनी वायु सेना नहीं है।

द्विपक्षीय व्यापार और वित्तीय सहायता :

1. सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार : भारत, भूटान का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है। भूटान के कुल आयात और निर्यात में भारत की हिस्सेदारी 80 से अधिक है।

2. व्यापार संतुलन : व्यापार संतुलन भारत के पक्ष में है।

3. इसने दोनों देशों के बीच एक मुक्त व्यापार व्यवस्था स्थापित की।

4. बाहरी व्यापार के लिए भारत पर निर्भर है।

5. वित्तीय सहाय भारत 1961 से भूटान की पंचवर्षीय विकास योजनाओं के लिए वित्तीय सहायता दे रहा है। हाल ही में, भूटान की 12वीं पंचवर्षीय योजना के लिए भारत ने ₹4500 करोड़ का अनुदान की घोषणा की थी।

जलविद्युत सहयोग : विन–विन साझेदारी :

परस्पर लाभकारी मॉडल : जलविद्युत परियोजनाएं विन–विन सहयोग का उदाहरण हैंः–

1. भारत को सस्ते और स्वच्छ बिजली का विश्वसनीय स्रोत मिलता है।
2. भूटान के लिए निर्यात राजस्व उत्पन्न होता है।
3. दोनों की आर्थिक एकीकरण को मजबूती मिलती है।
4. **सहयोग का स्वरूप :** भारत सहायता और ऋण के संयोजन से पनबिजली बांधों के विकास में मदद करता
5. **उत्पादित बिजली का लगभग तीन–**चौथाई भाग निर्यात किया जाता है, और शेष घरेलू खपत के लिए उपयोग होता है।

6. इस प्रोटोकॉल के तहत, भारत सरकार ने 2020 तक न्यूनतम 10,000 मेगावाट पनबिजली विकसित करने और अधिशेष बिजली भारत को आयात करने में भूटान की सहायता करने पर सहमति व्यक्त की थी।

हालिया उद्घाटन : प्रधानमंत्री मोदी की भूटान यात्रा (2019) के दौरान 720 मेगावाट माङ्ङ्गदेछु जलविद्युत संयंत्र का औपचारिक उद्घाटन किया गया था।

द्विपक्षीय संबंधों में चुनौतियां :

1. कूटनीतिक संबंध का अभाव : भूटान भारत का एकमात्र पड़ोसी है जो न तो बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव में शामिल हुआ है और न ही जिसके चीन के साथ राजनयिक संबंध हैं।

2. चीन की घुसपैठ : एक मुखर चीन लगातार भूटान में प्रवेश करने का प्रयास कर रहा है। डोकलाम गतिरोध इसका एक प्रमुख उदाहरण है कि कैसे चीन ने भारत के चिकन नेक कॉरिडोर (सिलीगुड़ी कॉरिडोर) की ओर बढ़ने की कोशिश की।

3. क्षेत्रीय विवाद : चीन ने अतीत में डोकलाम क्षेत्र के संबंध में भूटान को क्षेत्र–अदला–बदली समझौतों की पेशकश भी की है।

4. उत्तर में विवादित क्षेत्र : पसामलुंग और जकारलुंग घाटियाँ, जो भूटान के लिए सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण हैं। चीन उत्तरी भूटान की जकारलुंग घाटी में अनाधिकृत निर्माण गतिविधि करने का प्रयास कर रहा है।

5. भारत का समर्थन : भारत डोकलाम पर भूटान के दावे का समर्थन करता है, क्योंकि यह भारत की सुरक्षा के लिए रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण है। इस क्षेत्र पर चीन का प्रभुत्व सिलीगुड़ी कॉरिडोर (पूर्वोत्तर राज्यों को मुख्य भूमि से जोड़ने वाला संकीर्ण क्षेत्र) को खतरा पहुंचा सकता है।

भूटान की अनसुलझी शिकायतें :

भूटान बिजली खरीद नीति और दरों की कठोरता की समीक्षा की मांग कर रहा है।

भारत ने भूटान को राष्ट्रीय बिजली ग्रिड में शामिल होने और बांग्लादेश जैसे तीसरे देशों के साथ व्यापार करने की अनुमति देने से इनकार कर दिया है।

आगे की राह :

शिकायतों का त्वरित समाधान : चूंकि चीन भूटान में पैठ बनाने की कोशिश कर रहा है, इसलिए भारत को भूटान के संबंधों को हल्के में नहीं लेना चाहिए। भूटान की सभी शिकायतों का तेजी से समाधान किया जाना चाहिए, ताकि संबंध नई ऊंचाइयों को छू सकें।

आर्थिक जुड़ाव में विविधता : वर्तमान में, भारत के आर्थिक संबंध मुख्य रूप से जलविद्युत परियोजनाओं पर हावी हैं। फिनटेक, स्पेस टेक और बायोटेक जैसे क्षेत्रों में सहयोग को मजबूत करने से एक मजबूत साझेदारी बन सकती है।

पीपल–टू–पीपल संबंध : बौद्ध धर्म के माध्यम से सॉफ्ट पावर कूटनीति का उपयोग करते हुए और दोनों देशों के बीच अधिक पर्यटक एक्सचेंजों को प्रोत्साहित करके इन संबंधों को मजबूत किया जाना चाहिए।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 2014 में 12वें आसियान–भारत शिखर सम्मेलन में इस नीति का अनावरण किया।

लुक ईस्ट से भिन्नता: एक्ट ईस्ट नीति आसियान देशों आर्थिक एकीकरण के अलावा पूर्वी एशियाई देशों और सुरक्षा सहयोग को भी शामिल करती है।

सुरक्षा आयाम : दक्षिण चीन सागर और हिंद महासागर में चीन की बढ़ती मुखरता के संदर्भ में, नौवहन की स्वतंत्रता और हिंद महासागर में भारत की भूमिका को सुरक्षित करना एक प्रमुख विशेषता है।

भारत इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए इंडो–पैसिफिक की रूपरेखा और क्वाड (फनंक) जैसे अनौपचारिक समूह में शामिल रहा है।

एक्ट ईस्ट नीति और पूर्वोत्तर भारत :

प्राथमिकता क्षेत्र : पूर्वोत्तर भारत इस नीति में एक प्राथमिकता क्षेत्र रहा है।

उद्देश्य: आर्थिक सहयोग और सांस्कृतिक संबंधों को बढ़ावा देना, और एशिया–प्रशांत क्षेत्र के देशों के साथ रणनीतिक संबंध विकसित करना, जिससे पूर्वोत्तर क्षेत्र को पड़ोसी देशों के साथ बेहतर कनेक्टिविटी मिल सके।

विकास: इसका प्रमुख केंद्र व्यापार, संस्कृति, पीपल–टू–पीपल संपर्क और भौतिक बुनियादी ढांचे (सड़क, हवाई अड्डे, दूरसंचार, बिजली, आदि) के माध्यम से पूर्वोत्तर के आसियान क्षेत्र के साथ अधिक संपर्क और आर्थिक एकीकरण को बढ़ाना है।

भारत की इंडो–पैसिफिक नीति :

इंडो–पैसिफिक : एक भू–राजनीतिक निर्माण

यह एक एकीकृत रंगमंच है जो हिंद महासागर और प्रशांत महासागर और उन्हें

घेरने वाले भूभागों को जोड़ता है।

यह एक भू–राजनीतिक निर्माण है जो लंबे समय से प्रचलित एशिया–प्रशांत के विकल्प के रूप में उभरा है।

भारत की केंद्रीय भूमिका : इंडो–पैसिफिक शब्द का उपयोग क्षेत्रीय सुरक्षा और वाणिज्यक गतिशीलता में भारत की केंद्रीय भूमिका को स्वीकार करता है।

भारत का विजन (2018) : प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 2018 में इंडो–पैसिफिक क्षेत्र के लिए भारत के विजन का अनावरण किया।

इंडो–पैसिफिक क्षेत्र में भारत के हित :

भारत नौवहन की स्वतंत्रता सुनिश्चत करना, सुरक्षा खतरों का समाधान करना चाहता है।

भू–राजनीतिक आकांक्षाएं : क्षेत्र में अपनी उपिस्थति का विस्तार करना और हिंद महासागर क्षेत्र में एक शुद्ध सुरक्षा प्रदाता के रूप में अपनी भूमिका बनाए रखना।

व्यापार और निवेश सहयोग बढ़ाना : क्षेत्र के अन्य देशों के साथ वस्तुओं, सेवाओं, निवेश और प्रौद्योगिकी के प्रवाह को प्रोत्साहित करना।

सतत विकास को बढ़ावा देना : ब्लू इकोनॉमी के विकास के माध्यम से क्षेत्र के सतत विकास के पक्ष में है।

इंडो–पैसिफिक क्षेत्र के लिए भारत का विजन

मुक्त, खुला और समावेशी इंडो–पैसिफिक क्षेत्र के लिए खड़ा होना।

इंडो–पैसिफिक क्षेत्र के केंद्र में दक्षिण–पूर्व एशिया का बने रहना (आसियान केंद्रीयता)।

संवाद के माध्यम से क्षेत्र के लिए एक सामान्य नियम–आधारित व्यवस्था विकसित करने की आवश्यकता।

सभी देशों को अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत समुद्र और हवा में साझा स्थानों का उपयोग करने का समान अधिकार होना चाहिए।

समाधान संरक्षणवाद की दीवारों के भीतर नहीं, बिल्क बदलाव को अपनाने में मिल सकते हैं।

कनेक्टिविटी पहल को सफल होने के लिए विश्वास के सेतु पर निर्मित होना चाहिए, जिसमें संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता का सम्मान करना आवश्यक है।

उद्देश्यः क्षेत्रीय समुद्री सुरक्षा और स्थिरता सुनिश्चत करना।

स्वरूपः यह एक खुली, गैर–संधि–आधारित पहल है जिसमें क्षेत्र की साझा चुनौतियों के लिए सहयोगात्मक समाधान हेतु सात स्तंभों पर ध्यान केंद्रित किया गया है

1. समुद्री सुरक्षा।
2. समुद्री पारिस्थितिकी।
3. समुद्री संसाधन।
4. क्षमता निर्माण और संसाधन साझाकरण।
5. आपदा जोखिम न्यूनीकरण और प्रबंधन।
6. विज्ञान, प्रौद्योगिकी और शैक्षणिक सहयोग।
7. व्यापार कनेक्टिविटी और समुद्री परिवहन।

इंडो–पैसिफिक पर आसियान आउटलुक :

1. यह दस्तावेज इंडो–पैसिफिक के लिए आसियान की रणनीति की रूपरेखा प्रस्तुत करता है।

2. यह आसियान की केंद्रीयता, अंतर्राष्ट्रीय कानून पर आधारित नियम–आधारित व्यवस्था, खुलेपन, पारदर्शिता, समावेशिता और क्षेत्र में आर्थिक जुड़ाव को आगे बढ़ाने की प्रतिबद्धता पर जोर देता है।

3. भारत ने इस आउटलुक का गर्मजोशी से स्वागत किया है, क्योंकि यह भी मुक्त, खुला, समावेशी और नियम–आधारित इंडो–पैसिफिक की वकालत करता है।

निष्कर्ष : निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि भारत और भूटान के संबंध मित्रता आपसी सहयोग और विश्वास पर आधारित रहा है। बल्कि यह दोनों देशों के सामरिक और ऐतिहासिक और राजनीतिक हितों के लिए भी आवश्यक है। भारत और भूटान के संबंध ऐतिहासिक रू॰ से मजबूत रहे है। वर्तमान समय में दोनों देशों के संबंध अत्यंत प्रगाढ़ है। भविष्य में भी सुदृण होने की संभावना है। आर्थिक, सुरक्षा, सहयोग दोनों देशों की मित्रता एवं विश्वास पर टिका हुआ है। वर्तमान में दोनों देश विकास का एक नया उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुतत करते है। अतः दोनों देशों को इसका लाभ मिलेगा।

संदर्भ :

1. डॉ. अरविन्द कुमार शुक्ल, भारत–भूटान संबंध एक अध्ययन, प्रकाशित शोध पत्र, पृ.127–128
2. राजेश मिश्रा, भारतीय विदेश नीति भूमंडलीकरण के दौर में, पृ.97
3. एस.सी.आर.आई.बी.डी. डॉट, कॉम, पृ.6,7,8,9,11,12
4. भारत सरकार विदेश मंत्रालय की अधिकारिक बैबसाइट।
5. दृष्टि, अंतर्राष्ट्रीय संबंध, तृतीय संस्करण, पृ.102,103,104,105,106
6. भूटान सरकार की आधारिकारिक रिपोर्टस ।
7. विभिन्न शोध पत्र और अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रों पर आधारित लेख्ज्ञं

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-132-135

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 132-135
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

प्रोफेसर (डॉ॰) कृष्ण चंद रल्हाण
प्रोफेसर हिन्दी–विभाग, नीलम विश्वविद्यालय, कैथल (हरियाणा) एवं पूर्व कुलसचिव, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

Corresponding Author :

प्रोफेसर (डॉ॰) कृष्ण चंद रल्हाण
प्रोफेसर हिन्दी–विभाग, नीलम विश्वविद्यालय, कैथल (हरियाणा) एवं पूर्व कुलसचिव, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

वैश्विक पटल पर हिन्दी

भाषा शब्द का निर्माण भाष धातु से हुआ है जिसका अभिप्रायः कहने या बोलने से समझा जाता है। इस कहने और बोलने का अर्थ व्यक्ति के विचारों की अभिव्यक्ति से होता है। भाषा वह माध्यम है जिसके द्वारा हम अपने भावों और विचारों को दूसरों के सम्मुख प्रकट कर सकते हैं और दूसरे के भावों और विचारों को सुन सकते हैं। भाषा विचार, भाव, व्यवहार और संस्कृति की वाहक होती है। जन्म के साथ ही मनुष्य अपनी माँ से जो भाषा सीखता हे, बड़ा होकर वह उसका विस्तार करता है। माँ से प्राप्त हुई मातृभाषा, संविधान से प्राप्त हुई राजभाषा, राष्ट्र के अधिकांश लोगों द्वारा निर्मित की गई राष्ट्र भाषा और विश्व के अधिकांश लोगों द्वारा बोली जाने पर विश्व भाषा बन जाती है। सभ्यता और संस्कृति के विकास में भाषा का कार्य ही महत्त्वपूर्ण होता है। मनुष्य का आचार–व्यवहार, भाव–विचार तथा धर्म–कर्म का जो ज्ञान है वह पीढ़ी–दर–पीढ़ी भाषा द्वारा ही हस्तांतरित होता है।

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने कहा था कि सरलता और शीघ्रता से सीखी जाने वाली भाषाओं में हिन्दी सर्वोपरि है। तिलक के ये शब्द उतने की प्रामाणिक हैं जितना कि भाषा केवल अपनी बात रखने का माध्यम ही नहीं होती बल्कि वह अपने समाज, संस्कृति और राष्ट्र का संस्कार भी होती है। हिंदी हमारे स्वाभिमान का प्रतीक तो है ही, इसके साथ–साथ वह अपनी वैज्ञानिक लिपि और पारिभाषिक शब्दावली के कारण समूचे विश्व में प्रासंगिक और सारगर्भित है।

हिन्दी मातृभाषा भी है, राजभाषा भी है और विश्वभाषा भी है। प्रायः समूचे राष्ट्र में व्याप्त और भिन्न–भिन्न भाषा–भाषी समुदायों के बीच धार्मिक, राजनीतिक एवं आर्थिक सन्दर्भों में सहज ही प्रयुक्त सम्पर्क भाषा को पारिभाषिक अर्थ में राष्ट्रभाषा कहा जाता है। राष्ट्रभाषा इस पद पर स्वतः आसीन हो जाती है, इसके लिए उसे किसी शासनादेश की आवश्यकता नहीं पड़ती जबकि राजभाषा बनने–बनाने के लिए शासनादेश अथवा विधि–विधान की अनिवार्यता होती है। यह बिल्कुल भी आवश्यक नहीं है कि राष्ट्रभाषा ही राजभाषा हो। उदाहरण स्वरूप हमारे यहां फारसी और अंग्रेजी राजभाषाएं तो रही हैं लेकिन ये राष्ट्रभाषाएं कभी नहीं बन सकीं। सैंकड़ों वर्षों से हिन्दी ही भारत की राष्ट्रभाषा है। आज हिन्दी एक विश्वभाषा भी है। हिन्दी आज विश्व के अनेक देशों में भी पर्याप्त संख्या में लोगों द्वारा बोली, लिखी और पढ़ी जाती है। हिन्दी भाषा दो अर्थों में मान्य है। व्यापक अर्थ में अवधी, ब्रज, कनौजी, भोजपुरी, राजस्थानी, बुन्देली, छत्तीसगढ़ी और हरियाणवी बोली हिन्दी में सम्मिलित है। भारत के जनगणना आयुक्त की ताजा रिपोर्ट के अनुसार हिन्दी की छियालिस बोलियां हैं अर्थात् हिन्दी छियालिस बोलियों का परिवार है। सीमित अर्थ में हिन्दी शब्द से अभिप्राय भाषायी संरचनागत मानक से है अर्थात् खड़ी बोली से है। भारत एक विशालकाय देश है। जहां पर लगभग 250 भाषाएं बोली, समझी और लिखी जाती हैं इसीलिए इसे बहुभाषी देश कहा जाता है और अनेकता में एकता इसका स्वाभिमान है। प्रत्येक स्वाधीन राष्ट्र के लिए उसकी राष्ट्र भाषा, उसका राष्ट्र ध्वज और उसका राष्ट्रगान परम आवश्यक है। आज हिन्दी स्वदेश में स्वयंमेव राष्ट्र भाषा बन गई है

और विश्व में दूसरे नम्बर की भाषा बन गई है।

विस्तार के कारण बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के अधिकारियों और कर्मचारियों द्वारा हिन्दी सीखने की अनिवार्यता के कारण हिन्दी विश्वव्यापी आकार ले चुकी है। हिन्दी आज विश्व में फैले प्रवासी भारतीयों के परस्पर सम्पर्क और ऐतिहासिक पहचान की भाषा भी है और एक नए विश्वधर्म, अनतर्राष्ट्रीय अनुशासन और मानवीय समरसता की भाषा भी है। वह विश्व की सर्वाधिक प्रतिष्ठित, मान्यता प्राप्त और प्रयुक्त भाषा भी है। सम्प्रेषण की नवीनतम तकनीक के साथ गहरा तालमेल स्थापित करने में समर्थ हिन्दी भाषा आज वैश्विक स्तर पर महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। विश्वभर में भाषा सम्बन्धी जानकारी देने वाली सर्वाधिक विश्वस्त पुस्तक एथेनेलाग के ताजा संस्करण के अनुसार संसार में इस समय छः हजार नौ सौ बारह बोलियां बोली जाती हैं। हिन्दी भाषा आज विश्व भाषा का स्थान ले चुकी है। वर्तमान रिपोर्टों के अनुसार हिन्दी आज विश्व में चीनी के बाद दूसरे नम्बर पर बोली , लिखी और पढ़ी जाती है। विश्व बाजार की हिन्दी पर निर्भरता को देखते हुए मुझे उसके एक नम्बर पर कायम होने में कोई संदेह नहीं है क्योंकि भूमण्डलीकरण के इस दौर में विश्व के सबसे बड़े लोकतन्त्र, सर्वाधिक जनसंख्या वाले राष्ट्र और सबसे बड़े उपभोक्ता बाजार की भाषा हिन्दी की उपेक्षा करना संभव नहीं है। विश्व के कुल दो सौ नौ देशों में से एक सौ अस्सी देशों में हिन्दी बोली जाती है। लेकिन युनेस्को की नौ भाषाओं में सम्मिलित होते हुए भी वह अभी तक संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकारिक भाषाओं चीनी, स्पेनिश, अंग्रेजी, अरबी, रूसी, फ्रैंच में अपना नाम सम्मिलित नहीं करवा सकी। संयुक्त राष्ट्र संघ में पहली बार चार अक्तूबर उन्नीस सौ सत्तर को अटल बिहारी वाजपेयी और चार अक्तूबर उन्नीस सौ अट्ठासी को पी.वी. नरसिंह राव ने हिन्दी में भाषण दिया था और संयुक्त राष्ट्र संघ में भारतीय नेताओं द्वारा हिन्दी में भाषण देने का यह सिलसिला आज भी जारी है, जो हिन्दी के लिए गौरव की बात है।

आज भारत के अतिरिक्त विश्व में लगभग 175 विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन–अध्यापन और शोधकार्य सुचारू रूप से चल रहा है। अकेले अमेरिका में 54 विश्वविद्यालयों में हिन्दी के अध्ययन और अध्यापन की सुविधाएं प्रदान की जा रही हैं। अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति जार्ज बुश ने राष्ट्रीय सुरक्षा भाषा कार्यक्रम के अन्तर्गत अपने देशवासियों को हिन्दी सीखने के लिए प्रेरित करते हुए कहा था – हिन्दी ऐसी विदेशी भाषा है जिससे इक्कीसवीं सदी में राष्ट्रीय सुरक्षा और समृद्धि के कारण अमेरिका के नागरिकों को सीखना चाहिए। राष्ट्रपति ओबामा ने चुनाव के लिए अपने घोषणा–पत्र की प्रतियां पहली बार अंग्रेजी के साथ–साथ हिन्दी में भी छपवाकर वितरित की थीं। 2012 के पुनः राष्ट्रपति चुनाव में ओबामा ने मताधिकार पत्र हिन्दी में भी छपवाया था। नवम्बर, 2016 के चुनावों में भी डोनाल्ड ट्रम्प ने भी हिन्दी भाषा का खूब प्रचार किया था। पूर्व राष्ट्रपति जो बाइडन ने भी अपने चुनाव में हिन्दी का खूब प्रयोग किया। वर्तमान राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने भी हिन्दी के भाषा–भाषी भारतीयों को लुभाने के लिए हिन्दी के प्रचार–प्रसार हेतु और लोगों के कल्याण हेतु अनेक घोषणाएं कीं। ब्रिटेन ने अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी दिवस पर हिन्दी में डाक टिकट जारी किया है। संयुक्त राष्ट्र सभा में इस बार दीपावली का त्यौहार बड़े धूमधाम से मनाया गया। ब्रिटेन के रेडियो और टी.वी. चैनलों पर हिन्दी की धूम है। यहां पर स्थापित अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति कई बार अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलन कर चुकी है। इसी कड़ी में हिन्दी संगम प्रतिष्ठान, न्यूजर्सी (यू.एस.ए.), आधारशिला फाडंडेशन, हल्द्वानी, नैनिताल (भारत), अनतर्राष्ट्रीय साहित्य कला मंच, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश (भारत) जैसी संस्थाएं विदेशों में भी हिन्दी सम्मेलन करती रहती हैं। आज विदेशों में हिन्दी के रेडियो और टी.वी. चैनलों द्वारा हिन्दी के विस्तार का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। इन्होंने वहां आर्य समाज की स्थापना की ताकि आर्य समाज के नेतृत्व में हिन्दी और भारतीय संस्कृति के विस्तार की तमाम गतिविधियां चलाई जाती है। पंडित नरदेव जी वेदालंकार द्वारा 25 अप्रैल 1948 में स्थापित हिन्दी शिक्षा संघ द्वारा हिन्दी के अध्ययन–अध्यापन की अनेक गतिविधियां संचालित की जाती हैं जिसमें हिन्दी की विभिन्न स्तर की परीक्षाओं का आयोजन भी शामिल है।

आज के भूमण्डलीकरण के युग में पूरा विश्व एक ग्राम के रूप में प्रतीत होता है। ऐंसे में एक–दूसरे से सम्पर्क के लिए हिन्दी सांस्कृतिक समभाव वाली भाषा प्रमाणित हो चुकी है। पूरे विश्व में भारतीय संस्कृति के प्रति एक आदर का भाव आरम्भ से है। विश्वगुरु के रूप में भारत की पहचान रही है। भारत के प्रसिद्ध नालन्दा और तक्षशिला विश्वविद्यालय में पूरे विश्व से विद्यार्थी अध्ययन करने के लिए आते रहे हैं। भारत के महान सन्तों और साहित्यकारों ने समय–समय पर समूचे विश्वस को प्रभावित किया है। स्वामी रामकृष्ण परमहंस, महर्षि दयानन्द और स्वामी विवेकानन्द आदि सन्तों का आदर पूरे विश्व में आज भी है। विश्वधर्म सम्मेलन में अमेरिका के शिकागो शहर में 11 सितम्बर 1893 में भारतीय धर्म और संस्कृति पर दिए गए स्वामी विवेकानन्द के व्याख्यान को लोग आज भी याद करते हैं। भारतीय संस्कृति में विश्व–बन्धुत्व और विश्व कल्याण का जो भाव विद्यमान है वह असल में 'वसुधैव कुटुम्बकम' का भाव है। भारत की चिकित्सा पद्धति, धर्म, दर्शन, उपासना पद्धति, नीतिशास्त्र, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र आदि ने पूरे विश्व को आकर्षित किया है। हिन्दी के साहित्यकारों ने पूरे विश्व में अपनी रचनाओं के माध्यम से भारतीय संस्कृति को पहुंचाया है। भारतीय संस्कृति की असली पहचान तुलसीकृत 'रामचरितमानस' में विद्यमान है। भारतीय संस्कृति की रक्षा के लिए इसमें राम के आदर्श रूप को चित्रित किया गया है। राम के इस स्वरूप के द्वारा ही मानव मूल्यों की स्थापना की गई है। भारतीय संस्कृति के समस्त गुण, तत्त्व और विशेषताएं इस महाग्रंथ में उपस्थित हैं। विश्व में हिन्दी ने जहां–जहां भी अपने कदम रखे, वहां–वहां 'रामचरितमानस' भारतीय संस्कृति का संवाहक बन कर पहुंच गया। आज के तनाव के समय में पूरा विश्व यह स्वीकार कर रहा है कि श्री राम के शान्ति और सद्भाव के प्रसार से ही विश्व की रक्षा हो सकती है। भारतीय संस्कृति का दूसरा महान ग्रंथ है गीता। गीता ने कर्मयोग, ज्ञानयोग और भक्तियोग का पाठ पढ़ाया। गीता मानवता को जीने का ढंग सिखाती है।

हिन्दी भाषा का विस्तार विदेशों में छः रूपों में हुआ है। पहले रूप में वह देश आते हैं जहां भारतीय मूल के

निवासियों की संख्या अधिक है बल्कि यूं कहना चाहिए कि अधिकांशतः भारतीय मूल के निवासियों ने ही इन देशों को बसाया है। हिन्दी इनकी मातृभाषा है और वे परस्पर बातचीत हिन्दी में करते हैं। इन देशों में फिजी, मारीशस, सूरीनाम, त्रिनिदाद, गयाना, नेपाल, बर्मा, श्रीलंका, थाईलैण्ड, सिंगापुर, मलेशिया, दक्षिण अफ्रीका, इंडोनेशिया आदि सम्मिलित हैं। दूसर रूप में वह देश आते हैं जहां पर प्रवासी भारतीय अधिकांश संख्या में रहते हें। इन देशों के भारत के साथ अच्छे राजनैतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक सम्बन्ध हैं। इन देशों में शैक्षणिक स्तर पर हिन्दी के अध्ययन और अध्यापन की व्यवस्था की गई है जिससे हिन्दी का विस्तार हो रहा है। इन देशों में अमेरिका, कनाडा, इंगलैण्ड, रूस, फ्रांस, इटली, चेकोस्लोवाकिया, बेल्जियम, चीन, जापान, मैक्सिको, आस्ट्रेलिया आदि सम्मिलित हैं। तीसरे रूप के अन्तर्गत विदेशों में स्थित वह विश्वविद्यालय आते हैं जहां एशियाई अध्ययन केन्द्रों, सांस्कृतिक केन्द्रों तथा हिन्दी–विभागों द्वारा हिन्दी के अध्ययन और अध्यापन द्वारा हिन्दी का विस्तार, प्रचार और प्रसार हो पा रहा है। चौथे रूप के अन्तर्गत विदेशों में स्थापित भारतीय दूतावास, प्रसारण केन्द्र तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक संस्थाएं आती हैं। यह विश्व में हिन्दी के प्रचार–प्रसार और विस्तार का सबसे महत्त्वपूर्ण माध्यम है। भारतीय दूतावासों में संस्कृत और हिन्दी भाषा की इन पुस्तकों का अच्छा संग्रह होता है जो भारतीय संस्कृति की धरोहर हैं। यह दूतावास समय–समय पर ऐसे आयोजन करते रहते हैं जिनके द्वारा हिन्दी का प्रचार और प्रसार होता है। पांचवें रूप के अन्तर्गत भारतवंशी व साहित्यकार, लेखक और कलाकार आते हैं जो विश्व के विभिन्न देशों में अपनी लेखनी और कला के माध्यम से हिन्दी की स्थापना कर रहे हैं। छठे रूप में देश–विदेश की वह सामाजिक, सांस्कृति और धार्मिक संस्थाएं आती हैं जो विदेशों में हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों का आयोजन करती हैं।

आज मारीशस में हिन्दी का व्यापक प्रचार और प्रसार हो चुका है। अक्तूबर 2013 में मैं जब अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलन में भाग लेने मारीशस गया था, तब मैंने देखा था कि मारीशस के प्रत्येक हिन्दू के घर के मुख्य द्वार के बराबर में हनुमान जी की मूर्ति स्थापित की हुई है। जब मैंने उनसे इस बारे में पूछा तो उन्होंने बताया कि हम भारतीय यहां मजदूर बन कर आए थे तब भी हनुमान जी ने हमारी रक्षा की थी और आज उन्हीं की कृपा से हम मजदूर से मालिक बन गए हैं। वहां पर आर्य समाज की लगभग 400 शाखाएं हैं जिनका संचालन हिन्दी में होता है। मैं वहां पर अभिमन्यु अनत और रामदेव धुरंधर नामक हिन्दी के दो महान साहित्यकारों से मिला था। फीजी एक छोटा सा देश है जहां पर हिन्दी का व्यापक प्रसार है। फीजी रेडियो से हिन्दी के अनेक कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं। सूरीनाम की भाषा डच होते हुए भी वहां आम बोलचाल में हिन्दी का प्रयोग किया जाता है जिसे सरनामी कहते हैं। भारतीय संस्कृति वाले देश नेपाल में नेपाली के बाद हिन्दी दूसरे नम्बर पर बोली जाती है। असल में नेपाली भाषा की लिपि देवनागरी है जिसकी उत्पत्ति प्राकृत भाषा से हुई है। नेपाली के शब्दों और हिन्दी के शब्दों में समानता है। श्रीलंका में हिन्दी का प्रचार और प्रसार वहां के रेडियो सिलोन से खूब हुआ है जिस पर काफी समय पहले अमीन स्यानी द्वारा बिनाका गीतमाला कार्यक्रम प्रस्तुत किया जाता था। यह कार्यक्रम इतना लोकप्रिय हुआ कि इसे भारत और भारत के बाहर करोड़ो लोग बड़े चाव से सुनते थे। रूस के साथ भारत की मजबूत राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृति सम्बन्ध होने के कारण वहां हिन्दी का व्यापक प्रचार और प्रसार हुआ। वहां पर रामचरितमानस, महाभारत, भगवतगीता, सूरसागर जैसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का मूल रूप में खूब अध्ययन हुआ और रू सी में अनुवाद भी हुआ। हमारे पड़ौसी देश भूटान के लोग बौद्ध धर्म को अपनाए हुए हैं और बौद्ध धर्म भारत से ही गया है। स्वाभाविक है कि भूटान में हिन्दी की स्थिति अच्छी है। भूटान में बौद्ध धर्म और पर्यटन होने के कारण हिन्दी का खूब प्रचलन है। वहां पर सभी लोग हिन्दी बोलते हैं और भारत को श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। अरब देशों में भी हिन्दी बोली जाती है। पर्यटन की दृष्टि से वहां के लोग हिन्दी को अच्छी तरह से समझते हैं। फीजी, सूरीनाम, गयाना, त्रिनिदाद में भी हिन्दी का खूब प्रचलन है। फीजी में 50 प्रतिशत विद्यालयों में हिन्दी माध्यम से अध्यापन करवाया जाता है। त्रिनिदाद में सनातन धर्म महासभा, हिन्दी फाउंडेशन ऑफ त्रिनिदाद एंड टोबैगो आदि संस्थाएं वहां हिन्दी का अध्यापन करवाती हैं।

ब्रिटेन में हिन्दी के प्रचार और प्रसार के लिए हिन्दी भाषा का शिक्षण दिया जाता है। ब्रिटेन के लन्दन विश्वविद्यालय, कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय तथा यार्क विश्वविद्यालयों में हिन्दी में बी.ए., एम.ए., एम.फिल, पीएच.डी. करवाई जाती है। ब्रिटेन में भारत के लोग अपनी भाषा और संस्कृति के प्रति अत्यन्त समर्पित हैं और वह भारत के तीज–त्यौहारों का आयोजन करते रहते हैं जिस कारण ब्रिटेन के सभी शहरों में हिन्दी की गूंज सुनाई देती है। चीन में हिन्दी अध्ययन और अध्यापन की प्रक्रिया अत्यंत प्राचीन है जिसका शुभारम्भ 1942 से हुआ। चीन के अनेक विश्वविद्यालयों में हिन्दी की पीएच.डी. स्तर तक पढ़ाई होती है। विश्व के अधिकांश देशों में हिन्दी के प्रचार और प्रसार में हिन्दी फिल्मों का भी काफी बड़ा योगदान है। विदेशों में हिंदी फिल्मों के कलाकारों की और उनकी फिल्मों की अत्यन्त प्रतिष्ठा है। जिस गति से वैश्विक पटल पर हिन्दी का प्रचार और प्रसार हो रहा है, अब वह दिन दूर नहीं जब हिन्दी विश्व की नम्बर एक की भाषा और अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बनेगी।

संदर्भ :

1. हिन्दी की वैश्विक भूमिका, आलेख डॉ॰ रचना शर्मा, विश्व पटल पर हिन्दी, सम्पादक डॉ॰ महेश दिवाकर, विश्व पुस्तक प्रकाशन, 304–ए, बी.जी.–7, पश्चिमी विहार, नई दिल्ली, 2015, पृ॰ 17
2. परम्परा का मूल्यांकन, डॉ॰ रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृ॰ 19

3. भाषा की संस्कृति और संस्कृति की भाषा, आलेख,डॉ॰ मीना कौल, विश्वपटल पर हिन्दी, डॉ॰ महेश दिवाकर, विश्व पुस्तक प्रकाशन, 304, ए.बी.जी. – 7, पश्चिम विहार, नई दिल्ली, पृ॰ 325
4. विकास के विविध आयाम, डॉ॰ मलिक मोहम्मद, प्रवीण प्रकाशन, महरौली, नई दिल्ली, 1993, राजभाषा हिन्दी संस्करण, 2014, पृ॰ 47
5. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, 1956, पृ॰653
6. हिन्दी की वैश्विक भूमिका, आलेख, डॉ॰ रचना शर्मा, विश्वपटल पर हिन्दी, सं॰ डॉ॰ महेश दिवाकर, पृ॰ 6
7. साहित्य में प्रवासी हिन्दी साहित्य, आलेख, श्रीमती अर्चना पैन्यूली, विश्व में हिन्दी पत्रिका,, 2011
8. देश–विदेश में हिन्दी, सं॰ डॉ॰ महेश दिवाकर, विश्व पुस्तक प्रकाशन, 304–ए.बी. जी. – 7, पश्चिम विहार, नई दिल्ली,, 2018
9. वेद पीयूष, लेखक, : डॉ॰ उदय नारायण गंगू, आर्य सभा, मॉरीशस
10. अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन 2013 स्मारिका मॉरीशस

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-136-140

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 136-140
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

भाषा मिश्रा

शोधार्थी, हिंदी विभाग, विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखंड

Corresponding Author :

भाषा मिश्रा

शोधार्थी, हिंदी विभाग, विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखंड

द्विवेदी युगीन भारत और भूटान : सांस्कृतिक अस्मिता एवं आध्यात्मिक चेतना

भारतीय नवजागरण को केवल राजनीतिक स्वतंत्रता की आकांक्षा तक सीमित करके नहीं समझा जा सकता। यह सामाजिक, धार्मिक, भाषिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक चेतना के अनेक स्तरों पर विकसित होने वाली जटिल प्रक्रिया थी। औपनिवेशिक आधुनिकता, आधुनिक शिक्षा, मुद्रण संस्कृति तथा सामाजिक-सुधार आंदोलनों ने भारतीय समाज के सामने अपनी पहचान को नए सिरे से परिभाषित करने की चुनौती उपस्थित की। इतिहास, धर्म, भाषा, साहित्य और सांस्कृतिक परंपरा की पुनर्व्याख्या इसी चुनौती का एक महत्त्वपूर्ण उत्तर बनी।हिंदी साहित्य में द्विवेदी युग इस सांस्कृतिक जागरण का महत्त्वपूर्ण चरण है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 1903 से 1920 तक सरस्वती के संपादन के माध्यम से हिंदी साहित्य की दिशा को व्यापक रूप से प्रभावित किया। उनकी साहित्यिक परियोजना केवल भाषा-सुधार तक सीमित नहीं थी, बल्कि हिंदी साहित्य को आधुनिक, अनुशासित और राष्ट्रीय महत्त्व की साहित्यिक संस्था के रूप में विकसित करने से भी संबद्ध थी। Sujata S. Mody ने द्विवेदी की इस परियोजना को साहित्यिक आत्मनिर्माण तथा उभरती राष्ट्रीय सामूहिकता के संदर्भ में देखा है।[1] इसी संदर्भ में भूटान की साहित्यिक और आध्यात्मिक परंपरा हमारे अध्ययन के लिए महत्त्वपूर्ण हो जाती है। भूटान के साहित्य को केवल आधुनिक मुद्रित साहित्य के आधार पर समझना पर्याप्त नहीं है। धार्मिक ग्रंथ, पांडुलिपियाँ, मौखिक आख्यान, लोकगीत, धार्मिक नृत्य तथा बौद्ध आध्यात्मिक साहित्य उसकी सांस्कृतिक स्मृति के महत्त्वपूर्ण आधार हैं। A. Steven Evans ने भूटान की लोककथाओं और मुखौटा-नृत्यों को उसकी समृद्ध मौखिक विरासत से जोड़ते हुए यह स्पष्ट किया है कि ऐसी परंपराएँ सांस्कृतिक मूल्यों को पीढ़ियों तक पहुँचाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।[2]अतः भारत और भूटान का तुलनात्मक अध्ययन किसी प्रत्यक्ष ऐतिहासिक प्रभाव की खोज नहीं, बल्कि यह समझने का प्रयास है कि अलग-अलग

ऐतिहासिक परिस्थितियों में समाज अपनी सांस्कृतिक अस्मिता, नैतिक मूल्यों और विरासत को किस प्रकार सुरक्षित तथा पुनर्सृजित करते हैं। द्विवेदी युगीन भारत का नवजागरण, राष्ट्रीय चेतना और सांस्कृतिक पुनर्स्मृति के संदर्भ में कहा जाए तो द्विवेदी युगीन साहित्य का मूल स्वर उद्देश्यपरकता है। इस काल में साहित्य को केवल मनोरंजन या सौंदर्यानुभूति का साधन न मानकर सामाजिक और नैतिक पुनर्निर्माण का माध्यम समझा गया। कर्तव्य, संयम, श्रम, त्याग, शिक्षा और सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे मूल्य साहित्यिक चेतना में विशेष महत्त्व रखते हैं। साहित्यकार का उद्देश्य केवल पाठक का मनोरंजन करना नहीं, बल्कि उसके भीतर सामाजिक चेतना और नैतिक उत्तरदायित्व उत्पन्न करना भी था।इस काल में राष्ट्रीय चेतना साहित्य का केंद्रीय सरोकार बनी। औपनिवेशिक शासन के बीच भारतीय इतिहास और संस्कृति की ओर लौटना आत्मगौरव की पुनर्स्थापना का माध्यम था। किंतु अतीत की ओर यह वापसी केवल गौरव-गान नहीं थी। उसके माध्यम से वर्तमान की कमजोरियों को पहचानने और भविष्य के निर्माण की प्रेरणा प्राप्त करने का प्रयास भी किया गया। इसीलिए द्विवेदी युगीन साहित्य में अतीत और वर्तमान के बीच सक्रिय संवाद दिखाई देता है।मैथिलीशरण गुप्त की भारत-भारती इसका महत्त्वपूर्ण उदाहरण है। इसमें भारत के अतीत, वर्तमान और भविष्य को परस्पर जोड़कर देखने की दृष्टि मिलती है। अतीत यहाँ निष्क्रिय स्मृति नहीं, बल्कि वर्तमान समाज को आत्मचिंतन और आत्मनिर्माण के लिए प्रेरित करने वाला स्रोत है। इसी प्रकार साकेत में रामकथा का पुनर्पाठ करते हुए परंपरा को आधुनिक मानवीय संवेदना से जोड़ा गया। उर्मिला के चरित्र के माध्यम से त्याग, कर्तव्य, प्रतीक्षा और स्त्री की आत्मिक शक्ति को नया साहित्यिक अर्थ प्राप्त होता है।इस प्रकार परंपरा यहाँ जड़ स्मृति नहीं, बल्कि वर्तमान से संवाद करती हुई जीवंत सांस्कृतिक शक्ति बन जाती है। यही नवजागरण की मूल विशेषता है—वह अतीत को पुनः ग्रहण करता है, किंतु उसे वर्तमान की आवश्यकताओं के अनुरूप पुनर्व्याख्यायित भी करता है। द्विवेदी युग में भाषा का प्रश्न भी सांस्कृतिक आत्मनिर्माण से जुड़ा था। खड़ी बोली हिंदी को साहित्यिक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने, उसे व्यवस्थित एवं व्याकरणसम्मत बनाने और व्यापक पाठक-वर्ग तक पहुँचाने का प्रयास हुआ। इस भाषिक अनुशासन ने हिंदी को आधुनिक सार्वजनिक विमर्श की सक्षम भाषा बनाने में योगदान दिया। Mody के अध्ययन में भी द्विवेदी की साहित्यिक परियोजना को खड़ी बोली हिंदी के माध्यम से एक आधुनिक साहित्यिक और राष्ट्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के निर्माण से संबद्ध किया गया है।[1] द्विवेदी युग का नवजागरण केवल अतीत की पुनर्स्मृति नहीं था बल्कि सामाजिक सुधार उसका समान रूप से महत्त्वपूर्ण पक्ष था। स्त्री-शिक्षा, अशिक्षा, सामाजिक कुरीतियाँ, जातिगत रूढ़ियाँ और नैतिक पतन जैसे प्रश्न साहित्य के केंद्र में आए। इस प्रकार द्विवेदी युगीन चेतना में दो प्रक्रियाएँ समानांतर चलती हैं—एक ओर सांस्कृतिक जड़ों की खोज और दूसरी ओर सामाजिक रूढ़ियों से मुक्ति।यही द्वंद्व भारतीय नवजागरण की विशिष्टता है। परंपरा को पुनः ग्रहण करना और उसे नए सामाजिक संदर्भों में पुनर्व्याख्यायित करना, दोनों ही इस युग की साहित्यिक चेतना के आधार हैं। भूटान का साहित्य, परंपरा, बौद्ध आध्यात्म और भूटान की साहित्यिक संस्कृति का स्वरूप भारतीय आधुनिक साहित्य से भिन्न है। आधुनिक मुद्रित साहित्य के विकास से पहले वहाँ धार्मिक ग्रंथों, पांडुलिपियों, मौखिक आख्यानों, लोकगीतों और आध्यात्मिक शिक्षाओं की समृद्ध परंपरा रही। इसलिए भूटानी साहित्य का अध्ययन लिखित ग्रंथों के साथ-साथ मौखिक और सांस्कृतिक परंपराओं के संदर्भ में करना आवश्यक है।भूटान की सांस्कृतिक चेतना पर बौद्ध धर्म, विशेषतः वज्रयान परंपरा, का गहरा प्रभाव रहा है। बौद्ध धर्म ने वहाँ धार्मिक जीवन के साथ कला, स्थापत्य, सामाजिक आचरण और सामुदायिक संस्कृति को भी प्रभावित किया। Elizabeth Allison के अध्ययन में भूटान की बौद्ध परंपरा और स्थानीय प्रकृति-केंद्रित विश्वासों के अंतर्संबंध से विकसित विशिष्ट 'spiritual ecology' की चर्चा मिलती है। इसमें भू-दृश्य, धार्मिक स्मृति और सांस्कृतिक पहचान परस्पर संबद्ध दिखाई देते हैं।[3] भूटानी साहित्यिक-सांस्कृतिक परंपरा का एक महत्त्वपूर्ण आधार मौखिक साहित्य है। लोककथाएँ, धार्मिक आख्यान, लोकगीत और मुखौटा-नृत्य सांस्कृतिक स्मृति के हस्तांतरण के माध्यम रहे हैं।

Evans के अनुसार भूटान की लोककथाएँ और मुखौटा-नृत्य उसकी समृद्ध मौखिक विरासत के महत्त्वपूर्ण अंग हैं।[2] इससे स्पष्ट होता है कि साहित्य केवल लिखित शब्द में ही नहीं, बल्कि प्रदर्शन, कथा, संगीत और सामुदायिक अनुष्ठानों में भी जीवित रहता है। इस मौखिक परंपरा में प्रकृति का विशेष महत्त्व है। पर्वत, वन, नदियाँ और प्राकृतिक शक्तियाँ केवल भौगोलिक इकाइयाँ नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और आध्यात्मिक स्मृति का हिस्सा हैं। भूटान में बौद्ध धर्म और स्थानीय प्रकृति-केंद्रित विश्वासों के लंबे अंतर्संबंध ने प्रकृति को धार्मिक और सांस्कृतिक अर्थ प्रदान किया। Allison के अनुसार यह संबंध आधुनिक भूटानी पर्यावरणीय दृष्टि में भी दिखाई देता है।[3] यह दृष्टि आज के पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में विशेष महत्त्व रखती है। जब प्रकृति को केवल आर्थिक संसाधन के रूप में देखा जाता है, तब उसके विनाश की संभावना बढ़ती है। इसके विपरीत यदि प्रकृति सांस्कृतिक और आध्यात्मिक जीवन का हिस्सा हो, तो पर्यावरण-संरक्षण नैतिक दायित्व का रूप ग्रहण कर सकता है। भूटान का अनुभव इसी वैकल्पिक दृष्टि की ओर संकेत करता है।

नवजागरण और आध्यात्मिक चेतना : तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य द्विवेदी युगीन भारत और भूटान की साहित्यिक-आध्यात्मिक परंपराओं को साथ रखकर देखने पर उनकी ऐतिहासिक परिस्थितियाँ स्पष्टतः भिन्न दिखाई देती हैं। भारत में नवजागरण औपनिवेशिक आधुनिकता, राष्ट्रीय आंदोलन, सामाजिक सुधार और आधुनिक हिंदी साहित्य के निर्माण की पृष्ठभूमि में विकसित हुआ, जबकि भूटान की सांस्कृतिक निरंतरता का प्रमुख आधार बौद्ध धर्म, लोकपरंपरा और आध्यात्मिक जीवन रहा। इसलिए दोनों को एक ही प्रकार के नवजागरण की अभिव्यक्ति मानना ऐतिहासिक रूप से उचित नहीं होगा।फिर भी दोनों के बीच एक गहरी वैचारिक समानता दिखाई देती है। द्विवेदी युगीन साहित्य भारतीय समाज को उसके इतिहास, संस्कृति और नैतिक उत्तरदायित्व का बोध कराता है। भूटानी परंपरा धार्मिक ग्रंथों, लोकस्मृति और आध्यात्मिक जीवन के माध्यम से सामुदायिक पहचान को बनाए रखती है। दोनों स्थितियों में सांस्कृतिक स्मृति वर्तमान जीवन को दिशा देने वाली शक्ति बनती है।दूसरा साम्य नैतिक जीवन-दृष्टि का है। द्विवेदी युगीन साहित्य कर्तव्य, संयम, त्याग, श्रम और सामाजिक उत्तरदायित्व पर बल देता है। बौद्ध आध्यात्म करुणा, आत्मसंयम, मानसिक शुद्धि और सामंजस्य को महत्त्व देता है। दोनों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमियाँ भिन्न हैं, किंतु दोनों मनुष्य के नैतिक परिष्कार को महत्त्वपूर्ण मानते हैं। भूटान की आधुनिक विकास-दृष्टि में यह आध्यात्मिक आधार एक नए रूप में दिखाई देता है। Gross National Happiness अर्थात् सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता की अवधारणा आर्थिक विकास के साथ सांस्कृतिक संरक्षण, पर्यावरणीय संतुलन और मानवीय कल्याण को जोड़ती है। William J. Long के अध्ययन के अनुसार भूटानी संदर्भ में happiness केवल भौतिक सुख या व्यक्तिगत आनंद नहीं है; इसमें दूसरों के दुःख को कम करना, प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करना और मनुष्य की आंतरिक संभावनाओं का विकास सम्मिलित है।[4]यहाँ द्विवेदी युगीन साहित्य के साथ एक वैचारिक संवाद स्थापित होता है। द्विवेदी युग भी व्यक्ति को केवल निजी हितों तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उसे समाज और राष्ट्र के व्यापक हित से जोड़ता है। इस प्रकार दोनों परंपराएँ अपने-अपने संदर्भ में व्यक्ति को व्यापक नैतिक समुदाय का हिस्सा मानती हैं।परंपरा और आधुनिकता का प्रश्नपरंपरा और आधुनिकता का संबंध दोनों सांस्कृतिक संसारों के अध्ययन में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। द्विवेदी युग अतीत की ओर लौटता है, किंतु अतीत में स्थिर नहीं रहता। वह भारतीय परंपरा से प्रेरणा ग्रहण करते हुए सामाजिक सुधार, आधुनिक शिक्षा और राष्ट्रीय चेतना की आवश्यकता को स्वीकार करता है। इस अर्थ में उसका सांस्कृतिक पुनर्जागरण पुनरुत्थानवाद मात्र नहीं है; उसमें परिवर्तन की आकांक्षा भी अंतर्निहित है। भूटान के सामने भी आधुनिक विकास और सांस्कृतिक संरक्षण के बीच संतुलन स्थापित करने की चुनौती रही है। Long का अध्ययन इसी प्रश्न को विशेष महत्त्व देता है कि आधुनिक अर्थव्यवस्था और संस्थाओं का विकास किस प्रकार सांस्कृतिक एवं बौद्ध परंपराओं को विस्थापित किए बिना किया जा सकता है।[4] इस दृष्टि से भूटान का अनुभव परंपरा और आधुनिकता के बीच संघर्ष के

बजाय संवाद की संभावना प्रस्तुत करता है। यहाँ यह समझना आवश्यक है कि सांस्कृतिक अस्मिता का संरक्षण आधुनिकता का विरोध नहीं है। वास्तविक समस्या तब उत्पन्न होती है जब आधुनिकता सांस्कृतिक स्मृति को अप्रासंगिक घोषित कर देती है अथवा परंपरा स्वयं को परिवर्तन से पूरी तरह अलग कर लेती है। स्वस्थ सांस्कृतिक विकास इन दोनों के बीच संवाद स्थापित करने में निहित है।साहित्य, भाषा और सामुदायिक स्मृति सांस्कृतिक अस्मिता के निर्माण में साहित्य की भूमिका को भाषा से अलग करके नहीं देखा जा सकता। द्विवेदी युग में हिंदी भाषा का परिष्कार स्वयं सांस्कृतिक आत्मनिर्माण की प्रक्रिया का हिस्सा था। भाषा के माध्यम से एक विस्तृत पाठक समुदाय और सार्वजनिक साहित्यिक विमर्श का निर्माण हुआ। सरस्वती जैसी पत्रिका ने इस प्रक्रिया को गति दी। Mody का अध्ययन यह दिखाता है कि द्विवेदी की साहित्यिक परियोजना में भाषा, साहित्य और राष्ट्रीय सामूहिकता के बीच घनिष्ठ संबंध था।[1] भूटान में स्थिति अलग होने पर भी मौखिक परंपरा ने लगभग इसी प्रकार सामुदायिक स्मृति को संरक्षित करने का कार्य किया। लिखित साहित्य के अतिरिक्त लोककथाएँ, धार्मिक आख्यान और प्रदर्शनकारी कलाएँ सांस्कृतिक अनुभवों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाती रहीं। Evans का अध्ययन इस मौखिक विरासत की इसी भूमिका की ओर संकेत करता है।[2] इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि किसी समाज की सांस्कृतिक स्मृति केवल पुस्तकों में सुरक्षित नहीं रहती। वह भाषा, कथा, गीत, अनुष्ठान, नृत्य और सामुदायिक व्यवहार में भी जीवित रहती है। इसलिए विरासत-संरक्षण का अर्थ केवल ग्रंथों का संरक्षण नहीं, बल्कि उन जीवन-प्रक्रियाओं को जीवित रखना भी है जिनमें संस्कृति स्वयं को अभिव्यक्त करती है।प्रकृति, आध्यात्म और भविष्य भूटान के संदर्भ में प्रकृति-बोध तुलनात्मक अध्ययन का एक विशेष महत्त्वपूर्ण पक्ष है। वहाँ धार्मिक परंपरा और प्रकृति के बीच विकसित संबंध ने एक ऐसी आध्यात्मिक पारिस्थितिकी को जन्म दिया जिसमें भू-दृश्य धार्मिक स्मृति और सांस्कृतिक पहचान का अंग बन जाता है।[3]द्विवेदी युगीन साहित्य में प्रकृति का स्वरूप इससे भिन्न है। वहाँ प्रकृति का उपयोग अधिकतर मानवीय संवेदनाओं, सामाजिक जीवन और काव्यात्मक अभिव्यक्ति के संदर्भ में दिखाई देता है। फिर भी दोनों परंपराओं में मनुष्य को उसके व्यापक परिवेश से अलग करके देखने की प्रवृत्ति नहीं है।आज के वैश्विक पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में यह तुलनात्मक दृष्टि विशेष उपयोगी हो सकती है। यदि प्रकृति को केवल उपभोग की वस्तु के रूप में न देखकर सांस्कृतिक और नैतिक जीवन का हिस्सा माना जाए, तो पर्यावरण-संरक्षण अधिक स्थायी आधार प्राप्त कर सकता है। भूटान का अनुभव इस दिशा में महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक उदाहरण प्रस्तुत करता है।सांस्कृतिक अस्मिता और वैश्वीकरणवर्तमान वैश्वीकरण के दौर में सांस्कृतिक अस्मिता का प्रश्न पहले से अधिक जटिल हो गया है। बाजार, तकनीक और संचार ने समाजों को एक-दूसरे के अत्यंत निकट ला दिया है। इसके परिणामस्वरूप सांस्कृतिक आदान-प्रदान बढ़ा है, किंतु साथ ही स्थानीय भाषाओं, परंपराओं और जीवन-मूल्यों के सामने एकरूपीकरण की चुनौती भी उपस्थित हुई है। ऐसी स्थिति में भारत और भूटान की परंपराएँ यह संकेत देती हैं कि सांस्कृतिक विशिष्टता का संरक्षण दूसरे समाजों से कटकर संभव नहीं है। आवश्यक यह है कि अपनी जड़ों के प्रति सजग रहते हुए अन्य संस्कृतियों के साथ संवाद किया जाए। द्विवेदी युगीन साहित्य ने भारतीय परंपरा को आधुनिक सामाजिक चेतना से जोड़ा और भूटानी आध्यात्मिक परंपरा ने आधुनिकता के साथ अपनी सांस्कृतिक और नैतिक दृष्टि के संतुलन का प्रयास किया।अतः सांस्कृतिक विरासत को केवल अतीत की वस्तु मानकर संरक्षित करना पर्याप्त नहीं है। वास्तविक संरक्षण तब होता है जब भाषा, कथा, नैतिकता, कला, आध्यात्मिकता और जीवन-मूल्य नई पीढ़ी के अनुभवों में अर्थपूर्ण रूप से उपस्थित रहें। नवजागरण से आध्यात्मिक चेतना तक की यह यात्रा केवल दो सांस्कृतिक संसारों को साथ रखकर देखने का प्रयास नहीं, बल्कि साहित्य, स्मृति और आध्यात्मिकता की उस साझा मानवीय भूमिका को समझने का प्रयास है जो मनुष्य को उसकी पहचान, समाज और प्रकृति से जोड़ती है। यही सांस्कृतिक अस्मिता का स्थायी आधार है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. Mody, Sujata S., "Literary Self-Determination and The Disciplinary Boundaries of Hindi Literature in the Early Twentieth Century," South Asia Research, Vol. 32, No. 3, 2012, pp. 233–256.
2. Evans, A. Steven, "Tears and Laughter: Promoting Gross National Happiness Through the Rich Oral Traditions and Heritage of Bhutan," in Gross National Happiness and Development: Proceedings of the First International Conference on Operationalization of Gross National Happiness, Centre for Bhutan Studies, Thimphu, 2004, pp. 637–659.
3. Allison, Elizabeth, "Religion and Environment in Bhutan," Oxford Research Encyclopedia of Asian History, Oxford University Press, 2024.
4. Long, William J., "Gross National Happiness: A Buddhist Model of Development," in Tantric State: A Buddhist Approach to Democracy and Development in Bhutan, Oxford University Press, 2019, pp. 113–137.

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-141-144

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 141-144
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. तुषार रंजन

सहायक आचार्य, (बी0एड0)विभाग, शिवपति स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शोहरतगढ़, सिद्धार्थनगर, (उ0प्र0)

Corresponding Author :

डॉ. तुषार रंजन

सहायक आचार्य, (बी0एड0)विभाग, शिवपति स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शोहरतगढ़, सिद्धार्थनगर, (उ0प्र0)

भारत और भूटान की शिक्षा व्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन

सारांश : शिक्षा मनुष्य के व्यक्तिगत विकास के साथ–साथ समाज और राष्ट्र के निर्माण की आधारभूत प्रक्रिया है। किसी देश की शिक्षा व्यवस्था उस देश के सामाजिक मूल्यों, सांस्कृतिक चेतना, ऐतिहसिक अनुभवों, आर्थिक आवश्यकताओं और भविष्य की आकांक्षाओं का प्रतिबिंब होती है। इस दृष्टि से भारत और भूटान की शिक्षा व्यवस्थाओं को एक साथ समझना विशेष महत्व रखता है। दोनों देश दक्षिण एशियाई और हिमालयी क्षेत्र से जुड़े हुए हैं तथा उनके बीच ऐतिहासिक, सांस्कृतक और मैत्रीपूर्ण संबंध रहे हैं, किन्तु उनकी जनसंख्या, भौगोलिक परिस्थितियों, सामाजिक संरचना और आर्थिक पृष्ठभूमि में पर्याप्त अंतर है। इन भिन्नताओं के कारण दोनों देशों की शिक्षा व्यवस्थाओं का स्वरूप भी अलग–अलग रूपों में विकसित हुआ है।

भारत एक विशाल और बहुलतापूर्ण देश है। यहाँ शिक्षा व्यवस्था को भाषायी, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक विविधताओं के बीच कार्य करना पड़ता है। स्वतंत्रता के बाद शिक्षा को राष्ट्र–निर्माण, सामाजिक न्याय, लोकतांत्रिक चेतना और आर्थिक विकास के प्रमुख साधन के रूप में स्वीकार किया गया। वर्तमान समय में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय शिक्षा व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन की दिशा प्रस्तुत करती है। इसमें शिक्षा को अधिक समावेशी, विद्यार्थी–केंद्रित, बहुविषयक, कौशल–आधारित और जीवनोपयोगी बनाने पर बल दिया गया ह। प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा, आधारभूत साक्षरता एवं संख्याज्ञान, मातृभाषा, व्यावसायिक शिक्षा, आलोचनात्मक चिंतन, सामाजिक–भावनात्मक विकास और भारतीय ज्ञान–परंपरा को भी महत्व दिया गया है।

भूटान की शिक्षा व्यवस्था का स्वरूप उसकी विशिष्ट सांस्कृतिक और दार्शनिक पृष्ठभूमि से गहराई से प्रभावित है। वहाँ आधुनिक विद्यालयी शिक्षा के साथ बौद्ध मठीय शिक्षा की ऐतिहासिक परंपरा भी रही है। भूटान के विकास–दर्शन में Gross National Happiness अर्थात् सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता की अवधारणा विशेष महत्व रखती है। इस दृष्टिकोण में विकास को केवल आर्थिक उपलब्धियों से नही, बल्कि व्यक्ति के मानसिक कल्याण, सामाजिक संबंधों, संस्कृति, पर्यावरण और जीवन की गुणवत्ता से भी जोड़ा जाता है। भूटान की शिक्षा पर उपलब्ध अकादमिक साहित्य में संस्कृति, GNH, ग्रामीण शिक्षा, समावेशी शिक्षा, प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा तथा लौंगिक प्रश्नों को शिक्षा व्यवस्था के महत्वपूर्ण आयामों के रूप में देखा गया है।

अंततः शिक्षा का मूल्य केवल इस बात से निर्धारित नहीं होता कि विद्यार्थी ने कितनी सूचनाएँ अर्जित कीं, बल्कि इस बात से भी निर्धारित होता है कि शिक्षा ने उसके भीतर कितना विवेक, संवदेनशीलता, आत्मविश्वास, रचनात्मक और सामाजिक उत्तरदायित्व विकसित किया। भारत और भूटान की शिक्षा व्यवस्थाओं का अध्ययन इसी व्यापक प्रश्न को सामने लाता है कि आधुनिक शिक्षा को ज्ञान और कौशल के साथ मानवीय मूल्यों से किस प्रकार जोड़ा जाए। दोनों देशों के अनुभवों से ऐसी शिक्षा–दृष्टि विकसित करने की

संभावना दिखाई देती है। जिसमें आधुनिकता और परंपरा, विज्ञान और संस्कृति, कौशल और संवेदना तथा व्यक्तिगत उन्नति और सामाजिक कल्याण के बीच संतुलन स्थापित किया जा सके।

मुख्य शब्द : भारत, भूटान, शिक्षा व्यवस्था, तुलनात्मक शिक्षा, समग्र शिक्षा।

प्रस्तावना : मनुष्य की पहचान केवल उसके वर्तमान से नहीं होती, वह अपनी स्मृतियें, अनुभवों और अर्जित ज्ञान को आने वाली पीढ़ियो तक पहुँचाने की क्षमता के कारण भी मनुष्य है। यही हस्तांतरण की प्रक्रिया सभ्यता को निरंतरता प्रदान करती है और शिक्षा इस निरंतरता का सबसे सशक्त माध्यम है। एक पीढ़ी जो कुछ सीखती है, उसे अगली पीढ़ी तक पहुँचाती है, अगली पीढ़ी उसमें अपना अनुभव जोड़ती है और इस प्रकार ज्ञान का संसार निरंतर विस्तृत होता रहता है। इसलिए, शिक्षा को केवल विद्यालय की चारदीवारी में घटित होने वाली प्रक्रिया मानना उसके वास्तविक रूपरूप को सीमित करना होगा।

इस पूरी पृष्ठभूमि में भारत और भूटान की शिक्षा व्यवस्था का अध्ययन केवल दो देशों की संस्थाओं, पाठ्यक्रमों या नीतियो को अलग–अलग देखने का विषय नही रह जात। यह शिक्षा के उस व्यापक स्परूप को समझने का अवसर बन जाता है जिसमें मनुष्य, समाज, संस्कृति , प्रकृति, अर्थव्यवस्था और भविष्य एक–दूसरे से जुड़े हुए है। शिक्षा जितनी समाज को बदलती है, उतनी ही समाज की आकांक्षाएँ शिक्षा को बदलती है। इसी सतत संवाद से किसी देश की शिक्षा व्यवस्था अपनी विशिष्ट रूप ग्रहण करती है।

1. भारत और भूटान में शिक्षा की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि : भारत और भूटान दोनों की शिक्षा परंपराओं की जड़ें आधुनिक विद्यालयी व्यवस्था से कहीं अधिक पुरानी हैं। भारत और भूटान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की तुलना से सह समझ आता है कि शिक्षा किसी देश के बाहर से केवल संस्थागत रूप में नहीं आती, वह धीरे–धीरे स्थानीय समाज के साथ संवाद करके अपना स्वरूप ग्रहण करती है। भारत में बहुलता और लोकतांत्रिकता ने शिक्षा के चरित्र को प्रभावित किया, जबकि भूटान में संस्कृति, बौद्ध परंपरा और GNH की विचारधारा ने शिक्षा को विशिष्ट दिशा दी।

2. शिक्षा के उद्देश्य और नीतिगत स्वरूप : शिक्षा की दिशा निर्धारित करने में राष्ट्रीय शिक्षा नीतियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। नीति यह तय करती है कि आने वाली पीढ़ी को किस प्रकार का ज्ञान और कौशल दिया जाए तथा शिक्षा के माध्यम से समाज किस प्रकार के नागरिक तैयार करना चाहता है। भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इसी व्यापक सोच का परिणाम है। नीति शिक्षा को व्यक्ति की पूर्ण क्षमता के विकास, न्यायपूर्ण समाज और राष्ट्रीय विकास से जोड़ती है। इसमें प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा, आधारभूत साक्षरता एवं संख्याज्ञान, बहुभाषिकता, व्यावसायिक शिक्षा, बहुविषयक अध्ययन और विद्यार्थी के समग्र विकास पर बल दिया गया है।

भूटान में शिक्षा का उद्देश्य GNH की व्यापक अवधारणा से प्रभावित है। शिक्षा मे व्यक्ति के बौद्धिक विकास के साथ सामाजिक और नैतिक विकास पर भी बल दिया गया है। शिक्षा को व्यक्ति और समुदाय के संबंधों से जोड़ने का प्रयास किया गया है। भूटान में GNH आधारित शिक्षा को समझने वाले अकादमिक अध्ययनों में शिक्षा को मानव विकास और सामूहिक कल्याण से जोड़ने की विशेषता सामने आती है।

दोनों देशों के उद्देश्यों का एक साझा पक्ष यह है कि विद्यार्थी को बदलती दुनिया के लिए तैयार किया जाए। अंतर इस बात में है कि भारत में इसका पैमाना बहुत व्यापक और विविधतापूर्ण है, जबकि भूटान में सांस्कृतिक संरक्षण और समग्र कल्याण का स्वर अधिक स्पष्ट दिखाई देता है।

3. पाठ्यक्रम, शिक्षण–पद्धति और शिक्षक की भूमिका : किसी शिक्षा नीति की वास्तविक परीक्षा कक्षा–कक्ष में होती है। नीति के दस्तावेज चाहे कितने ही प्रभावशाली क्यों न हों, उनका वास्तविक अर्थ तभी सामने आता है जब शिक्षक उन्हें अपने दैनिक शिक्षण में बदलता है। इसलिए पाठ्यक्रम, शिक्षण–पद्धति और शिक्षक की भूमिका शिक्षा व्यवस्था के सबसे महत्वपूर्ण पक्षों में है।

भारत में शिक्षा को रटने और परीक्षा–केंद्रितता से आगे ले जाने पर बल बढ़ा है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में आलोचनात्मक चिंतन, सृजनात्मकता, समस्या–समाधान और अनुभवात्मक अधिगम को महत्व दिया गया है। पाठ्यक्रम में कला, खेल, भाषा, संस्कृति, विज्ञान और गणित को व्यापक विकास के साथ जोड़ने की दिशा दिखाई देती है।

भूटान में भी विद्यार्थी–केंद्रित और मूल्य–आधारित शिक्षा को महत्व दिया गया है। GNH के लिए शिक्षा की पहल का उद्देश्य विद्यालयी अनुभव को विद्यार्थी के व्यापक जीवन और सामाजिक जिम्मेदारी से जोड़ना रहा है। लेकिन शोध यह भी संकेत करता है कि नीतिगत अवधारणाओं को कक्षा–कक्ष में प्रभावी ढंग से लागू करना हमेशा सरल नहीं होता। शिक्षक की समझ, प्रशिक्षण और उपलब्ध संसाधन इस प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। मूल्य–आधारित शिक्षा दोनों देशों के लिए महत्वपूर्ण है। भारत में संधैधानिक मूल्य, नैतिकता, सामाजिक उत्तरदायित्व और भारतीय संस्कृति से जुड़ाव पर बल दिया जा रहा है। भूटान में संस्कृति, पर्यावरण, समुदाय और GNH की अवधारणा शिक्षा के मूल्य में पक्ष को विशेष रूप देती है।

दोनों देशों के अनुभव बताते है कि मूल्य केवल पाठ्यपुस्तक में लिखे जाने से विद्यार्थियों के जीवन का हिस्सा नहीं बनते। विद्यालय का वातावरण, शिक्षक का व्यवहार, विद्यार्थियों के बीच संबंध, गतिविधियाँ और मूल्यांकन–सभी मिलकर मूल्य शिक्षा का निर्माण करते है।

4. समावेशी, ग्रामीण एवं तकनीकी शिक्षा की चुनौतिया : शिक्षा की सफलता का एक महत्वपूर्ण पैमाना यह है कि वह समाज के कितने व्यापक वर्ग तक पहुँचती है। यदि शिक्षा केवल शहरों, संपन्न वर्गों या सुविधासंपन्न विद्यार्थियों तक सीमित रह जाए तो उसकी सामाजिक भूमिका अधूरी रह जाती है।

भारत में ग्रामीण–शहरी अंतर शिक्षा की एक महत्वपूर्ण चुनौती है। विशाल भौगोलिक क्षेत्र और सामाजिक–आर्थिक विविधता के कारण विद्यालयी सुविधाओं, शिक्षकों और सीखने के अवसरों में क्षेत्रीय अंतर दिखाई दे सकते हैं। भारत और भूटान की प्राथमिक शिक्षा पर किए गए तुलनात्मक अध्ययन में ग्रामीण शिक्षा, पहुँच, विद्यार्थियों के टिकाव तथा विद्यालयी समस्याओं को महत्वपूर्ण प्रश्नों के रूप में रेखांकित किया गया है।

तकनीकी परिवर्तन ने शिक्षा को नई संभावनाएँ प्रदान की हैं। डिजिटल माध्यमों से दूरस्थ विद्यार्थियों तक शिक्षण सामग्री पहुंचाई जा सकती है। भारत में राष्ट्रीय शिक्षा नीति के बाद डिजिटल शिक्षा, National Digital Education Architecture और अन्य तकनीकी पहलों को आगे बढ़ाया गया है। भूटान में भी तकनीकी शिक्षा का विकास हुआ है और भारत के सहयोग से कंप्यूटर साक्षरता तथा डिजिटल क्षमता बढ़ाने की पहलें की गई हैं। भारत और भूटान के बच्चों में कंप्यूटर साक्षरता से संबंधित अध्ययन इस तकनीकी सहयोग के महत्व को दर्शाता है। लेकिन तकनीक अपने आप समानता नहीं ला सकती। यदि किसी विद्यार्थी के पास इंटरनेट, उपकरण या डिजिटल कौशल नहीं है तो वही तकनीक उसके लिए अवसर के बजाय बाधा बन सकती है। इसलिए भविष्य की शिक्षा में डिजिटल साधनों के विस्तार के साथ डिजिटल समानता को भी प्राथमिकता देनी होगी।

5. भारत और भूटान की शिक्षा व्यवस्था में पारस्परिक सीख की संभावनाए : भारत और भूटान की शिक्षा व्यवस्थाओं को साथ रखकर देखने पर यह स्पष्ट होता है कि दोनों देशों की परिस्थितियाँ अलग हैं, इसलिए किसी एक देश के मॉडल को दूसरे पर उसी रूप में लागू करना उचित नहीं होगा। फिर भी दोनों देशों के अनुभवों में ऐसी विशेषताएँ हैं जिनसे एक–दूसरा सीख सकता है। भारत की सबसे बड़ी शक्ति उसका विशाल शैक्षिक नेटवर्क और विविध परिस्थितियों में शिक्षा प्रदान करने का अनुभव है। उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, डिजिटल संसाधन और विभिन्न सामाजिक समूहों के लिए विकसित कार्यक्रम भारत को व्यापक अनुभव प्रदान करते हैं। भूटान की शिक्षा व्यवस्था का विशेष पक्ष उसका सांस्कृतिक और कल्याण–केंद्रित दृष्टिकोण है। GNH की अवधारणा शिक्षा को इस प्रश्न से जोड़ती है कि विद्यार्थी केवल कितना सफल हुआ, यह पर्याप्त नहीं, यह भी महत्वपूर्ण है कि उसका जीवन कितना संतुलित, जिम्मेदार और सामाजिक रूप से सार्थक है। भूटान की शिक्षा पर उपलब्ध व्यापक साहित्य में GNH को शिक्षा के साथ जोड़कर इसी विशिष्ट दृष्टिकोण का विश्लेषण किया गया है। भारत के लिए भूटान का अनुभव यह संदेश देता है कि आधुनिक शिक्षा में मानवीय संवेदना और जीवन–मूल्यों को केवल अतिरिक्त विषय मानना पर्याप्त नहीं है। उन्हें शिक्षा के पूरे वातावरण में स्थान देना आवश्यक है। वहीं भूटान भारत से विज्ञान, तकनीक, उच्च शिक्षा के विविधीकरण, डिजिटल संसाधनों और बड़े पैमाने पर शिक्षक–प्रशिक्षण के अनुभव ग्रहण कर सकता है। दोनों देशों के बीच शिक्षा सहयोग के अनेक क्षेत्र हो सकते हैं। शिक्षक प्रशिक्षण, शोध, विद्यार्थी विनिमय, पर्यावरण शिक्षा, हिमालयी अध्ययन, संस्कृति, बौद्ध अध्ययन, डिजिटल शिक्षा और सतत विकास जैसे क्षेत्र दोनों देशों के लिए विशेष महत्व रखते हैं।

सबसे महत्त्वपूर्ण पारस्परिक सीख शिक्षा के उद्देश्य को लेकर हो सकती है। भारत का अनुभव शिक्षा को सामाजिक अवसर और व्यापक विकास से जोड़ता है, जबकि भूटान का अनुभव शिक्षा को कल्याण, संस्कृति और जीवन–मूल्यों से जोड़ने की प्रेरणा देता है। यदि इन दोनों दृष्टियों के सकारात्मक पक्षों को समझा जाए तो शिक्षा को अधिक मानवीय और अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है।

निष्कर्ष : भारत और भूटान की शिक्षा व्यवस्थाओं का विस्तृत अध्ययन हमें शिक्षा के उस व्यापक स्वरूप तक ले जाता है जो केवल विद्यालय, पाठयक्रम और परीक्षा की सीमाओं में नहीं बाँधता। शिक्षा वास्तव में किसी समाज की आत्मा का वह माध्यम है जिसके द्वारा एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी को केवल ज्ञान नहीं देती, बल्कि अपने अनुभव, मूल्य, संस्कृति, आशाएँ और भविष्य की कल्पना भी सौंपती है। भारत और भूटान की परिस्थितियाँ भिन्न हैं। भारत की विशाल जनसंख्या, बहुभाषिकता, सामाजिक विविधता और क्षेत्रीय असमानताएँ उसकी शिक्षा व्यवस्था को अत्यंत व्यापक और जटिल बनाती हैं। दूसरी ओर भूटान का छोटा जनसांख्यिकीय आकार, पर्वतीय भूगोल और विशिष्ट सांस्कृतिक पृष्ठभूमि उसकी शिक्षा को एक अलग दिशा प्रदान करते हैं। फिर भी इन भिन्नताओं के भीतर एक समान मानवीय आकांक्षा दिखाई देती है–शिक्षा ऐसी हो जो व्यक्ति को बेहतर जीवन के लिए तैयार करे और समाज को अधिक न्यायपूर्ण, संवेदनशील तथा सुसंगठित बनाए। भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 शिक्षा को व्यक्ति की पूर्ण क्षमता, सामाजिक न्याय और राष्ट्रीय विकास से जोड़ती है। इसमें शिक्षा के बौद्धिक पक्ष के साथ चरित्र, नैतिकता, संवेदना, सृजनात्मकता और जीवन–कौशल को महत्त्व दिया गया है। यह दिशा इस बात का संकेत है कि आधुनिक भारतीय शिक्षा धीर–धीरे केवल परीक्षा और प्रमाणपत्र की संस्कृति से आगे बढ़कर विद्यार्थी के समग्र व्यक्तित्व की ओर देख रही है। भूटान की शिक्षा व्यवस्था इस विमर्श में एक अलग लेकिन अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्वर जोड़ती है। GNH की अवधारणा शिक्षा से यह प्रश्न पूछती है कि विकास का अंतिम लक्ष्य क्या है। यदि विकास मनुष्य के जीवन को अधिक अर्थपूर्ण, संतुलित और सुखी नहीं बनाता तो केवल आर्थिक उपलब्धियाँ पर्याप्त नहीं हो सकतीं। शिक्षा में संस्कृति, पर्यावरण, सामाजिक संबंध और मानसिक कल्याण को स्थान देना इसी व्यापक दृष्टि का परिणाम है।

अंततः भारत और भूटान की शिक्षा व्यवस्थाओं का अध्ययन एक अत्यंत गहरी बात की ओर संकेत करता है– शिक्षा की वास्तविक उपलब्धि विद्यार्थी के ज्ञान की मात्रा में नहीं, उसके व्यक्तित्व की गुणवत्ता में दिखाई देती हैं। वह कितना जानता है, यह महत्त्वपूर्ण है, लेकिन उससे भी महत्त्वपूर्ण यह है कि वह अपने ज्ञान के साथ क्या करता है, दूसरों के प्रति कैसा व्यवहार करता है, समाज के प्रति कितनी जिम्मेदारी महसूस करता है और अपने समय की चुनौतियों के सामने कितना

विवेकपूर्ण निर्णय ले पाता है।

इस अर्थ में भारत और भूटान की शिक्षा व्यवस्था का संबंध केवल दो देशों की तुलना का विषय नहीं रह जाता, वह शिक्षा के उस सार्वभौमिक प्रश्न में बदल जाता है जो आज पूरी मानवता के सामने है– हम आने वाली पीढ़ी को केवल सफल बनाना चाहते हैं या वास्तव में बेहतर मनुष्य भी बनाना चाहते हैं ? इस प्रश्न का उत्तर ही भविष्य की शिक्षा की दिशा निर्धारित करेगा।

संदर्भ :

1. भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय। (2020)। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020। नई दिल्लीः शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार।
2. भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय (2020)। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की प्रमुख विशेषताएँ। नई दिल्लीः शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार।
3. भूटान सरकार, शिक्षा एवं कौशल विकास मंत्रालय (2025)। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2025। थिम्फूः भूटान की शाही सरकार, शिक्षा एवं कौशल विकास मंत्रालय।
4. शुएलका, मैथ्यू जे. एवं मैक्सवेल, टी. डब्ल्यू (संपादक) (2016)। भूटान में शिक्षाः संस्कृति, विद्यालयी शिक्षा और सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता। सिंगापुरः स्प्रिंगर प्रकाशन।
5. देम, किंजांग (2019)। भारत और भूटान की प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययनः भारतीय ग्रामीण प्राथमिक विद्यालयों के विशेष संदर्भ में। शिक्षा के भविष्य पर अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन की कार्यवाही, खंड 2, अंक 1, पृष्ठ 12–21।
6. उरा, दशो कर्मा (2015)। सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता, मूल्य शिक्षा और भूटान में सतत विकास के लिए विद्यालयी शिक्षा। दक्षिण एशिया में सतत विकास के लिए शैक्षिक प्रयासों के पुनर्निर्देशन से संबंधित शोध–संकलन। स्प्रिंगर प्रकाशन, पृष्ठ 71–88।
7. भूटान सरकार, शिक्षा एवं कौशल विकास मंत्रालय (2025)। शिक्षा नीति संबंधी दिशानिर्देश एवं निर्देश, 2025। थिम्फूः शिक्षा एवं कौशल विकास मंत्रालय, भूटान की शाही सरकार।
8. स्प्रिंगर नेचर (2017)। भारत और भूटान के बच्चों में स्व–संगठित अधिगम प्रणालियों के माध्यम से कंप्यूटर साक्षरता कौशल का अधिग्रहण। शैक्षिक संभावनाएँ शोध–पत्रिका। स्प्रिंगर नेचर प्रकाशन।

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-145-148

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 145-148
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

गिरीश सिंह कार्की

शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, सुमित्रानंदन पंत राजकीय महाविद्यालय गरूड़ (बागेश्वर), सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड

Corresponding Author :

गिरीश सिंह कार्की

शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, सुमित्रानंदन पंत राजकीय महाविद्यालय गरूड़ (बागेश्वर), सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड

भारत–भूटान संबंध : ऐतिहासिक, राजनीतिक, आर्थिक और रणनीतिक साझेदारी

सारांश : भारत और भूटान भूगोल, इतिहास, संस्कृति, आपसी विश्वास और रणनीतिक हितों के आधार पर एक विशिष्ट द्विपक्षीय संबंध साझा करते हैं। 1968 में राजनयिक संबंधों की स्थापना के बाद से, दोनों देशों ने राजनीतिक, सुरक्षा सहयोग से लेकर पनबिजली, व्यापार, बुनियादी ढांचे, शिक्षा और लोगों के बीच संबंधों तक एक व्यापक साझेदारी विकसित की है। 1949 की मैत्री और सहयोग की संधि ने द्विपक्षीय संबंधों के लिए एक प्रारंभिक संस्थागत नींव प्रदान की, जबकि 2007 में इसके संशोधन ने साझेदारी की बदलती प्रकृति को प्रतिबिंबित किया और आपसी सम्मान, संप्रभुता और सहयोग के सिद्धांतों की पुष्टि की। भारत के भूटान के प्रमुख व्यापार और विकास भागीदार के रूप में उभरने के साथ आर्थिक संबंध विशेष रूप से महत्वपूर्ण रहे हैं। जलविद्युत सहयोग पारंपरिक रूप से आर्थिक जुड़ाव का केंद्र बिंदु बना हुआ है, जो भूटान को भारत को नवीकरणीय बिजली की आपूर्ति करते हुए राजस्व का एक महत्वपूर्ण स्रोत प्रदान करता है। शुरूआती दौर में भारत सरकार ने 60 प्रतिशत अनुदान व 40 प्रतिशत ऋण के माडल पर निवेश किया। हाल के वर्षों में, डिजिटल कनेक्टिविटी, अंतरिक्ष सहयोग, नवीकरणीय ऊर्जा, पर्यटन, शिक्षा और सीमा पार कनेक्टिविटी सहित नए क्षेत्रों में संबंधों का विस्तार हुआ है। रणनीतिक रूप से, भूटान पूर्वी हिमालय में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है और भारत के व्यापक सुरक्षा वातावरण के लिए महत्वपूर्ण है। साथ ही, भूटान अपनी संप्रभुता, विकासात्मक प्राथमिकताओं और विशिष्ट राष्ट्रीय पहचान को बनाए रखना चाहता है। यह पेपर ऐतिहासिक, राजनीतिक, आर्थिक और रणनीतिक परिप्रेक्ष्य के माध्यम से भारत–भूटान संबंधों का विश्लेषण करता है और द्विपक्षीय साझेदारी में उभरते अवसरों और चुनौतियों की जांच करता है।

मुख्य शब्द : भारत, भूटान, द्विपक्षीय संबंध, पनबिजली, कूटनीति, दक्षिण एशिया, हिमालय, रणनीतिक साझेदारी, आर्थिक सहयोग।

परिचय : भारत और भूटान दक्षिण एशिया में दो पड़ोसी देशों के बीच घनिष्ठ सहयोग का एक महत्वपूर्ण उदाहरण हैं। भौगोलिक आकार, जनसंख्या और आर्थिक क्षमता में काफी अंतर के बावजूद, संबंध आपसी सम्मान, संप्रभुता, विश्वास और साझा हितों के सिद्धांतों के इर्द–गिर्द विकसित हुए हैं। दोनों देशों को जोड़ने वाले हिमालय के भूगोल ने सहयोग के लिए अवसर और रणनीतिक अनिवार्यता दोनों पैदा किए हैं। भारत और भूटान ने 1968 में औपचारिक राजनयिक संबंध स्थापित किए, हालांकि उनके आधुनिक संबंध बहुत पहले शुरू हो गए थे। 1949 में हस्ताक्षरित मित्रता और सहयोग की संधि ने प्रारंभिक संस्थागत ढांचा प्रदान किया, और द्विपक्षीय संबंधों के समकालीन चरित्र को दर्शाने के लिए संधि को फरवरी 2007 में संशोधित किया गया था। संशोधित संधि में मित्रता, सहयोग, आपसी सम्मान और एक–दूसरे के राष्ट्रीय हितों के प्रति संवेदनशीलता पर जोर दिया गया। यह संबंध बाद में एक बहुआयामी साझेदारी में विकसित हुआ है। राजनीतिक

परामर्श उच्चतम स्तरों पर नियमित रूप से होते हैं, जबकि आर्थिक सहयोग में व्यापार, विकास सहायता, पनबिजली, बुनियादी ढांचा और संपर्क शामिल हैं। हिमालयी क्षेत्र के भौगोलिक और रणनीतिक महत्व के कारण सुरक्षा सहयोग भी महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त दोनों देश व्यापक शैक्षिक, सांस्कृतिक और लोगों के बीच संपर्क बनाए रखते हैं। इस पेपर का उद्देश्य भारत–भूटान संबंधों की चार परस्पर जुड़े आयामों से जांच करना हैः ऐतिहासिक विकास, राजनीतिक सहयोग, आर्थिक साझेदारी और रणनीतिक संबंध। यह सहयोग के उभरते क्षेत्रों और उन चुनौतियों पर भी विचार करता है जो द्विपक्षीय संबंधों के भविष्य के प्रक्षेपवक्र को प्रभावित कर सकती हैं।

भारत–भूटान संबंधों की ऐतिहासिक नींव : भारत–भूटान संबंधों की जड़ें आधुनिक राजनयिक संस्थानों से परे फैली हुई हैं। भौगोलिक निकटता, बौद्ध धर्म, सांस्कृतिक आदान–प्रदान और हिमालयी समुदायों के बीच ऐतिहासिक बातचीत ने संबंधों में योगदान दिया है। भूटान में भारतीय सांस्कृतिक और धार्मिक परंपराओं, विशेष रूप से बौद्ध धर्म का लंबे समय से प्रभाव रहा है। इसलिए ऐतिहासिक संबंध राज्य–से–राज्य कूटनीति तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इसमें धार्मिक और सांस्कृतिक संबंध भी शामिल हैं। 1949 में भारत–भूटान मैत्री और सहयोग संधि पर हस्ताक्षर के साथ एक प्रमुख संस्थागत मील का पत्थर आया। इस संधि ने दोनों देशों के बीच मैत्रीपूर्ण संबंधों और सहयोग के लिए एक रूपरेखा प्रदान की। हालांकि, क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में बदलाव ने अंततः दोनों सरकारों को संधि को अद्यतन करने के लिए प्रोत्साहित किया।

2007 की संशोधित मित्रता संधि एक महत्वपूर्ण मोड़ बन गई। इसने द्विपक्षीय संबंधों के कानूनी ढांचे को संप्रभुता और आपसी सहयोग के समकालीन सिद्धांतों के अनुरूप और अधिक निकटता से लाया। इस संधि ने द्विपक्षीय संबंधों की पारंपरिक पदानुक्रमित अवधारणा के बजाय परामर्श और आपसी हितों पर आधारित संबंधों की नींव रखी। भारतीय विदेश मंत्रालय 2007 की संधि को समकालीन भारत–भूटान संबंधों के बुनियादी ढांचे के रूप में पहचानता है। 1958 में प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू की भूटान यात्रा आधुनिक संबंधों के विकास में एक और महत्वपूर्ण क्षण था। भूटानी नेतृत्व के साथ उनकी बातचीत ने उत्तर–औपनिवेशिक काल में घनिष्ठ सहयोग की नींव स्थापित करने में मदद की। इसके बाद, 1968 में औपचारिक रूप से राजनयिक संबंध स्थापित किए गए। इस प्रकार, भारत–भूटान संबंधों का ऐतिहासिक विकास पारंपरिक सांस्कृतिक और भौगोलिक संबंधों से संस्थागत राजनयिक और विकासात्मक साझेदारी में क्रमिक परिवर्तन को दर्शाता है।

राजनीतिक संबंध और राजनयिक सहयोग : राजनीतिक संबंध भारत–भूटान सहयोग के सबसे मजबूत आयामों में से एक हैं। राजनीतिक नेताओं, मंत्रियों और वरिष्ठ अधिकारियों की नियमित यात्राओं ने दोनों सरकारों के बीच उच्च स्तर के संचार को बनाए रखने में मदद की है। भारत लगातार भूटान को एक महत्वपूर्ण पड़ोसी भागीदार मानता रहा है। भूटान ने अपनी ओर से अपनी संप्रभुता और स्वतंत्र राष्ट्रीय प्राथमिकताओं पर जोर देते हुए भारत के साथ घनिष्ठ संबंध बनाए रखे हैं। 2007 की संशोधित संधि आपसी सम्मान और सहयोग पर अधिक जोर देकर इस बदलते संबंधों को दर्शाती है। उच्च–स्तरीय राजनीतिक आदान–प्रदान अक्सर होते रहे हैं। 2014 में पदभार संभालने के बाद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की पहली विदेश यात्रा भूटान की थी, जो द्विपक्षीय संबंधों से जुड़े महत्व को दर्शाती है। इसके बाद उन्होंने 2019 में भूटान का दौरा किया और मार्च 2024 में एक महत्वपूर्ण राजकीय यात्रा की। 2024 की यात्रा के दौरान, भूटान के राजा ने उन्हें भूटान के सर्वोच्च नागरिक सम्मान, ऑर्डर ऑफ द ड्रुक ग्यालपो से सम्मानित किया। राजनीतिक संबंध कार्यकारी स्तर की कूटनीति तक ही सीमित नहीं है। सहयोग का विस्तार संसदीय आदान–प्रदान, संस्थागत बातचीत, शिक्षा, सांस्कृतिक कार्यक्रमों और क्षमता निर्माण पहलों तक है। भूटान के साथ भारत की विकास साझेदारी ने भी संबंधों की राजनीतिक गहराई में योगदान दिया है।

आर्थिक संबंध : आर्थिक सहयोग भारत–भूटान संबंधों के सबसे महत्वपूर्ण स्तंभों में से एक है। भारत ऐतिहासिक रूप से भूटान का सबसे बड़ा व्यापारिक और विकास भागीदार रहा है। द्विपक्षीय व्यापार में भारत से पेट्रोलियम उत्पाद, वाहन, खाद्य उत्पाद, मशीनरी और अन्य निर्मित वस्तुएं शामिल हैं, जबकि भूटान फेरो–सिलिकॉन, सीमेंट, कृषि वस्तुएं और बिजली जैसे उत्पादों का निर्यात करता है। भारत के विदेश मंत्रालय के अनुसार, भूटान के साथ भारत का व्यापारिक व्यापार, बिजली को छोड़कर, 2014–15 में लगभग 484 मिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़कर 2022–23 में लगभग 1.606 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गया, जो द्विपक्षीय आर्थिक बातचीत के विस्तार को दर्शाता है। यही स्रोत इंगित करता है कि भूटान के समग्र व्यापार का एक बड़ा हिस्सा भारत का था। वर्ष 2025–26 में दोनों देशों के बीच यह आर्थिक और व्यापारिक संबंध बेहद मजबूद रहा है जहां दोनों देशों के बीच कुल व्यापार लगभग 1.9 अरब अमेरिकी डालर से अधिक रहा है भारत भूटान से मुख्य रूप से बिजली खरीदता है वर्ष 2025 में ही भूटान ने भारत को लगभग 2,471 करोड़ रूपये की बिजली निर्यात की साथ ही बिजली के साथ फेरो–सिलिकॉन, डोलामाइट, जिप्सम और सीमेंट का व्यापार भी बड़े पैमाने पर होता है। वही भूटान भी भारत से पेट्रोलियम उत्पाद में डीजल, पेट्रोल व भारी मात्रा में लोहा और स्टील वाहन, चावल और इलेक्ट्रिक सामान खरीदता है।

हाल ही में भारत के विदेश मंत्री श्री एस0 जसशंकर जी द्वारा भूटान को इलैक्ट्रिक वाहनों की डील की गयी है इसी के साथ भारत ने भूटान की 13वी पंचवर्षीय योजना (2024–29) के तहत आर्थिक विकास के लिए लगभग 10,000 हजार करोड़ की भारी सहायता राशि देने की प्रतिबद्वता दोहराई है। वही रेल लिंक कनेक्टिविटी रूट के तहत कोकराझार से गेलेफू(असम–भूटान सीमा) व बनारहाट से समत्से (पश्चिम बंगाल से भूटान सीमा) के लिए 4,033 करोड़ रूपये का भी समझौता हुआ है।

पनबिजली सहयोग : जलविद्युत को पारंपरिक रूप से भारत–भूटान आर्थिक सहयोग का केंद्रबिंदु माना जाता है। भूटान के पास अपने पहाड़ी इलाकों और नदी प्रणालियों के कारण पर्याप्त पनबिजली क्षमता है। भारत ने कई प्रमुख पनबिजली परियोजनाओं के विकास और वित्तपोषण में भाग लिया है। विदेश मंत्रालय के 2024 के द्विपक्षीय ब्रीफ के अनुसार 2,136

मेगावाट की संयुक्त क्षमता वाली चार प्रमुख पनबिजली परियोजनाएं चालू थीं। इनमें चुखा, कुरीछू, ताला और मांगदेछू जैसी परियोजनाएं शामिल हैं। भूटान में उत्पन्न बिजली का भारत को निर्यात किया जाता है, जो भूटान को राजस्व प्रदान करता है और भारत की ऊर्जा प्रणाली में नवीकरणीय बिजली का योगदान देता है।

- **चुखा जलविघुत परियोजना – 336 मेगावाट**
- **कुरिछ जलविघुत परियोजना– 60 मेगावाट**
- **ताला जलविघुत परियोजना– 1020 मेगावाट**
- **मांगदेछु जलविघुत परियोजना– 720 मेगावाट**

विकास साझेदारी : भूटान के साथ भारत के आर्थिक संबंध व्यापार और बिजली से परे हैं। बुनियादी ढांचे, शिक्षा, स्वास्थ्य, मानव संसाधन विकास और सामुदायिक स्तर की परियोजनाओं के लिए विकास सहायता दी गई है। भारत की विकास साझेदारी में परियोजना–आधारित सहायता और लघु विकास परियोजनाएं/उच्च प्रभाव वाली सामुदायिक विकास परियोजनाएं शामिल हैं। ड्म। के 2024 के संक्षिप्त विवरण के अनुसार, भूटान में 83 से अधिक बड़ी और मध्यवर्ती परियोजनाएं और सैकड़ों छोटी विकास परियोजनाएं कार्यान्वयन के विभिन्न चरणों में थीं। उइस तरह का सहयोग विकास साझेदारी के एक व्यापक मॉडल को दर्शाता है जिसमें बुनियादी ढांचे के विकास को मानव–संसाधन विकास और स्थानीय स्तर की पहलों के साथ जोड़ा जाता है। शिक्षा और छात्रवृत्ति ने दोनों समाजों के बीच लोगों के बीच संबंधों को भी मजबूत किया है।

इसके अलावा, उभरते क्षेत्रों में सहयोग का विस्तार हो रहा है। हाल के द्विपक्षीय जुड़ाव में अक्षय ऊर्जा, डिजिटल प्रौद्योगिकी, अंतरिक्ष सहयोग और हरित पहल शामिल हैं। भारत की 2024 की वार्षिक रिपोर्ट में सौर ऊर्जा और हरित हाइड्रोजन सहित क्षेत्रों में सहयोग का उल्लेख किया गया है, जो दर्शाता है कि ऊर्जा संबंध धीरे–धीरे पारंपरिक पनबिजली से परे व्यापक हो रहे हैं।

रणनीतिक और सुरक्षा आयाम : भूटान की भौगोलिक स्थिति भारत के साथ उसके संबंधों को काफी रणनीतिक महत्व देती है। भूटान पूर्वी हिमालय में स्थित है और भारत और चीन के साथ सीमा साझा करता है। इसलिए इसकी भौगोलिक स्थिति का भारत के उत्तरी और पूर्वोत्तर सुरक्षा वातावरण पर प्रभाव पड़ता है। भारत और भूटान सुरक्षा मामलों और सीमा प्रबंधन पर निकटता से सहयोग करते हैं। भारतीय विदेश मंत्रालय स्पष्ट रूप से द्विपक्षीय संबंधों के महत्वपूर्ण तत्वों के रूप में सुरक्षा और सीमा–प्रबंधन के मुद्दों पर रणनीतिक हितों और सहयोग की एक सामान्य धारणा की पहचान करता है। भूटान का रणनीतिक महत्व सिलीगुड़ी गलियारे से भी जुड़ा हुआ है, जो देश के पूर्वोत्तर राज्यों को शेष भारत से जोड़ने वाले भारतीय क्षेत्र का एक संकीर्ण हिस्सा है। इस क्षेत्र से भूटान की भौगोलिक निकटता भारत की व्यापक सुरक्षा गणनाओं में इसके महत्व में योगदान देती है।

भविष्य की संभावनाएं : भारत–भूटान संबंधों के भविष्य की विशेषता अधिक विविधता और तकनीकी सहयोग होने की संभावना है। पनबिजली महत्वपूर्ण बनी रहेगी, लेकिन यह साझेदारी अक्षय ऊर्जा, डिजिटल कनेक्टिविटी, बुनियादी ढांचे, शिक्षा, पर्यटन और नए आर्थिक क्षेत्रों की ओर तेजी से बढ़ रही है। सौर ऊर्जा, हरित हाइड्रोजन और अन्य नवीकरणीय प्रौद्योगिकियों के माध्यम से ऊर्जा सहयोग का विस्तार किया जा सकता है। भारत का बड़ा बाजार और तकनीकी क्षमताएं भूटान के आर्थिक विविधीकरण के लिए अवसर प्रदान कर सकती हैं। कनेक्टिविटी एक अन्य क्षेत्र है जिसमें काफी संभावनाएं हैं। बेहतर सीमा अवसंरचना, व्यापार मार्ग और बहुआयामी परिवहन से भूटान की भारतीय और अंतर्राष्ट्रीय बाजारों तक पहुंच बढ़ सकती है। शिक्षा और मानव–संसाधन विकास भी महत्वपूर्ण बने रहने की संभावना है। छात्रवृत्ति, व्यावसायिक प्रशिक्षण और संस्थागत आदान–प्रदान द्विपक्षीय संबंधों की सामाजिक नींव को मजबूत कर सकते हैं।

रणनीतिक आयाम के लिए घनिष्ठ संचार और आपसी संवेदनशीलता की आवश्यकता बनी रहेगी। साझेदारी की स्थिरता भूटान की विकासात्मक और संप्रभु प्राथमिकताओं को समायोजित करने की भारत की क्षमता पर निर्भर करेगी, जबकि भूटान भारत के साथ रचनात्मक सहयोग बनाए रखना जारी रखेगा।

निष्कर्ष : भारत–भूटान संबंध ऐतिहासिक संबंधों, राजनीतिक विश्वास, आर्थिक परस्पर निर्भरता और रणनीतिक सहयोग के माध्यम से दशकों से निर्मित एक बहुआयामी साझेदारी का गठन करते हैं। 1949 की मित्रता और सहयोग की संधि से लेकर 1968 में राजनयिक संबंधों की स्थापना और 2007 की संशोधित संधि तक, बदलते क्षेत्रीय और वैश्विक परिस्थितियों के जवाब में द्विपक्षीय संबंध विकसित हुए हैं। राजनीतिक सहयोग मजबूत बना हुआ है, जो नियमित रूप से उच्च–स्तरीय आदान–प्रदान और संस्थागत संवाद द्वारा समर्थित है। आर्थिक रूप से, भारत भूटान का प्रमुख व्यापार और विकास भागीदार बन गया है, जबकि पनबिजली सहयोग ने आपसी निर्भरता का एक महत्वपूर्ण पैटर्न बनाया है। रणनीतिक सहयोग पूर्वी हिमालय में भूटान की भौगोलिक स्थिति और क्षेत्रीय स्थिरता और सुरक्षा में दोनों देशों के साझा हितों से आकार लेता है। साथ ही, भविष्य के संबंध विशेष रूप से सहयोग के पारंपरिक क्षेत्रों पर निर्भर नहीं हो सकते। अंततः भारत–भूटान संबंधों की ताकत ऐतिहासिक सद्भावना, राजनीतिक परामर्श, आर्थिक पूरकता और रणनीतिक सहयोग के संयोजन में निहित है। दोनों देशों के लिए चुनौती नई आर्थिक, तकनीकी, पर्यावरणीय और भू–राजनीतिक वास्तविकताओं के लिए साझेदारी को अनुकूलित करते हुए इन नींवों को संरक्षित करने की है।

संदर्भ सूची :

1. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार। (2018–19)। भारत के पड़ोसी देशः वार्षिक रिपोर्ट, हिंदी संस्करण। नई दिल्लीः भारत सरकार।
2. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार। (2020)। भारत के पड़ोसीः वार्षिक रिपोर्ट, हिंदी संस्करण। नई दिल्लीः भारत सरकार।
3. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार। भारत और पड़ोसी देशः भूटान। नई दिल्लीः भारत सरकार।
4. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार। बी 4 बी – भूटान के लिए भारत; भारत के लिए भूटान। नई दिल्लीः भारत सरकार।
5. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार। भारत की विदेश नीति। नई दिल्लीः भारत सरकार।
6. सज्जनहार, अ. (2021)। अफगानिस्तान, भूटान तथा नेपाल की राजनीतिक संरचनाएँ और प्रक्रियाएँ। नई दिल्लीः इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय।
7. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय। भूटान एवं दक्षिण एशिया संबंधी अध्ययन सामग्री। नई दिल्लीः IGNOU] eGyanKoshA
8. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय। दक्षिण एशियाः अर्थव्यवस्था, समाज और राजनीति। नई दिल्लीः IGNOU-
9. Government of Bhutan, Ministry of Foreign Affairs and External Trade. (2024). *Joint Vision Statement on Bhutan–India Energy Partnership*. Royal Government of Bhutan.
10. Ministry of External Affairs, Government of India. (2025). *India–Bhutan relations*. Government of India.
11. Ministry of External Affairs, Government of India. (2025). *Trade and connectivity: India–Bhutan relations*. Government of India.
12. Ministry of External Affairs, Government of India. (2007). *India–Bhutan Friendship Treaty*. Government of India.
13. Royal Government of Bhutan, Ministry of Foreign Affairs and External Trade. (2021). *Foreign Policy Document*. Royal Government of Bhutan.
14. Royal Bhutanese Embassy, New Delhi. (n.d.). *Bhutan–India hydropower relations*. Royal Government of Bhutan.
15. Royal Bhutanese Embassy, New Delhi. (n.d.). *Bhutan–India trade relations*. Royal Government of Bhutan.
16. Royal Government of Bhutan. (2024). *Joint Statement on the official visit of His Majesty the King of Bhutan to India*. Ministry of Foreign Affairs and External Trade.

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-149-152

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 149-152
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ मल्लिका मंजरी

सहायक प्राध्यापक, विश्वविद्यालय इतिहास विभाग, तिलकामाँझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर, बिहार

Corresponding Author :

डॉ मल्लिका मंजरी

सहायक प्राध्यापक, विश्वविद्यालय इतिहास विभाग, तिलकामाँझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर, बिहार

दक्षिण एशियाई क्षेत्र में भूटान की भूमिका : एक अवलोकन

दक्षिण एशियाई क्षेत्र के उच्चस्थ क्षेत्र में हिमालय की उपत्यका में स्थित भूटान एक छोटा परन्तु अत्यंत शांत देश है। हमारे अंग क्षेत्र की मान्यतानुसार जैसा कि नाम से स्पष्ट है कि यह देश भूटान वास्तव में भूमि का उत्थान है। अर्थात उच्च भूक्षेत्र में बसा देश है और अपने नाम को सार्थक करता है। छोटा सा शांतिपूर्ण ढंग से जीने वाले प्रकृति प्रेमी शांति और करूणामय बुद्ध उपासक लोगों का देश। भारत का स्नेहिल पड़ोसी जिसने कभी भारत और भारतीयों के विश्वास को ठेस नहीं पहुंचाई। दक्षिण एशियाई क्षेत्र में जहां हर छोटा बड़ा राष्ट्र तनाव में घिरा रहा है, वहां शांति का पूजारी यह देश पूरे क्षेत्र में सदा शांति का पहरूवा रहा है। प्राचीन काल से ही भूटान की पहचान प्रकृति प्रेमी क्षेत्र के रूप में रही है। ऐसा क्षेत्र जो प्रकृति की गोद में बसा ही नहीं बल्कि प्रकृति और मानव के मध्य प्रेम और सहजीवन का पर्याय भी रहा है। प्राचीन काल से लोग यहां दूर दूर से सांसारिक जीवन की आपाधापी और भागमभाग से दूर प्रकृति की गोद में शांति और सुकून के पल बिताने आते रहे हैं। पर्यावरण को बिना क्षति पहुंचाये आधुनिकीकरण की अंधी दौड़ से दूर रहकर भी चैन की जिंदगी जी जा सकती है यह किसी को देखना हो, इसका स्वानुभव करना हो तो वह भूटान आये। यहां के लोगों के जीवन को देखे। अर्थात भूटान मात्र एक महत्वपूर्ण भौगोलिक अवस्थिति वाला देश नहीं बल्कि शांति और प्रकृति प्रेम के साथ पर्यावरण संरक्षण का संदेशवाहक भी है। इस शोध पत्र का उद्देश्य इन सब बातों के परिप्रेक्ष्य में दक्षिण एशियाई क्षेत्र में भूटान द्वारा निभाई गई उल्लेखनीय भूमिका को रेखांकित करना है।

भूटान की भौगोलिक स्थिति– भूटान भारत के उत्तर में पूर्वी हिमालय में स्थित एक भू बद्ध देश है। भूटान के उत्तर में चीन के तिब्बती स्वायत्त क्षेत्र और पश्चिम, दक्षिण और पूर्व में भारत से घिरा हुआ है। भूटान का लगभग पूरा भाग पर्वतीय है और इसका भूभाग अत्यधिक उबड़–खाबड़ है, जिसकी उंचाई दक्षिण में समुद्र तल से 100 मीटर से लेकर उत्तर में 7500 मीटर से अधिक है।

भूटान का इतिहास– सर्व प्रथम भूटान के इतिहास की बात करें तो पुरातात्विक प्रमाणों से ज्ञात होता है कि कोई 2000 ई.पू. यहां मानव बस्तियाँ बसनी शुरू हुई। अतिशय ठण्ड के कारण यहां मैदानी भागों जैसी बसावट नहीं हो पाई और न सभ्यता का उस तरह विकास हो पाया। बहरहाल कुछ पशुपालक समुदाय जो कभी कभी चरावन के क्रम में मैदानी इलाकों के लोगों के संपर्क में आते थे। धीरे धीरे मैदानी इलाकों के लोगों ने इन पर्वतीय पशुपालक लोगों से संबंध बढाये। भूटान में भी सभ्यता ने अंगडाई ली। सातवीं सदी ई०पूर्व तक यहां कूचबिहार के राजा का शासन हुआ। यह अधिकार जारी रहा। शुरू से तिब्बत से भूटान वालों के गहरे संबंध थे। एक तरह से कहें तो रोटी–बेटी का। इसलिए जब तिब्बत में बौद्ध धर्म का प्रवेश हुआ और उसका प्रभाव बढने लगा तो भूटान भी उससे अछूता न रह सका। सातवीं से नौवीं शताब्दी में तिब्बत में अशांति फैली। बौद्ध भिक्षुओं को तिब्बत से जान बचाकर भागना पड़ा और उन्हें आश्रय मिला भूटान की शांति में।

बड़ी संख्या में बौद्ध भिक्षु भूटान आकर रहने लगे। सन 747 ई में जाने माने बौद्ध भिक्षु पद्मसंभव आये। उन्होंने यहां बौद्ध मठ की स्थापना की। उन्होंने ही भूटान में कायदे से बौद्ध धर्म का प्रचार किया।

12वीं शती में यहां बौदध धर्म के ड्रुक्पा कग्युपा संप्रदाय की स्थापना हुई तब से आज तक यही यहां का धर्म है। आज भी भूटानी लोग बौद्ध धर्म के इसी रूप को मानते हैं। नौंवी सदी से यहां राजनीतिक अनिश्चितता बढी और कयी छोटी छोटी स्वतंत्र रियासतें बनी। फिर यहां तिब्बत का राजनीतिक प्रभाव बढने लगा। उसके बाद मंगोलियाई का भी दखल बना। 1616 ई में पश्चिम तिब्बत से लामा शाब्द्रुग्वा नारगवांग नामग्याल रिंग्पोचे यहां आये। उन्होंने ने तीन तिब्बती आक्रमणों को विफल किया। प्रतिद्वंदी धार्मिक स्कूलों को अपने अधीन किया। 'त्सा यिंग' नाम से विधि संहिता बनायी और स्वयं को धार्मिक और नागरिक प्रशासकों की एक प्रणाली पर एक शासक के रूप में स्थापित कर दिया।

1865 में भूटान की ब्रिटेन से सिनचुलु की संधि हुई और 1907 में भूटान में उग्येन वांगचुक के नेतृत्व में वांगचुक राजवंश की स्थापना हुई। और 1910 में ब्रिटिशों का भूटान से वार्ता हुआ जिसके तहत अंग्रेजों ने भूटान को आंतरिक मामलों में स्वतंत्र किया और खुद उसकी विदेश नीति का जिम्मा लिया। 1947 के बाद यही भूमिका भारत को मिली। दो साल बाद भारत ने 1949 में अंग्रेजों द्वारा भूटान की कब्जायी जमीन भूटान को वापस कर दी और बदले में भारत को भूटान की विदेश और रक्षा नीति में महत्वपूर्ण भूमिका दी गई। 2005 में देश में राजतंत्र के अधीन लोकतंत्र स्थापित हुआ। ब्रिटिश अधिपत्य से मुक्त होने के बाद भूटान ने भारत को अपनी विदेश नीति में भले ही महत्वपूर्ण भूमिका दी पर दक्षिण एशियाई क्षेत्र में एक जिम्मेदार देश की भूमिका निभाने से नहीं चूका। निम्न मुद्दों पर उसने सदैव अपना स्पष्ट रूख रखा है :–

आतंकवाद– भूटान ने सदैव आतंकवाद को दक्षिण एशियाई क्षेत्र ही नहीं बल्कि पूरे विश्व के लिए खतरा बताया है। भूटान खुद आतंकवाद का भुक्तभोगी भी रहा है। 1990 के दशक में पूर्वोत्तर भारत के आतंकवादी संगठन उल्फा(ULFA - United liberation front of Asam), एन.डी.एफ.बी.(NDFB- National Democratic Front of Bodoland) और KLO आदि ने भूटान के दक्षिणी और घने जंगलों में अपने गुप्त शिविर बना लिए थे। लंबे समय तक ये संगठन भूटान को अपना सुरक्षित आवास बनाये रहे और वहां मादक पदार्थ और हथियारों की तस्करी जैसी अवैध गतिविधियाँ करते रहे। वर्ष 2003 में राजा जिग्मे सिंग्ये वांगचुक ने शांति वार्ता के विफल होने के बाद रॉयल भूटान आर्मी द्वारा ऑपरेशन ऑल क्लियर चलाकर सब उग्रवादी शिविरों को नष्ट किया गया और आतंकवादियों को भूटान से बाहर खदेड़ दिया गया। भारत को भी भूटान ने आश्वस्त किया है कि वह अपनी जमीन से कोई भारत विरोधी गतिविधि नहीं संचालित होने देगा। अतः भूटान ने उसने आतंकवादी घटनाओं की सदैव कड़ी आलोचना की है। सार्क के मंच से भी भूटान ने आतंकवाद की निंदा की है और क्षेत्रीय सुरक्षा के लिए मिलकर काम करने पर जोर दिया है। आज भूटान की सीमा पर कड़ी सुरक्षा व्यवस्था है और देश में शांति है। 2016 में उड़ी हमले के बाद हमले में पाकिस्तान का हाथ बताकर जब भारत ने इस्लामाबाद सम्मेलन का बहिष्कार किया तो कुछ समय बाद भूटान भी उससे हट गया। भूटान का वक्तव्य था कि, ''क्षेत्र में आतंकवाद के हालिया बढते मामलों ने शिखर सम्मेलन के सफल आयोजन के लिए अनुकूल माहौल को गंभीरता से प्रभावित किया है। भूटान आतंकवाद के कारण क्षेत्रीय शांति के बिगड़ने को लेकर कुछ देशों की चिंताओं से सहमत है।'' यानि भूटान साफ तौर पर आतंकवाद का विरोधी है।

सार्क में भूमिका– भूटान सार्क का संस्थापक सदस्य है। भूटान एक भू आवृत्त और भू बद्ध यानि land locked देश है। सार्क के जरिये इसे क्षेत्रीय और वैश्विक दोनों मंचों पर अपनी आवाज उठाने का मौका मिला। सार्क के काम में भारत पाकिस्तान के तनाव से जब भी बाधा आयी है भूटान ने तटस्थ और शांतिप्रिय देश के रूप में सार्क संगठन को जीवित रखने की बात की है। भूटान सार्क सूप (SAARC soup) यानि सार्क विकास कोष (SAARC Development fund) का सदस्य है। इसका मुख्यालय भूटान की राजधानी थिंपू में है। यह कोष पूरे सार्क क्षेत्र में विकास परियोजनाओं को वित्तीय सहायती देता है।सार्क का 16वां शिखर सम्मेलन भूटान की राजधानी थिम्पू में 28–29 अप्रैल 2010 को आयोजित किया गया।

बिबिन(BBIN) की ओर झुकाव– पिछले कुछ सालों में सार्क की निष्क्रियता के कारण भूटान ने बंग्लादेश, भूटान, भारत, और नेपाल के सम्मिलित उप क्षेत्रीय संगठन की ओर झुकाव दिखाया है ताकि व्यापार और आपसी संपर्क को बढाया जा सके।

पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन पर नेतृत्व– भूटान ने हमेशा जलवायु परिवर्तन और संरक्षण के मुद्दे पर पूरी दुनिया को नयी राह दिखाई है। भूटान दुनिया का एकमात्र कार्बन नेगेटिव देश है। भूटान प्रशासन ने जलवायु और पर्यावरण के मुद्दे पर अपनी राष्ट्रीय नीति और कानूनी ढांचे को आकार देने में तेजी से प्रगति की है। भूटान का संविधान दुनिया के किसी भी देश का सबसे महत्वाकांक्षी पर्यावरण संविधान है। इसके 2008 में बने अनुच्छेद 5 में पर्यावरण से जुड़े सख्त प्रावधान हैं। इसके अनुसार –

क. सभी भूटानी नागरिक प्राकृतिक संसाधनों के ट्रस्टी हैं।

ख. सरकार न्यूनतम 60% भूमि को सदा वन बनाये रखेगी।

ग. जैव विविधता राज्य और नागरिकों का मूल कर्तव्य है।

घ. सभी विकास परियोजनाओं के लिए EIA अनिवार्य है।

यह कोई आकांक्षा नहीं बल्कि कानूनी बाध्यता है। कोई भी सरकार हो भूटान में वह इससे बंधी है। इसका सख्ती से पालन होता है। वर्तमान में भूटान में 70% भूभाग पर वन है जो देश के कार्बन डाई आक्साइड करके जलवायु परिवर्तन रोकने में मदद करता है। इसमें 51% से अधिक भाग संरक्षित है, जो किसी भी एशियाई देश में सर्वाधिक है। भूटान सकल राष्ट्रीय

सुख (GNH- Gross National Happyness) को अपनी तरक्की का पैमाना मानता है, जिसमें पर्यावरण की रक्षा करना इसका एक मुख्य स्तंभ है। पर्यावरण संरक्षण हेतु भूटान ने स्वच्छ उर्जा पर जोर दिया है। यहां तेल प्राकृतिक गैस या पेट्रो उत्पाद आदि जीवाश्म उर्जा संसाधन का कोई बड़ा भंडार नहीं है मात्र देश के पूर्वी भाग में सीमित कोयला भंडार के, जो निम्न श्रेणी के होने के कारण औद्योगिक उद्देश्य हेतु अनुपयुक्त है। अपनी 99% बिजली जलविद्युत जैसी नवीकरणीय और स्वच्छ उर्जा स्रोतों से पैदा करता है।

वन्यजीव को पर्यावरण संरक्षण हेतु आवश्यक मानते हुए उनकी सुरक्षार्थ कड़े कानूनी प्रावधान किये गये हैं। वन्यजीव को मारना या नुकसान पहुंचाना सख्त गैरकानूनी घोषित किया गया है। यहां लुप्तप्राय रॉयल बंगाल टाइगर, लाल पांडा, मायावी हिम तेंदुए, सुंदर काले सारस, हाथी और 770 प्रजातियों के पक्षियों सहित हजारों देशी वन्यजीव देश के 50 लाख एकड़ में फैले संरक्षित क्षेत्रों में स्वतंत्र रूप से विचरण करते हैं, और 5000 से अधिक प्रजातियों के पौधे यहां सांस लेते हुए बाकी दुनिया को शुद्ध प्राणवायु उपलब्ध कराते हैं। इस तरह भूटान जैव विविधता का अछूता स्वर्ग है। यह संसार के 10 वैश्विक जैव विविधता वाले हॉट स्पॉट में से एक है। इसका क्षेत्रफल लगभग 47000 वर्ग किलोमीटर है।

भूटान ने थिंपू में सार्क वानिकी केन्द्र (SAARC Forestry centre)– की मेजबानी भी की थी। बाद में इसे सार्क पर्यावरण और आपदा प्रबंधन केंद्र में मिला दिया गया। सार्क के 16 वें सम्मेलन मे भूटान ने मुख्य विषय के रूप में एक हरे भरे और 'खुशहाल दक्षिण एशिया की ओर (Towards a Green and Happy South Asia)' रखा। मुख्य एजेंडा भी पर्यावरण से संबद्ध था– 'जलवायु परिवर्तन'(Climate change) और 'पर्यावरण संरक्षण' था। इसके तहत अगले 5 वर्षों में 10 मिलियन (1 करोड़) पेड़ लगाने का संकल्प लिया गया। अर्थात विश्व राजनीति से प्रायः तटस्थ होकर शांतिपूर्ण एकांत को जीने वाले इस छोटे से देश के नागरिक अपने एक मूलभूत जन्मसिद्ध अधिकार का आनंद ले सकते हैं। वह है– स्वस्थ वातावरण में जीवन व्यतीत करना। और देश के प्रमुख उद्योगों में से एक–इकोटूरिज्म फल–फूल रहा और लगातार विकसित हो रहा है। इससे शेष दुनिया को भी फायदा होता होता है। भूटान एक ऐसे क्षेत्र में स्थित है जो दुनिया के 10 सबसे अधिक जैव विविधता वाले क्षेत्रों में से एक है। भूटान का वन क्षेत्र जलवायु परिवर्तन, ग्रीन हाउस प्रभाव रोकने में अहम भूमिका निभाता है। भूटान का स्थानीय पर्यावरण संरक्षण ढांचा अपने दायरे में सुदृढ है और भूटानी लोगों की समृद्ध परंपराओं में गहनता से निहित है। इसका श्रेय भूटान के राजा के दूरदर्शी नेतृत्व को दिया जाता है। यहां प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कठोर कानूनों के साथ–साथ पारंपरिक सांस्कृतिक मान्यताओं और सामुदायिक दायित्व के द्वारा नियंत्रित होता है। लेकिन राजनीतिक इच्छाशक्ति और संरक्षण संबंधी उपलब्धियों के बावजूद भूटान के प्राकृतिक संसाधन अब पहले से कहीं अधिक खतरे में हैं, जो कि पिछले 500 वर्षों में भी नहीं हुआ। तीव्र आधुनिकीकरण, लोकतंत्र की स्थापना और जन सांख्यिकीय में बदलाव ने भूटान देश को इस संक्रमणकालीन अवस्था में पहुंचाने में योगदान दिया है। तीव्र बढती आबादी की जरूरतों को पूरा करने के लिए नये उद्योगों के विस्तार के कारण प्राकृतिक संसाधन का तेजी से दोहन हो रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में जमीन जोगने या संरक्षण करने वाले कम होते जा रहे, क्योंकि गाँव से बड़े पैमाने पर लोग आधुनिक सुख–सुविधा की तलाश में शहरों और बड़े कस्बों की ओर पलायन कर रहे हैं। उस पर वन्यजीवों का अवैध शिकार बढ रहा है। इससे बचने के लिए संतुलन की नीति ही उपाय है। हर शहर और गांव में रोजगार के अवसरों और परंपराओं एवं सदियों पुरानी धार्मिक मान्यताओं और सुविधाओं की चाहत के बीच भी संतुलन बनाकर रखना ही एकमात्र उपाय है।

भूटान फॉर लाईफ– डब्लू डब्लू एफ भूटान सरकार 1970 के दशक से भूटान स्थित गैर लाभकारी संगठनों और स्थानीय समुदायों को मानव वन्यजीव संघर्षों को कम करने के तरीके सिखाते हैं। इसके प्रतिनिधि डेचेन दोरजी हैं। अगस्त 2018 में, डब्ल्यू डब्ल्यू एफ, भूटान सरकार, दानदाताओं और दुनिया भर के साझेदारों ने भूटान फॉर लायीफ की स्थापना की। कुल 43 मिलियन डॉलर का एक कोष बनाया गया जो एशिया मे अपनी तरह का पहला कोष है। इसका उद्देश्य भूटान के संरक्षित क्षेत्रों के नेटवर्क को स्थायी रूप से संरक्षित करना है। इस निधि को भूटान सरकार द्वारा दिये जाने जाने वाले 75 मिलियन डॉलर के साथ जोड़ा जायेगा। इसके बाद भूटान अपने सभी संरक्षित क्षेत्रों के लिए पूर्णतः स्वयं वित्त पोषण करने में सक्षम होगा। संरक्षित क्षेत्रों में पर्यावरण अनुकूल पर्यटन और जैविक खेती जैसे सतत विकास की अनुमति दी जायेगी जिससे भूटान संतुलन के साथ पर्यावरण संरक्षण की नीति का उदाहरण बनकर दुनिया के समक्ष आयेगा। दोरजी ने उम्मीद जताई है कि, इस कार्यक्रम से हमारे दूरदर्शी राजाओं द्वारा हमें दी गई यह पवित्र पर्यावरण धरोहर आने वाले पीढियों के लिए संरक्षित रहेगी।

इस प्रकार भूटान ने दुनिया को यह साबित कर दिया है कि पर्यावरण को नुकसान पहुंचाये बिना आर्थिक विकास संभव है। भूटान उन देशों में से एक है जिनके पास प्रति व्यक्ति नवीकरणीय प्राकृतिक संसाधनों का सबसे बड़ा हिस्सा है। अपनी विकास संबंधी जरूरतों को पूरा करने के लिए देश स्वैच्छिक कार्बन बाजारों के माध्यम से उत्सर्जन क्षतिपूर्ति के मुद्रीकरण के अवसरों का पता लगाकर और निजी हरित निवेशों के लिए सहायक नीतियां बनाकर अतिरिक्त संसाधन जुटा सकता है। एशिया और बाकी दुनिया के लिए एक आदर्श बन सकता हैं।

इन बातों के आलोक में भूटान दक्षिण एशियाई क्षेत्र का सबसे छोटा देश होने के बावजूद क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। चाहे सार्क का मुद्दा हो या पर्यावरण संरक्षण का या फिर आतंकवाद और क्षेत्रीय सुरक्षा और सहयोग का भूटान ने हमेशा इन सब पर सकारात्मक रूख दिखाया है और प्रभावशाली भूमिका निभाई है। एक अच्छे संगठन सदस्य और एक अच्छे पड़ोसी दोनों रूप में उसने हमेशा प्रभावशाली भूमिका निभाई है।

संदर्भ सूची :

अ. आधार ग्रंथ :

1. जोनाथन गुमान, works that work (अज्ञात)
2. जेम्स मार्गन, (अज्ञात)
3. भूटान की राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट 2004 : सकल राष्ट्रीय सुख और मानव विकास–साझा आधार की खोज(2000)
4. त्शेरिंग एस, तमांग बी., जलविद्युत–भूटान के सतत, सामाजिक–आर्थिक विकास की कुंजी
5. उद्दीन, एस.एन., दक्षिण एशिया में नवीकरणीय उर्जा, एशियन एनर्जी न्यून, 2001
6. ब्रैडमैन, डी., लैम्बिन ईएफ, भूटान में वन आवरण में परिवर्तन : वन परिवर्तन का पुनरावलोकन

आ. सहायक ग्रंथ :

(क) हिन्दी ग्रंथ :

1. यादव, आर एस, भारत की विदेश नीति, पीयर्सन एजुकेशन इंडिया, नयी दिल्ली : 2013.
2. कुमार, डॉ रवींद्र, भारत और उसके पड़ोसी देश, राज पब्लिकेशन, नयी दिल्ली, 2021
3. खटीक, प्रो मुकेश, भारत और उसके पड़ोसी देश, रावत प्रकाशन, प्रकाशक–अज्ञात, 2017

(ख) अंग्रेजी ग्रंथ :

1. Debnath, Sailen, Indo-Bhutan Relations in Modern Times: A Study Bilateral Relations, Aayu Publications ,2017
2. Rajput, Madhu, INDO-BHUTAN Relations through Prism of History, Manak Publications, New Delhi, 2011
3. Srivastava. Dr. Juhi, India-Bhutan Relations : Analysis of Changing Dynamics (From 2007- 2017), Pacific Books International, New Delhi, 2021

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-153-157

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 153-157
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. प्रीति कुमारी

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, महंथ महादेवानंद महिला महाविद्यालय, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

Corresponding Author :

डॉ. प्रीति कुमारी

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, महंथ महादेवानंद महिला महाविद्यालय, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों के संदर्भ में प्रकृति, पर्यावरण और हिंदी साहित्य की पारिस्थितिक चेतना

शोध-सार : भारत और भूटान के संबंध राजनयिक सहयोग से आगे बढ़कर साझा हिमालयी भूगोल, बौद्ध सांस्कृतिक विरासत, लोक-संवेदना और प्रकृति के प्रति उत्तरदायी जीवन-दृष्टि पर आधारित हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों को प्रकृति, पर्यावरण और हिंदी साहित्य की पारिस्थितिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित करता है। इसका उद्देश्य यह देखना है कि दोनों देशों की सांस्कृतिक स्मृति में प्रकृति किस प्रकार जीवन, नैतिकता और सामुदायिक सह-अस्तित्व का आधार बनती है तथा हिंदी साहित्य इस चेतना को किस प्रकार अभिव्यक्ति देता है। हिंदी साहित्य में प्रकृति आरंभ में सौंदर्य, ऋतु और भाव-जगत् के रूप में उपस्थित रही, किंतु समकालीन रचनाशीलता में वह जल, जंगल, जमीन, पहाड़, विस्थापन और पर्यावरणीय न्याय के प्रश्नों से भी जुड़ गई है। भूटान का वन-संरक्षण संबंधी संवैधानिक संकल्प तथा सकल राष्ट्रीय खुशी का विकास-दर्शन पर्यावरण और संस्कृति की परस्पर संबद्धता का उदाहरण प्रस्तुत करता है। अध्ययन का निष्कर्ष है कि भारत–भूटान की साझा हिमालयी चेतना हिंदी साहित्य के पर्यावरण-विमर्श को अधिक व्यापक, संवेदनशील और अंतर्विषयी आधार दे सकती है।

बीज शब्द : भारत–भूटान संबंध, हिमालयी संस्कृति, प्रकृति, पर्यावरण, पारिस्थितिक चेतना, हिंदी साहित्य, बौद्ध दर्शन, सकल राष्ट्रीय खुशी, सतत विकास।

प्रस्तावना : भारत और भूटान के पारस्परिक संबंधों की चर्चा प्रायः मैत्री, सुरक्षा, जलविद्युत और आर्थिक सहयोग के संदर्भ में की जाती है। किंतु इन संबंधों का अधिक स्थायी आधार सांस्कृतिक निकटता में निहित है। हिमालय की पर्वत-श्रृंखलाएँ, नदियों के उद्गम-क्षेत्र, बौद्ध परंपराएँ, सीमांत समाजों का लोकजीवन तथा प्रकृति के प्रति श्रद्धा दोनों देशों को एक विशिष्ट सांस्कृतिक परिसर में जोड़ते हैं। भारत और भूटान के औपचारिक राजनयिक संबंध 1968 में स्थापित हुए, परंतु धार्मिक और सांस्कृतिक संपर्क इससे बहुत पहले से विद्यमान रहे हैं।[1]

आज जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, जल-संकट, जैव-विविधता के क्षरण और उपभोक्तावादी विकास-प्रक्रिया ने प्रकृति के साथ मनुष्य के संबंध को संकटपूर्ण बना दिया है। ऐसे समय में भारत–भूटान संबंधों को पर्यावरणीय दृष्टि से देखना विशेष अर्थ रखता है। भूटान का अनुभव बताता है कि प्रकृति को केवल आर्थिक संसाधन मानने की अपेक्षा उसे राष्ट्रीय स्मृति, सामाजिक सुख और नैतिक उत्तरदायित्व का आधार भी माना जा सकता है।[2] भूटान के संविधान का अनुच्छेद 5 प्रत्येक नागरिक को प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण का न्यासी मानता है तथा देश के कम-से-कम 60 प्रतिशत भूभाग को स्थायी रूप से वनाच्छादित रखने का प्रावधान करता है।[3]

हिंदी साहित्य इस विमर्श के लिए उपयुक्त सांस्कृतिक भूमि देता है। यहाँ प्रकृति कभी ऋतु-सौंदर्य है, कभी विरहिणी के मन की सहचरी, कभी आत्म-अन्वेषण का विस्तार और कभी सभ्यता के असंतुलन से घायल जीवित संसार। आधुनिक हिंदी साहित्य में प्रकृति का अर्थ केवल फूल, पत्ते, नदी और पर्वत का वर्णन नहीं रह गया है; वह पर्यावरणीय संकट, लोकजीवन, संसाधनों पर अधिकार और मानवीय भविष्य का प्रश्न भी बन गया है।

शोध-समस्या, उद्देश्य और पद्धति :

शोध-समस्या : मुख्य प्रश्न यह है कि भारत–भूटान की सांस्कृतिक निकटता में निहित प्रकृति-केंद्रित जीवन-दृष्टि हिंदी साहित्य की पारिस्थितिक चेतना को किस प्रकार नया संदर्भ और व्यापक अर्थ प्रदान करती है।

उद्देश्य :

• भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों में प्रकृति और पर्यावरण की भूमिका का विवेचन करना।

• हिमालयी तथा बौद्ध जीवन-दृष्टि में निहित पर्यावरणीय नैतिकता को रेखांकित करना।

• हिंदी साहित्य में प्रकृति-वर्णन से पर्यावरणीय चेतना तक की यात्रा को समझना।

• भूटान की पर्यावरणीय प्रतिबद्धताओं और सकल राष्ट्रीय खुशी की अवधारणा को हिंदी साहित्य के पर्यावरण-विमर्श से जोड़ना।

• साहित्य, अनुवाद और अकादमिक संवाद के माध्यम से भारत–भूटान पर्यावरणीय सहयोग की संभावनाओं का संकेत करना।

शोध-पद्धति : यह अध्ययन वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक और तुलनात्मक पद्धति पर आधारित है। इसमें भारत–भूटान संबंधों से संबंधित आधिकारिक दस्तावेज़ों, भूटान के संविधान, पर्यावरणीय जानकारी, हिंदी काव्य, यात्रा-वृत्तांत और पर्यावरण-विमर्श संबंधी चयनित आलोचनात्मक सामग्री का पाठ-विश्लेषण किया गया है।

शोध-अंतराल : भारत–भूटान संबंधों पर उपलब्ध सामग्री का बड़ा भाग विदेश नीति, सामरिक सहयोग, सीमा, जलविद्युत और आर्थिक संबंधों पर केंद्रित है। सांस्कृतिक संबंधों पर लेखन उपलब्ध होने पर भी प्रकृति, पर्यावरण और हिंदी साहित्य को एक साझा विश्लेषणात्मक परिप्रेक्ष्य में रखने वाले अध्ययन कम दिखाई देते हैं। भूटान की पर्यावरणीय नीतियों का उल्लेख तो अनेक स्थानों पर मिलता है, किंतु हिंदी साहित्य की प्रकृति-चेतना और भूटानी सांस्कृतिक जीवन-दृष्टि के अंतर्संबंधों का व्यवस्थित विवेचन अपेक्षाकृत सीमित है।

इसी प्रकार हिंदी साहित्य में पर्यावरण-विमर्श प्रायः भारतीय संदर्भों तक सीमित रहता है। पड़ोसी हिमालयी राष्ट्र भूटान के प्रकृति-केंद्रित विकास-दर्शन, बौद्ध नैतिकता और वन-संरक्षण की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के साथ हिंदी साहित्य को तुलनात्मक रूप से पढ़ने की संभावना अभी पर्याप्त रूप से विकसित नहीं हुई है। प्रस्तुत अध्ययन इसी शोध-अंतराल को रेखांकित करते हुए संवाद की एक नई दिशा प्रस्तावित करता है।

भारत–भूटान : हिमालयी संस्कृति और प्रकृति-संवेदना : भारत और भूटान को जोड़ने वाला हिमालय केवल भौगोलिक सीमा नहीं है; वह जल, वन, लोकविश्वास, आध्यात्मिकता और सभ्यतागत स्मृति का विस्तृत संसार है। पर्वतों से निकलने वाली नदियाँ दूरस्थ मैदानों तक जीवन पहुँचाती हैं, वन जैव-विविधता के साथ-साथ पर्वतीय समुदायों की आजीविका सँभालते हैं और कठिन भौगोलिक परिस्थितियाँ सहयोग, संयम तथा प्रकृति के प्रति विनम्रता

का संस्कार निर्मित करती हैं। इसीलिए हिमालयी जीवन-दृष्टि में प्रकृति के प्रति सम्मान किसी बाहरी नियम का परिणाम नहीं, बल्कि जीवन-पद्धति का अंग है।

भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों में बौद्ध परंपरा की महत्वपूर्ण भूमिका है। करुणा, अहिंसा, मैत्री और प्राणी-मात्र के प्रति दायित्व जैसे बौद्ध मूल्य पर्यावरणीय नैतिकता को गहरी भूमि प्रदान करते हैं। प्रतीत्यसमुत्पाद का सिद्धांत यह समझ देता है कि कोई भी अस्तित्व पूर्णतः स्वतंत्र नहीं है; जीवन के सभी रूप परस्पर संबंधों में स्थित हैं। इस दृष्टि से वन का विनाश केवल पेड़ों का कटना नहीं, बल्कि जल, मिट्टी, पशु-पक्षियों और मानव-समुदाय के बीच संतुलन का टूटना है।

भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में भी नदियों, पर्वतों, वृक्षों और धरती को जीवनदायिनी तथा पूजनीय सत्ता माना गया है। नदी के प्रति श्रद्धा, वृक्ष-पूजन और पर्वतों को देवत्व से जोड़ने की परंपरा प्रकृति के साथ एक भावात्मक संबंध को व्यक्त करती है। आधुनिक विकास-प्रक्रिया ने इस संबंध को अवश्य क्षीण किया है, किंतु लोक-स्मृति, मिथक और साहित्य में इसकी उपस्थिति अब भी दिखाई देती है।

भूटान की पर्यावरण-दृष्टि और सकल राष्ट्रीय खुशी : भूटान की पर्यावरणीय दृष्टि में नीति और नैतिकता का सुंदर मेल दिखाई देता है। संविधान के अनुच्छेद 5 में यह प्रावधान है कि देश के कम-से-कम 60 प्रतिशत क्षेत्र में वनावरण को स्थायी रूप से बनाए रखा जाएगा। यह प्रावधान पर्यावरण-संरक्षण को आकस्मिक कार्यक्रम नहीं, बल्कि राष्ट्रीय दीर्घकालिक संकल्प बनाता है। रॉयल भूटानी दूतावास की आधिकारिक सूचना भी इस संवैधानिक दायित्व को स्पष्ट रूप से रेखांकित करती है।[4]

भूटान का सकल राष्ट्रीय खुशी का विचार विकास की वैकल्पिक अवधारणा प्रस्तुत करता है। इसके चार प्रमुख स्तंभ हैं—"न्यायपूर्ण और सतत सामाजिक-आर्थिक विकास, संस्कृति का संरक्षण एवं संवर्धन, पर्यावरण का संरक्षण तथा सुशासन"।[5] इस दृष्टिकोण में विकास को केवल आय, उत्पादन और बाजार से नहीं मापा जाता; वह मानसिक स्वास्थ्य, सामुदायिक संबंधों, सांस्कृतिक निरंतरता और पारिस्थितिक संतुलन से भी जुड़ा है।

यह अवधारणा भारतीय संदर्भ में भी विचारणीय है। यदि विकास की परियोजनाएँ जंगलों को उजाड़ दें, नदियों को प्रदूषित करें, पहाड़ों को अस्थिर बना दें और स्थानीय समुदायों को विस्थापित कर दें, तो केवल आर्थिक वृद्धि को विकास नहीं कहा जा सकता। भूटान का अनुभव पूछता है कि क्या विकास का लक्ष्य अधिक उपभोग है अथवा अधिक संतुलित, सुरक्षित और गरिमामय जीवन? हिंदी साहित्य का पर्यावरण-विमर्श इसी प्रश्न को संवेदना और आलोचना की भाषा देता है।

6. हिंदी साहित्य में प्रकृति : सौंदर्य से पारिस्थितिक सरोकार तक : हिंदी साहित्य में प्रकृति की उपस्थिति बहुरंगी और दीर्घकालिक है। भक्तिकाल में प्रकृति भक्ति, प्रेम और विरह के अनुभवों से जुड़ती है। सूरदास के काव्य में ब्रज का वन, यमुना, ऋतुएँ और कुंज कृष्णलीला का सजीव परिवेश रचते हैं। रीतिकाल में ऋतु-वर्णन और प्रकृति-सौंदर्य काव्य-शिल्प के आवश्यक उपकरण बने।

छायावाद में प्रकृति को आत्मीयता, रहस्य और मानवीय संवेदना का गहरा रूप मिला। जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, निराला और महादेवी वर्मा के यहाँ प्रकृति बाह्य दृश्य मात्र नहीं है; वह मनुष्य के अंतर्जगत् का विस्तार है। महादेवी वर्मा की पंक्ति—"विस्तृत नभ का कोई कोना, मेरा न कभी अपना होना"—अस्तित्वगत एकांत को व्यक्त करती है; साथ ही वह व्यापक जगत् से आत्मीय संबंध की आकांक्षा भी जगाती है।[6]

समकालीन हिंदी साहित्य में प्रकृति एक नया सामाजिक और राजनीतिक अर्थ ग्रहण करती है। नदी केवल सौंदर्य का बिंब नहीं रहती; वह प्रदूषण, बाँध, जल-अधिकार और सूखते स्रोतों की चिंता बन जाती है। जंगल केवल हरियाली नहीं; वह आदिवासी जीवन, जैव-विविधता और संसाधनों पर नियंत्रण का प्रश्न भी बन जाता है। पहाड़ केवल पर्यटन का दृश्य नहीं, बल्कि अनियोजित निर्माण, भूस्खलन, विस्थापन और पलायन से प्रभावित जीवन-क्षेत्र के रूप में

सामने आता है। कुमार मंगलम का कथन—"प्रकृति से खिलवाड़ यानी जीवन से विमुख हो जाना है"—समकालीन पर्यावरण-विमर्श के मूल प्रश्न को रेखांकित करता है।[7]

केदारनाथ सिंह और मंगलेश डबराल जैसे कवियों के यहाँ प्रकृति मनुष्य की स्मृति और भविष्य से जुड़ती है। केदारनाथ सिंह की कविता में पेड़ जीवन के आत्मीय साथी की तरह उपस्थित है। "पेड़ इस तरह उगते हैं जैसे आदमी अपने सपनों में"—यह पंक्ति वृक्ष को केवल जैविक सत्ता न मानकर मानवीय आशा और भविष्य से जोड़ देती है।[8] इसी प्रकार मंगलेश डबराल की कविता में पहाड़ एक जीवित सांस्कृतिक भूगोल बनकर आता है। "पहाड़ पर लौटना / अपने भीतर लौटना है"—यह पंक्ति पहाड़ और मनुष्य की पहचान के गहरे संबंध को व्यक्त करती है।[9]

हिंदी साहित्य और भूटान : सांस्कृतिक संवाद की संभावना : भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों में हिंदी साहित्य संवाद का प्रभावी माध्यम बन सकता है। हिंदी के माध्यम से भूटान की प्रकृति-केंद्रित जीवन-पद्धति, लोक-संस्कृति, बौद्ध मूल्य और पर्यावरणीय नीतियाँ व्यापक भारतीय पाठक-वर्ग तक पहुँच सकती हैं। इसके साथ ही हिंदी की पर्यावरण-सचेत कविताएँ, कहानियाँ, उपन्यास और आलोचनात्मक लेख अनुवाद के माध्यम से भूटानी पाठकों तक पहुँच सकते हैं।

रमेश पोखरियाल 'निशंक' की पुस्तक खुशियों का देश भूटान हिंदी पाठक को भूटान के इतिहास, भूगोल, संस्कृति और भारत–भूटान मैत्री से परिचित कराती है। इस पुस्तक का महत्त्व इस बात में है कि यह भूटान को दूरस्थ और अपरिचित भूखंड के बजाय एक आत्मीय हिमालयी समाज के रूप में सामने लाती है।10 भूटान के संबंध में हिंदी यात्रा-साहित्य, संस्मरण, आलोचनात्मक निबंध और अनुवाद की संख्या बढ़ना आवश्यक है।

भूटानी लोककथाओं, प्रकृति-केंद्रित मिथकों, बौद्ध आख्यानों, पर्वतीय स्त्री-अनुभवों और पर्यावरणीय लोकज्ञान का हिंदी में अनुवाद भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों को अधिक गहरा बना सकता है। इसी तरह हिंदी के हिमालयी साहित्य को भूटानी संदर्भ में पढ़ना तुलनात्मक साहित्य की एक सार्थक दिशा हो सकती है। ऐसा संवाद सीमाओं के पार फैली हिमालयी अस्मिता को पहचान देगा।

पर्यावरणीय न्याय और साहित्य का उत्तरदायित्व : पर्यावरणीय संकट सभी सामाजिक समूहों को एक समान रूप से प्रभावित नहीं करता। जंगल कटने पर सबसे पहले उस समुदाय का जीवन प्रभावित होता है जो ईंधन, चारा, फल, औषधि और आजीविका के लिए जंगल पर निर्भर है। नदी प्रदूषित होने पर मछुआरे, किसान और नदी-तटवासी समुदाय अधिक संकट झेलते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में अनियोजित सड़क, बाँध और निर्माण परियोजनाएँ स्थानीय परिवारों के विस्थापन और सांस्कृतिक विघटन का कारण बन सकती हैं। अतः पर्यावरण का प्रश्न सामाजिक न्याय का प्रश्न भी है।

समकालीन हिंदी साहित्य में जल-जंगल-जमीन का प्रश्न अस्मिता और अस्तित्व के प्रश्न के रूप में उभरता है। कुमार मंगलम ने समकालीन प्रकृति-विमर्श में इस संबंध को रेखांकित किया है। 11 महुआ माजी का उपन्यास मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ खनन, पर्यावरण और आदिवासी जीवन के संकट को केंद्र में लाता है।12 रणेंद्र का ग्लोबल गाँव के देवता विकास, पूँजी और आदिवासी समाज के अंतर्विरोधों को सामने रखता है।13 ऐसी रचनाएँ बताती हैं कि प्रकृति की रक्षा केवल दृश्य-सौंदर्य बचाना नहीं, बल्कि समुदायों के जीवन-अधिकार, स्मृति और भविष्य की रक्षा करना भी है।

भारत–भूटान के साझा हिमालयी संदर्भ में यह प्रश्न और अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। पर्यावरण-संरक्षण का अर्थ केवल पर्वतों की पर्यटन-योग्य छवि बनाए रखना नहीं है; इसका अर्थ जलस्रोतों, खेती, वनों, जैव-विविधता, लोकज्ञान और आने वाली पीढ़ियों के अधिकारों को सुरक्षित रखना है। साहित्य इन जटिल प्रश्नों को मानवीय अनुभव की भाषा देता है और इसी कारण वह पर्यावरणीय चेतना को व्यापक समाज तक पहुँचाने में समर्थ होता है।

निष्कर्ष : भारत–भूटान संबंधों की शक्ति केवल कूटनीतिक विश्वास अथवा आर्थिक सहयोग में नहीं है। उसकी मूल ऊर्जा साझा हिमालयी प्रकृति, बौद्ध सांस्कृतिक विरासत, करुणा, संयम, सह-अस्तित्व और प्रकृति के प्रति

उत्तरदायित्व में निहित है। भूटान का संविधान वन-संरक्षण को राष्ट्रीय दायित्व के रूप में स्वीकार करता है और सकल राष्ट्रीय खुशी का विचार संस्कृति, पर्यावरण, सुशासन तथा संतुलित विकास को परस्पर संबद्ध मानता है। 14

हिंदी साहित्य में प्रकृति की लंबी परंपरा आज पर्यावरणीय चेतना के रूप में विशेष प्रासंगिक है। छायावादी कविता की प्रकृति-संवेदना से लेकर समकालीन कविता, कहानी और उपन्यास तक, हिंदी साहित्य मनुष्य और प्रकृति के टूटते संबंध को पहचानता है। वह विकास की अंधी दौड़, जल-जंगल-जमीन के दोहन, पहाड़ों के असंतुलन और विस्थापित समुदायों की पीड़ा के प्रति सजग करता है।

भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों के आलोक में हिंदी साहित्य की पारिस्थितिक चेतना का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि पर्यावरण संरक्षण केवल वैज्ञानिक नीति या प्रशासनिक कार्यक्रम नहीं है। वह संस्कृति, भाषा, स्मृति, करुणा और नैतिकता का विषय भी है। भविष्य में हिंदी और भूटानी साहित्य के अनुवाद, संयुक्त शोध-परियोजनाएँ, पर्यावरण-केंद्रित संगोष्ठियाँ, हिमालयी लोक-संस्कृतियों का दस्तावेजीकरण और विद्यार्थियों के सांस्कृतिक आदान-प्रदान जैसे प्रयास इस संवाद को अधिक सुदृढ़ बना सकते हैं। जब साहित्य प्रकृति को साथ लेकर चलता है तब वह मनुष्य के भविष्य को अधिक सुरक्षित एवं सुंदर बना सकता है।

संदर्भ-ग्रंथ सूची :

1. भारत का दूतावास, थिम्फू, "भारत–भूटान संबंध", भारत सरकार, https://indembthimphu.gov.in/pages/NDEy. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
2. भारत विश्व मामलों की परिषद, भारत–भूटान संबंधों की छान-बीन, भारतीय विश्व मामले परिषद, 2025, https://www.icwa.in/pdfs/ExploringIndiaBhutanRelationsWebSept2025FHindi.pdf. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
3. भूटान का संविधान, The Constitution of the Kingdom of Bhutan. रॉयल गवर्नमेंट ऑफ भूटान, 2008, अनुच्छेद 5, https://cms.parliament.gov.bt/uploads/Constitution_Dzongkha_n_english_1a63683445.pdf. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
4. रॉयल भूटानी दूतावास, नई दिल्ली, "पर्यावरण," विदेश मंत्रालय एवं बाह्य व्यापार मंत्रालय, भूटान सरकार, https://www.mfa.gov.bt/rbedelhi/bhutan-at-glance/environment/. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
5. रॉयल भूटानी दूतावास, नई दिल्ली, "सकल राष्ट्रीय खुशी" ,विदेश मंत्रालय एवं बाह्य व्यापार मंत्रालय, भूटान सरकार, https://www.mfa.gov.bt/rbedelhi/bhutan-at-glance/gross-national-happiness/. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
6. वर्मा, महादेवी,यामा, लोकभारती प्रकाशन, 2015, पृ. 18।
7. मंगलम, कुमार, "समकालीन दौर : प्रकृति विमर्श", जीना शोध संगम, 2023, पृ. 240–250, विशेषतः पृ. 244–246, https://ginajournal.com/samkalin-dore/. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
8. सिंह, केदारनाथ। अकाल में सारस। राजकमल प्रकाशन, 2016, पृ. 63।
9. डबराल, मंगलेश, पहाड़ पर लालटेन, वाणी प्रकाशन, 2014, पृ. 29।
10. पोखरियाल 'निशंक', रमेश, खुशियों का देश भूटान, प्रभात प्रकाशन, 2019, पृ. 42–48।
11. मंगलम, कुमार, "समकालीन दौर : प्रकृति विमर्श", जीना शोध संगम, 2023, पृ. 244–246, https://ginajournal.com/samkalin-dore/. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
12. माजी, महुआ, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ,राजकमल प्रकाशन, 2012।
13. रणेंद्र, ग्लोबल गाँव के देवता, भारतीय ज्ञानपीठ, 2009।
14. रॉयल भूटानी दूतावास, नई दिल्ली, "सकल राष्ट्रीय खुशी", विदेश मंत्रालय एवं बाह्य व्यापार मंत्रालय, भूटान सरकार, https://www.mfa.gov.bt/rbedelhi/bhutan-at-glance/gross-national-happiness/. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-158-162

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 158-162
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

जय शिंदे

असिस्टेंट प्रोफेसर–वायलिन डिपार्टमेंट, डिपार्टमेंट ऑफ इंडियन क्लासिकल म्यूज़िक–इंस्ट्रुमेंटल (सितार, वायलिन), फैकल्टी ऑफ परफॉर्मिंग आर्ट्स, द महाराजा यूनिवर्सिटी ऑफ बड़ौदा, वडोदरा

गाइड : प्रो. (डॉ.) विश्वास विजयकुमार संत

Corresponding Author :

जय शिंदे

असिस्टेंट प्रोफेसर–वायलिन डिपार्टमेंट, डिपार्टमेंट ऑफ इंडियन क्लासिकल म्यूज़िक–इंस्ट्रुमेंटल (सितार, वायलिन), फैकल्टी ऑफ परफॉर्मिंग आर्ट्स, द महाराजा यूनिवर्सिटी ऑफ बड़ौदा, वडोदरा

बड़ौदा की शहनाई और भूटान के ग्यालिंग वाद्य का संक्षिप्त परिचय– एक अध्ययन

KEYWORDS - शहनाई, बड़ौदा, पंडित वसईकर, भूटान, ग्यालिंग,

प्रस्तावना : भारत में सनातन धर्म हिन्दू परंपरा में सभी कला ओ को बड़ा महत्व दिया जाता है। जिसमें संगीत सहज कला मानी जाती है। शहनाई वाद्य, प्राचीन काल से आधुनिक काल तक, भारत में प्रचलित वाद्य माना जाता रहा है। भारत में शहनाई वाद्य, सामाजिक, धार्मिक, त्योवहारों तथा हर मांगलिक प्रसंगो में संम्मिलित होता आ रहा है। इस तरह शहनाई वाद्य, भारतीय समाज का मुख्य अंग बन गया।

भारत में सुषिर वाद्यों की श्रेणी में "शहनाई" एक प्रचलित वाद्य है। शहनाई वाद्य उत्तर भारतीय परंपरा का मशहुर वाद्य हें। उत्तर भारत में शहनाई को शेनाई सरनाई सनाई शेनोय ओर मधुकरी आदि नामो से भी पुकारा जाता है। इस वाद्य की "मंगल-ध्वनि" सुमधुर ओर पवित्र भावनाए बनाने में सहायक रूप प्रदान करती है। उत्तर भारत में दो प्रकार की शहनाई, काफी प्रचलित है। जिसमे **(1)** महाराष्ट्रियन शहनाई तथा **(2)** बनारसी शहनाई, प्रचलित मानीजाती है।

सुषिर वाद्य शहनाई को, भारतीय परंपरा से याने "गुरु-शिष्य" पद्धति ओर से ही अधिकतम् शिक्षा प्रदान की जाती है। शहनाई कला में हस्त-विधि फूँक संचालन रागो का चयन तथा विस्तार नली तथा पत्तूर बनाने की विधि ओर सीना-ब-सीना वादन से शहनाई शिक्षा को विस्तृत रूप से आगे बढ़ाया जाता हें। यह लेखन कार्य मेरे रिसर्च का एक भाग हें।

भारत के गुजरात स्थित "बड़ौदा" की बात करे तो करीबन 100 सालों से शहनाई वाद्य का प्रचार-प्रसार एवम् परंपरा का विकास होता रहा हैं। बड़ौदा, एक कलानगरी के रूप में पहैचानी जाती है। बड़ौदा में गायन-वादन-नाट्य लोकसंगीत तथा लोकनृत्य आदि सभी कलाओ का विकसित रूप में प्रचार होता रहा हें। बड़ौदा में, हर धार्मिक ओर सामाजिक उत्सव, शहनाई वाद्य की प्रस्तुति से प्रारंभ किया था। बड़ौदा राज्य में, संगीतकला के लिए कलावंत कारख़ाना तथा गायनशाला जेसे

विभाग की रचना की गई थी।

"बड़ौदा संस्थान" याने बड़ौदा राज्य के ज़्यादातर नरेश, संगीत प्रेमी रहै है। अन्य रियासतो की तुलना में, बड़ौदा नरेश ने संगीत-कला का अधिक प्रचार-प्रसार किया ओर संगीतकला को, दरबारो की दीवारों से बाहर निकालकर आम जनता तक पहुचाया।

बड़ौदा के नरेश ने, संगीत के कई विध्वानों को बड़ौदा संस्थान में राज्याश्रय दिया। जिसमें महाराष्ट्र के वसई गाँव के निवासी शहनाई वादक 'पंडित गणपतराव पिराजी (वसईकर को बड़ौदा राज्य में राज्याश्रय दिया गया। पंडितजी को बड़ौदा संस्थान में, दरबारी शहनाई वादक के तौर पर नियुक्त किया गया। पंडित वसईकर जी ने शहनाई कला को, आम आदमी तक पहुचाने के लिए, गायनशाला में शहनाई वाद्य कला की "वर्ग-शिक्षा" का याने विषय शिक्षण की शुरुआत की।

बड़ौदा संस्थान में पंडित वसईकर जी ने शहनाई में, सर्वप्रथम 'संस्थागत शिक्षा' की नींव रखी। जो भारत देश का प्रथम प्रयास मानाजाता हें। शहनाई वाद्य की 'वर्ग शिक्षा' के लिए पंडित वसईकरजी ने 'सनई वादन पाठशाला' की शुरुआत की थी। आज भी बड़ौदा राज्य में करीबन 10 परिवार है जो, पंडित जी की गुरु-शिष्य परंपरा अनुसार शहनाई कला के कार्य को आगे बढ़ा रहें हें।

शहनाई वाद्य का प्रयोग, बड़ौदा राज्य में, सामाजिक उत्सवो, मंदिरो में तथा सुबह-शाम बड़ौदा दरबार में भी किया जाता था। बड़ौदा नरेश सयाजीराव गायकवाड ने शहनाई कला को, दरबारो से निकालकर आम जनता तक पहुचाई थी। आधुनिक काल में, शहनाई वाद्य से हम, उ.बिस्मिल्ला खान को याद करते है लेकिन, आपसे 100 वर्ष पूर्व सन् 1914 में, पंडित वसईकरजी ने शहनाई कला तथा शिक्षा को, समाज उपयोगी बनाने की शुरुआत की थी। यह सुवर्ण इतिहास, आज के संगीत प्रेमी जनता को याद नहीं हैं।

पंडित वसईकर की शहनाई कला की परंपरा में शिंदे, संत, गायकवाड, गुरव, भोंसले, वसईकर, क्षीरसागर, कोरडे, बिडवे, वाधमारे, सोनवणे आदि परिवार आते है जो, बड़ौदा में शहनाई की अमूल्य परंपरा का प्रचार-प्रसार कर रहै हें। बड़ौदा, शहनाई कला को भारतीय संगीत के उच्च श्रेणी तक ले जाने में सफल रहै है। बड़ौदा में, कई शहनाई कलाकार अपना जीवन-व्यापन, शहनाई की इस पारंपरिक वादनकला से करते आ रहै है।

बड़ौदा संस्थान में शहनाई-कला का विकास, प्रचार-प्रसार ओर परंपरा का मुख्य स्त्रोत, गायकवाड परिवार ओर पंडित गणपतराव वसईकर रहै है।

बड़ौदा कलानगरी तथा संस्कारी नगरी के नाम से पहैचानी जाती हें। बड़ौदा के नरेशों ने अपना कलाप्रेम को दर्शाते हुए, सभी कलाओ को बड़ौदा में सौरक्षण दिया तथा समाज उपयोगी बनाने में अपना योगदान दिया। बड़ौदा ने संगीतकला को अपने दरबारो से बाहर निकालकर, संगीतकला को समाज उपयोगी बनाया। इसी कारण वश, बड़ौदा संस्थान को कला-नगरी नाम से पहैचान मिली। बड़ौदा नरेश सयाजीराव द्वितीय संगीतकला के शोकीन थे। आप अपने रिक्त समय में संगीत तथा नृत्य कला का आस्वाद लेते थे। कहा जाता है की सयाजीराव द्वीतीय ने ही बड़ौदा दरबार में "कलावंत कारखाने" याने की स्थापना की थी। [1] आपने बड़ौदा दरबार मे 'कलावंत कारख़ाना' (मनोरंजन विभाग), जिसमें गायन, वादन, नृत्य, नाट्य, माइम, जादूगर, पाश्चात्य-वाद्य, आदि में पारंगत कलाकारो की नियुक्ति की गई थी। सयाजीराव नरेश के शासन काल में आधुनिक-संगीत, शास्त्रीय-संगीत, ध्रुवपद, ख्याल, ठुमरी आदि गायन प्रकारो से बड़ौदा के संगीत में अपना रिक्त स्थान ले लिया था। सर सयाजीराव गायकवाड (तृतीय) खुद भी संगीत के चाहक थे। गायकवाड राजाओ ने जनसमाज में संगीत को उपयोगी बनाने हैतु, बड़ौदा संस्थान में "कलावंत कारख़ाना" ओर "गायन शाला" जेसी संगीत उपयोगी संस्थाए बनाई थी। जिससे संगीत-कला का प्रचार-प्रसार तेजी से हुवा। लोगो को संगीत सीखने ओर जानने का मोका मिला। समाज मे संगीत का रुझान हुवा। बड़ौदा नरेश के इस प्रयास से बड़ौदा संस्थान में संगीत को नई उचाई मिली।

उस्ताद मौलाबक्ष ओर बड़ौदा नरेश ने "कलावंत कारख़ाना" की स्थापना की। कलावंत कारख़ाना याने मनोरंजन करनेवाला एक विभाग जिसके अंतर्गत गायक-वादक-नृत्यकार-माइम-पहैलवान-जादूगर इत्यादि की कलावंतों की नियुक्ति की जाती थी। [2]

इस कलावंतखाते में सभी उच्च प्रकारो के सिद्ध ओर नामी कलाकारो का समावेश किया गया था। जिसमें उ.मौलबक्ष उ.फ़ैयाज़खाँ पंडित वसईकर आदि मुख्य नाम है। पंडित भातखण्डे जी को सलाहकार के रूप में आमंत्रित किया जाता था। बड़ौदा संस्थान में संगीत कला के साथ-साथ शहनाई कला का विकास प्रचुर मात्रा में किया गया।

बड़ौदा दरबार में संगीत कला की प्रस्तुति, आम तौर पे होती रहती थी, साथ-साथ किर्तिमंदिर बैंडस्टेंड लहैरीपुरा दरवाजा न्यायमंदिर ओर सामाजिक उत्सवो में बड़ौदा दरबार से गायन वादन के ऑर्डर दिये जाते थे। जिसमे ज़्यादातर कार्यक्रमो की शुरुआत शहनाई वादन से होती थी। संगीत को समाज उपयोगी बनाने हैतु तथा संगीत शिक्षा के लिए "गायन शाला" की स्थापना की गई थी ओर गायनशाला में शहनाई वादन शिक्षा की शुरुआत की गई थी। इस तरह सर सयाजीराव ने संगीतकला ओर शहनाई वाद्य को दरबारो की दीवारों बाहर निकालकर जनता जनार्दन तक पहुचाया गया था।

सुषिर वाद्यो में शहनाई, सबसे प्राचीन ओर प्रचलीत वाद्य माना जाता हें। भारत में प्राचीन काल से आधुनिक काल तक हर शुभ प्रसंगो पर तथा धार्मिक प्रसंगो पर, हमें एक ही वाद्य का प्रयोग अधिक मात्र में देखाई देता है, वह है शहनाई वाद्य। भारतीय धर्म-परंपरा अनुसार हर मांगलिक व धार्मिक कार्यो की शुरुआत शहनाई वाद्य से होती हें। शहनाई वाद्य, उत्तर भारत का प्रमुख सुषिर वाद्य माना जाता है।

"वादतीति वाध्यम"

इसका अर्थ है की, जो बोलता है वही वाद्य कहलाता है। [3]

उत्तर भारत में शहनाई कला सबसे प्राचीन कला मानी जाती है। भारत के अन्य प्रांतो में शहनाई को प्राचीन काल से ही प्रांतीय नामो से पुकारा जाता रहा है। पंडित शारंगदेव ने "संगीत रत्नाकर" के 6ठे अध्याय वाध्य-अध्याय में "मधूकरी" नामक वाद्य का उल्लेख किया है। [4] मधूकरी आधुनिक शहनाई के समान होती हें। शहनाई वाद्य की ध्वनि, मंगलमय तथा पवित्र भावनाओ को बनाए रखने मे सहायक होती है। भारत के कई प्राचीन ग्रंथों में शहनाई का उल्लेख किया गया हें।

बड़ौदा में, प्राचीन काल से शहनाई वादन होता था। बड़ौदा में मराठी जाती में शहनाई कला का विशेष कर प्रचलन दिखाई देता है। पेशवा शाही के पतन के बाद पुना ओर महाराष्ट्र से कई लोग बड़ौदा संस्थान में बस गए ओर इस शहर में मिली-जुली सभ्यता का विकास शुरु हुआ।

बड़ौदा नरेश सायजीराव गायकवाड का, संगीत कलाप्रेम ओर शहनाई कला के प्रति प्रेम सराहनीय रहा हें। सन् 1914 में महाराष्ट्र के वसई गाँव से पंडित गणपतराव पिराजी (वसईकर) जी को, शहनाई वादक के तौर पर बुलाया गया तथा आपको राज्याश्रय भी दिया गया। राज्य के दरबार में भी आपको विशेष स्थान दिया गया ओर कलाज्योति सन्मान राज्य का पदक चीन्ह आभूषण दरबार में विशेष स्थान, आदि कई सन्मानो से आपको नवाजा गया। शहनाई में इतना मान संम्मान, किसी अन्य शहनाई वादक को आजतक नहीं मिलपाया। पंडित वसईकर, बड़ौदा संस्थान में आये तबसे, शहनाई कला का विकास तेजी से होने लगा।[5]

पंडित वसईकरजी का जन्म 30 ओक्टोंबर 1863 महाराष्ट्र वसई के पास आरनाली गाँव में हुवा था। आपने गायन के साथ तबले की भी शिक्षा ली ओर भारत के कई रियासतों के दरबारो में, शहनाई कला को प्रस्तुत किया तथा आपको कई इनाम ओर मान सन्मान ओर नकद राशि प्राप्त हुई। पंडित वसईकर, दरबारी शहनाई वादक बने ओर अपने ज्ञान ओर स्वभाव के कारण, दरबार में विशिष्ट स्थान दिया गया।

आपको "गायन शाला" में शहनाई शिक्षक के तोर पर नियुक्त किया गया। आपने 19वी शताब्दी में शहनाई की वर्ग-शिक्षा देने का सफल प्रयोग किया। प्रयोग काफी सफल रहा ओर शहनाई के इतिहास के पहले वर्ग-खंड की शुरुआत हुई। शुरुआती दिनों में, शहनाई वर्ग में 4 विध्यार्थी को शिक्षा दी गई थी। साथ साथ पुना, महाराष्ट्र तथा अन्य रियातसो से कई विध्यार्थी, शहनाई शिक्षा लेने आए। उस काल खंड में, गुरु शिष्य परंपरा का प्रचलन था। आपने सर सयाजीराव की बात सुनकर, ब्रिटिश पद्धति अनुसार, सामुहीक वर्ग शिक्षा का प्रयोग शहनाई में शुरु किया। पुना के पंडित शंकरराव गायकवाड ने आपके इस कार्य के सहभागी रहै। शहनाई की शिक्षा के लिए आपने सन् 1918 से 1922 तक शहनाई वाद्य की प्रथम पुस्तक **"सनई वादन पाठमाला"** (भाग 1 से 4) का निर्माण किया। जो भारत वर्ष की शहनाई के ऊपर लिखी प्रथम पुस्तक मानी जाती है। जिसमे, प्रथम 2 पुस्तक में उस्ताद मौलाबक्षजी की नोटेशन पद्धति ओर आखरी 2 पुस्तक में पंडित भातखंडेजी की नोटेशन पद्धति का उपयोग किया गया था। उस वक्त की, आधुनिक विचार धारा से इस पुस्तक का निर्माण किया गया था। इस पुस्तक में रागों का विवरण, रागो की बंदिशे, तालो का नोटेशन भी दी गई है। शहनाई के साथ संगत के लिए ताल वाद्य 'संबल' का परिचय भी दिया गया है। सनई वादन पाठशाला में, शहनाई की शिक्षा पूर्ण होने के बाद विध्यार्थीओ को सर्टिफिकेट भी प्रदान किया जाता था। पुना ओर महाराष्ट्र से भी कई विध्यार्थी शहनाई शिक्षा के लिए आते रहै। इस तरह पंडितजी ने कई वर्षो तक शहनाई वादन की कला-शिक्षा का प्रदान किया ओर बड़ौदा संस्थान में शहनाई का विकास प्रचार-प्रसार ओर परंपरा की स्थापना की। आज वर्तमान बड़ौदा में शिंदे, गायकवाड, संत, भोंसले, गुरव, सोनवणे, वाघमारे, आदि 10 परिवार आज भी पंडित वसईकर जी की, शहनाई परंपरा को निभा रहै है।

बड़ौदा नरेश का, शहनाई वाद्य के प्रति विशेष प्यार था जिसकी वजह से शहनाई कला अपनी उच्च शिखर पर पहुची थी। इस दौर को शहनाई का "सुवर्ण काल" कहा जाता है। इस काल में बड़ौदा संस्थान में शहनाई को काफी प्राधान्य मिला। बड़ौदा में हर गली, हर मोड पर, मंदिरों में, नियत उत्सव स्थल, बैंड स्टैन्ड आदि जगहों पर शहनाई वादन होता था। हर सरकारी आयोजित प्रोग्राम में शहनाई वादन से ही शुरुआत की जाती थीa। प्राप्त जानकारी अनुसार कहा जाता है की दरबार में 'अष्ट प्रहर' शहनाई वादन होता था। आज भी गुजरात प्रान्त के बरोड़ा में सबसे ज्यादा शहनाई कलाकार अपनी शहनाई कला को सँजोए रखे है ओर शहनाई कला का विकास कर रहै है। इन सारी बातों से हम कह सकते है की वह समय बड़ौदा संस्थान में शहनाई का 'सुवर्ण काल' था। कई कलाकारों के लिए यह शहनाई कला आज आजीविका का साधन बनी हुई है। बड़ौदा संस्थान में सर सयाजीराव गायकवाड की शहनाई वाद्य के प्रति रुझान तथा पंडित गणपतराव वसईकर प्रख्यात शहनाई वादक की शिक्षा ओर उनका शहनाई के प्रति लगाव ही बड़ौदा संस्थान में 'शहनाई कला के विकास' में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। जिससे 'बड़ौदा संस्थान में शहनाई कला का विकास' उच्च दर्जे का हुआ हैं, जिसे हम शहनाई का 'सुवर्ण युग' कहा सकते हैं।

भूटान :- दक्षिण एशियाई संगीत परंपरा में भारत ओर भूटान को बोद्ध परंपरा के वाहक माने जाते हें। भारतीय शहनाई ओर भूटानी 'ग्यालिंग' अधिक तर एक जैसे सुषिर वाद्य माने जाते हैं। दोनों पत्रिकायुक्त याने रीड से बजाए जाने वाले वाद्य माने जाते हैं। भूटानी बौद्ध अनुस्थानों में प्रयुक्त किए जाने वाले ग्यालिंग के तीव्र मंत्रमुग्ध स्वर आकार भूटान को मंत्र मुग्ध करता हैं। यह भूटानी वाद्य बुद्ध मंदिर ओर त्शेचु उत्सवों का प्राण हें। भूटान में 'ग्यालिंग' परंपारिक संगीत प्रयुक्त होता हैं। भूटान में 'ग्यालिंग' केवल एक वाद्य नहीं, बल्कि बुद्ध के प्रति 'संगीतमय अंजली' माना जाता हैं। 'ग्यालिंग' वाद्य शहनाई वाद्य के समान लेकिन सजावट ओर धातु के शिल्प से एक विशिष्ठ पहैचान दि जाती हें। इस वाद्य का निचला प्याला तांबे, पीतल का होता हैं। रीड घास या ताड़ के पत्ते से बनती है। इस के आगे 7 छिद्र ओर पीछे 1 छिद्र होता हैं। तीव्र लयबद्ध मंत्रोच्चार के साथ संगति की जाती हैं। 'ग्यालिंग' यह बौद्ध देवताओं के आह्वान के लिए अखंड ध्वनि प्रदान करने में काम आता हैं।[6]

'ग्यालिंग' बजाने के लिए कलाकार एक तकनीक जीसे वृत्ताकार श्वास कहते है। इस तकनीक से कलाकार निरंतर ध्वनि उत्पन्न करते हैं। यही ध्वनि प्रथनाओं ओर चढ़ावों के साथ गूँजती रहती है , जिससे समारोह में एक आलोकीक अनुभूति का अहैसास जुड़ जाता हैं। इस की ध्वनि शांत ओर ध्यानमग्न वातावरण बनाने में मदद करती हैं। जिससे धार्मिक कार्य का हिस्सा बन जाती हैं।[7]

'ग्यालिंग' का विकास वायु वाद्यों के आदान प्रदान से हुआ हैं। तिबेटन बुद्धिस्ट चांट संबंधी अध्ययन से पता चलता हैं की पर्शियन, इंडियन, सनई या शहनाई से, यह वाद्य जुड़ा हुआ हैं। इस वाद्य को दो कलाकारों की जोड़ी में बजाय जाता हैं। इस वाद्य को धार्मिक एवं सांस्कृतिक स्तर से ही देखा जाना चाहिए।

इस तरह दोनों वाद्य सुषिर ओर रीड युक्त होकर दोनों संस्कृति का हिस्सा बन गए हें।

निष्कर्ष : शहनाई वाद्य भारतीय संगीत इतिहास का प्राचीन वाद्य माना जाता है। शहनाई वाद्य को आम तोर पे गुरुशिष्य परंपरा अनुसार सिखाया जाता था। शहनाई जैसे कठिन वाद्य की शिक्षा, बड़ौदा संस्थान में गुरु शिष्य परंपरा ओर आधुनाकालीन 'समूह-शीक्षण पद्धति' से दी जात थी। आज से 100 साल पहले सन् 1914 में शहनाई की वर्ग शिक्षा देना, शहनाई को गायकी अंग से बजाना तथा शहनाई शिक्षा के लिए पुस्तक, आदि कई असंभव कार्य को उच्च शिखर तक ले जाने का श्रेय, बड़ौदा संस्थान को जाता है। शहनाई वाद्य, बड़ौदा में सुबह-शाम सुनाई देता था। बड़ौदा, 'शहनाई कला का संपूर्ण विकास' करने वाली पहली रियासत बनी। शहनाई की तरह भूटानी वाद्य 'ग्यालिंग' तिब्बत, नेपाल, पर्शियन, भारत के रीड वाले वाद्यो के समूह का माना जाता हैं। भूटान में यह वाद्य केवल धार्मिक वाद्य नहीं, परंतु सांस्कृतिक पहैचान और पारंपरिक संगीत का एक महत्वपूर्ण प्रतीक भी माना जाता हैं।

सन्दर्भ सूची :

1. Upadhyay, R. (2015). Pre-Mordern Basis and The Modernilng project of sir sayajirao III (p. 45). The M. S. Uni of Baroda. Vadodara, India.
2. Upadhyay, R. (2015). Pre-Mordern Basis and The Modernilng project of sir sayajirao III (p. 274). The M. S. Uni of Baroda. Vadodara, India.
3. sangeet patrika, (1975). vadhy vadan ank (p. 22). Hathras.
4. आनन्द, के. के. (2016). शहनाई वाध की परंपरा का क्रमिक विकास (p. 3). New Delhi: संगीत एव ललित कला संकाय.
5. Sant, V. (2019). Ustad maulabaksh dwara rachit granth sahitya aewam unaka sangitik yogdan : ek vishleshsnatmak Adyayan. Vadodara: The M. S. University of Baroda.
6. Thinley, Lopen Nado (2004). Music and Performing Arts of Bhutan: A Cultural Heritage Study. Department of Culture, Ministry of Home and Cultural Affairs, Thimphu. (Page No. 67–75).
7. PhD thesis :- STRINGED INSTRUMENTS OF BHUTANESE MUSIC - A COMPREHENSIVE STUDY - **DORJI, SONAM** May-2025 The Maharaja Sayajirao University of Baroda

सन्दर्भ ग्रंथ :

1. Pandit, G. P. (1914). sanai vaadan pathmala. Baroda: M. C. Kothari.
2. Sangeet Patrika, (1975). Vadhy vadan ank (p. 22). Hathras.
3. Paranjape, S. S. (2015). Bhartiya Sangeet ka Itihas. Varanasi: Chaukhambha Vidya Bhavan.
4. आनन्द, के. के. (2016). शहनाई वाध की परंपरा का क्रमिक विकास (p. 3). न्यू दिल्ली: संगीत एव ललित कला संकाय.
5. Sant, V. (2019). Ustad maulabaksh dwara rachit granth sahitya aewam unaka sangitik yogdan : ek vishleshsnatmak Adyayan. Vadodara: The M. S. University of Baroda.
6. Thinley, Lopen Nado (2004). Music and Performing Arts of Bhutan: A Cultural Heritage Study. Department of Culture, Ministry of Home and Cultural Affairs, Thimphu. (Page No. 67–75).
7. Dorji, S.(May-2025) STRINGED INSTRUMENTS OF BHUTANESE MUSIC - A COMPREHENSIVE STUDY – Vadodara: The Maharaja Sayajirao University of Baroda.

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-163-167

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 163-167
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

कु. सरिता
शोधार्थी, (हिंदी-विभाग),
डी. एस. बी. परिसर, नैनीताल

Corresponding Author :

कु. सरिता
शोधार्थी, (हिंदी-विभाग),
डी. एस. बी. परिसर, नैनीताल

भारत-भूटान संबंध : सांस्कृतिक आयाम और विदेश नीति

शोध सार : भारत विश्व में सांस्कृतिक समरसता का केंद्र माना जाता है। भारत अपने सभी पड़ोसी देशों के साथ मित्रवत व्यवहार करता है। अपनी संस्कृति को साझा करता है और अपने पड़ोसी देशों की संस्कृति को अपनाता है। भारत के सभी पड़ोसी देशों में भूटान ऐसा देश है जिसके साथ सांस्कृतिक, व्यावसायिक, आर्थिक और राजनीतिक संबंधों को विशेष महत्व दिया गया है। भूटान और भारत के मध्य सद्भावना, विश्वास, सूझबूझ, मैत्री और पारस्परिक सहयोग का संबंध रहा है। अंतर्राष्ट्रीय संबंध स्थापित करने के लिए परस्पर सहयोग बहुत जरूरी होता है। राष्ट्रहित को ध्यान में रखकर सद्भावना और संघर्ष दोनों का समावेश आवश्यक होता है। सहयोग की दृष्टि से सांस्कृतिक संबंध बहुत लंबे समय से चला आ रहा है जो दोनों देशों के मध्य ऐतिहासिक जुड़ाव, मूल्यों की समझ पर बल देता है और दोनों के बीच संबंध को गहरा बनाने में मदद करता है। भारत-भूटान के बीच संबंध बहुत पुराना है। भारत भूटान का एक घनिष्ठ मित्रराष्ट्र है। दोनों के मध्य सभी प्रकार के संबंध रणनीतिक और कूटनीतिक स्तर पर मजबूत और प्रगाढ़ रहे हैं। यह लेख दोनों देशों के मध्य सांस्कृतिक संबंधों के सेतु का कार्य करता है। यह आर्थिक और राजनीतिक प्रभाव पर बल न देते हुए दोनों के मध्य स्थापित सांस्कृतिक मूल्यों को महत्व देते हुए उसके संरक्षण और प्रचार-प्रसार पर विशेष बल देता है।

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य भारत-भूटान के सांस्कृतिक संबंध के संदर्भ में यह स्पष्ट करना है कि दोनों देशों के मध्य सांस्कृतिक संबंध कैसे बना और किस प्रकार दोनों देश एक-दूसरे के सांस्कृतिक विरासत को अपनाकर आगे की पीढ़ियों को जीवंत रूप में हस्तांतरित कर रहे हैं। सांस्कृतिक विरासतों और धरोहरों को संजोने में अपनी अहम भूमिका निभा रहे हैं। सांस्कृतिक एकता ऐतिहासिक अनुभवों तथा सामूहिक स्मृतियों से पोषित होती है। सांस्कृतिक एकता सहिष्णुता, सामाजिक संतुलन और पारस्परिक स्वीकार्यता को मजबूती प्रदान करता है।

वर्तमान संदर्भ में यह विचार मुख्य रूप से प्रासंगिक है, क्योंकि यह सांस्कृतिक बहुलता के मध्य समरसता तथा सहअस्तित्व की वैचारिक पृष्ठभूमि प्रदान करता है।

बीज शब्द : सांस्कृतिक, समरसता, व्यावसायिक, मित्रराष्ट्र, कूटनीति, सहअस्तित्व।

मूल आलेख : अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत और भूटान के मध्य मिसाल कायम करने वाला पारस्परिक संबंध किसी से छुपा नहीं है। दोनों देशों के मध्य सद्भावना, विश्वास, आपसी समझ और बंधुत्व पर आधारित द्विपक्षीय संबंध स्थापित है। भारत-भूटान के मध्य ऐतिहासिक संबंध है, जिसने एक मजबूत कूटनीतिक साझेदारी की नींव रखने का कार्य किया। दोनों देशों के आपसी सांस्कृतिक समानताओं, सामूहिक मूल्यों ने एक ऐसा अनोखा रिश्ता कायम किया है जो राजनीतिक और आर्थिक सीमाओं को नहीं मानता। दोनों के मध्य सांस्कृतिक, कूटनीति कायम करने से एक-दूसरे के प्रति आपसी समझ, परंपराएं और सांस्कृतिक धरोहरों के आदान-प्रदान को बढ़ावा मिलता है। दोनों देशों के मध्य अनेक वार्ताएं एवं संधियां होती रही हैं। भारत की भूटान के प्रति नरम शक्ति कूटनीतिक प्रभाव ज्यादा दिखाई देता है। इसी का असर है कि दोनों देशों के मध्य आपसी सांस्कृतिक और व्यापारिक संबंध मजबूती से स्थापित हुए हैं। नामवर सिंह अपने निबंध 'आलोचना की संस्कृति और संस्कृति की आलोचना' में भारतीय संस्कृति का अध्ययन करते हुए राष्ट्रीय चेतना के विकास में सांस्कृतिक चेतना के महत्व को बताते हुए कहते हैं- "राष्ट्रीय चेतना के विकास के बिना स्वाधीनता की प्राप्ति असंभव थी और कहने की आवश्यकता नहीं कि राष्ट्रीय चेतना वस्तुतः एक सांस्कृतिक चेतना है। स्वाधीनता-प्राप्ति के बाद इस सांस्कृतिक चेतना की आवश्यकता कम नहीं हुई है।"[1]

भारत-भूटान का सांस्कृतिक संबंध आज से ही नहीं स्थापित हुआ है, बल्कि इनका संबंध ऐतिहासिक रूप से बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार से शुरु हुआ था। भूटान में बौद्ध धर्म का जो प्रभाव और असर हमें आज दिखाई देता है, वह भारत से गया है। वर्तमान में भी बुद्ध की शिक्षा और धार्मिक शिक्षाओं का गहरा संबंध भारत और भूटान के बौद्ध मठों में समरसता और घनिष्ठता को बढ़ाने वाले हैं। भारत-भूटान के मध्य 1949 में एक ऐतिहासिक औपचारिक 'मैत्री संधि' पर हस्ताक्षर हुए। जिसके तहत भूटान की विदेश नीति का मार्गदर्शक भारत रहा। इस संधि में 1907 में संशोधन किया गया और इस प्रावधान को समाप्त कर दिया गया। तब से भूटान अपनी विदेश नीति के फैसले स्वतंत्र रूप से लेने लगा। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने 1958 में भूटान की यात्रा की थी। उन्होंने दोनों देशों को एकसूत्र में बांधने का कार्य किया। भूटान में प्रथम पंचवर्षीय योजना 1961 में भारत की सहायता से प्रारंभ की गई थी जिससे दोनों देशों को आर्थिक मजबूती मिली। भूटान की लोकतांत्रिक प्रणाली को मजबूती प्रदान करने में भारत ने अहम भूमिका निभाई है।

अगस्त, 2003 में भारत-भूटान फाउंडेशन (निर्माण कार्य) की स्थापना की गई जिसका मकसद कला, संस्कृति, शिक्षा और पर्यावरण जैसे मुद्दों पर दोनों देशों का आपसी तालमेल बढ़ाना था। इस फाउंडेशन के द्वारा शैक्षिक, सांस्कृतिक तथा वैज्ञानिक रूप से अनेक गतिविधियां की जाती हैं। हजारों की संख्या में भारतीय नागरिक भूटान में शिक्षा तथा निर्माण कार्य (कंस्ट्रक्शन) में लगे हैं। इसी क्रम में भारत के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह 2008 में भूटान की यात्रा पर गए और भूटान को लोकतंत्र स्थापित करने के लिए प्रोत्साहित किया तथा बिजली आयात करने पर समझौता किया। भारत में बिजली ऊर्जा की बढ़ती जरूरत को पूराकर भूटान अपनी अर्थव्यवस्था को भी मजबूत बना रहा है। भूटान का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार देश भारत है।

2010 में दोनों देशों के सहयोग से शुरु की गई नेहरु-वांगचुक छात्रवृत्ति योजना को जनवरी, 2020 में पुनः 5 वर्षों के लिए बढ़ायी गयी जिसके लिए एक संधि पर हस्ताक्षर हुए। इस छात्रवृत्ति योजना के तहत जो छात्र अपने खर्चे पर पढ़ाई कर रहे हैं उन्हें आर्थिक मदद पहुंचाने में सहायता मिली है। भारतीय विश्वविद्यालयों में भूटानी छात्रों को इंजीनियरिंग, मेडिसिन, आईआईटी के साथ-साथ व्यावसायिक शिक्षा प्रशिक्षण भी मिलता है।

अगस्त, 2013 में भूटान के तत्कालीन प्रधानमंत्री भारत दौरे पर आए, तब भूटान की अर्थव्यवस्था को वित्तीय सहायता देते हुए 819 मिलियन अमेरिकी डॉलर देने के समझौते पर हस्ताक्षर हुए। इसी तरह वर्तमान प्रधानमंत्री द्वारा कई नीतियों पर समझौते हुए हैं और भारत-भूटान का रिश्ता और गहरा हुआ है। भारत और भूटान के लोगों को सांस्कृतिक रूप से एक-दूसरे के साथ जोड़ने के लिए 2003 में एक फाउंडेशन की स्थापना की गई। कोविड-19 में भूटान को वैक्सीन एवं दवाइयों की आपूर्ति के लिए भारत के 'वैक्सीन मैत्री पहल' के तहत मेड इन इंडिया 'कोविशील्ड' टीका सबसे पहले भूटान को पहुंचाया गया।

भारत-भूटान संबंध ज्ञान और शिक्षा के महत्व पर आधारित है। भूटान के लाखों छात्र भारत के विश्वविद्यालयों में शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं और छात्रवृत्ति भी प्राप्त कर रहे हैं। जिस कारण भूटानी छात्रों का सबसे पसंदीदा स्थान भारत बन गया है। भूटानी बौद्ध छात्रों को विश्वविख्यात नालंदा विश्वविद्यालय में भारत सरकार आमंत्रित कर उन्हें वहां बुलाती है जिससे दोनों देशों की सांस्कृतिक और आध्यात्मिक पारस्परिक संबंध और अधिक मजबूत होता है।

भारत की 'वसुधैव कुटुंबकम' और 'अतिथि देवो भवः' की प्राचीन सभ्यता और सांस्कृतिक अवधारणा ने दोनों देशों को एकता, अखंडता और बंधुत्व का पाठ पढ़ाया। दोनों देशों की सामूहिक बौद्ध पृष्ठभूमि मानवीय संबंध को और मजबूत करने तथा एक-दूसरे के साथ बेहतर ढंग से जुड़ने में सहायक सिद्ध हुई है। कोविड-19 महामारी के समय भारत ने भूटान को लगातार आवश्यकता की दवाइयां और टेक्निकल सहयोग पहुंचाकर यह बात सिद्ध किया है कि भारत 'वसुधैव कुटुंबकम' में विश्वास रखता है। दोनों देशों के मध्य योग को लेकर सकारात्मकता देखने को मिलती है। योग और बौद्ध धर्म का प्रचार-प्रसार दोनों देशों के मध्य आपसी संबंध को और मजबूती प्रदान करता है। भारत सरकार ने 'पंचामृत' की अवधारणा को अपनाते हुए सम्मान, संवाद, साझा, समृद्धि, क्षेत्रीय और वैश्विक सुरक्षा तथा सांस्कृतिक और सभ्यतागत संबंध जैसे पांच विषयों को शामिल किया गया है। जिसे भारत-भूटान विदेश नीति की मजबूती के नए आयाम के रूप में सम्मिलित किया गया है। योगाभ्यास से मानव जीवन में एकाग्रता, संतुलन और स्मरण शक्ति में वृद्धि होती है। योगाभ्यास से मानव जीवन बेहतर होता है और सोचने-समझने की सकारात्मक शक्ति बढ़ती है। भारतीय परंपरा में योग का शारीरिक, सामाजिक, मानसिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक महत्व का संतुलित रूप में देखने को मिलता है। योगाभ्यास से मानसिक तनाव तो कम होता ही है शैक्षणिक रूप से भी एकाग्रता लाने में योग का महत्वपूर्ण योगदान है।

भूटान बुद्धिस्ट देश है, वहां के साहित्य में बौद्ध कथा तिब्बत मंगोलिया और भारत में लोकप्रिय कहानियां प्रचलित हैं जो संभवत जातक कथाओं (बुद्ध की कथाएं) से प्रेरित हैं ऐसी ही एक साहित्यिक लोक कथा chow ping द्वारा 22 जून 2022 को Daily Bhutan में the story of the four harmonious friends in Bhutan शीर्षक से प्रकाशित की गई जिसमें चार मित्रों द्वारा एक दूसरे का सम्मान तथा ध्यान रखने की सौहार्दपूर्ण कहानी है यह बिल्कुल वैसी ही है जैसे भारत में लोक प्रचलित सम्मान और सहयोग की कहानियां हैं।

भारत-भूटान के मध्य का अंतरसंबंध एक अद्वितीय तथा स्थायी सांस्कृतिक संवाद का प्रतिनिधित्व करता है जो सदियों से चला आ रहा है। चित्रकला, जीवंत लोककला, कला परंपराओं को आपसी संबंध से आदान-प्रदान किया जाता है। मानव प्रकृति की सबसे विशिष्ट कलाकृति है। विकास के दौड़ में मानव कहीं खोता जा रहा है तथा मानव मूल्य गिरते जा रहे हैं। मानव-मानव में विभेद किया जाता है लेकिन भारत-भूटान का सांस्कृतिक संबंध राजनीतिक, आर्थिक न होकर खान-पान, भाषा, रीति-रिवाज, पहनावा, आचार-विचार, परंपरा से जुड़ा हुआ है। जिस देश की भाषा और साहित्य उन्नत होता है उस देश की संस्कृति भी उन्नत होती है। शिक्षा, साहित्य, भाषा और संस्कृति के द्वारा मानव अपने सुख-दुःख, उत्थान-पतन, आशा-निराशा, खान-पान, रहन-सहन, पहनावा तथा साहस-भय को स्पष्ट रूप से उजागर करता है। स्वतंत्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद कहते हैं कि- "जिस देश को अपनी

भाषा और साहित्य के गौरव का अनुभव नहीं होता है, वह उन्नत नहीं हो सकता।"[2]

संस्कृति मानव जीवन को जीवंत बनाए रखने के लिए अनेक संभावनाएं लेकर आती है। कोरोना काल के दौरान भारत ने अपने पड़ोसी देश भूटान की इस संकट की घड़ी में हाइड्रोक्सीक्लोरोक्वीन तथा अन्य दवाओं की पूर्ति की, जिससे भारत-भूटान की विदेश नीति को मजबूती मिली तथा साथ ही सांस्कृतिक दृष्टि से भी दोनों के संबंध और मजबूत हुए। संस्कृति और साहित्य पर हिंदी साहित्य के आलोचक हजारी प्रसाद द्विवेदी का गहन दृष्टि दिखाई देती है। उनकी इस दृष्टि के बारे में निर्मला जैन कहती हैं- "द्विवेदी जी की नजर में राजनीतिक सामाजिक परिस्थितियों से कहीं अधिक महत्व साहित्य और संस्कृति की परंपरा का है-वह भी उनके पंथ-निरपेक्ष अविच्छिन्न रूप का। उन्होंने बार-बार साग्रह कहा है कि परंपराएँ एक या दो नहीं-अनेक है। द्विवेदी जी ने भारतीय संस्कृति के बारे में नया इतिहास-बोध, कालिदास और कबीर से नया परिचय, मानवीय मनीषा के सार-तत्व की समझ की व्यापक विश्व-दृष्टि शांतिनिकेतन-वास के दौरान ही पा ली थी।"[3]

भूटान नरेश जिग्मे खेसर नामग्याल वांगचुक के 2023 में भारत आगमन पर दोनों देशों की द्विपक्षीय संबंध और मजबूत हुए। 5 साल की अवधि के लिए वित्तीय सहायता, चैक पोस्ट जयगांव (पश्चिम बंगाल) एवं फंसोलिंग फुएंत्शोलिंग (भूटान) के मध्य स्थापित हुआ। भारत, भूटान के डोकलाम दावे का पूर्ण समर्थक है। भारत रणनीतिक रूप से भूटान के साथ-साथ असम के सिलिगुड़ी कॉरिडोर की सुरक्षा सुनिश्चित करता है। भूटान ने पर्यावरण और सांस्कृतिक परंपराओं की सुरक्षा की चिंता व्यक्त करते हुए बीबीआईएन मोटर वाहन समझौते को अस्वीकार किया। वाहनों के बढ़ने से वायु प्रदूषण होगा और पारिस्थितिकी को क्षति पहुंचेगी इसके लिए भूटान ने अपनी चिंता व्यक्त कर इस समझौते को मानने से इनकार कर दिया। भारत की सलाह पर भूटान की विधायिका ने इस विधेयक की अस्वीकृति पर पुनर्विचार की सहमति जताई।

भूटान नरेश जिम्मे खेसर नामग्याल वांगचुक ने 5-6 दिसंबर, 2024 को अपने देश के उच्चस्तरीय शिष्टमंडल के साथ भारत की आधिकारिक यात्रा पर आए। दोनों देशों के मध्य द्विपक्षीय सहयोग, वैश्विक मुद्दों, आपसी क्षेत्रीय सहयोग जैसे विषयों पर चर्चा-परिचर्चा की गई। इससे पूर्व मार्च, 2024 में हुई बैठक का हवाला देते हुए दोनों देशों ने संतोष व्यक्त किया। व्यापार एवं निवेश, स्वच्छ ऊर्जा, प्रौद्योगिकी एवं अंतरिक्ष मामलों के साथ-साथ विभिन्न विषयों पर द्विपक्षीय सहयोग की मजबूती पर समझौता हुआ। भूटान के विकास के लिए भारत द्वारा आर्थिक सहायता में बढ़ोतरी तथा भूटान की शाही सरकार के आर्थिक प्रोत्साहन के लिए भूटान की 13वीं पंचवर्षीय योजना (2024-2029) के तहत वित्तीय सहयोग के लिए भूटानी सरकार ने भारत सरकार को धन्यवाद ज्ञापित किया। भूटानी नरेश ने भारत के प्रधानमंत्री को बताया कि गेलेफू माइंडफुलनेस सिरी (विशेष प्रशासनिक क्षेत्र) के निर्माण का सपना पूरा होने पर दोनों देशों को लाभ पहुंचेगा। भारतीय प्रधानमंत्री ने इस परियोजना के निरंतर सहयोग की स्वीकृति प्रदान की। भारत-भूटान के मध्य सहयोग की अन्य परियोजनाओं- क्रॉस बॉर्डर कनेक्टिविटी, पुनात्सांगधू पन बिजली परियोजना तथा रेल लिंक इत्यादि के विकास पर परिचर्चा हुई।

3 फरवरी, 2025 को भूटान के राजा जिग्मे खेसर नामग्याल वांगचुक भारत दौरे पर आए और प्रयागराज संगम पर स्नान किया। भूटान नरेश का निमंत्रण प्राप्त कर 11-12 नवंबर, 2025 को प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने भूटान की दो दिवसीय आधिकारिक यात्रा की। वह इस दौरान महामहिम चतुर्थ डुक ग्यालपो की 70वीं जयंती के अवसर पर भूटान के मुख्य अतिथि के रूप में शामिल हुए। थिम्पू में जारी विश्वस्तरीय शांति निवेदन समारोह में प्रधानमंत्री मोदी ने भी भाग लिया। समारोह के दौरान भूटान नरेश ने सामूहिक पूजा-अर्चना के लिए भूटान की राजधानी थिम्पू में भारत से भगवान बुद्ध के पवित्र पिपराहवा अवशेषों की गरिमापूर्ण उपस्थिति की प्रशंसा की। इससे यात्रा के दौरान "महामहिम नरेश और प्रधानमंत्री मोदी ने 11 नवंबर 2025 को भगवान बुद्ध के पवित्र पिपराहवा अवशेषों की गरिमामय उपस्थिति

में, 1020 मेगावाट की पुनात्सांगहू-II जलविद्युत परियोजना का संयुक्त रूप से उद्घाटन किया। यह परियोजना जलविद्युत के क्षेत्र में भूटान और भारत के बीच मैत्री और अनुकरणीय सहयोग का प्रमाण है। उन्होंने पुनात्सांगडू-II से भारत को बिजली के निर्यात की शुरुआत का स्वागत किया। दोनों पक्षों ने मार्च 2024 की ऊर्जा साझेदारी पर संयुक्त दृष्टिकोण के कार्यान्वयन पर भी संतोष व्यक्त किया।"[4]

इस यात्रा के समय दोनों देशों के मध्य निम्नलिखित संधि घोषणा पत्रों पर हस्ताक्षर किए गए: "नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्र में सहयोग पर ऊर्जा और प्राकृतिक संसाधन मंत्रालय, भूटान की रॉयल सरकार (आरजीओवी) तथा नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय, भारत सरकार (जीओआई) के बीच समझौता ज्ञापन; स्वास्थ्य मंत्रालय, आरजीओबी और स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार के बीच स्वास्थ्य और चिकित्सा के क्षेत्र में सहयोग पर समझौता ज्ञापन; पीईएमए सचिवालय और भारत सरकार के राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य एवं तंत्रिका विज्ञान संस्थान के बीच संस्थागत संबंध निर्माण पर समझौता ज्ञापन।"[5]

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि भारत-भूटान का सांस्कृतिक और विदेश नीति की दृष्टि से अच्छे संबंध हैं। दोनों एक बहुत अच्छे साझेदार की भूमिका निभा रहे हैं। भारत अपने सामरिक हितों की रक्षा करते हुए भूटान का हर संभव मदद करता रहा है उसके साथ हमेशा खड़ा रहा है और आगे भी रहेगा। कहा जाता है कि साहित्य समाज का दर्पण होता है इसलिए किसी देश की संस्कृति को जानना हो तो वहां के साहित्य का गहनता से अध्ययन किया जाना चाहिए। संस्कृति व्यक्ति विशेष के व्यक्तित्व और उसके संस्कारों का परिचायक होती है। पर्यावरण, शिक्षा, सांस्कृतिक विरासतों एवं बिजली उत्पादन को लेकर भूटान की जो शिकायतें हैं उसका समाधान भारत द्वारा तेजी से किया जाना चाहिए जिससे दोनों देशों के मध्य सांस्कृतिक समरसता बनी रहे। दोनों के संबंध आने वाले समय में नई उपलब्धि हासिल कर सकें तथा नई ऊंचाई छू सकें। बौद्ध धर्म के माध्यम से दोनों देशों के मध्य पर्यटन को बढ़ावा देना चाहिए ताकि अधिक-से-अधिक लोगों को जोड़ा जा सके।

वैश्वीकरण के कारण एक ओर भाषा एवं संस्कृति का प्रचार-प्रसार हो रहा है तो दूसरी ओर भाषाई एवं सांस्कृतिक अस्मिता पर संकट मंडरा रहा है। पूंजीवाद और बाजारवाद सांस्कृतिक विविधता को समाप्त कर रहा है। लोकगीत, लोककथा, पारंपरिक नृत्य, संगीत और सांस्कृतिक धरोहरों एवं विरासतों को औपचारिकता के रूप में निभाया जा रहा है। पश्चिमीकरण और बाजारवाद सांस्कृतिक पहचान को क्षति पहुंचा रहे हैं। भारतीय और भूटानी संस्कृति तथा उनके मूलभूत तत्वों का गहनता से विश्लेषण किये जाने पर पता चलता है कि दोनों देश किस तरह एक-दूसरे की सांस्कृतिक धरोहरों को अपना रहे हैं और उन धरोहरों को सुरक्षा प्रदान कर आगे बढ़ाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। इससे भारत-भूटान के सामाजिक, सांस्कृतिक ताने-बाने को बड़ी सहजता से समझा जा सकता है। संस्कृति के विविध पहलुओं का सूक्ष्मता से विश्लेषण कर उसे अपनाकर सांस्कृतिक बल प्रदान किया जा सकता है। सांस्कृतिक पहलुओं को जानने और समझने के लिए दोनों देशों को एक-दूसरे के साहित्य का गहन अध्ययन करना होगा।

संदर्भ ग्रंथ :

1. सिंह, नामवर, संकलित निबंध, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, पृष्ठ सं. 98
2. जैन, योगेश चंद्र, निबंधमाला 221, अरिहंत पब्लिकेशंस (इंडिया) लिमिटेड, नई दिल्ली, पृष्ठ सं. 302
3. जैन, निर्मला (संपादक), निबंधों की दुनिया हजारीप्रसाद द्विवेदी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ सं. 11
4. https://www.pib.gov.in, 12 Nov, 2025, भारत सरकार मंत्रालय
5. https://www.pib.gov.in, 12 Nov, 2025, भारत सरकार मंत्रालय

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-168-171

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 168-171
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. संदीप कुमार चौरसिया

अकादमिक काउंसलर- योग, स्कूल ऑफ़ हेल्थ साइंस, लखनऊ क्षेत्रीय केंद्र, इग्नू

Corresponding Author :

डॉ. संदीप कुमार चौरसिया

अकादमिक काउंसलर- योग, स्कूल ऑफ़ हेल्थ साइंस, लखनऊ क्षेत्रीय केंद्र, इग्नू

भारत और भूटान के योग साहित्य में अवधारणाओं एवं साधना-पद्धतियों का तुलनात्मक विश्लेषण

योग भारतीय ज्ञान-परम्परा की एक व्यापक अवधारणा है, जिसमें शरीर, प्राण, मन, चेतना, नैतिकता और मुक्ति को परस्पर सम्बद्ध माना गया है। आधुनिक समय में योग प्रायः आसन और शारीरिक व्यायाम तक सीमित समझा जाता है, जबकि भारतीय योग-साहित्य में इसकी अवधारणा कहीं अधिक विस्तृत है। उपनिषदों, सांख्य-योग, बौद्ध एवं जैन परम्पराओं, तंत्र, नाथ सम्प्रदाय तथा हठयोग ने योग की विविध साधना-पद्धतियों और दार्शनिक दृष्टियों को विकसित किया। हिमालयी क्षेत्र में भारतीय बौद्ध तथा तांत्रिक विचारों का तिब्बती और स्थानीय परम्पराओं के साथ दीर्घकालीन संवाद हुआ। भूटान इसी सांस्कृतिक क्षेत्र का महत्त्वपूर्ण हिस्सा है, जहाँ वज्रयान बौद्ध धर्म, ध्यान-साधना, तांत्रिक योग, पारम्परिक चिकित्सा और स्थानीय ज्ञान-परम्पराओं का विशिष्ट समन्वय दिखाई देता है। त्सालुंग–त्रुलखोर जैसी साधनाओं में शरीर, श्वास, आन्तरिक वायु और सूक्ष्म चैनलों के माध्यम से चेतना के रूपान्तरण पर बल दिया जाता है। भारतीय हठयोग में नाड़ी, प्राण और सुषुम्ना तथा तिब्बती-भूटानी परम्पराओं में त्सा, त्सुंग और द्बु मा जैसी अवधारणाओं के बीच संरचनात्मक साम्य दिखाई देता है। इसी कारण भारत और भूटान की योग-परम्पराओं के ऐतिहासिक सम्बन्ध का प्रश्न महत्त्वपूर्ण हो जाता है। हालांकि केवल शब्द-साम्य के आधार पर दोनों को समान मानना उचित नहीं है। इनके दार्शनिक लक्ष्य, धार्मिक संदर्भ, साधना-क्रम और मुक्ति-दृष्टि को भी ध्यान में रखना आवश्यक है।

इस शोधपत्र का प्रमुख प्रश्न यह है कि भारत और भूटान की योग-परम्पराओं में दिखाई देने वाली समानताएँ किस प्रकार की हैं और वे ऐतिहासिक सम्पर्क, तांत्रिक सांस्कृतिक वातावरण अथवा समान साधनात्मक आवश्यकताओं से किस सीमा तक सम्बद्ध हैं। विशेष रूप से नाड़ी त्सा, प्राण त्सुंग और सुषुम्ना द्बु मा जैसी अवधारणाओं का तुलनात्मक अध्ययन इस सम्बन्ध को समझने में उपयोगी है।

भारतीय योग-साहित्य की प्रमुख अवधारणाएँ : भारतीय योग-

साहित्य बहुस्तरीय और विविधतापूर्ण है। पतञ्जलि के योगदर्शन में योग को चित्तवृत्तियों के निरोध के रूप में परिभाषित किया गया है। अष्टाङ्ग योग- यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि, नैतिक अनुशासन से लेकर मानसिक एकाग्रता और समाधि तक की साधना-पद्धति प्रस्तुत करता है। हठयोग परम्परा में शरीर और प्राण को साधना के सक्रिय माध्यम के रूप में विशेष महत्त्व मिला। हठयोगप्रदीपिका, घेरण्डसंहिता और शिवसंहिता जैसे ग्रन्थों में आसन, प्राणायाम, मुद्रा, बन्ध, नाड़ी और ध्यान की विभिन्न विधियाँ मिलती हैं। नाथ परम्परा में शरीर को केवल भौतिक संरचना न मानकर सूक्ष्म साधना का क्षेत्र माना गया। नाड़ी, चक्र, कुण्डलिनी, प्राण, मुद्रा और बन्ध जैसी अवधारणाएँ साधक के शरीर और चेतना के सम्बन्ध को स्पष्ट करती हैं।

अतः भारतीय योग को केवल आसन-केन्द्रित पद्धति के रूप में देखना उसके ऐतिहासिक स्वरूप को सीमित करना होगा। यहाँ शरीर का अनुशासन प्राण के नियमन, मानसिक एकाग्रता और आध्यात्मिक अनुभूति की व्यापक प्रक्रिया से जुड़ा है।

भूटान की योगिक एवं तांत्रिक परम्परा : भूटान की धार्मिक-सांस्कृतिक परम्परा पर वज्रयान बौद्ध धर्म का गहरा प्रभाव है। इसके साथ ध्यान, तंत्र, पारम्परिक चिकित्सा और स्थानीय ज्ञान-प्रणालियों का सम्बन्ध भी स्थापित हुआ। इसलिए भूटान की योग-परम्परा का अध्ययन आधुनिक योगासन की संकीर्ण अवधारणा से नहीं किया जा सकता।

त्सालुंग–त्रुलखोर में शरीर की गतियों, विशेष श्वसन-विधियों, आन्तरिक वायु तथा सूक्ष्म चैनलों का समन्वय मिलता है। त्सा सूक्ष्म चैनलों, ल्ुंग आन्तरिक वायु और द्बु मा मध्य-चैनल से सम्बन्धित हैं। इन साधनाओं का उद्देश्य केवल शारीरिक स्वास्थ्य या लचीलेपन तक सीमित नहीं, बल्कि मानसिक अनुशासन और तांत्रिक चेतना-परिवर्तन से भी जुड़ा है। भूटानी संदर्भ में शरीर, वायु और मन को एक-दूसरे से पृथक न मानकर साधना की परस्पर सम्बद्ध इकाइयों के रूप में देखा जाता है। यही विशेषता इसे भारतीय हठयोग के साथ तुलनात्मक अध्ययन के लिए महत्त्वपूर्ण बनाती है।

त्सालुंग–त्रुलखोर और हठयोग : नाथ हठयोग तथा त्सालुंग–त्रुलखोर के अध्ययन से दोनों में शरीर और श्वास अथवा वायु के संयुक्त प्रयोग की समानता सामने आती है। हठयोग में आसन के बाद प्राणायाम, मुद्रा और बन्ध के माध्यम से प्राण के नियमन पर बल दिया जाता है। त्सालुंग–त्रुलखोर में भी शारीरिक गति, श्वास और मानसिक एकाग्रता को एकीकृत किया जाता है।

इस समानता को साधनात्मक संरचना के स्तर पर समझना अधिक उचित है। दोनों में शरीर को साधना का सक्रिय उपकरण बनाया जाता है और श्वास अथवा आन्तरिक वायु को मानसिक अवस्था से सम्बद्ध माना जाता है। किन्तु इससे यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि दोनों परम्पराएँ एक ही हैं। इनके धार्मिक और दार्शनिक संदर्भ अलग हैं। भारतीय हठयोग की विभिन्न धाराएँ मोक्ष, समाधि, कुण्डलिनी अथवा परम तत्त्व-बोध से जुड़ सकती हैं, जबकि वज्रयान साधना का सम्बन्ध बुद्धत्व, बोधिचित्त और शून्यता-बोध से है।

अमृतसिद्धि और भारत–भूटानी ज्ञान-संवाद : भारत और तिब्बती-भूटानी योग-परम्पराओं के सम्बन्ध को समझने में अमृतसिद्धि विशेष महत्त्व रखती है। यह ग्रन्थ प्रारम्भिक हठयोग तथा व्यापक तांत्रिक-बौद्ध परिवेश के सम्बन्धों पर विचार करने का महत्त्वपूर्ण आधार प्रदान करता है। इसके तिब्बती पाठ-परम्परा में शरीर, श्वास, मुद्रा और साधना से सम्बन्धित सामग्री मिलती है।

अमृतसिद्धि का महत्त्व इस बात में है कि यह योगिक ज्ञान के सांस्कृतिक संचरण को एक गतिशील प्रक्रिया के रूप में देखने की सम्भावना प्रदान करती है। किसी साधना-पद्धति का एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाना केवल अनुवाद की प्रक्रिया नहीं होता; उसमें गुरु-परम्परा, मौखिक शिक्षण, स्थानीय व्याख्या और धार्मिक आवश्यकताओं की भूमिका भी होती है। इसलिए भारत से भूटानी क्षेत्र तक योगिक विचारों के प्रसार को प्रभाव, ग्रहण, अनुकूलन और पुनर्व्याख्या

की संयुक्त प्रक्रिया के रूप में देखना अधिक उपयुक्त है।

नाड़ी और त्सा : भारतीय हठयोग में नाड़ी सूक्ष्म शरीर के भीतर प्राण के प्रवाह से सम्बन्धित अवधारणा है। इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना को विशेष महत्त्व प्राप्त है, यद्यपि विभिन्न ग्रन्थों में नाड़ियों की संख्या और संरचना के विषय में मतभेद मिलते हैं। तिब्बती-भूटानी परम्परा में त्सा सूक्ष्म चैनलों के लिए प्रयुक्त होता है। तुलनात्मक दृष्टि से इसे नाड़ी के निकट माना जा सकता है, लेकिन दोनों को पूर्णतः समान नहीं समझना चाहिए। समानता मुख्यतः इस बात में है कि दोनों प्रणालियाँ शरीर के भीतर सूक्ष्म मार्गों की कल्पना करके उन्हें साधना की प्रक्रिया से जोड़ती हैं।

इसी प्रकार भारतीय चक्र और तिब्बती-भूटानी खोर लो में भी संरचनात्मक साम्य दिखाई देता है। फिर भी चक्रों की संख्या, स्थिति और कार्य के सम्बन्ध में भारतीय ग्रन्थों में विविधता है और तिब्बती परम्पराओं में भी एकरूपता नहीं मिलती। अतः तुलनात्मक अध्ययन में इन अवधारणाओं को समतुल्य के बजाय तुलनीय मानना अधिक वैज्ञानिक होगा।

प्राण और ल्ुंग : भारतीय योग में प्राण जीवन की गतिशील शक्ति तथा श्वास से सम्बद्ध प्रमुख अवधारणा है। हठयोग में प्राण और मन के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध माना गया है। प्राणायाम और कुम्भक जैसी साधनाओं द्वारा श्वास और प्राण के नियमन का प्रयास किया जाता है।

तिब्बती-भूटानी परम्परा में ल्ुंग आन्तरिक वायु से सम्बन्धित है। त्सालुंग साधना में वायु, सूक्ष्म चैनलों और मानसिक अवस्थाओं के बीच सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। इस स्तर पर दोनों परम्पराओं में उल्लेखनीय साम्य है। अन्तर इनके दार्शनिक प्रयोजन में है। भारतीय योग में प्राण-साधना मोक्ष अथवा समाधि की दिशा में प्रयुक्त हो सकती है, जबकि वज्रयान में वायु-साधना बुद्धत्व और तांत्रिक चेतना-परिवर्तन के व्यापक मार्ग का हिस्सा है।

सुषुम्ना और द्बु मा : भारतीय हठयोग में सुषुम्ना को मध्य नाड़ी माना जाता है। प्राण को मध्य मार्ग में स्थापित करना अनेक हठयोगिक साधनाओं में महत्त्वपूर्ण लक्ष्य है। नाड़ीशोधन, प्राणायाम, मुद्रा और बन्ध जैसी तकनीकों को इसी साधनात्मक संरचना से जोड़ा जाता है।

तिब्बती-भूटानी परम्परा में द्बु मा मध्य-चैनल के लिए प्रयुक्त होता है। त्सालुंग साधना में आन्तरिक वायु और मध्य-चैनल का सम्बन्ध महत्त्वपूर्ण है। इसलिए दोनों प्रणालियों में पार्श्व मार्ग, मध्य मार्ग, वायु का नियमन और चेतना-परिवर्तन जैसी संरचनात्मक समानताएँ देखी जा सकती हैं। लेकिन इनके प्रतीकात्मक और दार्शनिक अर्थ सम्बन्धित परम्पराओं के अनुरूप अलग-अलग हैं।

ध्यान, शरीर और आध्यात्मिक लक्ष्य : पतञ्जलि योग परम्परा में धारणा, ध्यान और समाधि मानसिक एकाग्रता की क्रमिक अवस्थाएँ हैं। हठयोग में शरीर और प्राण की साधना भी अन्ततः ध्यान और समाधि की भूमि तैयार करती है। इसके विपरीत वज्रयान परम्परा में शरीर और वायु की साधना तांत्रिक ध्यान तथा बुद्धत्व की दिशा में प्रयुक्त होती है।

यहाँ तुलनात्मक अध्ययन का एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त सामने आता है,समान तकनीक का अर्थ समान दर्शन नहीं होता। शरीर, श्वास अथवा सूक्ष्म चैनलों की समान अवधारणा अलग धार्मिक प्रणालियों में भिन्न अर्थ ग्रहण कर सकती है। पतञ्जलि योग में कैवल्य, सांख्य-आधारित पुरुष-प्रकृति विवेक से सम्बन्धित है, जबकि बौद्ध परम्परा स्थायी आत्मा के सिद्धान्त को स्वीकार नहीं करती और बुद्धत्व तथा शून्यता-बोध को महत्त्व देती है।

सोवा रिग्पा और झिनेय–लुजोंग : भूटान में सोवा रिग्पा से सम्बद्ध झिनेय–लुजोंग परम्परा योग, ध्यान, शरीर-प्रशिक्षण और पारम्परिक चिकित्सा के समकालीन सम्बन्ध को समझने का अवसर देती है। झिनेय मानसिक स्थिरता और ध्यान से तथा लुजोंग शारीरिक प्रशिक्षण से सम्बन्धित माना जाता है। इसमें पारम्परिक ज्ञान को स्वास्थ्य, शिक्षा और मानसिक संतुलन के आधुनिक विमर्श से जोड़ने का प्रयास दिखाई देता है। इसे सम्पूर्ण वज्रयान योग का पर्याय नहीं माना जाना चाहिए। यह भूटान में योगिक, चिकित्सीय और ध्यान-आधारित परम्पराओं के समकालीन रूपान्तरण

का एक विशिष्ट उदाहरण है।

भारत–भूटान योग-परम्पराओं का तुलनात्मक प्रतिमान : दोनों परम्पराओं में शरीर, श्वास, सूक्ष्म मार्ग, ऊर्जा-केंद्र और ध्यान को साधना के महत्त्वपूर्ण घटकों के रूप में देखा जाता है। भारतीय पक्ष में सांख्य-योग, हठयोग, नाथ और तांत्रिक परम्पराओं का प्रभाव मिलता है, जबकि भूटानी पक्ष मुख्यतः महायान-वज्रयान, तिब्बती बौद्ध तथा स्थानीय परम्पराओं से सम्बद्ध है।

तुलनात्मक रूप से नाड़ी त्सा, प्राण ल्ुंग, सुषुम्ना द्बु मा और चक्र खोर लो के बीच साम्य स्थापित किया जा सकता है। इसी प्रकार बिन्दु और थिग ले, प्राणायाम और वायु-साधना तथा मुद्रा-बन्ध और त्रुलखोर के बीच भी अध्ययन की सम्भावना है। लेकिन इन समानताओं को ऐतिहासिक समानता या प्रत्यक्ष उत्तराधिकार का प्रमाण मानने से पहले पाठ-साक्ष्य, कालक्रम, अनुवाद-परम्परा और गुरु-परम्पराओं का विश्लेषण आवश्यक है।

निष्कर्ष : भारत और भूटान की योग-परम्पराओं का तुलनात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि योग को केवल शारीरिक व्यायाम अथवा किसी एक धार्मिक परम्परा तक सीमित करके समझना उचित नहीं है। भारतीय योग में पतञ्जलि, हठयोग, नाथ और तांत्रिक धाराओं ने शरीर, प्राण, मन और चेतना के सम्बन्ध को विविध रूपों में विकसित किया, जबकि भूटानी तथा व्यापक तिब्बती सांस्कृतिक क्षेत्र में वज्रयान, त्सालुंग–त्रुलखोर, युथोक परम्परा और सोवा रिग्पा ने शरीर तथा आन्तरिक वायु को आध्यात्मिक एवं चिकित्सृतसिद्धि जैसे स्त्रोत इन समानताओं को भारत और तिब्बती सांस्कृतिक क्षेत्र के बीच हुए व्यापक योगिक तथा तांत्रिक ज्ञान-संवाद के संदर्भ में समझने का अवसर देते हैं। फिर भी समानीय ज्ञान से जोड़ा।

नाड़ी त्सा, प्राण ल्ुंग और सुषुम्ना द्बु मा जैसी अवधारणाओं में उल्लेखनीय संरचनात्मक समानता है। अमृतसिद्धि जैसे स्त्रोत इन समानताओं को भारत और तिब्बती सांस्कृतिक क्षेत्र के बीच हुए व्यापक योगिक तथा तांत्रिक ज्ञान-संवाद के संदर्भ में समझने का अवसर देते हैं। फिर भी समान शब्दावली या तकनीक को समान दर्शन का प्रमाण नहीं माना जा सकता। दोनों परम्पराओं के धार्मिक लक्ष्य, मुक्ति-दृष्टि और साधना-सन्दर्भ अलग हैं।

अतः भारत–भूटान योग-सम्बन्ध को 'एक परम्परा का दूसरी परम्परा पर प्रभाव' जैसी एकरेखीय धारणा के बजाय संवाद, संचरण, अनुवाद, स्थानीयकरण और पुनर्व्याख्या की प्रक्रिया के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है। भविष्य के अध्ययन में संस्कृत, तिब्बती और जोंगखा स्त्रोतों का तुलनात्मक पाठालोचन, अमृतसिद्धि की विभिन्न पाठ-परम्पराओं का विश्लेषण तथा नाथ हठयोग और त्सालुंग–त्रुलखोर की सूक्ष्म-शरीर अवधारणाओं का ऐतिहासिक अध्ययन भारत और भूटान के साझा तथा विशिष्ट योगिक ज्ञान को अधिक स्पष्ट रूप से सामने ला सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. स्वात्माराम योगी, (2006), हठयोग प्रदीपिका, खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई।
2. कपाल कुरण्टक, (2016), हठाभ्यास पद्धति, कैवल्यधाम, लोनावला, पुणे।
3. घेरण्ड, (2015), घेरण्ड संहिता, संस्कृति संस्थान, बरेली, उत्तर प्रदेश।
4. गोरक्षनाथ,(2000), सिद्धसिद्धान्त पद्धति, श्री गोरक्षनाथ-मन्दिर, गोरखपुर।
5. गोरक्षनाथ, (2010), गोरक्ष-संहिता, संस्कृति संस्थान, बरेली, उत्तर प्रदेश।
6. दत्तात्रेय-योगशास्त्र, (2012),चौखम्बा ओरियन्टालिया, दिल्ली।
7. चरणदास। (2010), अष्टांग योग, कैवल्यधाम श्रीमन्माधव योगमन्दिर समिति, लोनावला, पुणे।
8. यति पूर्णानन्द। (2013), षट्चक्रनिरूपणम्, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
9. दोरजी, टी. (2025)। योगासन एवं बलपूर्वक योग: अमोघवज्र द्वारा रचित तिब्बती अमृतसिद्धि ग्रन्थ , जर्नल ऑफ़ योग स्टडीज, 6, 61–114.
10. नामखाई नोरबु, चोग्याल। (2008), यन्त्र योग: तिब्बती गतिशील, स्नो लायन पब्लिकेशन्स ।

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-172-176

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 172-176
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. प्रीति कुमारी

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
महंथ महादेवानंद महिला महाविद्यालय, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

Corresponding Author :

डॉ. प्रीति कुमारी

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
महंथ महादेवानंद महिला महाविद्यालय, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों के संदर्भ में प्रकृति, पर्यावरण और हिंदी साहित्य की पारिस्थितिक चेतना

शोध-सार : भारत और भूटान के संबंध राजनयिक सहयोग से आगे बढ़कर साझा हिमालयी भूगोल, बौद्ध सांस्कृतिक विरासत, लोक-संवेदना और प्रकृति के प्रति उत्तरदायी जीवन-दृष्टि पर आधारित हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों को प्रकृति, पर्यावरण और हिंदी साहित्य की पारिस्थितिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित करता है। इसका उद्देश्य यह देखना है कि दोनों देशों की सांस्कृतिक स्मृति में प्रकृति किस प्रकार जीवन, नैतिकता और सामुदायिक सह-अस्तित्व का आधार बनती है तथा हिंदी साहित्य इस चेतना को किस प्रकार अभिव्यक्ति देता है। हिंदी साहित्य में प्रकृति आरंभ में सौंदर्य, ऋतु और भाव-जगत् के रूप में उपस्थित रही, किंतु समकालीन रचनाशीलता में वह जल, जंगल, जमीन, पहाड़, विस्थापन और पर्यावरणीय न्याय के प्रश्नों से भी जुड़ गई है। भूटान का वन-संरक्षण संबंधी संवैधानिक संकल्प तथा सकल राष्ट्रीय खुशी का विकास-दर्शन पर्यावरण और संस्कृति की परस्पर संबद्धता का उदाहरण प्रस्तुत करता है। अध्ययन का निष्कर्ष है कि भारत–भूटान की साझा हिमालयी चेतना हिंदी साहित्य के पर्यावरण-विमर्श को अधिक व्यापक, संवेदनशील और अंतर्विषयी आधार दे सकती है।

बीज शब्द : भारत–भूटान संबंध, हिमालयी संस्कृति, प्रकृति, पर्यावरण, पारिस्थितिक चेतना, हिंदी साहित्य, बौद्ध दर्शन, सकल राष्ट्रीय खुशी, सतत विकास।

प्रस्तावना : भारत और भूटान के पारस्परिक संबंधों की चर्चा प्रायः मैत्री, सुरक्षा, जलविद्युत और आर्थिक सहयोग के संदर्भ में की जाती है। किंतु इन संबंधों का अधिक स्थायी आधार सांस्कृतिक निकटता में निहित है। हिमालय की पर्वत-श्रृंखलाएँ, नदियों के उद्गम-क्षेत्र, बौद्ध परंपराएँ, सीमांत समाजों का लोकजीवन तथा प्रकृति के प्रति श्रद्धा दोनों देशों को एक विशिष्ट सांस्कृतिक परिसर में जोड़ते हैं। भारत और भूटान के औपचारिक राजनयिक संबंध 1968 में स्थापित हुए, परंतु धार्मिक और

सांस्कृतिक संपर्क इससे बहुत पहले से विद्यमान रहे हैं ।[1]

आज जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, जल-संकट, जैव-विविधता के क्षरण और उपभोक्तावादी विकास-प्रक्रिया ने प्रकृति के साथ मनुष्य के संबंध को संकटपूर्ण बना दिया है। ऐसे समय में भारत–भूटान संबंधों को पर्यावरणीय दृष्टि से देखना विशेष अर्थ रखता है। भूटान का अनुभव बताता है कि प्रकृति को केवल आर्थिक संसाधन मानने की अपेक्षा उसे राष्ट्रीय स्मृति, सामाजिक सुख और नैतिक उत्तरदायित्व का आधार भी माना जा सकता है।[2] भूटान के संविधान का अनुच्छेद 5 प्रत्येक नागरिक को प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण का न्यासी मानता है तथा देश के कम-से-कम 60 प्रतिशत भूभाग को स्थायी रूप से वनाच्छादित रखने का प्रावधान करता है।[3]

हिंदी साहित्य इस विमर्श के लिए उपयुक्त सांस्कृतिक भूमि देता है। यहाँ प्रकृति कभी ऋतु-सौंदर्य है, कभी विरहिणी के मन की सहचरी, कभी आत्म-अन्वेषण का विस्तार और कभी सभ्यता के असंतुलन से घायल जीवित संसार। आधुनिक हिंदी साहित्य में प्रकृति का अर्थ केवल फूल, पत्ते, नदी और पर्वत का वर्णन नहीं रह गया है; वह पर्यावरणीय संकट, लोकजीवन, संसाधनों पर अधिकार और मानवीय भविष्य का प्रश्न भी बन गया है।

शोध-समस्या, उद्देश्य और पद्धति :

शोध-समस्या : मुख्य प्रश्न यह है कि भारत–भूटान की सांस्कृतिक निकटता में निहित प्रकृति-केंद्रित जीवन-दृष्टि हिंदी साहित्य की पारिस्थितिक चेतना को किस प्रकार नया संदर्भ और व्यापक अर्थ प्रदान करती है।

उद्देश्य :

• भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों में प्रकृति और पर्यावरण की भूमिका का विवेचन करना।

• हिमालयी तथा बौद्ध जीवन-दृष्टि में निहित पर्यावरणीय नैतिकता को रेखांकित करना।

• हिंदी साहित्य में प्रकृति-वर्णन से पर्यावरणीय चेतना तक की यात्रा को समझना।

• भूटान की पर्यावरणीय प्रतिबद्धताओं और सकल राष्ट्रीय खुशी की अवधारणा को हिंदी साहित्य के पर्यावरण-विमर्श से जोड़ना।

• साहित्य, अनुवाद और अकादमिक संवाद के माध्यम से भारत–भूटान पर्यावरणीय सहयोग की संभावनाओं का संकेत करना।

शोध-पद्धति : यह अध्ययन वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक और तुलनात्मक पद्धति पर आधारित है। इसमें भारत–भूटान संबंधों से संबंधित आधिकारिक दस्तावेज़ों, भूटान के संविधान, पर्यावरणीय जानकारी, हिंदी काव्य, यात्रा-वृत्तांत और पर्यावरण-विमर्श संबंधी चयनित आलोचनात्मक सामग्री का पाठ-विश्लेषण किया गया है।

शोध-अंतराल : भारत–भूटान संबंधों पर उपलब्ध सामग्री का बड़ा भाग विदेश नीति, सामरिक सहयोग, सीमा, जलविद्युत और आर्थिक संबंधों पर केंद्रित है। सांस्कृतिक संबंधों पर लेखन उपलब्ध होने पर भी प्रकृति, पर्यावरण और हिंदी साहित्य को एक साझा विश्लेषणात्मक परिप्रेक्ष्य में रखने वाले अध्ययन कम दिखाई देते हैं। भूटान की पर्यावरणीय नीतियों का उल्लेख तो अनेक स्थानों पर मिलता है, किंतु हिंदी साहित्य की प्रकृति-चेतना और भूटानी सांस्कृतिक जीवन-दृष्टि के अंतर्संबंधों का व्यवस्थित विवेचन अपेक्षाकृत सीमित है।

इसी प्रकार हिंदी साहित्य में पर्यावरण-विमर्श प्रायः भारतीय संदर्भों तक सीमित रहता है। पड़ोसी हिमालयी राष्ट्र भूटान के प्रकृति-केंद्रित विकास-दर्शन, बौद्ध नैतिकता और वन-संरक्षण की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के साथ हिंदी साहित्य को तुलनात्मक रूप से पढ़ने की संभावना अभी पर्याप्त रूप से विकसित नहीं हुई है। प्रस्तुत अध्ययन इसी शोध-अंतराल को रेखांकित करते हुए संवाद की एक नई दिशा प्रस्तावित करता है।

भारत–भूटान : हिमालयी संस्कृति और प्रकृति-संवेदना : भारत और भूटान को जोड़ने वाला हिमालय केवल भौगोलिक सीमा नहीं है; वह जल, वन, लोकविश्वास, आध्यात्मिकता और सभ्यतागत स्मृति का विस्तृत संसार है। पर्वतों से निकलने वाली नदियाँ दूरस्थ मैदानों तक जीवन पहुँचाती हैं, वन जैव-विविधता के साथ-साथ पर्वतीय

समुदायों की आजीविका सँभालते हैं और कठिन भौगोलिक परिस्थितियाँ सहयोग, संयम तथा प्रकृति के प्रति विनम्रता का संस्कार निर्मित करती हैं। इसीलिए हिमालयी जीवन-दृष्टि में प्रकृति के प्रति सम्मान किसी बाहरी नियम का परिणाम नहीं, बल्कि जीवन-पद्धति का अंग है।

भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों में बौद्ध परंपरा की महत्वपूर्ण भूमिका है। करुणा, अहिंसा, मैत्री और प्राणी-मात्र के प्रति दायित्व जैसे बौद्ध मूल्य पर्यावरणीय नैतिकता को गहरी भूमि प्रदान करते हैं। प्रतीत्यसमुत्पाद का सिद्धांत यह समझ देता है कि कोई भी अस्तित्व पूर्णतः स्वतंत्र नहीं है; जीवन के सभी रूप परस्पर संबंधों में स्थित हैं। इस दृष्टि से वन का विनाश केवल पेड़ों का कटना नहीं, बल्कि जल, मिट्टी, पशु-पक्षियों और मानव-समुदाय के बीच संतुलन का टूटना है।

भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में भी नदियों, पर्वतों, वृक्षों और धरती को जीवनदायिनी तथा पूजनीय सत्ता माना गया है। नदी के प्रति श्रद्धा, वृक्ष-पूजन और पर्वतों को देवत्व से जोड़ने की परंपरा प्रकृति के साथ एक भावात्मक संबंध को व्यक्त करती है। आधुनिक विकास-प्रक्रिया ने इस संबंध को अवश्य क्षीण किया है, किंतु लोक-स्मृति, मिथक और साहित्य में इसकी उपस्थिति अब भी दिखाई देती है।

भूटान की पर्यावरण-दृष्टि और सकल राष्ट्रीय खुशी : भूटान की पर्यावरणीय दृष्टि में नीति और नैतिकता का सुंदर मेल दिखाई देता है। संविधान के अनुच्छेद 5 में यह प्रावधान है कि देश के कम-से-कम 60 प्रतिशत क्षेत्र में वनावरण को स्थायी रूप से बनाए रखा जाएगा। यह प्रावधान पर्यावरण-संरक्षण को आकस्मिक कार्यक्रम नहीं, बल्कि राष्ट्रीय दीर्घकालिक संकल्प बनाता है। रॉयल भूटानी दूतावास की आधिकारिक सूचना भी इस संवैधानिक दायित्व को स्पष्ट रूप से रेखांकित करती है ।[4]

भूटान का सकल राष्ट्रीय खुशी का विचार विकास की वैकल्पिक अवधारणा प्रस्तुत करता है। इसके चार प्रमुख स्तंभ हैं—"न्यायपूर्ण और सतत सामाजिक-आर्थिक विकास, संस्कृति का संरक्षण एवं संवर्धन, पर्यावरण का संरक्षण तथा सुशासन"।[5] इस दृष्टिकोण में विकास को केवल आय, उत्पादन और बाजार से नहीं मापा जाता; वह मानसिक स्वास्थ्य, सामुदायिक संबंधों, सांस्कृतिक निरंतरता और पारिस्थितिक संतुलन से भी जुड़ा है।

यह अवधारणा भारतीय संदर्भ में भी विचारणीय है। यदि विकास की परियोजनाएँ जंगलों को उजाड़ दें, नदियों को प्रदूषित करें, पहाड़ों को अस्थिर बना दें और स्थानीय समुदायों को विस्थापित कर दें, तो केवल आर्थिक वृद्धि को विकास नहीं कहा जा सकता। भूटान का अनुभव पूछता है कि क्या विकास का लक्ष्य अधिक उपभोग है अथवा अधिक संतुलित, सुरक्षित और गरिमामय जीवन? हिंदी साहित्य का पर्यावरण-विमर्श इसी प्रश्न को संवेदना और आलोचना की भाषा देता है।

हिंदी साहित्य में प्रकृति : सौंदर्य से पारिस्थितिक सरोकार तक : हिंदी साहित्य में प्रकृति की उपस्थिति बहुरंगी और दीर्घकालिक है। भक्तिकाल में प्रकृति भक्ति, प्रेम और विरह के अनुभवों से जुड़ती है। सूरदास के काव्य में ब्रज का वन, यमुना, ऋतुएँ और कुंज कृष्णलीला का सजीव परिवेश रचते हैं। रीतिकाल में ऋतु-वर्णन और प्रकृति-सौंदर्य काव्य-शिल्प के आवश्यक उपकरण बने।

छायावाद में प्रकृति को आत्मीयता, रहस्य और मानवीय संवेदना का गहरा रूप मिला। जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, निराला और महादेवी वर्मा के यहाँ प्रकृति बाह्य दृश्य मात्र नहीं है; वह मनुष्य के अंतर्जगत् का विस्तार है। महादेवी वर्मा की पंक्ति—"विस्तृत नभ का कोई कोना, मेरा न कभी अपना होना"—अस्तित्वगत एकांत को व्यक्त करती है; साथ ही वह व्यापक जगत् से आत्मीय संबंध की आकांक्षा भी जगाती है।[6]

समकालीन हिंदी साहित्य में प्रकृति एक नया सामाजिक और राजनीतिक अर्थ ग्रहण करती है। नदी केवल सौंदर्य का बिंब नहीं रहती; वह प्रदूषण, बाँध, जल-अधिकार और सूखते स्रोतों की चिंता बन जाती है। जंगल केवल

हरियाली नहीं; वह आदिवासी जीवन, जैव-विविधता और संसाधनों पर नियंत्रण का प्रश्न भी बन जाता है। पहाड़ केवल पर्यटन का दृश्य नहीं, बल्कि अनियोजित निर्माण, भूस्खलन, विस्थापन और पलायन से प्रभावित जीवन-क्षेत्र के रूप में सामने आता है। कुमार मंगलम का कथन—"प्रकृति से खिलवाड़ यानी जीवन से विमुख हो जाना है"—समकालीन पर्यावरण-विमर्श के मूल प्रश्न को रेखांकित करता है।[7]

केदारनाथ सिंह और मंगलेश डबराल जैसे कवियों के यहाँ प्रकृति मनुष्य की स्मृति और भविष्य से जुड़ती है। केदारनाथ सिंह की कविता में पेड़ जीवन के आत्मीय साथी की तरह उपस्थित है। "पेड़ इस तरह उगते हैं जैसे आदमी अपने सपनों में"—यह पंक्ति वृक्ष को केवल जैविक सत्ता न मानकर मानवीय आशा और भविष्य से जोड़ देती है।[8] इसी प्रकार मंगलेश डबराल की कविता में पहाड़ एक जीवित सांस्कृतिक भूगोल बनकर आता है। "पहाड़ पर लौटना / अपने भीतर लौटना है"—यह पंक्ति पहाड़ और मनुष्य की पहचान के गहरे संबंध को व्यक्त करती है।[9]

हिंदी साहित्य और भूटान : सांस्कृतिक संवाद की संभावना : भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों में हिंदी साहित्य संवाद का प्रभावी माध्यम बन सकता है। हिंदी के माध्यम से भूटान की प्रकृति-केंद्रित जीवन-पद्धति, लोक-संस्कृति, बौद्ध मूल्य और पर्यावरणीय नीतियाँ व्यापक भारतीय पाठक-वर्ग तक पहुँच सकती हैं। इसके साथ ही हिंदी की पर्यावरण-सचेत कविताएँ, कहानियाँ, उपन्यास और आलोचनात्मक लेख अनुवाद के माध्यम से भूटानी पाठकों तक पहुँच सकते हैं।

रमेश पोखरियाल 'निशंक' की पुस्तक खुशियों का देश भूटान हिंदी पाठक को भूटान के इतिहास, भूगोल, संस्कृति और भारत–भूटान मैत्री से परिचित कराती है। इस पुस्तक का महत्त्व इस बात में है कि यह भूटान को दूरस्थ और अपरिचित भूखंड के बजाय एक आत्मीय हिमालयी समाज के रूप में सामने लाती है।[10] भूटान के संबंध में हिंदी यात्रा-साहित्य, संस्मरण, आलोचनात्मक निबंध और अनुवाद की संख्या बढ़ना आवश्यक है।

भूटानी लोककथाओं, प्रकृति-केंद्रित मिथकों, बौद्ध आख्यानों, पर्वतीय स्त्री-अनुभवों और पर्यावरणीय लोकज्ञान का हिंदी में अनुवाद भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों को अधिक गहरा बना सकता है। इसी तरह हिंदी के हिमालयी साहित्य को भूटानी संदर्भ में पढ़ना तुलनात्मक साहित्य की एक सार्थक दिशा हो सकती है। ऐसा संवाद सीमाओं के पार फैली हिमालयी अस्मिता को पहचान देगा।

पर्यावरणीय न्याय और साहित्य का उत्तरदायित्व : पर्यावरणीय संकट सभी सामाजिक समूहों को एक समान रूप से प्रभावित नहीं करता। जंगल कटने पर सबसे पहले उस समुदाय का जीवन प्रभावित होता है जो ईंधन, चारा, फल, औषधि और आजीविका के लिए जंगल पर निर्भर है। नदी प्रदूषित होने पर मछुआरे, किसान और नदी-तटवासी समुदाय अधिक संकट झेलते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में अनियोजित सड़क, बाँध और निर्माण परियोजनाएँ स्थानीय परिवारों के विस्थापन और सांस्कृतिक विघटन का कारण बन सकती हैं। अतः पर्यावरण का प्रश्न सामाजिक न्याय का प्रश्न भी है।

समकालीन हिंदी साहित्य में जल-जंगल-जमीन का प्रश्न अस्मिता और अस्तित्व के प्रश्न के रूप में उभरता है। कुमार मंगलम ने समकालीन प्रकृति-विमर्श में इस संबंध को रेखांकित किया है ।[11] महुआ माजी का उपन्यास मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ खनन, पर्यावरण और आदिवासी जीवन के संकट को केंद्र में लाता है।[12] रणेंद्र का ग्लोबल गाँव के देवता विकास, पूँजी और आदिवासी समाज के अंतर्विरोधों को सामने रखता है।[13] ऐसी रचनाएँ बताती हैं कि प्रकृति की रक्षा केवल दृश्य-सौंदर्य बचाना नहीं, बल्कि समुदायों के जीवन-अधिकार, स्मृति और भविष्य की रक्षा करना भी है।

भारत–भूटान के साझा हिमालयी संदर्भ में यह प्रश्न और अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। पर्यावरण-संरक्षण का अर्थ केवल पर्वतों की पर्यटन-योग्य छवि बनाए रखना नहीं है; इसका अर्थ जलस्रोतों, खेती, वनों, जैव-विविधता, लोकज्ञान और आने वाली पीढ़ियों के अधिकारों को सुरक्षित रखना है। साहित्य इन जटिल प्रश्नों को मानवीय अनुभव की भाषा देता है और इसी कारण वह पर्यावरणीय चेतना को व्यापक समाज तक पहुँचाने में समर्थ होता है।

निष्कर्ष : भारत–भूटान संबंधों की शक्ति केवल कूटनीतिक विश्वास अथवा आर्थिक सहयोग में नहीं है। उसकी मूल ऊर्जा साझा हिमालयी प्रकृति, बौद्ध सांस्कृतिक विरासत, करुणा, संयम, सह-अस्तित्व और प्रकृति के प्रति उत्तरदायित्व में निहित है। भूटान का संविधान वन-संरक्षण को राष्ट्रीय दायित्व के रूप में स्वीकार करता है और सकल राष्ट्रीय खुशी का विचार संस्कृति, पर्यावरण, सुशासन तथा संतुलित विकास को परस्पर संबद्ध मानता है ।[14]

हिंदी साहित्य में प्रकृति की लंबी परंपरा आज पर्यावरणीय चेतना के रूप में विशेष प्रासंगिक है। छायावादी कविता की प्रकृति-संवेदना से लेकर समकालीन कविता, कहानी और उपन्यास तक, हिंदी साहित्य मनुष्य और प्रकृति के टूटते संबंध को पहचानता है। वह विकास की अंधी दौड़, जल-जंगल-जमीन के दोहन, पहाड़ों के असंतुलन और विस्थापित समुदायों की पीड़ा के प्रति सजग करता है।

भारत–भूटान सांस्कृतिक संबंधों के आलोक में हिंदी साहित्य की पारिस्थितिक चेतना का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि पर्यावरण संरक्षण केवल वैज्ञानिक नीति या प्रशासनिक कार्यक्रम नहीं है। वह संस्कृति, भाषा, स्मृति, करुणा और नैतिकता का विषय भी है। भविष्य में हिंदी और भूटानी साहित्य के अनुवाद, संयुक्त शोध-परियोजनाएँ, पर्यावरण-केंद्रित संगोष्ठियाँ, हिमालयी लोक-संस्कृतियों का दस्तावेजीकरण और विद्यार्थियों के सांस्कृतिक आदान-प्रदान जैसे प्रयास इस संवाद को अधिक सुदृढ़ बना सकते हैं। जब साहित्य प्रकृति को साथ लेकर चलता है तब वह मनुष्य के भविष्य को अधिक सुरक्षित एवं सुंदर बना सकता है।

संदर्भ-ग्रंथ सूची :

1. भारत का दूतावास, थिम्फू, "भारत–भूटान संबंध", भारत सरकार, https://indembthimphu.gov.in/pages/NDEy. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
2. भारत विश्व मामलों की परिषद, भारत–भूटान संबंधों की छान-बीन, भारतीय विश्व मामले परिषद, 2025, https://www.icwa.in/pdfs/ExploringIndiaBhutanRelationsWebSept2025FHindi.pdf. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
3. भूटान का संविधान, The Constitution of the Kingdom of Bhutan. रॉयल गवर्नमेंट ऑफ भूटान, 2008, अनुच्छेद,https://cms.parliament.gov.bt/uploads/Constitution_Dzongkha_n_english_1a63683445.pdf. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
4. रॉयल भूटानी दूतावास, नई दिल्ली, "पर्यावरण," विदेश मंत्रालय एवं बाह्य व्यापार मंत्रालय, भूटान सरकार, https://www.mfa.gov.bt/rbedelhi/bhutan-at-glance/environment/. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
5. रॉयल भूटानी दूतावास, नई दिल्ली, "सकल राष्ट्रीय खुशी" ,विदेश मंत्रालय एवं बाह्य व्यापार मंत्रालय, भूटान सरकार, https://www.mfa.gov.bt/rbedelhi/bhutan-at-glance/gross-national-happiness/. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
6. वर्मा, महादेवी,यामा, लोकभारती प्रकाशन, 2015, पृ. 18।
7. मंगलम, कुमार, "समकालीन दौर : प्रकृति विमर्श", जीना शोध संगम, 2023, पृ. 240–250, विशेषतः पृ. 244–246, https://ginajournal.com/samkalin-dore/. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
8. सिंह, केदारनाथ, अकाल में सारस, राजकमल प्रकाशन, 2016, पृ. 63।
9. डबराल, मंगलेश, पहाड़ पर लालटेन, वाणी प्रकाशन, 2014, पृ. 29।
10. पोखरियाल 'निशंक', रमेश, खुशियों का देश भूटान, प्रभात प्रकाशन, 2019, पृ. 42–48।
11. मंगलम, कुमार, "समकालीन दौर : प्रकृति विमर्श", जीना शोध संगम, 2023, पृ. 244–246, https://ginajournal.com/samkalin-dore/. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।
12. माजी, महुआ, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ,राजकमल प्रकाशन, 2012।
13. रणेंद्र, ग्लोबल गाँव के देवता, भारतीय ज्ञानपीठ, 2009।
14. रॉयल भूटानी दूतावास, नई दिल्ली, "सकल राष्ट्रीय खुशी", विदेश मंत्रालय एवं बाह्य व्यापार मंत्रालय, भूटान सरकार, https://www.mfa.gov.bt/rbedelhi/bhutan-at-glance/gross-national-happiness/. अभिगमन तिथि 25 सितम्बर 2026।

•

ज्ञानविविधा
कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 177-181
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

Dr. Babita Solanki
Principal, Maa vankal malani education group chohatan, Barmer (Raj.)

Corresponding Author :

Dr. Babita Solanki
Principal, Maa vankal malani education group chohatan, Barmer (Raj.)

The Green Classroom : Integrating Nature-Based Learning into Modern Education

Abstract : The rapid urbanization of modern society and the digitized nature of contemporary curricula have increasingly isolated students from the natural world, giving rise to cognitive fatigue, heightened stress, and a disconnect from local ecosystems. This paper examines "The Green Classroom" model, an educational approach that integrates nature-based learning directly into mainstream primary and secondary education. By synthesizing recent neuro developmental research, environmental psychology, and pedagogical case studies, this study evaluates the cognitive, psychological, and behavioral impacts of outdoor learning environments compared to traditional indoor setups.

The contemporary educational paradigm remains largely reliant on indoor, sedentary instruction—a structure increasingly challenged by the rise of "nature-deficit disorder" among youth. Findings indicate that nature-integrated instruction significantly enhances attention restoration, reduces cortisol-driven academic stress, and fosters higher-level problem-solving skills through experiential inquiry. Furthermore, routine exposure to local biodiversity encourages an intrinsic sense of environmental stewardship among students, translating abstract ecological concepts into actionable conservation mindsets. The abstract concludes with practical, scalable strategies for school administrators and policymakers to retroactively integrate green spaces and experiential outdoor modules into existing institutional frameworks without requiring extensive capital overhead.

Keywords : Nature-Based Learning, The Green Classroom, Experiential Pedagogy, Environmental Stewardship, Cognitive Restoration, Outdoor Education.

Introduction : For generations, formal education has been confined to four walls, rows of desks, a chalkboard, and a teacher delivering instructions from the front of the room. That factory-model framework, inherited from the Industrial Revolution, was built to produce compliant, punctual workers for an urban economy. But in the 21st century, this model is increasingly misaligned with the realities schools

now face. Students are experiencing rising levels of mental fatigue, sedentary health complications, and what writer Richard Louv famously termed "Nature-Deficit Disorder"—the human cost of alienation from the natural world.

At the same time, climate change, biodiversity loss, and ecological instability demand a new kind of education: one that equips students not only with environmental knowledge, but with the values, habits, and resilience needed to respond to a changing planet.

The green classroom offers a practical response to both crises. By integrating nature-based learning into modern education, schools can move beyond the physical and philosophical walls that separate students from the environment. Forests, school gardens, public parks, and even indoor living walls can become active sites of academic, psychological, and social development.

Far from a romantic rejection of modern progress, nature-based learning is a rigorous, evidence-based pedagogy. When students step outside, the abstract text of a textbook transforms into a living laboratory.

This article examines how nature-based learning can be integrated into modern curricula and why educators and policymakers should take it seriously. Through an analysis of its cognitive, emotional, and physical impacts, alongside institutional case studies and practical frameworks, we will explore how the green classroom can help build healthier, more resilient, and ecologically conscious generations.

Interpretation and Conceptual Analysis : The integration of nature into education is not entirely new, but its contemporary application represents a major evolutionary leap. To understand the modern green classroom, we must look at its historical and theoretical foundations.

The title *The Green Classroom: Integrating Nature-Based Learning into Modern Education* highlights a shift in contemporary pedagogy—from traditional indoor instruction toward outdoor experiential learning. "The Green Classroom" serves as a metaphor and a physical concept: it challenges the notion that learning must occur within four walls. The title proposes that incorporating natural elements into curricula enhances cognitive function, emotional well-being, and environmental awareness.

-***Theoretical Foundations : Biophilia and Cognitive Restoration ;*** The framework rests on Wilson's (1984) Biophilia Hypothesis, which asserts that humans possess an innate biological affinity for the natural world. Modern educational settings often isolate students from outdoor environments, leading to what Louv (2005) term "nature-deficit disorder"—a state linked to reduced attention spans, higher stress, and lower physical engagement. Friedrich Froebel, the inventor of the "kindergarten" (literally meaning "children's garden") in the 19th century, envisioned early childhood education as a space where children grew naturally, nurtured like plants in a garden. Similarly, Maria Montessori emphasized self-directed learning deeply connected to sensory exploration of the natural world.

Integrating nature addresses these challenges through Attention Restoration Theory (Kaplan, 1995). Prolonged focus on structured academic tasks causes directed attention fatigue. Natural environments offer "soft fascination"—gentle sensory stimuli that allow the brain's focused attention mechanisms to rest and recover, leading to improved concentration and problem-solving skills (Faber Taylor & Kuo, 2009).

-Pedagogical Shift: Experiential and Holistic Development : Nature-based learning aligns with Dewey's (1938) theory of experiential education, which posits that learning occurs through direct interaction with one's environment. Nature acts as an interactive laboratory where students engage in inquiry-based learning. For instance, studying local ecosystems transforms abstract STEM concepts into observable phenomena.

Beyond academics, exposure to natural settings supports socio-emotional growth. Unstructured outdoor play fosters self-regulation, resilience, and collaborative skills (Gray, 2013). Children learn to assess risks, adapt to changing conditions, and develop agency.

-Fostering Environmental Stewardship : Integrating nature into education nurtures ecological literacy. As Sobel (1996) notes, empathy for the natural world must precede abstract ecological instruction. When students build personal connections with local ecosystems, they develop an intrinsic motivation toward environmental conservation, preparing them to address broader sustainability challenges.

-Cognitive Restoration and Mental Well-being : Exposure to natural settings significantly impacts cognitive functioning and emotional regulation. According to Attention Restoration Theory, urban and indoor environments demand continuous, directed attention, which leads to cognitive depletion. In contrast, natural settings engage "soft fascination," allowing the brain's focus mechanisms to recover. Research indicates that students who participate in outdoor learning demonstrate lower cortisol levels, improved impulse control, and enhanced creative problem-solving skills compared to those confined entirely to standard classrooms.

- Experiential STEM and Curriculum Integration : Integrating nature into modern education does not require discarding core academic standards; instead, it strengthens them through hands-on application. When applied to traditional academic subjects, nature-based learning yields clear benefits:

- Science and Ecology: Concepts like biodiversity, soil chemistry, and life cycles shift from abstract diagrams to tangible phenomena when observed in local ecosystems or school gardens.
- Mathematics and Physics: Math and science concepts become concrete in a green classroom. Measuring the growth rate of plants provides practical data for statistics, while studying the structural engineering of bird nests or beaver dams brings physical principles to life. Observing pH changes in a local stream offers a real-world chemistry lesson. Students can also measure tree canopies, calculate fluid dynamics in streams, or study structural geometry in natural formations.
- Language and Humanities: Outdoor spaces offer rich sensory prompts for creative writing, historical reflection, and philosophical inquiry into human-environment relationships. Natural settings encourage descriptive language and creative writing, and studies show that students who write poetry or stories outdoors use a wider, more imaginative vocabulary than when responding to prompts inside a traditional classroom.

-Fostering Environmental Stewardship : Theoretical knowledge about climate change or environmental degradation often leads to eco-anxiety rather than action. Nature-based learning grounds environmental concepts in direct personal experience. When students actively care for a school garden, track local wildlife, or monitor water quality in nearby streams, they develop an intrinsic sense of responsibility toward their immediate environment. This experiential foundation turns abstract ecological concepts into daily practice, shaping informed and pro-environmental citizens.

Comparative Pedagogical Analysis : The structural differences between traditional indoor instruction and nature-integrated education highlight key outcomes across primary learning indicators:

Table 1 : *Comparison of Traditional and Nature-Integrated Educational Models*

Evaluation Metric	Traditional Indoor Model	Nature-Integrated Model
Primary Environment	Indoor, artificially lit, desk-centric	Hybrid, outdoor-accessible, natural light

Evaluation Metric	Traditional Indoor Model	Nature-Integrated Model
Pedagogical Style	Direct instruction and passive absorption	Experiential, inquiry-based exploration
Cognitive Impact	High risk of directed attention fatigue	Facilitates attention restoration and focus
Ecological Focus	Theoretical study via texts and media	Hands-on observation and local interaction
Learning Style	Rote, passive, textbook-centered	Experiential, inquiry-driven, multi-sensory
Student Agency	Teacher-directed, desk-bound	Collaborative, autonomous, discovery-based

Institutional Implementation: Barriers and Strategies : Green classrooms represent both an educational reform and an equity strategy, expanding access to experiential learning while addressing systemic barriers in modern schools.

Transitioning from traditional education models to an integrated green classroom requires navigating several systemic obstacles.

Overcoming the Institutional Barriers :

- The Risk-Averse Culture: Educational systems are often constrained by liability concerns, fearing injuries from outdoor activities. To address this, schools must shift from absolute risk avoidance to proactive benefit-risk assessment. This philosophy acknowledges that managed risks—like climbing a low tree or using basic gardening tools—are essential for building resilience and self-preservation skills.
- Socioeconomic Disparities: Urban schools in low-income neighborhoods often lack immediate access to expansive forests or parks. However, nature-based learning is highly scalable. A green classroom does not require a pristine wilderness. It can be built around container gardens on a concrete rooftop, asphalt surfaces converted into rain gardens, or partnerships with small local pocket parks.
- Curriculum Pressures: Teachers face demanding schedules packed with mandatory standards and test preparation. Professional development programs must show educators how outdoor learning supports these requirements rather than competing with them. An outdoor lesson on plant biology or soil calculation is not a break from the curriculum; it is the delivery of the curriculum through a highly effective medium.

Implementation Strategies for Modern Schools : To transition toward green classroom practices, school administrators and teachers can follow a phased approach:

1. Micro-Interventions for Urban Schools: Schools lacking expansive grounds can implement "nearby nature" strategies—such as indoor living walls, window gardens, and 10-minute outdoor sensory routines—which yield measurable cognitive and mood improvements.
2. Interdisciplinary STEM/STEAM Modules: Designing curricula where physical phenomena (e.g., soil chemistry, plant physics, ecosystem dynamics) are measured and analyzed directly on school grounds.
3. Institutional & Policy Alignment: Integrating outdoor instruction hours into official teacher training, school scheduling, and national curriculum standards to guarantee equitable access across socio-economic demographics.

Integrating natural environments into daily education transforms learning from a passive chore into an active, healthy, and engaging practice. By supporting both cognitive functioning and emotional well-being, the green classroom model equips students with the focus, resilience, and environmental responsibility needed for the modern world.

Conclusion : The study argues that nature-based learning should be integrated into modern education because it is not just beneficial, but necessary. The central claim is that bringing nature-based learning into education is a required transformation, not a temporary trend or optional add-on.

Supporting points :

- It argues that digital, urbanized, and ecologically vulnerable conditions make the traditional indoor classroom insufficient.
- It claims the indoor model leaves students disconnected from the natural systems that support life.
- It then presents evidence for the "green classroom," saying nature-based learning improves focus, restores cognitive energy, reduces anxiety and stress, supports physical development, and builds ecological literacy.
- It also broadens the case from student benefits to implementation, saying schools, policymakers, and teachers must work together to scale this approach through policy, design, and curriculum changes.

The closing paragraph reframes the idea as a moral and practical imperative. It says the green classroom strengthens both academic learning and human well-being, and ultimately prepares future leaders and citizens to create a sustainable future. the study moves from a strong claim to a problem statement, to evidence and practical implications, and ends with a visionary conclusion that elevates the proposal into a larger societal responsibility.

References :

1. Bratman, G. N., Daily, G. C., Levy, B. J., & Gross, J. J. (2015). The benefits of nature experience: Improved affect and cognition. *Lscape and Urban Planning*, *138*, 41–50. https://doi.org/10.1016/j.landurbplan.2015.02.005
2. Chawla, L. (2020). Childhood nature connection and constructive hope: A review of research on environmental education and stewardship. *People and Nature*, *2*(3), 619–642. https://doi.org/10.1002/pan3.10128
3. Dewey, J. (1938). *Experience and education*. Macmillan.
4. Faber Taylor, A., & Kuo, F. E. (2009). Children with attention deficits concentrate better after walk in the park. *Journal of Attention Disorders*, 12(5), 402–409.
5. Gray, P. (2013). *Free to learn: Why unleashing the instinct to play will make our children happier, more self-reliant, and better students for life*. Basic Books.
6. Kaplan, R. (1989). *The experience of nature: A psychological perspective*. Cambridge University Press.
7. Kaplan, R., & Kaplan, S. (1989). *The Experience of Nature: A Psychological Perspective*. Cambridge University Press.
8. Kuo, M., Barnes, M., & Jordan, C. (2019). Do experiences with nature promote learning? Converging evidence of a cause-and-effect relationship. *Frontiers in Psychology*, 10, 305.
9. Louv, R. (2005). *Last Child in the Woods: Saving Our Children from Nature-Deficit Disorder*. Algonquin Books.
10. Sobel, D. (1996). *Beyond ecophobia: Reclaiming the heart in nature education*. Orion Society.
11. Sobel, D. (2004). *Place-Based Education: Connecting Classrooms & Communities*. Orion Society.
12. Ulrich, R. S., Simons, R. F., Losito, B. D., Fiorito, E., Miles, M. A., & Zelson, M. (1991). Stress recovery during exposure to natural environmental scenes. *Journal of Environmental Psychology*, *11*(3), 201–230. https://doi.org/10.1016/S0272-4944(05)80184-7
13. Wilson, E. O. (1984). *Biophilia*. Harvard University Press.

ज्ञानविविधा
कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 182-189
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :
Dr. Hitkaran Singh Ranawat
HoD (English), School of Arts and Humanities, Sangam University, Bhilwara (Raj.)

Corresponding Author :
Dr. Hitkaran Singh Ranawat
HoD (English), School of Arts and Humanities, Sangam University, Bhilwara (Raj.)

Beyond the Alphabet : How Literature Shapes the Conscious Mind and Educates Society

Abstract : Literature is not simply a collection of letters, words, and sentences; it encompasses much more than that. It serves as a powerful channel through which individuals comprehend themselves and the experiences of others, while also gaining insight into the society they live in. Through various forms such as poetry, fiction, drama, essays, and autobiography, literature plays a crucial role in shaping both individual and collective awareness by encouraging imagination, empathy, ethical reasoning, and critical thinking. Moreover, by depicting cultural ideals, historical realities, social injustices, and political challenges, literature acts as an essential tool for social education. It not only preserves cultural ideals but also challenges social norms and inequities.

Literature occupies a significant position in the intellectual, emotional, and social development of human beings. Far beyond its conventional function as an artistic arrangement of language, literature serves as a medium through which individuals interpret human experience, construct knowledge, develop critical consciousness, and engage with the complexities of society.

This study examines the relationship between literature, consciousness, and society, with particular emphasis on the role of literary texts in developing critical awareness, fostering empathy, promoting ethical reflection, preserving cultural identity, and contributing to processes of social transformation. This study argues that literature transcends the boundaries of linguistic communication by transforming language into a powerful intellectual and social force. Consequently, the study of literature should be regarded as an essential component of holistic education and the development of an informed, reflective, and socially responsible society.

Keywords : literature, consciousness, social education, critical thinking, empathy, cultural identity, social transformation

Introduction : Literature has remained an integral component of human civilization since the earliest development of language and storytelling. Across different historical periods and cultures, human societies have employed narratives, poems, myths, epics, and dramatic performances to preserve knowledge, communicate values, and interpret the complexities of human existence. While literature is often associated primarily with language, aesthetics, and artistic expression, its significance extends considerably beyond these dimensions. Literature functions as an intellectual, emotional, and cultural institution that contributes to the development of both individual consciousness and collective social awareness.

The relationship between literature and human consciousness is particularly significant because literary texts provide individuals with opportunities to encounter diverse perspectives, experiences, and realities. Through the process of reading and interpretation, individuals engage with ideas that may challenge their existing assumptions and encourage them to reconsider their understanding of the world. Rosenblatt (1995) emphasizes that reading is an active and transactional process in which meaning emerges through the interaction between the reader and the text. Therefore, literature does not merely transmit information; it promotes reflection, interpretation, imagination, and critical inquiry.

Similarly, literature performs an important educational function within society. Literary works frequently address issues related to social inequality, political power, gender, identity, poverty, cultural conflict, and human rights. By representing such concerns through narratives and characters, literature transforms abstract social realities into meaningful human experiences. According to Freire (2000), education should encourage individuals to develop critical awareness and question the conditions shaping their lives. Literature can contribute significantly to this process by encouraging readers to examine the social world critically.

This article examines how literature operates “beyond the alphabet” by shaping the conscious mind and educating society. It explores literature as a form of cognitive development, emotional education, moral imagination, cultural memory, social criticism, and democratic education. It also considers the limitations of claims about literature's social effects, particularly the evidence concerning fiction and empathy. Ultimately, literature should not be regarded merely as an academic subject or source of entertainment. It is one of the cultural practices through which human beings learn to understand themselves, others, and the societies they inhabit.

Analysis :

Literature and the Formation of Human Consciousness : Consciousness is not formed in isolation. Human beings develop an understanding of themselves through language, memory, social interaction, and interpretation. Human consciousness is shaped by a wide range of social, cultural, intellectual, and emotional experiences, and literature is one of the most significant mediums through which these experiences can be communicated and interpreted. Unlike purely factual or technical forms of communication, literary texts often engage readers on multiple levels, including intellectual, emotional, psychological, and imaginative dimensions. In this way, literature provides symbolic structures through which individuals can examine their experiences. A reader who encounters a character struggling with loneliness, injustice, ambition, grief, love, or social exclusion may begin to recognize dimensions of human experience that were previously difficult to articulate.

Paulo Freire's theory of reading provides an important foundation for understanding this process. In “The Importance of the Act of Reading,” Freire argues that reading the word is connected to reading the world. Human beings interpret their surroundings before they become fully literate, and formal reading develops this interpretive relationship rather than replacing it. George Orwell's “Politics and the English Language” similarly demonstrates the relationship between language and thought. Orwell argues that language can become an instrument through which political ideas are obscured and manipulated, and he therefore treats clarity of expression as connected to clarity of thought. Literature that makes readers attentive to language can consequently make them more conscious of how language influences political and social perception.

Bruner (1990) argues that human beings construct meaning through narratives and interpret their experiences within cultural frameworks. Literature contributes to this process by offering readers narratives through which they can understand human motivations, relationships, conflicts, and identities. The act of engaging with a literary text therefore becomes an important means of exploring both the self and the world.

Reading literature also requires active participation. Readers interpret characters, analyse conflicts, identify themes, and establish connections between fictional situations and their own experiences. Rosenblatt (1995) explains that literary meaning is not simply contained within the text but develops through the interaction between the text and the reader. This interpretative engagement contributes to the development of reflective consciousness.

Furthermore, literature introduces individuals to experiences that may lie beyond the boundaries of their immediate social environment. A reader may encounter unfamiliar cultures, historical periods, social classes, or psychological realities through literary representation. Such exposure expands intellectual understanding and contributes to the development of a broader worldview. Consequently, literature plays an important role in transforming passive awareness into critical consciousness by encouraging individuals to observe the world carefully, question dominant ideas, and reflect on their position within larger social structures.

Literature and the Development of Critical Thinking : One of literature’s main educational contributions is the development of critical thinking. Literary texts are rarely confined to a single, unquestionable interpretation. Instead, they often include ambiguity, symbolism, irony, contradiction, and multiple perspectives. These features require readers to analyse language and meaning rather than simply receive information.

Eagleton (2008) makes clear that literary interpretation is not a neutral exercise but one shaped by broader relations among language, culture, ideology, and power. This supports the argument that studying literature develops critical thinking because it trains readers to interrogate how meaning is produced, whose interests it serves, and how texts reflect or challenge social values. Questions such as what a text communicates, whose perspective is represented, and how historical context shapes meaning are therefore central to the critical habits literature fosters.

Critical engagement with literature also enables readers to examine dominant social narratives. Literary works addressing colonialism, gender inequality, caste discrimination, racism, economic exploitation, or political oppression can reveal the structures of power operating within society. Freire’s (2000) concept of critical consciousness deepens this argument by showing that education should enable learners to recognize and question the

social forces shaping human experience. Literature contributes to this process by encouraging readers to identify oppression, reflect on inherited assumptions, and connect textual analysis with broader social critique.

Thus, literature contributes to education by developing intellectually independent individuals who are capable of examining information, questioning assumptions, and forming reasoned judgments.

Literature and Ethical Reflection : Literature has long served as an important medium for exploring moral and ethical questions. Literary characters often encounter situations involving justice, responsibility, loyalty, power, freedom, and personal choice. These situations invite readers to examine the ethical implications of human behaviour.

Nussbaum (2010) argues that the humanities are essential to cultivating thoughtful and democratic citizens. Literary engagement can support this process by encouraging readers to consider the consequences of individual and collective actions. Unlike direct moral instruction, literature often presents complex situations without offering simple or absolute answers.

A character may have to choose between personal loyalty and social justice, or between obedience to authority and resistance against injustice. These moral complexities encourage readers to engage in ethical reasoning and independent judgment. Greene (1995) similarly emphasizes the importance of imagination and reflective awareness in education, suggesting that individuals must learn to see beyond familiar assumptions and possibilities.

The educational value of literature lies, therefore, not only in its ability to communicate established moral principles, but also in its capacity to create spaces for ethical reflection. By engaging with conflicting perspectives and difficult choices, readers develop a deeper understanding of the complexity of human behaviour.

Literature and Ethical Reflection : Literature has historically served as an important medium for exploring moral and ethical questions. Literary characters frequently encounter situations involving justice, responsibility, loyalty, power, freedom, and personal choice. Such situations invite readers to examine the ethical consequences of human behaviour.

Nussbaum (2010) argues that the humanities are essential to the cultivation of thoughtful and democratic citizens, and this claim directly supports the view that literature fosters ethical reflection because it trains readers to consider how actions affect others and to weigh competing values. Her argument suggests that reading literature is not passive, but an active process of moral engagement in which readers learn to recognise the complexity of human decisions. Unlike direct moral instruction, literature often presents complex situations without providing simple or absolute answers.

A character may be required to choose between personal loyalty and social justice or between obedience to authority and resistance against injustice. These moral complexities encourage readers to engage in ethical reasoning and independent judgment. Greene (1995) similarly emphasizes the importance of imagination and reflective awareness in education, suggesting that literature promotes ethical understanding by helping individuals see beyond familiar assumptions and possibilities. In this way, Greene supports the argument that literature expands ethical reflection by enabling readers to imagine perspectives other than their own and to question taken-for-granted judgments.

The educational value of literature lies, therefore, not simply in its ability to communicate established moral principles but also in its capacity to create spaces for ethical

reflection. By engaging with conflicting perspectives and difficult choices, readers develop a deeper understanding of the complexity of human behaviour.

Literature as a Reflection and Critique of Society : The relationship between literature and society is dynamic and reciprocal. Literature is shaped by the historical, cultural, political, and economic conditions in which it is produced. At the same time, literary works can shape public consciousness by questioning social norms and offering alternative perspectives.

Williams (1983) examines the close relationship between culture and society, showing how cultural forms reflect and respond to changing social conditions. Similarly, literary works deliver valuable insights into issues such as class division, gender roles, political authority, cultural traditions, and economic inequality.

However, literature is not merely a passive reflection of existing conditions. It also has the capacity to critique society. Said (1993), for example, demonstrates the relationship between cultural representation and structures of power, particularly in the historical context of imperialism. Literary texts can expose systems of domination and question the narratives through which inequality is justified.

Writers often challenge injustice, expose hypocrisy, and question established systems of power. By representing marginalized voices and experiences, literature can challenge dominant narratives and encourage broader social dialogue. Thus, literature functions simultaneously as a mirror reflecting social reality and as a critical instrument that prompts individuals to question and transform that reality.

Literature and Social Transformation : Literature plays a significant role in social transformation because it shapes public awareness, communicates the human consequences of injustice, and encourages readers to question existing social conditions. Through its ability to combine intellectual insight with emotional experience, literature can contribute to broader processes of social and political change.

Throughout history, literature has contributed to social and political movements by raising awareness and influencing public opinion. Literary texts have frequently addressed issues of freedom, equality, justice, human dignity, and social reform.

The transformative power of literature lies partly in its ability to connect intellectual understanding with emotional experience. Statistical reports and political discussions may provide factual information about social problems, but literature can communicate their human consequences. A narrative about poverty, for example, can help readers understand its psychological and emotional effects in ways abstract information may not achieve.

Freire (2000) emphasizes that education can contribute to social transformation by enabling individuals to develop awareness of oppressive social structures. Literature can serve a similar function by making social realities visible and encouraging readers to question the conditions surrounding them. Through stories and imaginative representation, individuals may develop a stronger sense of responsibility toward the experiences of others.

Although literature alone cannot immediately transform political or social structures, it can influence individual and collective consciousness. Changes in social consciousness often contribute to broader processes of cultural and political transformation. Therefore, literature can be understood as an important component of long-term social change.

Literature and Cultural Preservation : Literature also plays a fundamental role in preserving and transmitting cultural identity. Every society possesses a unique collection of languages, traditions, beliefs, memories, and historical experiences, and these elements are

often sustained through literary expression. Literature therefore serves not only as an artistic form but also as a medium through which communities articulate, remember, and reproduce a sense of who they are.

Folktales, myths, epics, poetry, and oral traditions function as repositories of collective memory. They connect present generations with the cultural experiences of the past and contribute to a sense of historical continuity. Bruner (1990) reinforces this argument by emphasizing that narrative is central to how cultural meaning is constructed and communicated. From this perspective, stories do more than preserve cultural content: they organize experience, shape interpretation, and provide individuals with interpretive frameworks through which identity becomes intelligible. Literary traditions therefore do not merely reflect culture; they actively participate in the formation of cultural identity by enabling communities to recognize shared values, histories, and self-understandings across generations.

At the same time, literature does not simply preserve culture in a fixed form. Contemporary literary works often document cultural transformation and examine the relationship between tradition and modernity. As societies change, literature records the conflicts, adaptations, and negotiations associated with these changes, showing that cultural identity is dynamic rather than static.

Said (1993) further demonstrates that culture and literature are closely connected with questions of identity, history, and power. His perspective highlights that literary representation is never neutral: it can preserve cultural experience while also revealing how identities are shaped through historical and political forces. In this sense, literature becomes a site where cultural identity is both represented and contested. Said's argument is especially important because it shows that the preservation of culture through literature is inseparable from the power relations that determine which voices are heard, which histories are legitimized, and which identities are marginalized. In an increasingly globalized world, literature contributes to the preservation of linguistic and cultural diversity by representing local experiences and sustaining traditions that might otherwise be marginalized.

Literature, Imagination, and Holistic Education : Imagination is an essential aspect of human intellectual development. While scientific and technical knowledge help individuals understand existing realities, imagination allows them to consider possibilities beyond those realities. Literature develops this imaginative capacity by introducing readers to alternative worlds, perspectives, and social possibilities.

Greene (1995) argues that imagination enables individuals to question established realities and envision alternative possibilities. Through imaginative engagement, readers can consider societies marked by greater justice, equality, and human dignity. Literature prompts individuals to examine not only the world as it currently exists, but also the world it could become.

This function is especially relevant to holistic education. Education should not be limited to the acquisition of technical knowledge or professional skills. It should also develop creativity, emotional maturity, ethical responsibility, and social awareness. Nussbaum (2010) argues that the humanities play a crucial role in democratic societies because they cultivate critical thinking, imagination, and the capacity to understand others.

The study of literature contributes significantly to these goals. It strengthens communication and analytical abilities while also developing imagination and emotional

sensitivity. Literature, therefore, remains an essential part of an educational system concerned with the comprehensive development of the individual.

The Relevance of Literature in Contemporary Society : Contemporary society is marked by rapid technological development, global communication, and unprecedented access to information. Even so, access to information does not necessarily mean the ability to interpret it critically or ethically. In this context, literature remains highly relevant.

Contemporary societies need individuals who can evaluate information, understand diverse perspectives, and respond thoughtfully to social challenges. Literary education helps develop these capacities by encouraging close reading, interpretation, reflection, and dialogue. According to Showalter (2003), literature teaching should actively engage students with questions of meaning, context, and interpretation. For example, when readers analyze a novel that presents conflicting viewpoints, they practice comparing perspectives and identifying bias, skills that can also help them assess digital news feeds and online claims more critically.

Moreover, literature continues to evolve through new forms of media. Digital narratives, online poetry, audiobooks, and multimedia storytelling have broadened access to literary expression and created new possibilities for communication. Although the forms and platforms through which literature is experienced may change, its fundamental ability to explore human experience remains significant.

Wolf (2007) also emphasizes that reading entails complex cognitive processes that contribute to intellectual development. In an increasingly information-driven society, the ability to read deeply and critically remains essential. Therefore, rather than becoming irrelevant in the digital age, literature has gained renewed importance as a means of developing critical consciousness and preserving meaningful human engagement.

Conclusion : Literature exists beyond the alphabet because its influence reaches beyond written language. It shapes consciousness, deepens emotional awareness, preserves cultural memory, challenges social assumptions, and creates space for ethical and democratic reflection. A literary text is not merely a collection of words; it is an encounter among language, imagination, history, culture, and the reader's consciousness.

The educational significance of literature should therefore not be reduced to language acquisition or aesthetic appreciation. It helps individuals interpret experience, develop critical thinking and empathy, and engage more thoughtfully with the social world. Freire and Rosenblatt both show that reading is an active process of interpreting text and world, while Nussbaum's concept of narrative imagination explains why literature matters to democratic society: citizens need the ability to imagine lives different from their own. Research on fiction and social cognition supports some of these social benefits, though it also cautions against claims that reading fiction automatically produces empathy or moral improvement.

Literature also reflects historical and social realities while challenging injustice and encouraging social awareness. It preserves cultural memory, represents marginalized experiences, and offers a space to question established norms and imagine alternatives. As Freire (2000) suggests, critical consciousness is essential to meaningful engagement with the world, and literature can contribute significantly to that process. In this way, literature transforms language into consciousness and consciousness into social understanding, helping to create more critical, compassionate, and responsible citizens.

References :

1. Bruner, Jerome. *Acts of Meaning*. Harvard University Press, 1990.

2. Door Gayatri Chakravorty Spivak, and Wellek Library. *Death of a Discipline*. Columbia University Press, 2005.
3. Eagleton, Terry. *Literary Theory: An Introduction*. University of Minnesota Press, 1983.
4. Freire, Paulo. *Pedagogy of the Oppressed*. Bloomsbury Academic, 1970.
5. Greene, Maxine. *Releasing the Imagination: Essays on Education, the Arts, and Social Change*. Jossey-Bass, 1995.
6. Orwell, George. "Politics and the English Language." *Horizon*, Apr. 1946. The Orwell Foundation.
7. Nussbaum, Martha Craven. *Cultivating Humanity: A Classical Defense of Reform in Liberal Education*. Harvard University Press, 1997.
8. Nussbaum, Martha Craven. *Not for Profit : Why Democracy Needs the Humanities*. Princeton University Press, 2010.
9. Rosenblatt, Louise M. *Literature as Exploration*. 1933. Modern Language Association Of America, 1995.
10. Said, Edward W. *Culture and Imperialism*. Vintage, 1993.
11. Showalter, Elaine. *Teaching Literature*. Blackwell, 2014, https://www.wiley.com/en-us/Teaching+Literature-p-9780631226246.
12. Williams, Raymond. *Culture and Society, 1780-1950*. Columbia University Press, 1983.
13. Wolf, Maryanne. *Proust and the Squid : The Story and Science of the Reading Brain*. Icon Books, 2007.

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-190-194

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 190-194
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. ओहदार अनाम

सहायक प्राध्यापक, खोरठा विभाग,
राधा गोविन्द विश्वविद्यालय, रामगढ़, झारखण्ड

Corresponding Author :

डॉ. ओहदार अनाम

सहायक प्राध्यापक, खोरठा विभाग,
राधा गोविन्द विश्वविद्यालय, रामगढ़, झारखण्ड

रामगढ़िया खोरठा लोकगीतों में राम-तत्त्व : लोकजीवन, संस्कृति और आस्था के संदर्भ में एक अध्ययन

सारांश : लोकगीत किसी समाज की सामूहिक चेतना, सांस्कृतिक स्मृति और जीवन-दृष्टि के महत्वपूर्ण वाहक होते हैं। झारखण्ड के रामगढ़ क्षेत्र में प्रचलित रामगढ़िया खोरठा लोकगीतों में भगवान श्रीराम, सीता, लक्ष्मण और हनुमान से संबंधित अनेक प्रसंग मिलते हैं। इन गीतों में राम केवल धार्मिक पात्र नहीं, बल्कि आदर्श पति, पुत्र, भाई, लोकनायक और आस्था के प्रतीक के रूप में उपस्थित हैं।

विवाह गीतों में सीता स्वयंवर, वनवास गीतों में राम-सीता-लक्ष्मण, झूमर में वन्यजीवन, भजनों में रामकथा, करम गीतों में राम-हनुमान, चैती गीतों में रामजन्म तथा बालगीतों में 'रामधनुक' जैसे प्रसंग राम की व्यापक लोकस्वीकृति को प्रमाणित करते हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र में रामगढ़िया खोरठा लोकगीतों में राम-तत्त्व का अध्ययन लोकजीवन, लोकसंस्कृति, प्रकृति-बोध, धार्मिक आस्था और जीवन-दर्शन के संदर्भ में किया गया है।

बीज शब्द : रामगढ़िया खोरठा, लोकगीत, राम-तत्त्व, रामकथा, लोकसंस्कृति, रामभक्ति, झूमर, करम गीत।

1. प्रस्तावना : भारतीय लोकजीवन में भगवान श्रीराम का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। राम केवल धार्मिक ग्रंथों के पात्र नहीं हैं, बल्कि लोकगीतों, लोककथाओं, पर्व-त्योहारों और संस्कारों में भी उनकी व्यापक उपस्थिति दिखाई देती है। विभिन्न भाषाई क्षेत्रों ने रामकथा को अपनी स्थानीय संस्कृति और जीवनानुभव के अनुसार ग्रहण किया है।

खोरठा भाषा-भाषी क्षेत्र में भी रामकथा लोकगीतों के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही है। रामगढ़ क्षेत्र के लोकगीतों में राम का स्वरूप शास्त्रीय रामकथा से कुछ अलग दिखाई देता है। यहाँ राम लोकजीवन के निकट हैं। वे विवाह, वनवास, पर्व, भक्ति, प्रकृति और जीवन के सुख-दुःख से जुड़े हुए हैं।

इस अध्ययन का उद्देश्य रामगढ़िया खोरठा लोकगीतों में उपस्थित राम-तत्त्व और उसके सामाजिक-सांस्कृतिक अर्थों को रेखांकित

करना है।

2. रामगढ़िया खोरठा लोकगीत और रामकथा : रामगढ़िया खोरठा लोकगीतों में रामकथा के अनेक प्रसंग मिलते हैं। इनमें सीता स्वयंवर, वनवास, वन्यजीवन, सीता हरण, हनुमान, रामजन्म तथा राम-नाम प्रमुख हैं।

इन गीतों की विशेषता यह है कि शास्त्रीय कथा लोकभाषा और स्थानीय परिवेश में पुनर्सृजित होती है। इसलिए राम यहाँ लोकमानस के अपने राम बन जाते हैं।

3. विवाह गीतों में राम और सीता : विवाह संस्कार से जुड़े खोरठा लोकगीतों में सीता स्वयंवर का प्रसंग मिलता है —

«कहवाँ ही बोललइ कारी कोइलिया,
कहवाँ बोललइ मोर हे,
कहवाँ बइठ बोलइ राजा जनक रिसी,
अब सिया बिहाहन जोग हे।»

आगे —

«बाग-बगीचे बोललइ कारी कोइलिया,
मधुबने बोलइ मोर रे,
मचिये बइठल बोलल राजा जनक रिसी,
अब सिया बिहाहन जोग हे।»

गीत में सीता के विवाह योग्य होने की चर्चा के साथ कोयल, मोर, बाग और मधुवन का सुंदर चित्रण है। राजा जनक यहाँ एक चिंतित पिता के रूप में दिखाई देते हैं। इस प्रकार शास्त्रीय स्वयंवर प्रसंग लोकजीवन के पारिवारिक वातावरण में बदल जाता है।

राम-सीता लोकसमाज में आदर्श दंपति के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इसलिए विवाह गीतों में उनका उल्लेख नवदंपति के लिए आदर्श जीवन की कामना से भी जुड़ता है।

4. वनवास गीत में राम-सीता-लक्ष्मण : वनवास प्रसंग से संबंधित गीत में राम, सीता और लक्ष्मण की यात्रा का मार्मिक चित्रण मिलता है —

«राम चललइ बोनबासे, करम दसे राम चाललइ बोनबासे,
आगू-आगू रामचंदर, पाच्छे भइया लछुमन,
मांझे चललइ सीता करम दसे।»

आगे उन्हें वापस लौटने का आग्रह किया जाता है —

«घुरू भइया रामचंदर, घुरू भइया लछमन,
सीता के राखा घुराय करम दसे।»

इस गीत में राम, सीता और लक्ष्मण का संबंध पारिवारिक एकता और त्याग के रूप में उभरता है। वनवास केवल राम का कष्ट नहीं रह जाता, बल्कि परिवार के सामूहिक संघर्ष का प्रतीक बन जाता है।

5. वन और पर्यावरण-बोध : रामगढ़िया खोरठा लोकगीतों की एक विशेषता प्रकृति और वन्यजीवन के प्रति संवेदनशीलता है। बाघ से संबंधित गीत इसका महत्वपूर्ण उदाहरण है —

«बाघा चलल करे-करे टुंगरी तरे,
बाघा चलल करे-करे।
केउ कहे मारा-मारा, केउ कहे धारा-धारा,

केउ कहे ना मारा, बोना के सिंगार टुंगरी तरे।»

आगे —

«राम कहे धारा-धारा,
लछुमन कहे मारा-मारा,
सीता कहे बोन के सिंगार,
टुंगरी तरे बाघा चलल करे-करे।»

इस गीत में राम बाघ को पकड़ने की बात करते हैं, लक्ष्मण उसे मारने की, जबकि सीता उसे जंगल का 'सिंगार' मानती हैं। 'बोन के सिंगार' की संकल्पना अत्यंत महत्वपूर्ण है। इससे लोकसमाज की प्रकृति-दृष्टि और वन्यजीवों के प्रति संवेदना स्पष्ट होती है। यहाँ जंगल केवल मनुष्य के उपयोग की वस्तु नहीं, बल्कि पशु-पक्षियों सहित एक जीवंत संसार है।

6. हाथिनी के गीत में राम, लक्ष्मण और सीता : एक खोरठा झूमर में हाथिनी का प्रसंग मिलता है —

«कथिक डरे गे हाथिन, बोने समइलें?
कथिक डरे गे हाथिन, कदाई लेटइलें?
माछिक डरे गे हाथिन, बोने समइलें।
के तोरा गे हाथिन घांस काटतव?
के तोरा गे हाथिन पानी भरतव?
राम लखन गे घांस काटतव,
सीता साँवाइर गे हाथिन पानी भरतव।»

गीत में प्रश्नोत्तर शैली का प्रयोग हुआ है। राम और लक्ष्मण हाथिनी के लिए घास काटते हैं तथा सीता पानी भरती हैं। इससे रामकथा का स्थानीयकरण दिखाई देता है। राम, लक्ष्मण और सीता यहाँ राजपरिवार के सदस्य न होकर जंगल के सामान्य जीवन में सहभागी दिखाई देते हैं।

7. भजन में रामकथा और बारहमासा : खोरठा भक्ति गीतों में रामकथा को बारहमासा शैली में भी प्रस्तुत किया गया है — «कहाँ बिलमइला हनुमान, व्याकुल रघुनाथ भेला,
चैत मासे हरि छोड़ला अयोध्या,
विपत्ति में आय परला,
गंगा नदी पार उतइर गेला,
तपसी के भेस हरला,
व्याकुल रघुनाथ भेला।»

आगे सीता हरण के प्रसंग से राम की व्याकुलता का चित्रण मिलता है।

«सीता हरण सोच रघुवर के,
मनवा में कुहइक उठलइ,
व्याकुल रघुनाथ भेला।»

इस प्रकार रामकथा को महीनों और ऋतुओं से जोड़कर लोकभक्ति का रूप दिया गया है। बारहमासा की लोकपरंपरा के माध्यम से राम के जीवन की घटनाएँ लोकमानस के निकट आ जाती हैं।

8. करम गीतों में राम और हनुमान : झारखण्ड के प्रमुख लोकपर्व करमा से जुड़े गीतों में भी राम और हनुमान की उपस्थिति मिलती है — «किया लेले आवे, अइसन जवान सिरीराम,

किया लेले आवे बीर हनुमान सिरीराम,
करम लेले आवे अइसन जवान सिरीराम,
इन्द लेले आवे हनुमान सिरीराम।»

यहाँ राम करम की डाली और हनुमान इन्द की डाली लेकर आते हुए कल्पित हैं। इससे रामकथा और स्थानीय पर्व-परंपरा का सुंदर समन्वय दिखाई देता है। एक अन्य गीत में करम पर्व की तैयारी का चित्रण है —

«कांची हो बाँस के डलवा बुनली सिरीराम,
सातों बहिन फूला लोरहे जायब सिरीराम।»

इस प्रकार राम लोकपर्व की सामूहिक चेतना में भी शामिल हो जाते हैं।

9. चैती गीत में रामजन्म : चैती लोकगीतों में रामजन्म का उल्लास मिलता है —

«परभु जी के भेलय जनमवा,
हो रामा चइत शुभ दिनवा,
केहू लुटावे अन-धन सोनवा,
केहू लुटावे कंगना,
हो रामा चइत शुभ दिनवा।»

रामजन्म के कारण चैत्र मास शुभ और आनंदमय हो जाता है। यहाँ धार्मिक आस्था के साथ सामूहिक उत्सव और लोकजीवन की प्रसन्नता जुड़ी हुई है।

10. बालगीतों में 'रामधनुक' : खोरठा बालगीतों में भी राम का उल्लेख मिलता है —

«रौद पानी आंधी पानी सियार कर बिहा,
राम धनुक उइद गेलो देइक के,
जहिया पश्चिम बाठे पानी भेलो,
पूरुब बाठे धनुक।»

इंद्रधनुष को 'रामधनुक' कहना लोककल्पना का सुंदर उदाहरण है। प्राकृतिक घटना को राम के धनुष से जोड़कर बालमन के लिए प्रकृति को समझने का सहज माध्यम बनाया गया है।

11. जीवन-दर्शन और राम-नाम : रामगढ़िया खोरठा लोकगीतों में राम का संबंध जीवन के अंतिम पड़ाव से भी है —

«बारह बछर राम जी परलइ बेजार हो,
केउ नाही करइ उतजोगा हो राम जी,
मानुष जनम दिन चार हो।
चार पहर रातीं बिनिया डोललवाइ राम,
भिनसरे दम छूटी गेल हो राम।»

गीत मनुष्य जीवन की क्षणभंगुरता का बोध कराता है। जन्म से मृत्यु तक राम-नाम का स्मरण लोकमानस में आस्था और आध्यात्मिक आश्रय का प्रतीक है।

12. राम-तत्त्व के प्रमुख आयाम : रामगढ़िया खोरठा लोकगीतों के अध्ययन से राम-तत्त्व के कुछ प्रमुख आयाम सामने आते हैं —

1. आदर्श दांपत्य : राम-सीता लोकसमाज में आदर्श पति-पत्नी के प्रतीक हैं।
2. पारिवारिक मूल्य : राम और लक्ष्मण के संबंध में भाईचारा, त्याग और साथ की भावना है।
3. संघर्ष और त्याग : वनवास राम के संघर्षशील और त्यागमय जीवन का प्रतीक है।

4. प्रकृति-संवेदना : बाघ को 'बोन के सिंगार' कहना लोकसमाज के प्रकृति-बोध को व्यक्त करता है।
5. लोकपर्वों से संबंध : करम गीतों में राम और हनुमान का समावेश लोकसंस्कृति के समन्वयवादी स्वरूप को दर्शाता है।
6. लोकआस्था : भजन, चैती और जीवन-दर्शन के गीतों में राम आराध्य के रूप में उपस्थित हैं।
7. बाललोक : 'रामधनुक' जैसे प्रयोग राम को बालमन और प्रकृति से जोड़ते हैं।

13. लोक और शास्त्र के बीच राम : रामगढ़िया खोरठा लोकगीतों में रामकथा शास्त्रीय रामायण की हूबहू पुनरावृत्ति नहीं है। लोकसमाज ने रामकथा को अपनी भाषा, प्रकृति और सामाजिक अनुभव के अनुसार पुनर्सृजित किया है।

इसीलिए यहाँ राम महल से निकलकर जंगल, खेत, पर्व और लोकजीवन के बीच दिखाई देते हैं। लोकभाषा में 'रामचंदर', 'लछुमन', 'सिरीराम' जैसे संबोधन रामकथा के स्थानीयकरण को स्पष्ट करते हैं। यह लोकसाहित्य की रचनात्मक शक्ति है कि वह व्यापक सांस्कृतिक आख्यान को स्थानीय जीवन का हिस्सा बना देता है।

14. निष्कर्ष : रामगढ़िया खोरठा लोकगीतों में भगवान श्रीराम की उपस्थिति बहुआयामी है। वे केवल धार्मिक आस्था के प्रतीक नहीं, बल्कि परिवार, विवाह, त्याग, संघर्ष, प्रकृति, लोकपर्व और जीवन-दर्शन से जुड़े हुए हैं।

विवाह गीतों में राम-सीता आदर्श दांपत्य के प्रतीक हैं। वनवास गीतों में परिवार और त्याग का भाव है। बाघ के गीत में प्रकृति और वन्यजीवन के प्रति संवेदना दिखाई देती है। हाथिनी के गीत में मनुष्य और पशु के सह-अस्तित्व की भावना मिलती है। करम गीतों में राम-हनुमान स्थानीय पर्व का हिस्सा बनते हैं। चैती में रामजन्म उल्लास का कारण है और बालगीत में इंद्रधनुष 'रामधनुक' बन जाता है।

इस प्रकार रामगढ़िया खोरठा लोकगीतों में रामकथा का स्थानीयकरण और लोकसृजन दिखाई देता है। खोरठा लोकसमाज ने राम को अपनी भाषा और संस्कृति में आत्मसात कर उन्हें लोकजीवन का अभिन्न अंग बना दिया है।

अतः रामगढ़िया खोरठा लोकगीतों में राम-तत्त्व का अध्ययन केवल रामभक्ति का अध्ययन नहीं, बल्कि झारखण्ड के लोकसमाज की सांस्कृतिक स्मृति, प्रकृति-दृष्टि, पारिवारिक मूल्य, धार्मिक आस्था और जीवन-दर्शन को समझने का महत्वपूर्ण माध्यम है।

इन लोकगीतों का संग्रह, लिप्यंतरण और दस्तावेजीकरण आज आवश्यक है, क्योंकि मौखिक परंपरा में सुरक्षित यह सांस्कृतिक विरासत आने वाली पीढ़ियों के लिए अमूल्य है।

संदर्भ-संकेत :

1. वाल्मीकि — रामायण।
2. गोस्वामी तुलसीदास — रामचरितमानस।
3. खोरठा लोकगीतों की मौखिक परंपरा।
4. रामगढ़ क्षेत्र के लोकगायकों एवं लोकपरंपरा से प्राप्त सामग्री।
5. झारखण्ड के लोकसाहित्य एवं लोकसंस्कृति से संबंधित अध्ययन।
6. खोरठा लोक साहित्य- शिवनाथ प्रमाणिक
7. खोरठा लोक साहित्य - झारखण्ड जनजातीय कल्याण शोध संस्थान
8. खोरठा भाषा एवं साहित्य (उद्भव एवं विकास)- डॉ बी. एन. ओहदार
9. खोरठा लोक गीतों का सांस्कृतिक अध्ययन - डॉ विनोद कुमार
10. खोरठा लोक साहित्य - डॉ. भोलानाथ महतो

•

ज्ञानविविधा
कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 195-198
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :
Dr. Shailza Singh
Veer Kunwar Singh University, Ara

Corresponding Author :
Dr. Shailza Singh
Veer Kunwar Singh University, Ara

Education, Literature, Culture and Sustainability :
Reimagining Knowledge for a Sustainable Future

Abstract : The contemporary world is confronted with complex and interconnected challenges such as climate change, environmental degradation, loss of biodiversity, social inequality, cultural homogenisation, technological disruption, and the erosion of traditional knowledge systems. These challenges cannot be addressed merely through technological innovation or economic policies; they require a fundamental transformation in the ways societies understand knowledge, education, culture, human relationships, and the natural environment. In this context, education, literature, culture, and sustainability emerge as deeply interconnected domains that can collectively contribute to the creation of a more just, inclusive, resilient, and sustainable society. Education provides the intellectual and ethical foundation for sustainable development; literature develops empathy, imagination, and critical consciousness; culture preserves collective memory, values, traditions, and indigenous knowledge; while sustainability provides a framework for harmonising human development with ecological responsibility and intergenerational justice.

From an academic and pedagogical perspective, education must move beyond the transmission of information and skills towards the development of responsible citizens capable of understanding the social, cultural, environmental, and ethical consequences of human actions. The purpose of education in the twenty-first century should therefore include not only employability and economic development but also ecological consciousness, social responsibility, cultural sensitivity, democratic participation, and respect for diversity. Sustainable education encourages learners to recognise the interdependence between human beings and nature and enables them to develop the knowledge, values, attitudes, and competencies required to respond to contemporary global challenges. It also encourages critical thinking, problem-solving, collaboration, creativity, and ethical decision-making. In this regard, education becomes an instrument not simply for adapting to change but for

creating meaningful and responsible change.

Literature occupies a particularly significant position within this transformative process. Literary texts have the capacity to illuminate human experiences, social inequalities, cultural identities, environmental concerns, and changing relationships between human beings and nature. Poetry, fiction, drama, autobiography, folklore, and other literary forms provide spaces through which learners can examine questions of identity, justice, dignity, displacement, ecological responsibility, and social change. Literature does not merely represent society; it can also question established assumptions and inspire readers to imagine alternative futures. Through stories and narratives, abstract environmental and social problems acquire a human dimension. A literary representation of a river, forest, village, community, or displaced population can generate an emotional and ethical understanding that statistics alone may not always provide.

The emerging field of environmental literature and ecocriticism further demonstrates the relationship between literary studies and sustainability. Ecocritical approaches examine representations of nature and explore the relationship between literature, ecology, and human society. Such perspectives encourage students to reconsider anthropocentric assumptions and recognise the intrinsic value of the natural world. Literature can therefore function as a form of environmental education by cultivating ecological imagination and encouraging individuals to perceive environmental issues not only as scientific or economic problems but also as moral and cultural questions. Integrating literary and ecological perspectives into higher education can consequently enrich students' understanding of sustainability and strengthen their capacity for responsible citizenship.

Culture represents another essential dimension of sustainability. Every society possesses cultural traditions, languages, customs, beliefs, artistic practices, agricultural knowledge, community institutions, and forms of ecological wisdom that have evolved through long interaction with particular environments. In many indigenous and local communities, traditional knowledge contains valuable insights regarding biodiversity conservation, water management, agriculture, food practices, architecture, health, and community cooperation. Modern development processes, however, may sometimes marginalise or disregard these knowledge systems. Sustainable development requires a dialogue between scientific knowledge and traditional wisdom rather than the unquestioned dominance of one over the other.

The preservation of cultural diversity is therefore closely associated with the idea of sustainability. When languages disappear, communities lose not only a means of communication but also unique ways of understanding history, nature, social relationships, and collective identity. Similarly, the disappearance of traditional artistic practices, oral histories, folk literature, and indigenous ecological knowledge can weaken cultural continuity. Education has an important responsibility to document, preserve, reinterpret, and transmit such knowledge while also encouraging learners to critically examine practices that may conflict with contemporary principles of equality, human rights, and social justice. Cultural sustainability should not mean the preservation of every tradition without reflection; rather, it should involve a dynamic process through which communities retain valuable cultural knowledge while adapting to changing social realities.

The relationship between culture and sustainability becomes particularly relevant in the Indian context. India represents an extraordinary diversity of languages, religions, communities, literary traditions, folk cultures, ecological landscapes, and indigenous knowledge systems. Indian philosophical and cultural traditions have historically included ideas concerning the interconnectedness of human beings, society, and nature. Concepts such as respect for the natural environment, collective responsibility, moderation in consumption, and coexistence can provide meaningful resources for contemporary sustainability discourse. At the same time, India's experience also demonstrates the tensions between development, environmental protection,

social justice, and cultural preservation. Education must therefore provide students with opportunities to understand both the strengths and limitations of inherited cultural traditions while developing a critical and inclusive vision of sustainable development.

The framework of the Sustainable Development Goals, particularly Sustainable Development Goal 4 on quality education and Sustainable Development Goal 11 on sustainable communities, highlights the importance of inclusive, equitable, and lifelong learning. However, sustainability should not be treated as a separate subject confined to environmental science classrooms. It should become an interdisciplinary principle integrated across the curriculum. History can help students understand the historical roots of environmental transformation and social inequality; political science can examine environmental governance and democratic participation; economics can explore sustainable production and consumption; sociology can investigate social inequalities and environmental justice; literature can cultivate ecological imagination; geography can examine human-environment relationships; and education can develop pedagogical strategies for sustainable living.

From the perspective of higher education, universities have a particularly important role in creating knowledge and preparing future generations of teachers, administrators, researchers, policymakers, and professionals. A university committed to sustainability should integrate sustainability into teaching, research, campus practices, community engagement, and institutional governance. Curriculum development should encourage interdisciplinary learning and connect theoretical knowledge with local problems. Research should increasingly address issues such as climate resilience, sustainable agriculture, water conservation, cultural preservation, digital sustainability, social inclusion, and environmental justice. Universities can also serve as bridges between academic knowledge and community knowledge by working collaboratively with local populations.

The role of teachers in this process is equally significant. A teacher is not merely a transmitter of knowledge but a facilitator of critical reflection and social transformation. Pedagogy for sustainability should encourage dialogue, experiential learning, field-based activities, community engagement, project work, creative expression, and problem-solving. Students can be encouraged to document local stories, folk traditions, environmental practices, oral histories, and indigenous knowledge. Such activities can simultaneously strengthen literacy, cultural awareness, research skills, and ecological consciousness. Literature classrooms, for instance, can become spaces where students analyse representations of nature, discuss environmental justice, and connect literary narratives with contemporary ecological concerns.

Digital technology and artificial intelligence have further transformed the educational and cultural landscape. Digital platforms provide unprecedented opportunities for preserving manuscripts, oral traditions, regional languages, folk music, local histories, and cultural archives. Digital education can expand access to knowledge and facilitate collaboration across geographical boundaries. However, technological development also raises questions regarding digital inequality, privacy, misinformation, excessive consumption, and the marginalisation of local cultures. Artificial intelligence should therefore be used responsibly and ethically, ensuring that technological advancement supports rather than replaces human creativity, cultural diversity, critical thinking, and ecological responsibility.

Another important dimension is social sustainability. Sustainable development cannot be achieved when large sections of society remain excluded from educational opportunities or cultural participation. Gender equality, social justice, accessibility, inclusion, and dignity must be integral to educational policy and practice. Education can challenge stereotypes and discriminatory practices by exposing learners to diverse voices and experiences. Literature can make marginalised experiences visible, while culture can provide communities with a sense of belonging and identity. A sustainable society must consequently be both environmentally

responsible and socially just.

The concept of sustainability also requires an intergenerational perspective. Education connects generations by transmitting knowledge from the past while preparing learners for the future. Literature preserves human experiences and cultural memories; culture provides continuity; and sustainability asks us to consider the rights and needs of future generations. This intergenerational relationship challenges the idea that development should be measured only through immediate economic gains. Instead, development must be evaluated according to whether it enhances human well-being while protecting ecological systems, cultural diversity, and social justice for those who will inherit the world we create today.

As educators and academics, we therefore need to rethink the meaning and purpose of knowledge. The contemporary university should not exist as an isolated institution disconnected from society and its environment. It should become a centre of critical inquiry, cultural dialogue, ethical reflection, and sustainable innovation. Interdisciplinary research involving education, literature, cultural studies, environmental studies, social sciences, and technology can generate new approaches to complex problems. Such an approach can also help overcome the artificial separation between the sciences and humanities. Sustainability requires scientific knowledge, but it also requires imagination, values, ethics, cultural understanding, and empathy—qualities that the humanities and literary studies are particularly well positioned to nurture.

The central argument of this paper is that education, literature, culture, and sustainability should be understood not as four separate fields but as mutually reinforcing dimensions of human development. Education provides the framework for learning; literature develops imagination and empathy; culture offers identity, memory, values, and contextual knowledge; and sustainability provides the ethical and ecological direction for development. Their integration can create an educational philosophy that prepares learners not merely to succeed in the existing world but to participate responsibly in transforming it.

> ***The paper proposes an interdisciplinary model of sustainable education based on five interconnected principles: Knowledge, Culture, Ethics, Ecology, and Action. Knowledge enables learners to understand complex problems; Culture connects learning with local identities; Ethics encourages responsibility; Ecology develops awareness of natural systems; and Action transforms understanding into meaningful social participation.***

Ultimately, sustainability is not simply an environmental objective; it is a way of thinking about human civilisation and its relationship with nature, society, culture, and future generations. Education must therefore cultivate minds that are knowledgeable but also compassionate, critical but also constructive, technologically capable but ethically grounded, and globally aware while remaining connected to local cultures and communities. Literature can teach us to imagine lives beyond our own; culture can remind us of the wisdom and experiences inherited from previous generations; and education can provide the intellectual tools necessary to transform that understanding into responsible action.

The integration of education, literature, culture, and sustainability thus offers a powerful pathway towards building a society founded on dignity, diversity, ecological responsibility, social justice, and intergenerational equity. For educators and institutions of higher learning, the challenge is not merely to teach sustainability as a concept but to embody it in curriculum, pedagogy, research, institutional practices, and community engagement. The future of sustainable development will ultimately depend not only on what societies know but also on what they value, imagine, preserve, and choose to do. Education, enriched by literature and culture, can become one of the most powerful instruments for making that sustainable future possible.

Keywords : *Education, Literature, Culture, Sustainability, Sustainable Development, Environmental Education, Cultural Diversity, Higher Education, Ecological Consciousness, Social Justice, Interdisciplinary Learning.*

ज्ञानविविधा
कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 199-203
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. सोनी कुमारी

शिक्षाविद्, विश्वविद्यालय गृह विज्ञान विभाग,
तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय,
भागलपुर, बिहार

Corresponding Author :

डॉ. सोनी कुमारी

शिक्षाविद्, विश्वविद्यालय गृह विज्ञान विभाग,
तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय,
भागलपुर, बिहार

भारत एवं भूटान के आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत की संवाहिका नारी

शोध सारांश : भारत और भूटान की नींव गहरे आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक और ऐतिहासिक मूल्य पर केंद्रित है, जो काफी प्राचीन है। इस अनूठे जुड़ाव का सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं वलिष्ठ सूत्र महायान बौद्ध धर्म है। आठवीं शताब्दी में भारत के महान तांत्रिक गुरु पद्मसंभव (गुरु रिनपोछे) ने भारत से भूटान की यात्रा के कालांतर में बौद्ध धर्म का बीजारोपण किया जो कि वर्तमान में भूटान की संस्कृति, शासन एवं जीवनशैली का मूलाधार है।

इस आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत के संवाहिका के रूप में नारी शक्ति की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण एवं प्रभावी रही है। दोनों देशों के आध्यात्मिक इतिहास में नारियों ने केवल अनुयायी के रूप में ही नहीं, अपितु मार्गदर्शिका और रक्षक के रूप में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

भारत की विदुषी नारियों में गार्गी वाचकनवी और मैत्रेयी ने महर्षि याज्ञवल्क्य ऋषि शास्त्रार्थ कर उपनिषदों के आध्यात्मिक योगदान दिया। 'मीराबाई' (राजस्थान) ने सामाजिक बंधनों को तोड़कर कृष्ण भक्ति मार्ग को अपनाया और लोक संस्कृति को समृद्ध किया। कर्नाटक के अक्कामहादेवी ने 12वीं शताब्दी में आध्यात्मिक स्वतंत्रता हेतु राजश्री सुखों का त्याग कर "वीरशैव" आंदोलन को प्रखर किया। तमिलनाडु की 'आंडाल' दक्षिण भारत के एकमात्र महिला 'अल्वार संत' जो लक्ष्मी स्वरुपा है, आज भी संस्कृति का मुख्य अंग है।

भूटान की बौद्ध आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक परंपरा में माचिख लब्द्रोन नामक तिब्बती- हिमालयी बौद्ध योगिनी ने 'छोद' साधना पद्धति स्थापित किया। भूटान में तिब्बत के ज्ञान की महामाता सह गुरु पद्मसंभव की आध्यात्मिक संगिनी 'खोंड्रो येशे त्सोगयाल अमर है। करुणा की देवी मां तारा (देवी डोल्मा) भूटान के बौद्ध धर्म के मठ की रक्षक एवं आध्यात्मिक उन्नति की प्रदाता है। 'आजी सोनम चोद्रोन' ने

बौद्ध कलाकृतियां और अमूर्त सांस्कृतिक विरासत को सहेजने में अग्रणी भूमिका निभाई है।

संक्षेप में, कहा जा सकता है कि प्राचीन से आधुनिक कालखंड तक नारी न केवल जीवनदायिनी रही हैं, अपितु आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, दर्शन, शिक्षा, कला और सामाजिक संरचना की आधारशिला के रूप में सक्रिय निर्माता रही ह।

मुख्य शब्द : आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, धर्म, संवाहिका, शक्ति, पद्धति, कला, दर्शन, शिक्षा।

प्रस्तावना : भारत और भूटान के बीच संबंध में धर्म इतिहास, संस्कृति, ज्ञान, आध्यात्मिकता और जन-जन के संपर्क के महत्वपूर्ण भूमिका रही है। भारत के प्रधानमंत्री के भूटान स्थित राष्ट्रीय सभा में दिए गए संबोधन में भी दोनों देशों के संबंधों की आधारभूमि में भूगोल, इतिहास, विद्या, धर्म और संस्कृति माना गया है।

भूटान की सांस्कृतिक पहचान यथा सामाजिक मूल्य बौद्ध परंपरा से जुड़े हुए हैं। भारत के सांस्कृतिक संरचना की व्याख्या में पुरूषों, राजाओं धार्मिक गुरु और संस्थाओं के योगदान की प्रमुखता मिलती है, जबकि महिलाओं की भूमिका अपेक्षाकृत कम दिखाई देती है। वस्तुतः नारी पीढ़ियों से संस्कृति की मौखिक परंपरा, पारिवारिक संस्कार, लोकगीत, धार्मिक अनुष्ठान, पारंपरिक भोजन, वस्त्र, हस्तकला और सामाजिक मूल्यों को पीढ़ी तक पहुंचाती रही हैं।

भारत और भूटान के संयुक्त आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत की अवधारणा : किसी समाज की जीवन-पद्धति, विश्वास, मूल्य, भाषा, लोकाचार, नृत्य, अनुष्ठान, हस्तशिल्प और मौखिक परंपराएं भी शामिल होती है। भारत और भूटान के आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विरासत का स्वरुप अत्यंत में व्यापक है। भारत और बौद्ध, हिंदू, जैन, सिख तथा अन्य परंपराओं से जुड़े आध्यात्मिक स्थल और उनसे संबंध सामाजिक संस्कृति व्यवहार पीढ़ियों से समाज जोड़ते रहे हैं।

भारत और भूटान के भौतिक विरासत में नारी मंदिर, मठ, स्तूप, ऐतिहासिक भवन, मूर्तियां, चित्रकला और पुरातात्विक स्थल आते हैं। जबकि अमूर्त सांस्कृतिक विरासत में लोकगीत, लोक कथाएं, धार्मिक अनुष्ठान, पर्व त्योहार, पारंपरिक ज्ञान, हस्तकला, भाषा और सामाजिक व्यवहार सम्मिलित होते हैं। जिनकी संवाहिका नारी है।

भारत और भूटान के सांस्कृतिक संबंधों में बौद्ध धर्म विशेष महत्व रखता है। भगवान बुद्ध के उपदेश भारत के एशिया से विभिन्न क्षेत्रों में पहुंचे और हिमालय क्षेत्र में बौद्ध दर्शन के विकास में भारत और भूटान के बीच आध्यात्मिक संबंधों को मजबूत किया। भूटान के राष्ट्रीय संग्रहालय के अनुसार वहां के सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक विरासत में वज्रयान बौद्ध परंपरा का केंद्रीय स्थान है। मंदिरों, चित्रों, मंडलों और धार्मिक प्रतीकों में आध्यात्मिक विचारों की अभिव्यक्ति दिखाई देती है। इस साझा विरासत में नारी धार्मिक ज्ञान, पारिवारिक संस्कार, कला और सामुदायिक परंपराओं की सक्रिय संवाहिका भी रही हैं।

भारतीय समाज में सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण में नारी : भारतीय नारी की आध्यात्मिक भूमिका भी विविध रही है। 'मीराबाई' जैसी संत कवियत्री ने भक्ति को सामाजिक सीमाओं से ऊपर उठाकर आध्यात्मिक अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। भारतीय संस्कृति में नारी की भूमिका पारंपरिक रुप से परिवार एवं समाज के बीच सेतु के रूप में रही है। जब बच्चे का प्रथम सामाजिक और सांस्कृतिक प्रशिक्षण होता है तो इसमें मां की भूमिका विशेष होती है। मां बच्चों की प्रथम गुरु होती हैं। आधुनिक समय में महिला कलाकार, शोधकर्ता, शिक्षिका, योग प्रशिक्षिका, अभियंता, अंतरिक्ष यात्री, सैन्य-सेवा और सांस्कृतिक कार्यकर्ता, परंपरा और आधुनिकता के बीच सेतु का कार्य कर रही हैं। यह काफी सराहनीय एवं नारी सशक्तिकरण का अनूठा उदाहरण है।

भूटान में नारी और सांस्कृतिक विरासत : भूटान में पारंपरिक संस्कृति आज भी दैनिक जीवन का हिस्सा है। भूटान की नारी परिवार के बच्चों को स्थानीय भाषा रीति-रिवाज, धार्मिक मान्यताओं, पर्वों और सामाजिक मूल्यों से परिचित कराती है। इस प्रकार परिवार सांस्कृतिक संरक्षण की प्रथम संस्था बन जाता है और नारी उसकी महत्वपूर्ण

आधारशिला। भूटानी की नारी की भूमिका विशेष रूप से पारंपरिक वस्त्र, हस्तकला, बुनाई और पारंपरिक संस्कृति में दिखाई देती है। भूटान की पारंपरिक पोशाक और वस्त्र संस्कृति केवल पहनाई का साधन नहीं है, अपितु राष्ट्रीय संस्कृत पहचान का हिस्सा है।

भूटान में नारियों की आध्यात्मिक भूमिका का सबसे महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय पक्ष बौद्ध भिक्षुणियों की परंपरा है। महिला मठ एवं धार्मिक प्रशिक्षण केंद्र मैं आध्यात्मिक साधना के साथ-साथ शिक्षा, अनुशासन, सामुदायिक सेवा और धार्मिक परंपरा के संरक्षण में भी योगदान देती है। उदाहरणस्वरूप सरपांग स्थित Shedrup choleling Anim Dratshang बौद्ध भिक्षुणियों के आध्यात्मिक प्रशिक्षण शिक्षा और कल्याण के लिए कार्यरत है यहां बौद्ध दर्शन, ज्ञान, धार्मिक अनुष्ठान तथा सामुदायिक सेवा से संबंधित गतिविधियां होती है, जिसकी शिक्षिका और संवाहिका नारी है। नारी की भूमिका यह सिद्ध करती है कि आध्यात्मिक विरासत के संरक्षण में नारी की भूमिका सक्रिय और संस्थागत दोनों रूपों में विकसित है।

लोककला और हस्तशिल्प में भारतीय नारी एवं भूटानी नारी की भूमिका : भारत और भूटान दोनों के सांस्कृतिक पहचान में हस्तशिल्प में वस्त्र निर्माण, बुनाई, कढ़ाई, पारंपरिक सज्जा तथा घरेलू शिल्प में नारियों का योगदान विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। हस्तशिल्प के माध्यम से नारी केवल आर्थिक गतिविधि के अतिरिक्त सांस्कृतिक प्रतीकों और पारंपरिक ज्ञान को भी संरक्षित करती है।

किसी पारंपरिक नमूना (डिजाइन) रंग-संयोजन अथवा बुनाई की तकनीक में स्थानीय इतिहास और सामुदायिक स्मृति छुपी होती है। जैसे-बिहार की मधुबनी एवं मंजूषा कला, प. बंगाल की कांथा, पंजाब की फुलकारी, लखनऊ की चिकनकारी, वाराणसी की बनारसी, मध्यप्रदेश के चंदेरी, गुजरात की कच्छ, तमिलनाडु की कांजीवरम, महाराष्ट्र की पैठणी, उड़ीसा की इकत कढ़ाई बुनाई हस्तकला काफी प्रसिद्ध है।

भूटान की बुनाई कला में खोमागांव का किशुथारा, बुमथांग की याथ्रो, पूर्वी भूटान की एवं त्राशिगांग की ऐकापुर, वांगगद्य फोदारंग एवं आदांग की अदांग माथरा, त्रोंगसा क्षेत्र की नेटल रेशा बुनाई प्रसिद्ध है।

संगीत, नृत्य और साहित्य में भारतीय और भूटान की नारी का योगदान : संगीत और नृत्य किसी भी धर्म में सांस्कृतिक विरासत की महत्वपूर्ण अंग है। भारत में कथक, भरतनाट्यम, ओडिसी, मणिपुरी तथा विभिन्न लोक नृत्य के माध्यमों से धार्मिक आख्यान, लोकजीवन और आध्यात्मिक भावों की अभिव्यक्ति होती है। ठीक उसी प्रकार भूटान में छाम जैसे धार्मिक मुखौटा नृत्य तथा विभिन्न क्षेत्रीय लोकनृत्य बौद्ध दर्शन, धार्मिक, विश्वास और सामुदायिक जीवन को अभिव्यक्त करते हैं। दोनों देशों में संगीत और मनोरंजन के साधन नहीं है, अपितु संस्कृति, स्मृति एवं आध्यात्मिक चेतना को पीढ़ी-दर-पीढ़ी पहुंचाने का माध्यम है। भारत और भूटान के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान में नारी कलाकारों की भागीदारी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। नेहरू वांगचुक सांस्कृतिक केंद्र थिम्फू द्वारा आयोजित कार्यक्रम में भारतीय नारी कलाकार ने सांस्कृतिक प्रस्तुतियों में भाग लिया। इन परंपराओं को जीवित रखने में नारियों की सहभागिता विशेष महत्व रखती है।

भारतीय और भूटान की शिक्षा में नारी की भूमिका : शिक्षा और नारी का अटूट संबंध है। क्योंकि परिवार में "एक पुरुष पढ़ता है तो स्वयं तक सीमित रहता है, जबकि एक नारी पढ़ती है तो वह पूरे परिवार को शिक्षित कर देती है।" इसलिए यदि विद्यालय और महाविद्यालय में भारतीय एवं भूटानी सांस्कृतिक विरासत, बौद्ध दर्शन लोककला, पारंपरिक ज्ञान और नारियों के योगदान का पाठ्यक्रम से जोड़ा जाए तो युवा पीढ़ी अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ सकती है। भूटान की शिक्षा व्यवस्था में सांस्कृतिक विरासत आध्यात्मिकता कला एवं शिल्प के अध्ययन के महत्व दिया गया है। इस प्रकार नारी शिक्षा के क्षेत्र में भी अग्रणी भूमिका निभा रही हैं क्योंकि वह बच्चों को केवल पाठ्यपुस्तक का ही ज्ञान नहीं देती है, अपितु स्थानीय परंपराओं और जीवनमूल्यों को भी समझने में सहायता करती

हैं।

भारत भूटान सांस्कृतिक संबंधों में नारी की नई भूमिका : भारत और भूटान के बीच सांस्कृतिक संबंधों को सरकारी स्तर के अतिरिक्त जन भागीदारी आधारित बनना आवश्यक है। नेहरू-वांगचुक सांस्कृतिक केंद्र दोनों देशों के बीच सांस्कृतिक कार्यक्रमो, कार्यशाला, योग, भारतीय शास्त्रीय संगीत, कला, साहित्य और युवा कलाकारों के आदान-प्रदान का मंच प्रदान करता है।

इन गतिविधियों में नारियों की सहभागिता के बीच एक विशेष भारत भूटान नारी सांस्कृतिक संवाद विकसित किया जा सकता है। जिसके अंतर्गत निम्नलिखित कार्यक्रम संचालित किए जा सकते हैं :-

- पारंपरिक भोजन एवं पोषण ज्ञान का आदान-प्रदान
- नारी हस्तशिल्पकारों की प्रदर्शनियां
- नारी कलाकारों का सांस्कृतिक आदान-प्रदान
- बौद्ध भिक्षुणियों के बीच संवाद
- योग एवं ध्यान प्रशिक्षण
- लोकगीत एवं लोक नृत्य कार्यशालाएं
- नारी शोधकर्ताओं के संयुक्त शोध
- डिजिटल संस्कृत अभिलेखना

इससे नारी सांस्कृतिक विरासत की सक्रिय संरक्षक एवं सांस्कृतिक राजदूत बन सकती है और कालांतर तक यह विरासत अक्षुण्ण रह सकता है।

आध्यात्मिक विरासत और नारी सशक्तिकरण : भारत और भूटान दोनों देशों के आध्यात्मिक विरासत में करुणा, अहिंसा, सेवा, आत्मानुशासन, सह-अस्तित्व और प्रकृति के प्रति सम्मान जैसे मूल्य भी शामिल है। इन मूल्यों का सामाजिक जीवन पर प्रभाव दिखाई देता है। इसलिए नारियों को इस मूल्यों के प्रचार-प्रसार में सहभागी बनाना सामाजिक सशक्तिकरण का भी माध्यम हो सकता है। नारी स्वयं सहायता समूह, सांस्कृतिक संस्थाएं, विद्यालय, धार्मिक संगठन और स्थानीय समुदाय मिलकर आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत को आधुनिक सामाजिक विकास से जोड़ सकते हैं तथा वर्तमान और भविष्य के समाज को मानवीय मूल्यों से जोड़कर विरासत को संरक्षित कर सकते हैं।

आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विरासत की प्रमुख चुनौतियां : भारत और भूटान में आधुनिकता, वैश्वीकरण, शहरीकरण और डिजिटल संस्कृति ने पारंपरिक जीवन पद्धतियों के कारण युवा पीढ़ी के पारंपरिक कला और लोकज्ञान से दूर होने पर अमूर्त सांस्कृतिक विरासत के विलुप्त होने का खतरा बढ़ता जा रहा है। यह एक गंभीर चुनौती है। भारत और भूटान के आधिकारिक सांस्कृतिक विभाग ने भी विकास की तीव्र गति के कारण कुछ विरासत स्थलों के क्षतिग्रस्त होने तथा पारंपरिक स्थापत्य की प्रमाणिकता प्रभावित होने की चिंता व्यक्त की है।

- **सांस्कृतिक संरक्षण हेतु अमूल्य सुझावः-**
- बौद्ध भिक्षुणियों एवं महिला आध्यात्मिक साधकों के बीच ज्ञान संवाद को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- लोकगीत लोक कथाएं पारंपरिक व्यंजन वस्त्र हस्तशिल्प और धार्मिक अनुष्ठानों का डिजिटल अभिलेख किया जाना चाहिए।
- दोनों देशों की नारी कलाकारों, शोधकर्ताओं, शिक्षिकाओं और हस्तशिल्पकारों के लिए नियमित सांस्कृतिक आदान-प्रदान किया जाना चाहिए और संयुक्त कार्यक्रम आयोजित होना चाहिए।

- विद्यालय और उच्च शिक्षा संस्थानों में महिलाओं के सांस्कृतिक योगदान पर आधारित अध्ययन कराया जाना चाहिए।
- नारी केंद्रित सांस्कृतिक संस्कृत शोध परियोजनाएं प्रारंभ की जानी चाहिए।

निष्कर्ष : निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भारत और भूटान के संबंध इस बात का उत्कृष्ट उदाहरण है कि एक बड़ा और एक छोटा देश आपसी संप्रभुता के सम्मान, समानता और जनहित के आधार पर सहः अस्तित्व कायम किया है। साथ ही आपसी विश्वास, सांस्कृतिक निकटता और रणनीति साझेदारी पर आधारित एक अनूठे और प्रगाढ़ आदर्श का प्रतिनिधित्व करता है।

भारत और भूटान के आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत दोनों देशों के संयुक्त सभ्यतागत स्मृति का महत्वपूर्ण आधार है। बौद्ध दर्शन, लोक परंपरा, कला, संगीत, नृत्य, हस्तशिल्प, पारिवारिक मूल्य और आध्यात्मिक चिंतन, दोनों समाजों को विशिष्ट सांस्कृतिक संबंध में जोड़ते हैं।

भारत में नारी लोकगीत, हस्तशिल्प, धार्मिक अनुष्ठान, पारंपरिक ज्ञान, योग, परिवार एवं सामुदायिक संस्कारों के माध्यम से सांस्कृतिक विरासत की प्रमुख संवाहिका रही है। इसी प्रकार भूटान में नारियाँ पारंपरिक कला, वस्त्र, संगीत, नृत्य, धार्मिक अनुष्ठान, पारिवारिक संस्कारों तथा बौद्ध आध्यात्मिक परंपराओं को जीवित रखने में महत्वपूर्ण योगदान देती है। भूटान में बौद्ध भिक्षुणियों के आध्यात्मिक एवं सामाजिक योगदान तथा भारत-भूटान सांस्कृतिक आदान-प्रदान में नारी कलाकारों एवं शिक्षिकाओं की भागीदारी इस भूमिका को और भी व्यापक बनाती है।

विरासत के संरक्षण में नारी की भूमिका बहुआयामी है। वह मां के रूप में संस्कारों की संवाहिका, कलाकार के रूप में सौंदर्य की सृजक, शिक्षिका के रूप में ज्ञान की प्रचारक, शिल्पी के रूप में पारंपरिक कौशल के संरक्षक, भिक्षुणी के रूप में आध्यात्मिक ज्ञान की संचिका और आधुनिक सांस्कृतिक कार्यकर्ता के रूप में परंपरा तथा आधुनिकता के बीच सेतु और संवाहिका है।

अतः नारी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विरासत की संरक्षक ही नहीं, अपितु उसकी सक्रिय निर्माता, संवाहिका और आधुनिक संदर्भ में पुनव्याख्याकार के रूप की प्रतिरूप है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. Embassy of India, Thimphu culture and People Level Ties/India-Bhutan Relations, Government of India.
2. Indian council for cultural relation (ICCR) Nehru-Wangchuk cultural centre, Thimphu.
3. Royal Bhutanese Embassy, New Delhi, Culture, Royal Government of Bhutan.
4. Rajput Madhu: Window to Bhutan: A study of Urban Educated Middle class working women.
5. Rajput Madhu: Bhutan: From Theocracy to Democracy
6. Minister of External Affairs Government of India, Speech by the Prime Minister at the National Assembly of Bhutan.
7. Government of Bhutan Department of culture and Dzongkha development essential Guide to Sacred sites.
8. ICCR Annual Report 2023-24 Government of India.
9. Singhania Nitin: Indian Art and Culture.
10. Vatsyayana kapila: Classical Indian Dance in Literature and the Arts.
11. Venkatraman Leela: Indian Classical Dance The Renaissance and Beyond.
12. Consulate General of India Phentsholing, India-Bhutan Bilateral Relation Government of India.

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-204-209

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 204-209
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

संगीता जायसवाल

सहायक प्राध्यापिका, हिंदी विभाग, पी.पी.के. कॉलेज बुंडू, राँची, राँची विश्वविद्यालय (झारखण्ड)

Corresponding Author :

संगीता जायसवाल

सहायक प्राध्यापिका, हिंदी विभाग, पी.पी.के. कॉलेज बुंडू, राँची, राँची विश्वविद्यालय (झारखण्ड)

राधाकृष्ण की कहानियों में सांस्कृतिक चेतना

सारांश : सांस्कृतिक चेतना साहित्य का आधार होती है। दोनों एक-दूसरे को प्रभावित भी करते हैं। संस्कृति किसी समाज की पहचान, जीवन-पद्धति, परंपराओं, विश्वासों और मानवीय मूल्यों से निर्मित होती है। साहित्य इन सांस्कृतिक विशेषताओं को अभिव्यक्ति देने के साथ-साथ उनका मूल्यांकन भी करता है। साहित्यकार इस सृजनशीलता को समाज तथा संस्कृति से ही प्राप्त करता है। हिंदी के प्रसिद्ध कथाकार राधाकृष्ण का कथा-साहित्य सामान्य मनुष्य के जीवन, सामाजिक परिस्थितियों, आर्थिक विषमता और मानवीय संवेदनाओं से गहरे रूप में जुड़ा हुआ है। उनकी कहानियों में लोकजीवन, सामाजिक व्यवहार, पारिवारिक संबंधों, कला, साहित्य और जीवन-संघर्ष के विविध पक्षों को समझने का अवसर मिलता है। प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य राधाकृष्ण की कहानियों में अभिव्यक्त सांस्कृतिक चेतना के स्वरूप का अध्ययन करना है। इसमें संस्कृति और सांस्कृतिक बोध की अवधारणा को आधार बनाकर उनकी कहानियों के सामाजिक एवं मानवीय पक्षों का विश्लेषण किया गया है। विशेष रूप से 'मुड़कर भी न देखा', 'मूल्य', 'कलाकार का मास्टरपीस' और 'कविता और पत्थर' जैसी कहानियों के संदर्भ में लोकपरंपरा, सांस्कृतिक पहचान, कला के प्रति दृष्टिकोण तथा भौतिक मूल्यों और मानवीय संवेदना के संबंध को समझने का प्रयास किया गया है। इस अध्ययन में सांस्कृतिक चेतना केवल रीति-रिवाजों और परंपराओं के वर्णन तक ही सीमित नहीं होती, बल्कि मनुष्य के आचरण, सामाजिक संबंधों, संवेदनाओं और जीवन-मूल्यों में भी व्यक्त होती है। इस दृष्टि से राधाकृष्ण की कहानियाँ संस्कृति को जीवन के वास्तविक अनुभवों से जोड़ते हुए अपने समय तथा समाज के प्रति संवेदनशीलता को व्यक्त करती है।

बीज शब्द : राधाकृष्ण, कहानी, भारतीय संस्कृति, सांस्कृतिक चेतना, सांस्कृतिक बोध, सांस्कृतिक संवेदना, लोकजीवन, आदिवासी संस्कृति, मानवीय मूल्य, सामाजिक यथार्थ, जीवन-संघर्ष, लोकपरंपरा, कला,

मानवीय संबंध, साहित्यिक दृष्टि।

मूल आलेख :

भूमिका : साहित्य और संस्कृति का संबंध अत्यंत निकट है। साहित्य जिस समाज में रचा जाता है, वहाँ की परिस्थितियाँ, परंपराएँ, विश्वास, विचार और जीवन-मूल्य किसी न किसी रूप में उसमें अभिव्यक्त होते हैं। साहित्यकार अपने समय के जीवन को केवल देखता ही नहीं, बल्कि अपनी संवेदना और दृष्टिकोण के आधार पर उसका विश्लेषण भी करता है। इसीलिए साहित्य समाज और संस्कृति को समझने का महत्त्वपूर्ण माध्यम है। दयानिधि मिश्र के अनुसार, "संस्कृति से प्राप्त कच्चे माल को अपनी कारयित्री प्रतिभा के योग से साहित्यकार नयी आकृति देता है और इस रूप में साहित्य संस्कृति को समृद्ध करता है।"[1] किसी रचना में सांस्कृतिक चेतना का अध्ययन करते समय केवल धार्मिक विश्वासों, त्योहारों और रीति-रिवाजों को देखना पर्याप्त नहीं है। यह भी समझना आवश्यक है कि मनुष्य अपने परिवार, समाज और परिवेश के साथ किस प्रकार का संबंध बनाता है तथा उसके व्यवहार में कौन-कौन से मूल्य प्रतिबिंबित हुए हैं।

हिंदी कथा-साहित्य में सामान्य मनुष्य के जीवन को केंद्र में रखकर सामाजिक और सांस्कृतिक प्रश्नों पर विचार करने की समृद्ध परंपरा रही है। प्रेमचंद से लेकर बाद के अनेक कथाकारों ने गरीबी, सामाजिक विषमता, पारिवारिक संबंधों, रूढ़ियों और मानवीय संवेदनाओं को अपनी रचनाओं का विषय बनाया। राधाकृष्ण भी ऐसे कथाकार हैं जिनकी कहानियाँ जीवन की वास्तविक परिस्थितियों और मनुष्य के संघर्षों से जुड़ी हुई हैं। उनकी कहानियों में संस्कृति केवल बाहरी परंपराओं के रूप में उपस्थित नहीं होती, बल्कि जीवन के व्यवहार, सामाजिक संबंधों और मानवीय प्रतिक्रियाओं में भी दिखाई देती है। उनकी कहानियों में सांस्कृतिक चेतना के विविध रूप मिलते हैं। कहीं लोकजीवन और प्रकृति के प्रति लगाव दिखाई देता है, कहीं सामाजिक परंपराओं और आर्थिक परिस्थितियों का संबंध सामने आता है, तो कहीं कला और साहित्य के प्रति समाज की दृष्टि पर प्रश्न उठते हैं। ऐसे ही प्रसंगों के माध्यम से लेखक मनुष्य के जीवन और उसके आसपास के सामाजिक वातावरण को चित्रित करता है। इसलिए यहाँ राधाकृष्ण की कहानियों को सांस्कृतिक दृष्टि से विश्लेषण करते हुए उनके व्यापक अर्थों को समझने का प्रयास किया गया है।

संस्कृति और सांस्कृतिक चेतना : संस्कृति का अर्थ किसी समाज में प्रचलित रीति-रिवाजों और धार्मिक परंपराओं तक सीमित नहीं है। इसमें मनुष्य के विचार, व्यवहार, भाषा, कला, सामाजिक संबंध, नैतिक धारणाएँ और जीवन के प्रति दृष्टिकोण भी शामिल होते हैं। संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक अनुभवों और व्यवहारों के माध्यम से पहुँचती है, लेकिन प्रत्येक पीढ़ी उसे अपने समय की आवश्यकताओं के अनुसार नया अर्थ भी देती है। इस प्रकार संस्कृति में निरंतरता और परिवर्तन दोनों साथ-साथ चलते हैं। इस दृष्टि से भारतीय संस्कृति का अपनी विविधता, सह-अस्तित्व और परस्पर समन्वय के कारण विशेष महत्त्व है। मैथ्यू अर्नोल्ड का मानना है कि, "किसी समाज और राष्ट्र की श्रेष्ठतम उपलब्धियाँ ही संस्कृति है। जिनसे समाज और राष्ट्र परिचित होता है।"[2] इस संदर्भ में भारतीय परंपरा और संस्कृति काफी प्रसिद्ध है। विभिन्न क्षेत्रों की भाषाएँ, लोकगीत, नृत्य, खान-पान, पर्व-त्योहार और पारिवारिक परंपराएँ भारतीय जीवन को बहुरंगी बनाती हैं। लेकिन संस्कृति को केवल आदर्शों के आधार पर समझना भी उचित नहीं होगा। सामाजिक जीवन में आर्थिक असमानता, रूढ़िवादिता और अन्याय जैसी समस्याएँ भी मौजूद रही हैं। इसलिए सांस्कृतिक चेतना का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष इन विसंगतियों को पहचानना और मानवीय मूल्यों के आधार पर उनका मूल्यांकन करना है।

इसी प्रकार सांस्कृतिक बोध अथवा चेतना का अर्थ है अपने सामाजिक परिवेश को समझना तथा उसमें उपस्थित मान्यताओं, मूल्यों और अंतर्विरोधों के प्रति जागरूक होना। जब साहित्यकार किसी पात्र के गुण, व्यवहार,

उसकी कठिनाइयों, पारिवारिक संबंधों या सामाजिक संघर्षों को चित्रित करता है, तब वह अपने समय की सांस्कृतिक परिस्थितियों को भी उद्घाटित करता है। इस दृष्टि से सांस्कृतिक चेतना केवल उत्सव या परंपरा के वर्णन में नहीं, बल्कि मनुष्य के प्रति व्यवहार, सहयोग, सम्मान और संवेदनशीलता में भी व्यक्त होती है। वहीं साहित्य संस्कृति का दर्पण होने के साथ-साथ उसके मूल्यांकन का माध्यम भी होता है। वह समाज में प्रचलित मान्यताओं को सामने लाता है और पाठक को उन पर विचार करने के लिए प्रेरित करता है। इसी कारण किसी कहानी का सांस्कृतिक अध्ययन करते समय उसके कथानक के साथ पात्रों के व्यवहार, सामाजिक परिस्थितियों और लेखक की दृष्टि को समझना आवश्यक है। राधाकृष्ण की कहानियों का अध्ययन भी इसी सांस्कृतिक आधार पर किया जाना चाहिए।

राधाकृष्ण की कहानियाँ : सांस्कृतिक चेतना, संवेदना और प्रासंगिकता : राधाकृष्ण का कथा-साहित्य सामान्य जीवन की वास्तविकताओं से जुड़ा हुआ है। उनकी कहानियों में पात्रों की पहचान केवल उनके व्यक्तिगत गुणों से नहीं बनती, बल्कि उनके सामाजिक परिवेश, आर्थिक स्थिति और जीवन-संघर्षों से भी बनती है। उनकी कहानियों में मनुष्य और समाज के संबंध को समझने के अनेक अवसर मिलते हैं। किसी पात्र की कठिनाई, दूसरे व्यक्ति की प्रतिक्रिया अथवा सामाजिक व्यवहार के माध्यम से व्यापक जीवन-स्थितियाँ सामने आ सकती हैं। इसलिए राधाकृष्ण की सांस्कृतिक चेतना को समझने के लिए उनके कथा साहित्य में उपस्थित मनुष्य को केंद्र में रखना आवश्यक है। चूँकि संस्कृति का वास्तविक रूप मनुष्य के दैनिक जीवन में दिखाई देता है। परिवार के सदस्यों का आपसी व्यवहार, पड़ोसियों के साथ संबंध, सामाजिक सहयोग, सुख-दुःख में सहभागिता और विपरीत परिस्थितियों में दूसरों के प्रति संवेदना सांस्कृतिक जीवन के महत्त्वपूर्ण पक्ष हैं। इन पक्षों से किसी समाज की जीवन-दृष्टि का परिचय मिलता है।

उनकी कहानियों में आर्थिक अभाव और सामाजिक संघर्ष जैसे विषयों का महत्त्व इसलिए है कि ये परिस्थितियाँ मनुष्य के व्यवहार और संबंधों को प्रभावित करती हैं। अभाव केवल आवश्यक वस्तुओं की कमी नहीं है; वह व्यक्ति के आत्मसम्मान, पारिवारिक जीवन और सामाजिक स्थिति पर भी प्रभाव डाल सकता है। ऐसी परिस्थितियों में मनुष्य के प्रति समाज का व्यवहार उसके सांस्कृतिक मूल्यों की खोज करता है। यदि लोग प्रतिकूल समय में सहयोग और आत्मीयता का परिचय देते हैं, तो सामाजिक संबंध मजबूत होते हैं। इसके विपरीत, स्वार्थ और उपेक्षा से संबंध कमजोर होते हैं। इस संदर्भ में राधाकृष्ण की कहानियों का सांस्कृतिक अध्ययन केवल परंपराओं की पहचान तक सीमित नहीं रहना चाहिए। उसमें यह भी देखना चाहिए कि उनके पात्र किन परिस्थितियों में जीवन जीते हैं, वे दूसरों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं और उनके अनुभवों व चरित्र से कौन-से सामाजिक तथा मानवीय प्रश्न सामने आते हैं।

राधाकृष्ण के कथा-साहित्य के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि वे जनजातीय जीवन के प्रसिद्ध कथाकार हैं। उनकी कहानी 'मुड़कर भी न देखा' में आदिवासी संस्कृति का सजीव वर्णन हुआ है। यह कहानी सांस्कृतिक चेतना की दृष्टि से विशेष महत्त्व रखती है। इसमें आदिवासी मुंडा समाज के जीवन, प्रकृति से उसके संबंध, लोकगीतों, नृत्य-परंपरा और अपनी जन्मभूमि के प्रति लगाव का चित्रण मिलता है। कहानी की प्रमुख पात्र फूलो के माध्यम से यह समझने का अवसर मिलता है कि संस्कृति मनुष्य के जीवन का बाहरी आवरण नहीं, बल्कि उसकी पहचान और आत्मीयता का आधार होती है। इसी सोच से फूलो अपने गाँव आए परदेशी के साथ जाने से इनकार कर देती है। लेखक के शब्दों में — "उसे अपना गाँव और अपने लोग बड़े प्यारे मालूम हो रहे थे। वह अखरा नहीं छोड़ना चाहती। वह नृत्य और गीत नहीं छोड़ना चाहती। वह कदापि उसके गाँव में नहीं जाएगी जहाँ अखरा नहीं होता, करम का नाच नहीं होता।"[3] फूलो का जीवन अपने गाँव और उसके प्राकृतिक परिवेश से जुड़ा हुआ है। जंगल, पहाड़, नदी, खेत और परिचित लोग उसके जीवन-संसार के महत्त्वपूर्ण हिस्से हैं। उसके लिए गाँव केवल रहने का स्थान नहीं, बल्कि उसकी स्मृतियों, संबंधों और सांस्कृतिक अनुभवों का केंद्र है। वह अपने समाज के गीत-संगीत और नृत्य-परंपराओं से भी जुड़ी

हुई है। उसके व्यक्तित्व में प्रकृति, सामुदायिक जीवन और संस्कृति का सामंजस्य स्पष्ट दिखाई देता है।

कहानी में अखरा और करम नृत्य जैसे सांस्कृतिक प्रसंग विशेष अर्थ रखते हैं। अखरा सामुदायिक मेल-जोल और सांस्कृतिक गतिविधियों का स्थान है, जबकि नृत्य और लोकगीत सामूहिक अनुभवों को अभिव्यक्त करने के माध्यम हैं। इन परंपराओं में केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि समुदाय की स्मृति, सामूहिकता और जीवन-पद्धति भी समाहित रहती है। फूलो के लिए इनका महत्त्व इसलिए है कि वे उसके अपने जीवन और पहचान का हिस्सा हैं। फूलो के सामने व्यक्तिगत आकर्षण और अपने परिचित सांस्कृतिक परिवेश के बीच चुनाव की स्थिति बनती है। उसका अपने गाँव और संस्कृति से जुड़ाव इस प्रसंग को व्यापक अर्थ देता है। इसे केवल किसी व्यक्तिगत संबंध की घटना मानना पर्याप्त नहीं होगा। इसके भीतर अपनी जड़ों, सामुदायिक संबंधों और सांस्कृतिक पहचान के प्रति निष्ठा का भाव भी दिखाई देता है। मनुष्य की इच्छाएँ केवल बाहरी आकर्षण से निर्धारित नहीं होतीं; उसके अनुभव, संस्कार और सामाजिक संबंध भी उसके निर्णयों को प्रभावित करते हैं।

स्पष्ट है कि इस कहानी में जनजातीय संस्कृति केवल बाह्य दृष्टिकोण नहीं, बल्कि पात्रों के सहज जीवन का हिस्सा बनकर सामने आती है। फूलो के माध्यम से प्रकृति और संस्कृति के बीच का संबंध स्पष्ट होता है। कहानी से यह समझ विकसित होती है कि किसी समुदाय की संस्कृति को समझने के लिए उसके गीत, नृत्य और परंपराओं के साथ-साथ उसके भावनात्मक संसार और जीवनशैली को भी समझना आवश्यक है। इस दृष्टि से यह कहानी सांस्कृतिक पहचान और अपनी मिट्टी से आत्मीय संबंध की प्रभावशाली अभिव्यक्ति है।

इस कड़ी में उनकी 'मूल्य' कहानी भी आदिवासी समाज की परंपरा, संस्कृति और जीवन-व्यवस्था को चित्रित करती है। इसमें उराँव समाज की परंपराओं, विवाह-व्यवस्था और आर्थिक परिस्थितियों का उल्लेख मिलता है। इससे यह समझने का अवसर मिलता है कि संस्कृति केवल लोकगीतों और उत्सवों में नहीं, बल्कि सामाजिक संबंधों और दैनिक व्यवहार में भी व्यक्त होती है। कहानी में विवाह से संबंधित परंपरा का उल्लेख है, जिसमें वर-पक्ष कन्या पक्ष को निर्धारित मूल्य (कीमत) देता है। मूल्य न चुका पाने पर भावी वर को कुछ समय तक कन्या के पिता के घर सेवा करनी पड़ती है। इस प्रकार उस समाज की एक विशिष्ट व्यवस्था उजागर होती है। इस प्रकार के प्रसंगों के माध्यम से लेखक यह दिखाते हैं कि परंपराएँ किसी समुदाय के जीवन को प्रभावित करती हैं और आर्थिक परिस्थितियों के साथ उनका संबंध भी बनता है। यहाँ संस्कृति को उसके वास्तविक सामाजिक संदर्भ में समझना आवश्यक है। किसी परंपरा का चित्रण होना अपने-आप में उसका समर्थन नहीं है; साहित्य उसका वर्णन करते हुए पाठकों को उसके प्रभावों पर विचार करने का अवसर भी दे सकता है। इस कहानी में एक दूसरा पक्ष अपनी मिट्टी से जुड़े रहने की आकांक्षा है। जवरा द्वारा भाग चलने की बात पर दूलो दृढ़ स्वर में कहती है — "मैं न अपने माँ-बाप को छोड़ सकती हूँ और न इस पहाड़ी गाँव को।"[4] इस तरह की सांस्कृतिक चेतना परंपरा और विवेक के बीच संबंध स्थापित करती है। परंपराएँ समाज को अतीत से अवश्य जोड़ती हैं, लेकिन उनका मूल्यांकन वर्तमान जीवन की आवश्यकताओं और मानवीय गरिमा के आधार पर भी होना चाहिए। जो परंपराएँ सामूहिकता और आत्मीयता को बढ़ाती हैं, वे समाज को समृद्ध कर सकती हैं। वहीं, यदि किसी व्यवस्था के कारण व्यक्ति का सम्मान या स्वतंत्रता प्रभावित होती है, तो उस पर विचार करना आवश्यक है। इस दृष्टि से 'मूल्य' सामाजिक परंपराओं को समझने के साथ-साथ संस्कृति और आर्थिक यथार्थ के संबंध पर भी ध्यान केंद्रित करती है। कहानी का सांस्कृतिक महत्त्व इसी बात में है कि वह पाठक को सामाजिक जीवन की व्यवस्थाओं और उनके मानवीय प्रभावों के बारे में सोचने का अवसर देती है।

राधाकृष्ण की 'कलाकार का मास्टरपीस' कहानी सांस्कृतिक चेतना का एक दूसरा पक्ष सामने लाती है। इसमें कला, कलाकार की रचनात्मकता और समाज की कलात्मक दृष्टि का प्रश्न महत्त्वपूर्ण है। कला किसी समाज की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम है। वह मनुष्य के अनुभवों, कल्पनाओं और संवेदनाओं को रूप देती है।

इसलिए कलाकार के प्रति समाज का व्यवहार भी उसकी सांस्कृतिक समझ का परिचायक होता है। समाज में अक्सर व्यक्ति का मूल्यांकन उसके बाहरी रूप, पहनावे, प्रतिष्ठा या आर्थिक स्थिति के आधार पर किया जाता है। कलाकार के मामले में भी ऐसी प्रवृत्ति दिखाई दे सकती है। किसी व्यक्ति की रचनात्मक क्षमता को समझने के स्थान पर उसके बाहरी व्यक्तित्व को अधिक महत्त्व देना कला के वास्तविक मूल्य को सीमित कर देता है। कहानी के संदर्भ में यह प्रश्न महत्त्वपूर्ण है कि कलाकार की पहचान किस आधार पर होनी चाहिए—बाहरी प्रतिष्ठा से या उसकी रचनात्मक दृष्टि और संवेदनशीलता से? चूँकि कला का सम्मान केवल किसी कलाकृति की प्रशंसा करने से पूरा नहीं होता। कलाकार के श्रम, संघर्ष और आत्मसम्मान को स्वीकार करना भी आवश्यक है। जब समाज कला से आनंद तो प्राप्त करता है, लेकिन कलाकार की परिस्थितियों के प्रति उदासीन रहता है, तब उसके सांस्कृतिक व्यवहार में विरोधाभास दिखाई देता है। इस प्रकार कहानी कला और समाज के संबंध को समझने का अवसर देती है। अतः इस कहानी के सांस्कृतिक पक्ष को मानवीय संवेदना से अलग नहीं किया जा सकता।

'कविता और पत्थर' कहानी के शीर्षक में ही साहित्यिक और भौतिक मूल्य के बीच संभावित विरोधाभास का संकेत मिलता है। कविता मनुष्य की कल्पना, संवेदना और जीवन-अनुभव की अभिव्यक्ति है, जबकि पत्थर को सामान्यतः उसकी उपयोगिता, रूप या आर्थिक मूल्य के आधार पर देखा जा सकता है। इस विरोध के माध्यम से कहानी साहित्य और कला के महत्त्व के बारे में विचार करने का अवसर देती है। यह सच है कि समाज में कई बार भौतिक उपलब्धियों और आर्थिक लाभ को अधिक महत्त्व दिया जाता है। ऐसी स्थिति में साहित्य, कला और रचनात्मक श्रम का मूल्यांकन पीछे छूट सकता है। किंतु साहित्य का महत्त्व केवल उसकी तात्कालिक उपयोगिता से निर्धारित नहीं होता। वह मनुष्य की संवेदना को विकसित करता है और समाज को अपने व्यवहार पर पुनर्विचार करने की प्रेरणा देता है। लेखक साहित्य और संस्कृति के महत्त्व को रेखांकित करते हुए बताते हैं— "लोगों ने संस्कृति को ऐसे ही हाथों में सौंप दिया है जो पत्थर की कीमत लगा सकते हैं; लेकिन संस्कृति की कीमत नहीं लगा सकते। साहित्य की धारा बदलनी ही पड़ेगी। जब तक संस्कृति शुद्ध नहीं होगी, कला का रूप नहीं निखरेगा।"[5] इस कथन से स्पष्ट होता है कि संस्कृति और कला का महत्त्व उनके आर्थिक मूल्य में नहीं, बल्कि मानवीय संवेदना, रचनात्मकता और जीवन-मूल्यों की समृद्धि में है।

राधाकृष्ण की उपरोक्त कहानियों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सांस्कृतिक चेतना और मानवीय संवेदना एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं। संस्कृति मनुष्य को सामाजिक पहचान देती है, जबकि संवेदना उसे दूसरों के अनुभवों को समझने की क्षमता प्रदान करती है। यदि सांस्कृतिक परंपराएँ मनुष्य को सहयोग, सम्मान और आत्मीयता की ओर प्रेरित करती हैं, तो वे सामाजिक जीवन को मजबूत बनाती हैं। लेकिन यदि किसी परंपरा या व्यवहार में अन्याय और उपेक्षा का भाव हो, तो उसका आलोचनात्मक मूल्यांकन आवश्यक हो जाता है। यहाँ मानवीय संवेदना का अर्थ केवल किसी के प्रति दया प्रकट करना नहीं है। इसमें दूसरे व्यक्ति की परिस्थितियों को समझना, उसकी गरिमा का सम्मान करना और सामाजिक जीवन में सहयोग की भावना बनाए रखना भी शामिल है। इसी प्रकार सांस्कृतिक चेतना का अर्थ केवल परंपरा का निर्वाह करना नहीं, बल्कि उसके भीतर निहित मानवीय अर्थों को पहचानना है। इस दृष्टि से राधाकृष्ण की कहानियाँ संस्कृति को जीवन के वास्तविक अनुभवों से जोड़कर देखने की प्रेरणा देती हैं।

आज के समय में बदलती जीवन-शैली, तकनीकी विकास, शहरीकरण और बाजारवादी प्रवृत्तियों ने मनुष्य के सामाजिक संबंधों को प्रभावित किया है। इन परिवर्तनों के बीच लोकपरंपराओं, सामुदायिक जीवन और मानवीय मूल्यों की भूमिका पर नए सिरे से विचार करना आवश्यक है। संस्कृति और साहित्य तो सदैव समाज को दिशा देते रहे हैं। केशरीनाथ त्रिपाठी लिखते हैं— "जब-जब कोई समाज अपने इतिहास, अतीत व परंपरा से कटने लगता है, तब-तब का समय देखता है अपने साहित्य व संस्कृति की तरफ।"[6] राधाकृष्ण की कहानियाँ इस संदर्भ में उपयोगी हैं,

क्योंकि वे संस्कृति को केवल अतीत की वस्तु के रूप में नहीं, बल्कि मनुष्य के व्यवहार और जीवन-मूल्यों से जुड़े प्रश्न के रूप में समझने का अवसर देती हैं।

निष्कर्ष : समग्रतः राधाकृष्ण की कहानियों में सांस्कृतिक चेतना का स्वरूप व्यापक है। इसमें लोकजीवन, प्रकृति, आदिवासी संस्कृति, सामाजिक परंपराएँ, कला, साहित्य और मानवीय संबंधों के विविध पक्ष शामिल हैं। 'मुड़कर भी न देखा' में फूलो के माध्यम से अपनी मिट्टी, लोकपरंपरा और सांस्कृतिक पहचान के प्रति आत्मीयता व्यक्त होती है। 'मूल्य' सामाजिक परंपराओं और आर्थिक परिस्थितियों के संबंध को सामने लाती है। 'कलाकार का मास्टरपीस' कला और कलाकार के सम्मान का प्रश्न उठाती है, जबकि 'कविता और पत्थर' साहित्यिक मूल्य और भौतिक दृष्टिकोण के बीच संबंध पर विचार करने का अवसर देती है। इन कहानियों का महत्त्व इस बात में है कि वे संस्कृति को केवल बाहरी रीति-रिवाजों तक सीमित नहीं रखतीं, बल्कि उसे मनुष्य के आचरण, सामाजिक संबंधों और जीवन-मूल्यों से जोड़कर समझने की दिशा देती हैं। सांस्कृतिक चेतना तभी सार्थक होती है, जब वह मनुष्य को अपने परिवेश के प्रति जागरूक बनाए और दूसरों के सुख-दुःख को समझने की क्षमता विकसित करे। इसी प्रकार सांस्कृतिक बोध का अर्थ परंपराओं को पहचानने के साथ-साथ उनके मानवीय पक्षों का विवेकपूर्ण मूल्यांकन करना भी है।

अतः कहा जा सकता है कि राधाकृष्ण की कहानियों का सांस्कृतिक अध्ययन साहित्य और समाज के संबंध को समझने का एक महत्त्वपूर्ण आधार प्रदान करता है।

संदर्भ सूची :

1. मिश्र, दयानिधि. हिंदी साहित्य में सांस्कृतिक संवेदना और मूलयबोध. नयी दिल्ली : वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2017, पृ. संपादकीय.
2. कुशवाहा, ज्योति (सं). भारतीय संस्कृति में लोक जीवन. दिल्ली : साहित्य संचय, प्रथम संस्करण, 2020, पृ. 66.
3. मधुकर, शेष आनंद. राधाकृष्ण : प्रतिनिधि कहानियाँ. इलाहाबाद : जयभारती प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 1997, पृ. 72-73.
4. राधाकृष्ण. गेंद और गोल. नई दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, पहला राधाकृष्ण (छात्र) संस्करण, 2017, पृ. 73.
5. राधाकृष्ण. रामलीला. पटना : पुस्तक भंडार, 2003, पृ. 26.
6. त्रिपाठी, केशरीनाथ. हिंदी साहित्य में सांस्कृतिक संवेदना और मूलयबोध. नयी दिल्ली : वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2017, पृ. 12.

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-210-213

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 210-213
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :
नीतेश कुमार
शोधार्थी, ICPR(JRF), दर्शनशास्त्र विभाग, मुंगेर विश्वविद्यालय, मुंगेर, बिहार

Corresponding Author :
नीतेश कुमार
शोधार्थी, ICPR(JRF), दर्शनशास्त्र विभाग, मुंगेर विश्वविद्यालय, मुंगेर, बिहार

भारतीय संस्कृति में नवधा भक्ति

1. प्रस्तावना : भारतीय संस्कृति का निर्माण धर्म, दर्शन, आध्यात्मिकता, नैतिकता और सामाजिक मूल्यों के आधार पर हुआ है। भारतीय जीवन–दृष्टि में धर्म केवल पूजा–पाठ या धार्मिक कर्मकांड तक सीमित नहीं है, बल्कि यह मनुष्य को सत्य, अहिंसा, दया, प्रेम, करुणा, सेवा और सदाचार का मार्ग दिखाता है। इसी कारण भारतीय परंपरा में धर्म और भक्ति का बहुत गहरा संबंध रहा है। धर्म जहाँ मनुष्य को कर्तव्य और नैतिक जीवन का मार्ग बताता है, वहीं भक्ति मनुष्य के भीतर ईश्वर के प्रति प्रेम, श्रद्धा और समर्पण की भावना उत्पन्न करती है।

भारतीय दर्शन में ईश्वर, आत्मा और मोक्ष के प्रश्नों पर अनेक प्रकार से विचार किया गया है। उपनिषदों में ब्रह्म और आत्मा के संबंध को समझाया गया, भगवद्गीता में ज्ञान, कर्म और भक्ति के मार्गों की चर्चा की गई तथा पुराणों में ईश्वर के प्रति प्रेम और समर्पण को सरल रूप में प्रस्तुत किया गया। इस प्रकार भक्ति भारतीय धार्मिक और दार्शनिक परंपरा का महत्वपूर्ण अंग बन गई।

मध्यकालीन भारत में भक्ति आंदोलन ने धर्म को सामान्य जनता के बहुत निकट ला दिया। इस समय अनेक संतों और भक्त कवियों ने यह विचार प्रस्तुत किया कि ईश्वर की प्राप्ति केवल कठिन कर्मकांड या विद्वता से ही संभव नहीं है, बल्कि सच्चे प्रेम, श्रद्धा और समर्पण से भी ईश्वर की अनुभूति की जा सकती है। कबीर, रैदास, गुरु नानक, दादू दयाल, तुलसीदास, सूरदास और मीराबाई आदि संतों ने भक्ति को जनसामान्य की भाषा और जीवन से जोड़ा।

भक्ति की इसी व्यापक परंपरा में नवधा भक्ति का विशेष महत्व है। नवधा भक्ति का अर्थ है—भक्ति के नौ रूप। ये नौ रूप भक्त और ईश्वर के बीच अलग–अलग प्रकार के संबंध को व्यक्त करते हैं। भागवत परंपरा में नवधा भक्ति के रूप में श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन का उल्लेख मिलता है।[1]

2. नवधा भक्ति की अवधारणा : नवधा भक्ति भारतीय भक्ति परंपरा की ऐसी अवधारणा है जिसमें ईश्वर की उपासना और उसके प्रति समर्पण के नौ मार्ग बताए गए हैं। इन नौ रूपों का उद्देश्य केवल धार्मिक क्रिया करना नहीं है, बल्कि मनुष्य के भीतर प्रेम, विनम्रता, सेवा, श्रद्धा और आत्मसमर्पण जैसे गुणों का विकास करना भी है।

- नवधा भक्ति के नौ रूप हैं—
  1. श्रवण
  2. कीर्तन
  3. स्मरण
  4. पदसेवन
  5. अर्चन
  6. वंदन

7. दास्य
8. सख्य
9. आत्मनिवेदन

इनमें प्रत्येक भक्ति रूप का अपना अलग महत्व है। कोई भक्त ईश्वर की कथा सुनकर उनसे जुड़ता है, कोई उनके गुणों का गान करता है, कोई निरंतर उनका स्मरण करता है और कोई स्वयं को ईश्वर का सेवक या मित्र मानकर उनके प्रति प्रेम प्रकट करता है।

इस प्रकार नवधा भक्ति को केवल पूजा की नौ विधियाँ मानना उचित नहीं होगा। यह भक्त और ईश्वर के बीच विकसित होने वाले विभिन्न भावों की अभिव्यक्ति भी है।

3. श्रवण भक्ति : श्रवण का अर्थ है ईश्वर के नाम, गुण, चरित्र, लीलाओं और महिमा को श्रद्धापूर्वक सुनना। भारतीय धार्मिक परंपरा में कथा और सत्संग का विशेष महत्व इसी कारण है। जब मनुष्य ईश्वर की कथा सुनता है तो उसके भीतर धार्मिक और नैतिक भावनाओं का विकास होता है।

श्रवण भक्ति में केवल कान से किसी कथा को सुन लेना पर्याप्त नहीं माना जाता, बल्कि उसे मन से ग्रहण करना आवश्यक है। रामकथा, कृष्णकथा, पुराणों की कथाएँ और संतों की वाणी श्रवण भक्ति के प्रमुख माध्यम रहे हैं।

श्रवण से व्यक्ति के विचारों में परिवर्तन आता है और उसके भीतर अच्छे कार्य करने की प्रेरणा पैदा होती है। इसलिए भारतीय समाज में धार्मिक कथाओं और सत्संग की परंपरा ने सामाजिक एवं नैतिक शिक्षा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

4. कीर्तन भक्ति : कीर्तन का अर्थ है ईश्वर के नाम, गुण और चरित्र का गायन करना। भक्ति आंदोलन में कीर्तन ने विशेष महत्व प्राप्त किया। कीर्तन के माध्यम से भक्ति केवल व्यक्तिगत अनुभव नहीं रही, बल्कि सामूहिक धार्मिक अनुभव भी बन गई।

कीर्तन में गीत, संगीत और वाद्ययंत्रों का प्रयोग किया जाता है। इससे सामान्य व्यक्ति भी धार्मिक भावना से आसानी से जुड़ जाता है। विशेष रूप से कृष्ण भक्ति की परंपरा में कीर्तन का व्यापक विकास हुआ।

कीर्तन का सामाजिक महत्व भी है। इसमें जाति, वर्ग और आर्थिक स्थिति का भेद अपेक्षाकृत कम हो जाता है और लोग एक साथ बैठकर ईश्वर का नाम लेते हैं। इस दृष्टि से कीर्तन ने सामाजिक एकता को बढ़ाने में योगदान दिया।

5. स्मरण भक्ति : स्मरण भक्ति में भक्त अपने आराध्य का निरंतर स्मरण करता है। ईश्वर का स्मरण केवल किसी निश्चित समय में पूजा करने तक सीमित नहीं रहता, बल्कि भक्त अपने दैनिक जीवन में भी अपने इष्ट को याद करता रहता है।

कबीरदास की भक्ति में नाम–स्मरण का विशेष महत्व दिखाई देता है। कबीर बाहरी कर्मकांड की अपेक्षा आंतरिक साधना और ईश्वर के नाम को अधिक महत्व देते हैं। उनके लिए ईश्वर की प्राप्ति मन की शुद्धता और सच्चे प्रेम से जुड़ी है। रैदास की भक्ति में भी ईश्वर के प्रति गहरी श्रद्धा और स्मरण दिखाई देता है। इस प्रकार स्मरण भक्ति ने भक्ति को मंदिर और कर्मकांड से निकालकर व्यक्ति के अंतर्मन से जोड़ने का कार्य किया।

6. पादसेवन भक्ति : पादसेवन का सामान्य अर्थ ईश्वर के चरणों की सेवा करना है। इसका व्यापक अर्थ ईश्वर के प्रति विनम्रता और सेवा–भाव रखना है। भक्त अपने अहंकार को छोड़कर स्वयं को ईश्वर के चरणों में समर्पित करता है।

इस भक्ति में सेवा का भाव प्रमुख है। भारतीय संस्कृति में सेवा को धार्मिक और नैतिक दोनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण माना गया है। गुरु, माता–पिता, साधु और जरूरतमंद व्यक्ति की सेवा को भी व्यापक अर्थ में धार्मिक जीवन का हिस्सा माना गया।

पादसेवन भक्ति मनुष्य को अहंकार से दूर करती है और उसके भीतर विनम्रता तथा सेवा की भावना विकसित करती है।

7. अर्चन भक्ति : अर्चन का अर्थ ईश्वर की पूजा करना है। इसमें भक्त विभिन्न पवित्र सामग्री, फूल, जल, दीप आदि के माध्यम से अपने आराध्य की पूजा करता है। परंतु भारतीय भक्ति परंपरा में अर्चन का वास्तविक महत्व केवल बाहरी पूजा में नहीं बल्कि पूजा के पीछे मौजूद श्रद्धा और भावना में है।

अर्चन भक्ति में मन, वचन और कर्म तीनों का महत्व है। यदि व्यक्ति पूजा तो करता है लेकिन उसके मन में प्रेम और श्रद्धा नहीं है, तो उसकी पूजा का आध्यात्मिक उद्देश्य पूरा नहीं होता। इसलिए भक्ति परंपरा में भावना को कर्मकांड से अधिक महत्वपूर्ण माना गया है।

8. वंदन भक्ति : वंदन का अर्थ है प्रणाम और सम्मान करना। भक्त अपने आराध्य के प्रति श्रद्धा व्यक्त करते हुए उनका वंदन करता है। भारतीय संस्कृति में माता–पिता, गुरु, संत और बड़े–बुजुर्गों के प्रति सम्मान की परंपरा भी इसी मूल्य से जुड़ी हुई है।

वंदन मनुष्य में विनम्रता पैदा करता है। यह व्यक्ति को यह समझने में सहायता करता है कि जीवन में केवल अपनी शक्ति और ज्ञान ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि दूसरों के प्रति सम्मान और —त्तज्ञता भी आवश्यक है।

इस दृष्टि से वंदन भक्ति का प्रभाव धार्मिक क्षेत्र के साथ–साथ सामाजिक जीवन पर भी पड़ता है।

9. दास्य भक्ति : दास्य भक्ति में भक्त स्वयं को ईश्वर का सेवक और ईश्वर को अपना स्वामी मानता है। इस भक्ति में पूर्ण श्रद्धा और सेवा का भाव होता है।

रामभक्ति परंपरा में तुलसीदास के काव्य में दास्य भाव का विशेष महत्व दिखाई देता है। तुलसीदास अपने आपको श्रीराम का सेवक मानते हैं। उनके लिए भगवान राम केवल आराध्य नहीं बल्कि जीवन के आधार हैं। तुलसी की भक्ति में

श्रद्धा, प्रेम, सेवा और समर्पण एक साथ दिखाई देते हैं।[2]

दास्य भक्ति व्यक्ति के अहंकार को कम करने में सहायता करती है। भक्त यह स्वीकार करता है कि वह ईश्वर की इच्छा के अधीन है। इस प्रकार दास्य भक्ति में विनम्रता और कर्तव्य–भाव दोनों दिखाई देते हैं।

10. सख्य भक्ति : सख्य भक्ति में भक्त ईश्वर को अपना मित्र मानता है। यहाँ ईश्वर और भक्त के बीच संबंध स्वामी और सेवक का नहीं बल्कि मित्र और मित्र का होता है।

सूरदास की कृष्ण भक्ति में सख्य भाव का विशेष महत्व है। कृष्ण के बाल रूप के साथ उनके मित्रों और ग्वाल–बालों का संबंध अत्यंत आत्मीय रूप में प्रस्तुत किया गया है। सूरदास ने कृष्ण को केवल दूर स्थित ईश्वर के रूप में नहीं बल्कि भक्त के निकट रहने वाले प्रिय और आत्मीय रूप में प्रस्तुत किया।

मीराबाई की भक्ति में भी कृष्ण के प्रति अत्यंत व्यक्तिगत और आत्मीय संबंध दिखाई देता है। उन्होंने सामाजिक बंधनों की परवाह किए बिना कृष्ण को अपना सर्वस्व माना। इस कारण उनकी भक्ति व्यक्तिगत स्वतंत्रता और आत्मिक प्रेम की अभिव्यक्ति भी बन गई।

11. आत्मनिवेदन भक्ति : नवधा भक्ति का अंतिम और अत्यंत महत्वपूर्ण रूप आत्मनिवेदन है। इसमें भक्त अपनी संपूर्ण सत्ता को ईश्वर के प्रति समर्पित कर देता है। यहाँ भक्त अपने अहंकार, इच्छाओं और व्यक्तिगत स्वार्थ को छोड़कर ईश्वर के प्रति पूर्ण विश्वास रखता है।

आत्मनिवेदन का अर्थ यह नहीं है कि व्यक्ति अपने सामाजिक और नैतिक कर्तव्यों को छोड़ दे। इसका वास्तविक अर्थ है कि वह अपने कर्मों को ईश्वर के प्रति समर्पित भावना से करे।

भगवद्गीता में कर्मों के फल के प्रति आसक्ति छोड़कर ईश्वर में समर्पण की भावना को महत्व दिया गया है।[3] इस दृष्टि से आत्मनिवेदन भक्ति कर्म, ज्ञान और भक्ति के बीच संबंध स्थापित करती है।

12. निर्गुण भक्ति और नवधा भक्ति : मध्यकालीन भारतीय भक्ति आंदोलन में निर्गुण और सगुण दो प्रमुख धाराएँ दिखाई देती हैं। निर्गुण भक्ति में ईश्वर को निराकार, निर्गुण और रूप–रहित माना गया। कबीर, रैदास, दादू दयाल आदि संत इस परंपरा के प्रमुख प्रतिनिधि माने जाते हैं।

निर्गुण संतों ने बाहरी कर्मकांड, जाति–भेद और धार्मिक आडंबर का विरोध किया। उन्होंने मनुष्य को अपने भीतर ईश्वर की खोज करने की प्रेरणा दी।

कबीर की भक्ति में नाम–स्मरण और आंतरिक साधना का विशेष महत्व है। वे कहते हैं कि ईश्वर को प्राप्त करने के लिए बाहरी दिखावे की आवश्यकता नहीं है। उनका भक्ति मार्ग मन की शुद्धता, प्रेम और सत्य पर आधारित है।

रैदास ने भी भक्ति को सामाजिक समानता से जोड़ा। उनके विचारों में यह भावना दिखाई देती है कि ईश्वर की दृष्टि में सभी मनुष्य समान हैं। इस प्रकार निर्गुण भक्ति ने धार्मिकता के साथ सामाजिक चेतना को भी मजबूत किया।

13. सगुण भक्ति और नवधा भक्ति : सगुण भक्ति में ईश्वर को किसी निश्चित रूप और गुणों के साथ स्वीकार किया जाता है। राम और कृष्ण सगुण भक्ति के प्रमुख आराध्य बने। तुलसीदास ने राम को मर्यादा, धर्म और आदर्श के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया, जबकि सूरदास ने कृष्ण के बाल और प्रेमपूर्ण स्वरूप को विशेष महत्व दिया।

तुलसीदास की रामभक्ति में दास्य भाव प्रमुख दिखाई देता है। उनके लिए राम आदर्श राजा, आदर्श पुत्र और धर्म के रक्षक हैं। इस प्रकार तुलसी की भक्ति धार्मिक होने के साथ–साथ सामाजिक और नैतिक भी है।

सूरदास की कृष्णभक्ति में वात्सल्य और सख्य भाव प्रमुख हैं। उनके काव्य में कृष्ण के बाल रूप और उनकी लीलाओं का अत्यंत सुंदर वर्णन मिलता है।

इस प्रकार सगुण भक्ति ने ईश्वर को सामान्य व्यक्ति के जीवन के बहुत निकट ला दिया। भक्त ईश्वर को अपने परिवार के सदस्य, मित्र, स्वामी या प्रिय के रूप में अनुभव करने लगा।

14. नवधा भक्ति और भारतीय समाज : नवधा भक्ति का भारतीय समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ा। भक्ति ने धर्म को सामान्य जनता के लिए सरल बनाया। संस्कृत के कठिन धार्मिक ज्ञान के स्थान पर संतों ने लोकभाषाओं में भक्ति साहित्य की रचना की।

कबीर ने साखी और पदों के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार किया। रैदास ने समानता और मानव–मर्यादा पर बल दिया। तुलसीदास ने रामकथा को जन–जन तक पहुँचाया। सूरदास ने कृष्ण भक्ति को लोकजीवन से जोड़ा और मीराबाई ने व्यक्तिगत भक्ति तथा आत्मिक स्वतंत्रता की प्रभावशाली अभिव्यक्ति की।

भक्ति आंदोलन ने जाति और ऊँच–नीच के प्रश्न को भी चुनौती दी। संतों ने यह संदेश दिया कि ईश्वर की प्राप्ति के लिए जाति, धन और सामाजिक प्रतिष्ठा आवश्यक नहीं है। सच्ची भक्ति और शुद्ध हृदय अधिक महत्वपूर्ण हैं।[4]

15. नवधा भक्ति और भारतीय संस्कृति : भारतीय संस्कृति में नवधा भक्ति ने प्रेम, करुणा, सेवा, विनम्रता और समर्पण जैसे मूल्यों को मजबूत किया। भक्ति साहित्य ने भारतीय संगीत, नृत्य, चित्रकला, लोककला और साहित्य को भी प्रभावित किया।

कीर्तन और भजन भारतीय संगीत परंपरा के महत्वपूर्ण अंग बने। रामलीला और कृष्णलीला जैसी लोकनाट्य परंपराओं के विकास में भी भक्ति साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही।[5]

भक्ति ने क्षेत्रीय भाषाओं के विकास को भी प्रोत्साहित किया। हिंदी, अवधी, ब्रज, पंजाबी, राजस्थानी और अन्य भाषाओं में भक्ति साहित्य का विकास हुआ। इस प्रकार भक्ति केवल धार्मिक आंदोलन नहीं रही, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक पुनर्जागरण का महत्वपूर्ण माध्यम बनी।

16. नवधा भक्ति का वर्तमान समय में महत्व : आज का समाज वैज्ञानिक और तकनीकी रूप से बहुत आगे बढ़ गया है, लेकिन तनाव, हिंसा, असमानता, स्वार्थ और सामाजिक संघर्ष जैसी समस्याएँ अभी भी मौजूद हैं। ऐसे समय में नवधा भक्ति के मूल्यों को नए संदर्भ में समझना उपयोगी हो सकता है।

श्रवण हमें दूसरों की बात ध्यान से सुनने की शिक्षा देता है। कीर्तन सामूहिकता और सकारात्मक भावना को बढ़ाता है। स्मरण आत्मचिंतन की प्रेरणा देता है। पादसेवन सेवा का संदेश देता है। अर्चन श्रद्धा और अनुशासन को मजबूत करता है। वंदन सम्मान और विनम्रता सिखाता है। दास्य सेवा और कर्तव्य का भाव उत्पन्न करता है। सख्य समानता और आत्मीयता को बढ़ाता है तथा आत्मनिवेदन अहंकार और स्वार्थ से ऊपर उठने की प्रेरणा देता है।

इस प्रकार नवधा भक्ति को केवल धार्मिक साधना के रूप में न देखकर नैतिक और सामाजिक जीवन के मूल्यों के रूप में भी समझा जा सकता है।

17. निष्कर्ष : नवधा भक्ति भारतीय संस्कृति की एक महत्वपूर्ण आध्यात्मिक और सामाजिक परंपरा है। इसके नौ रूप भक्त और ईश्वर के बीच अलग–अलग संबंधों को व्यक्त करते हैं। श्रवण से लेकर आत्मनिवेदन तक भक्ति की यात्रा धीरे–धीरे सुनने, गाने, स्मरण करने, सेवा करने, सम्मान करने, मित्रता करने और अंततः पूर्ण समर्पण तक पहुँचती है।

मध्यकालीन भक्ति आंदोलन ने इन भावों को सामान्य जनता के जीवन से जोड़ा। निर्गुण संतों ने आंतरिक भक्ति, नाम–स्मरण और सामाजिक समानता पर बल दिया, जबकि सगुण भक्तों ने राम और कृष्ण के माध्यम से ईश्वर को मानवीय संबंधों के निकट लाया। कबीर और रैदास की भक्ति में सामाजिक चेतना, तुलसीदास में दास्य और मर्यादा, सूरदास में सख्य एवं वात्सल्य तथा मीराबाई में व्यक्तिगत प्रेम और समर्पण की भावना दिखाई देती है।

नवधा भक्ति का सबसे महत्वपूर्ण योगदान यह है कि इसने धर्म को केवल कर्मकांड न मानकर जीवन–मूल्यों से जोड़ा। भक्ति ने मनुष्य को प्रेम, सेवा, विनम्रता, समानता, सहिष्णुता और आत्मसमर्पण की शिक्षा दी। इसलिए भारतीय संस्कृति में नवधा भक्ति का महत्व केवल धार्मिक इतिहास तक सीमित नहीं है, बल्कि वर्तमान सामाजिक जीवन में भी इसकी उपयोगिता बनी हुई है।

अतः कहा जा सकता है कि नवधा भक्ति भारतीय संस्कृति में धर्म के व्यावहारिक स्वरूप को समझने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। यह व्यक्ति को ईश्वर से जोड़ने के साथ–साथ समाज में प्रेम, सद्भाव, समानता और मानवीय मूल्यों को स्थापित करने की प्रेरणा देती है।

संदर्भ सूची :

1. श्रीमद्भागवत महापुराण, 7वें स्कंध के 5वें अध्याय का 23–24वां श्लोक, नवधा भक्ति के नौ रूपों का उल्लेख।
2. रामचरितमानस, तुलसीदास, उत्तरकांड, दोहा संख्या 119 —ईश्वर के प्रति शरणागति और समर्पण का सिद्धांत।
3. भगवद्गीता, अध्याय 18 (मोक्षसंन्यासयोग) के श्लोक संख्या 66 —ईश्वर के प्रति शरणागति और समर्पण का सिद्धांत।
4. रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, भक्तिकाल संबंधी विवेचन।

संदर्भ ग्रंथ–सूची :

1. वेदव्यास, श्रीमद्भागवत महापुराण, गीता प्रेस, गोरखपुर, 2023.
2. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर, 2023.
3. व्यास, श्रीमद्भगवद्गीता, गीता प्रेस, गोरखपुर, विभिन्न संस्करण।
4. रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, 1940.
5. रामचंद्र शुक्ल, चिंतामणि, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1948.
6. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1992.
7. हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिंदी साहित्य रू उद्भव और विकास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995.
8. हरेंद्र प्रसाद सिन्हा, भारतीय दर्शन की रूपरेखा, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2010.
9. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, भारतीय दर्शन, भाग–1, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 2008.
10. चंद्रधर शर्मा, भारतीय दर्शन रू आलोचन और अनुशीलन, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2008.

•

Gyanvividha, Special Issue (October) 2026 : PP-214-216

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Special Issue (October) 2026
Page No.- 214-216
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

शम्भु कुमार
शोधार्थी, इतिहास विभाग, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार

Corresponding Author :

शम्भु कुमार
शोधार्थी, इतिहास विभाग, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार

भारत–भूटान संबंधों में शिक्षा–सहयोग और सांस्कृतिक अस्मिता एक ऐतिहासिक अध्ययन (1947–2007)

सारांश : सितंबर 1958 में पारो में नेहरू ने भूटान के विद्यालयों में हिंदी–शिक्षण पर प्रसन्नता जताई थी, पर 1964 में वहाँ हिंदी पाठ्यपुस्तकों का स्थान अंग्रेजी ने ले लिया। इसी विरोधाभास से आरंभ करके यह शोध–पत्र 1947 से 2007 तक भारत–भूटान शिक्षा–सहयोग और भूटान की सांस्कृतिक अस्मिता पर उसके प्रभाव का ऐतिहासिक विश्लेषण करता है। कार्य–परिकल्पना है कि भारत ने शिक्षा का ढाँचा दिया, पर उसकी दिशा भूटान ने स्वयं तय की। योजनाओं का भारतीय वित्त–पोषण, भारतीय शिक्षक, 'दंतक' द्वारा निर्मित शेरुब्त्से, तथा भारतीय परीक्षा–परिषद और दिल्ली विश्वविद्यालय से संबद्धता ढाँचे के प्रमाण हैं, जबकि जोंगखा को राष्ट्रभाषा बनाना, अंग्रेजी माध्यम का चयन, राष्ट्रीय शिक्षा–नीतियाँ, शिक्षा–प्रशासन का भूटानीकरण और 2001–2006 में परीक्षाओं का स्थानीयकरण दिशा के। संधियों, नेहरू के भाषण, आधिकारिक आँकड़ों और विद्वानों के अध्ययनों पर आधारित निष्कर्ष यह है कि शिक्षा–सहयोग ने भूटान की अस्मिता को दुर्बल नहीं किया, बल्कि उसे आधुनिक संस्थाओं के माध्यम से अभिव्यक्ति दी।

मुख्य शब्द : भारत–भूटान संबंध, शिक्षा–सहयोग, सांस्कृतिक अस्मिता, भाषा–नीति, शेरुब्त्से, परीक्षा का स्थानीयकरण।

1. प्रस्तावना : 23 सितंबर 1958 को पारो की एक जनसभा में नेहरू ने हिंदी में भाषण दिया, जिसका अनुवाद कुछ मिनट बाद स्वयं भूटान नरेश करने लगे। नेहरू ने प्रसन्नता जताई कि नरेश ने विद्यालयों में हिंदी–शिक्षण की व्यवस्था की है, और यह भी कहा कि भारत की एकमात्र इच्छा है कि भूटान स्वतंत्र रहे तथा अपनी इच्छा से अपनी जीवन–पद्धति और प्रगति का मार्ग चुने।[1] छह वर्ष बाद, 1964 में, भूटान के आधुनिक विद्यालयों में हिंदी पाठ्यपुस्तकों का स्थान अंग्रेजी माध्यम की पुस्तकों ने ले लिया, जबकि दो वर्ष पहले शिक्षा निदेशक दावा त्शेरिंग केरल से शिक्षक लाए थे।[2] यानी कक्षाओं से हिंदी विदा हो रही थी और भारतीय शिक्षक उन्हीं कक्षाओं की रीढ़ बन रहे थे।

यही विरोधाभास इस शोध–पत्र का प्रस्थान–बिंदु है। प्रश्न यह है कि भारत की शैक्षिक उपस्थिति भूटान की सांस्कृतिक अस्मिता के लिए चुनौती थी या भूटान ने उसे अपनी शर्तों पर अपनाया। अध्ययन की अवधि 1947 से 2007 तक है, यानी स्वतंत्र भारत की विदेश–नीति के आरंभ से 1949 की मैत्री संधि के संशोधन तक।[3]

2. साहित्य–समीक्षा, परिकल्पना और पद्धति : भारत–भूटान संबंधों पर अधिकांश साहित्य राजनीति, संधियों और सुरक्षा पर केंद्रित है। मनोरमा कोहली ने इन संबंधों को निर्भरता से परस्पर–निर्भरता की यात्रा के रूप में देखा है[4] और मधु राजपूत ने उनका ऐतिहासिक सर्वेक्षण प्रस्तुत किया है।[5] शिक्षा पर सबसे विस्तृत कार्य रत्ना पॉल का शोध–प्रबंध है, जिसमें भारत की भूमिका पर पूरा अध्याय है, पर उसका केंद्र भूटान की शिक्षा–व्यवस्था है और

उसकी अवधि 1997 पर रुक जाती है।[2] अतः दो अंतराल स्पष्ट हैं। शिक्षा को द्विपक्षीय संबंधों के स्वतंत्र आधार के रूप में देखने वाला अध्ययन विरल है, और शिक्षा–सहयोग तथा सांस्कृतिक अस्मिता का संबंध किसी स्पष्ट कसौटी पर नहीं परखा गया है।

कार्य–परिकल्पना यह है कि भारत ने भूटान की आधुनिक शिक्षा को ढाँचा दिया, पर उसकी दिशा भूटान ने स्वयं तय की। वित्त, शिक्षक, परीक्षा, भवन और उच्च शिक्षा की संबद्धता को ढाँचे का, तथा भाषा–संबंधी निर्णय, शिक्षा–नीतियाँ, पाठ्यक्रम का स्थानीयकरण और प्रशासन का भूटानीकरण को दिशा का संकेतक माना गया है। पद्धति ऐतिहासिक–विश्लेषणात्मक है और प्रकाशित संधियों, भाषण, आधिकारिक आँकड़ों तथा द्वितीयक अध्ययनों पर आधारित है। अप्रकाशित अभिलेखों का उपयोग न हो पाना इसकी मुख्य सीमा है।

3. पृष्ठभूमि – स्वतंत्रता–पूर्व विरासत और 1950 का दशक : भूटान में आधुनिक शिक्षा की शुरुआत भारत से जुड़कर हुई। प्रथम नरेश उग्येन वांगचुक की 1911 की भारत–यात्रा के बाद बुमथांग में विद्यालय खुला, और 1914 में नरेश ने 45 बालकों को कलिम्पोंग के डॉ. ग्राहम्स होम्स में पढ़ने भेजा।[6] प्रथम नरेश के समय भारत से संवाद सरल करने के लिए हिंदी–माध्यम विद्यालय खुले, और द्वितीय नरेश के समय ऐसे सात से दस विद्यालय चल रहे थे। इसका एक सांस्कृतिक कारण भी था, क्योंकि भूटानी तीर्थयात्री भारत के बौद्ध तीर्थों में हिंदी में ही संवाद करते थे। कुछ भूटानी युवकों को भागलपुर में शिक्षक–प्रशिक्षण तथा शिबपुर, कलकत्ता और देहरादून में तकनीकी प्रशिक्षण भी मिला।[2]

8 अगस्त 1949 की मैत्री संधि के अनुच्छेद 2 में भारत ने भूटान के आंतरिक प्रशासन में हस्तक्षेप न करने का वचन दिया।[3] शिक्षा आंतरिक विषय थी, इसलिए इस क्षेत्र में भारत की भूमिका अधिकार से नहीं, भूटान के आमंत्रण और सहमति से बनी। 1955 में भूटान ने औपचारिक शिक्षा–व्यवस्था विकसित की और 1959 में मुफ्त सार्वभौमिक शिक्षा का निर्णय लिया, जब केवल 72 भूटानी अंग्रेजी–साक्षर थे।[6] 1950 के दशक के अंत तक उनतीस सरकारी और तीस निजी प्राथमिक विद्यालयों में लगभग 2,500 बच्चे पढ़ते थे।[7] भारत ने भूटानी विद्यार्थियों के लिए प्रतिवर्ष तीस स्थान दिए, जो बाद में पचास हुए।[2]

4. 1961 से 1971 – संस्था–निर्माण : 1961 में आरंभ प्रथम और 1966 में आरंभ द्वितीय पंचवर्षीय योजना का पूरा वित्त भारत ने उठाया,[2] और 1966 तक 108 विद्यालयों में लगभग 15,000 विद्यार्थी हो गए।[7] शिक्षकों की कमी भी भारत से पूरी हुई। पहले शिक्षक 1961 में कलिम्पोंग से आए, फिर बंगाल और केरल सहित भारत के विभिन्न भागों से। 1962 में केरल से आए शिक्षकों की संख्या पर स्रोत भिन्न हैं। पॉल तीन शिक्षकों के नाम देती हैं,[2] जबकि एक अन्य विवरण के अनुसार बीस शिक्षक आए, जो सड़कों के अभाव में पैदल गाँव–गाँव पहुँचे।[8] इन अग्रदूतों को दुर्गम इलाकों में चिकित्सा और सामाजिक सुविधाओं के बिना अभावग्रस्त जीवन जीना पड़ा, और विषय–शिक्षक की पद्धति भी इन्हीं ने आरंभ की।[2]

इस दशक का निर्णायक प्रश्न भाषा का था। 1961 में तृतीय नरेश जिग्मे दोरजी वांगचुक ने जोंगखा को राष्ट्रभाषा घोषित किया और आधुनिक विद्यालयों के लिए अंग्रेजी माध्यम चुना, उसकी पहुँच और उपलब्ध पाठ्य–सामग्री को देखते हुए। दार्जिलिंग से जेसुइट फादर विलियम मैकी और शिलांग से डॉन बॉस्को पादरी बुलाए गए, और 1964 में हिंदी पाठ्यपुस्तकें हटा दी गईं।[2] उपलब्ध स्रोतों में भारत की ओर से इस परिवर्तन के विरोध का कोई संकेत नहीं मिलता।

संस्थाएँ भी तेजी से बनीं। 1965 में थिम्पू पब्लिक स्कूल, तथा 1968 में सामत्से का शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थान और कांगलुंग में शेरुब्त्से हाई स्कूल खुले। शेरुब्त्से के भवन भारत के सीमा सड़क संगठन की परियोजना 'दंतक' ने बनाए, यानी जिसने सड़कें बनाईं, उसी ने कक्षाएँ भी बनाईं। दूसरी ओर सिमतोखा का रिग्ने विद्यालय सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण और जोंगखा शिक्षकों की तैयारी का केंद्र बना। 1970 में लगभग 500 भूटानी विद्यार्थी भारत में पढ़ रहे थे।[2]

5. 1971 से 2007 – विस्तार और भूटानीकरण : इस दौर में ढाँचा बना रहा, पर निर्णयों का केंद्र धीरे–धीरे थिम्पू की ओर खिसकता गया। परीक्षा–व्यवस्था इसका सबसे स्पष्ट उदाहरण है। 1974 में सभी उच्च विद्यालय भारत की 'काउंसिल फॉर द इंडियन स्कूल सर्टिफिकेट एग्जामिनेशंस' से संबद्ध हुए, 1986 में 'भूटान बोर्ड ऑफ एग्जामिनेशंस' बना, 1996 में भूटानी बोर्ड और आईसीएसई की पहली संयुक्त परीक्षा हुई, और 2001 में दसवीं तथा 2006 में बारहवीं की परीक्षा पूरी तरह भूटानी बोर्ड के हाथ में आ गई।[9] यहाँ भारतीय ढाँचा टूटा नहीं, बत्तीस वर्षों में भूटानी संस्था में रूपांतरित हुआ।

उच्च शिक्षा में शेरुब्त्से 1983 में दिल्ली विश्वविद्यालय से संबद्ध उपाधि महाविद्यालय बना, जिसमें पहले वर्ष 278 विद्यार्थी थे[7] और 1990 तक 345 हो गए। यह संबद्धता 2003 में रॉयल यूनिवर्सिटी ऑफ भूटान की स्थापना तक चली। शिक्षक–प्रशिक्षण में भी भूटान आत्मनिर्भर हुआ, और पारो के शिक्षक–प्रशिक्षण महाविद्यालय से निकलने वाले स्नातक 1987 के 10 से बढ़कर 1992 में 70 हो गए। 1988 में सभी विद्यालयों में भूटानी प्रधान नियुक्त हुए, फिर भी 1992 में 37 प्रतिशत शिक्षक गैर–राष्ट्रीय थे, जिनमें अधिकांश भारतीय थे। यानी नेतृत्व भूटानी हो चुका था, पर कक्षा में भारत की उपस्थिति गहरी थी। नीति के स्तर पर 1971 में शिक्षा विभाग में जोंगखा प्रभाग बना, और 1976 तथा 1985 में राष्ट्रीय शिक्षा–नीतियाँ स्वीकृत हुईं। संशोधित नीति के लक्ष्यों में 'समय–सिद्ध और धार्मिक मूल्यों का संस्कार' भी था।[2]

तीनों चरणों को परिकल्पना की कसौटी पर रखें तो तस्वीर स्पष्ट है। स्वतंत्रता–पूर्व काल में हिंदी–माध्यम विद्यालय, भारत में प्रशिक्षण और छात्रवृत्तियाँ ढाँचे के संकेतक थे, जबकि 1955 की शिक्षा–व्यवस्था और 1959 में सार्वभौमिक शिक्षा का निर्णय भूटानी दिशा के। 1961–1971 में योजनाओं का वित्त, भारतीय शिक्षक और दंतक के भवन ढाँचा थे, तो जोंगखा का राष्ट्रभाषा–दर्जा, अंग्रेजी माध्यम और 1964 का पाठ्यपुस्तक–परिवर्तन दिशा। 1971 के बाद परीक्षा–परिषद और दिल्ली

विश्वविद्यालय से संबद्धता तथा भारतीय शिक्षक ढाँचे के रूप में बने रहे, पर शिक्षा–नीतियाँ, भूटानी प्रधानों की नियुक्ति, परीक्षाओं का स्थानीयकरण और रॉयल यूनिवर्सिटी की स्थापना दिशा के निर्णायक प्रमाण बने। यानी ढाँचा हर चरण में भारत का रहा, पर भूटानी दिशा के प्रमाण क्रमशः बढ़ते गए। भारतीय ढाँचे ने ही भूटान को अपने निर्णय टिकाने का आधार दिया।

6. शिक्षा, संस्कृति और पर्यावरण : भूटान ने आधुनिक शिक्षा को अपनी जीवन–दृष्टि से जोड़ा। पॉल के अनुसार चतुर्थ नरेश के समय शिक्षा आधुनिकता और परंपरा के संतुलन के साथ सतत विकास की ओर उन्मुख हुई, और सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता की अवधारणा में आध्यात्मिक और सांस्कृतिक आवश्यकताएँ भी सम्मिलित थीं।[2] 1985 में आरंभ 'प्राथमिक शिक्षा का नया उपागम'[7] और छठी योजना के पाठ्यक्रम–सुधार ने शिक्षा को भूटानी परिवेश और समाज के अनुरूप बनाने पर तथा जोंगखा पाठ्यपुस्तकों और पर्यावरण–संरक्षण पर बल दिया।[2]

भाषा में भी संतुलन बना। अंग्रेजी आधुनिक ज्ञान की भाषा बनी, जबकि जोंगखा राष्ट्रीय पहचान की और विद्यालयों में बौद्ध ग्रंथों के अध्ययन की भाषा रही।[2] हिंदी का पाठ्यपुस्तकों से विदा होना भारतीय सहयोग का अंत नहीं, भूटान की भाषा–नीति के आत्मविश्वास का संकेत था, और इसे नेहरू की उसी स्वीकृति का व्यावहारिक रूप कहा जा सकता है कि भूटान अपना मार्ग स्वयं चुने।

पॉल के अनुसार अंग्रेजी शिक्षा ने भूटानी विद्यार्थियों के लिए विश्व–भर में अध्ययन का मार्ग खोला, पर आधुनिकीकरण और संचार–माध्यमों से परंपरागत मूल्यों के क्षरण तथा सफेदपोश नौकरियों की ओर झुकाव की चिंताएँ भी उभरीं। फिर भी भूटान ने अपनी राष्ट्रीय पहचान बनाए रखी।[2]

7. आलोचनात्मक मूल्यांकन और निष्कर्ष : इस सहयोग की सीमाएँ भी थीं। पेंजोर के अनुसार शिक्षा–नीति इंजीनियर और डॉक्टर तैयार करने की ओर बहुत अधिक झुकी रही।[6] 1988 में प्राथमिक आयु के लगभग 25 प्रतिशत बच्चे ही विद्यालय जा रहे थे, और दक्षिणी भूटान में 1989 तक अनिवार्य रही नेपाली भाषा का प्रश्न अलग, संतुलित अध्ययन की माँग करता है।[7] शिक्षकों की संख्या जैसी स्रोत–विसंगतियाँ भी अभिलेखीय सत्यापन की अपेक्षा रखती हैं। आगे के शोध के तीन प्रमुख प्रश्न हैं, यानी 1961–62 में आए भारतीय शिक्षकों की संख्या और सेवा–शर्तें, 1964 के पाठ्यपुस्तक–परिवर्तन में भूटानी और भारतीय विशेषज्ञों की भूमिका, और भारत में पढ़े भूटानी विद्यार्थियों की आगे की भूमिका।

1958 में नेहरू के भाषण का अनुवाद करते भूटान नरेश से 2003 में रॉयल यूनिवर्सिटी ऑफ भूटान के गठन तक की कहानी से तीन निष्कर्ष निकलते हैं। पहला, शिक्षा भारत–भूटान संबंधों का सहायक पक्ष नहीं, उसका स्वतंत्र आधार थी। दूसरा, भारतीय ढाँचा थोपी गई एकरूपता नहीं बना। भाषा, नीति, प्रशासन और परीक्षा के निर्णय क्रमशः थिम्पू में लिए गए, और 1949 की संधि तथा 1958 में नेहरू की स्वीकृति इसकी नीतिगत पृष्ठभूमि थे। अतः कार्य–परिकल्पना उपलब्ध साक्ष्य से समर्थित होती है। शिक्षा–सहयोग ने भूटान की सांस्कृतिक अस्मिता को दुर्बल नहीं किया, बल्कि उसे आधुनिक संस्थाओं के माध्यम से अभिव्यक्ति दी। तीसरा, शिक्षा ने संबंध को समाज तक पहुँचाया। 2018 के एक अध्ययन के अनुसार पच्चीस–तीस वर्ष से अधिक आयु का लगभग हर भूटानी केरल के किसी न किसी शिक्षक से पढ़ा है।[8] भूटानी पूर्व–विद्यार्थियों और भारतीय शिक्षकों का मौखिक इतिहास तथा रॉयल थिम्पू कॉलेज जैसे संस्थानों के साथ अकादमिक संवाद इस अध्ययन को आगे बढ़ा सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. Nehru, Jawaharlal. "The Binding Links between India and Bhutan" (speech at Paro, 23 September 1958). *Selected Works of Jawaharlal Nehru*, Second Series, vol. 44, 309–311. New Delhi: Jawaharlal Nehru Memorial Fund.
2. Paul, Ratna. *Growth and Development of Modern Education in Bhutan (1907 to 1997 A.D.)*. PhD thesis, University of North Bengal, 2017, pp. 22–26, 64–78, 113–139, 219–239, 289–295.
3. Treaty of Friendship between India and Bhutan, Darjeeling, 8 August 1949, art. 2; India–Bhutan Friendship Treaty, New Delhi, 8 February 2007.
4. Kohli, Manorama. *From Dependency to Interdependence: A Study of Indo-Bhutan Relations*. New Delhi: Vikas, 1993.
5. Rajput, Madhu. *Indo-Bhutan Relations through Prism of History*. New Delhi: Manak, 2011.
6. Penjore, Dorji. "The State of Anthropology in Bhutan." *Asian and African Area Studies* 12, no. 2 (2013): 147–156.
7. Savada, Andrea Matles, ed. *Nepal and Bhutan: Country Studies*. Washington, DC: Library of Congress, 1993 (Bhutan, "Education").
8. Kamalakaran, Ajay. "How Malayali Teachers Helped Build Bhutan's Education System." *Onmanorama*, 12 July 2021.
9. Bhutan Council for School Examinations and Assessment. "Background." https://www.bcsea.bt/background (accessed 10 October 2026).